

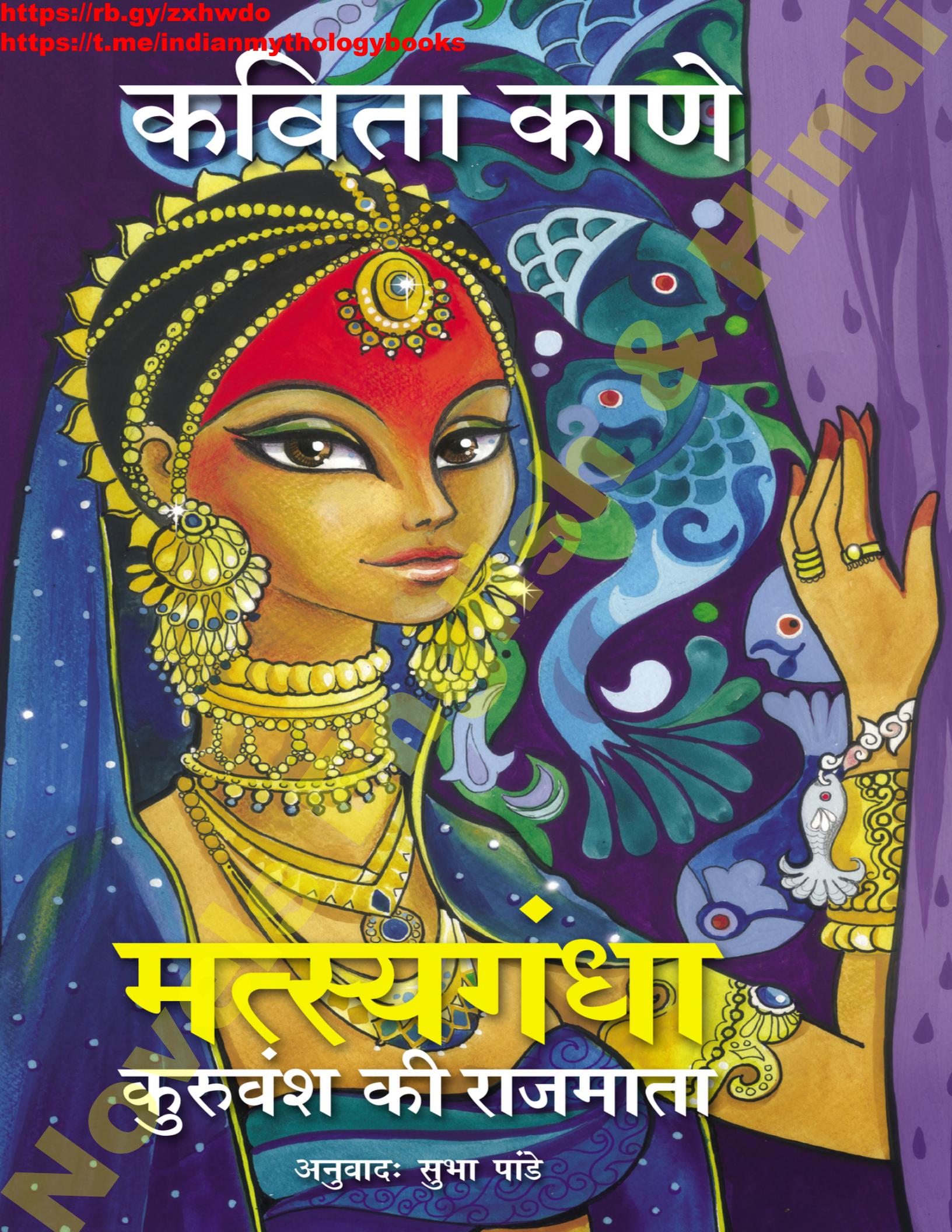
<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

# कविता काणे

# मत्स्यपाठा कुरुवंश की राजमाता

अनुवादः सुभा पांडे





**COLLECTION OF VARIOUS**  
→ HINDUISM SCRIPTURES  
→ HINDU COMICS  
→ AYURVEDA  
→ MAGZINES

**FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)**

Made with  
  
By  
**Avinash/Shashi**

[creator of  
**hinduism**  
**server!**]

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

Novels English & Hindi



# मत्त्यगंधा @BOOKHOUSE1

## हस्तिनापुर की राजमाता

कविता काणे भारतीय पौराणिक कथाओं पर आधारित चार लोकप्रिय और बेहतरीन पुस्तकों की लेखिका हैं: करणा'स वाइफ (2013), सीता'स सिस्टर (2014), मेनका'स चॉइस (2015) और लंका'स प्रिंसेस (2016)। दो दशकों तक वरिष्ठ पत्रकार के रूप में काम करने के बाद उन्होंने पुस्तक लिखने के लिए अपनी नौकरी छोड़ दी। उन्होंने पुणे विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य और पत्रकारिता एवं जनसंचार में एम. ए. की डिग्री प्राप्त की है। उनका मानना है कि उनमें एक ही हुनर है—लेखन का।

उनका जन्म मुँबई में हुआ, अधिकांश बचपन पुणे और दिल्ली में गुजरा और इस समय वे अपने जलसैनिक पति प्रकाश, दो पुत्रियों, किमाया और अमिया, दो कुत्ते—बीयू और चिक, और अनुत्सुक बिल्ली कॉटन के साथ पुणे में रहती हैं।

**सुभा पांडे मूलत:** चेन्नई की रहने वाली हैं। उनका बचपन बिहार में बीता। उन्हें वडोदरा के महाराजा सयाजी राव विश्वविद्यालय से एम.फार्मा की डिग्री प्राप्त है। दस वर्षों तक बैंगलोर विश्वविद्यालय में प्राध्यापिका के रूप में कार्यरत रहने के पश्चात 2006 से वे स्वतंत्र कॉर्पोरेट ट्रेनर के रूप में काम कर रही हैं। वे छह भारतीय भाषाएँ बोल सकती हैं और अंग्रेजी, मराठी एवं हिंदी में अनुवाद करती हैं। वे इस समय वडोदरा में रहती हैं।

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

# मत्त्यगंधा

हस्तिनापुर की राजमाता

कविता काणे

अनुवाद  
सुभा पांडे



eka

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

Novels English & Hindi

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

eka

First published in English as *The Fisher Queen's Dynasty* in 2017 by Westland Publications Private Limited

Published in Hindi as *Matsyagandha: Hastinapur ki Rajmata* in 2020 by Eka, an imprint of Westland Publications Private Limited in association with Yatra Books.

1st Floor, A Block, East Wing, Plot No. 40, SP Infocity, Dr MGR Salai, Perungudi, Kandanchavadi, Chennai 600096

Westland, the Westland logo, Eka and the Eka logo are the trademarks of Westland Publications Private Limited, or its affiliates.

Copyright © Kavita Kané, 2017

ISBN:

This is a work of fiction. Names, characters, organisations, places, events and incidents are either products of the author's imagination or used fictitiously.

All rights reserved

No part of this book may be reproduced, or stored in a retrieval system, or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording, or otherwise, without express written permission of the publisher.

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

मेरी बहन आशा  
के लिए

जिन्होंने पहली बार मेरा परिचय भीष्म के  
देवव्रत रूप से कराया

Novels English & Hindi

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

## विषय-सूची @BOOKHOUSE1

[प्रस्तावना](#)

[जन्म](#)

[मछुआरिन](#)

[पुत्र](#)

[पिता](#)

[युवराज](#)

[राजा और मछुआरिन](#)

[असमंजस](#)

[प्रतिज्ञा](#)

[बलिदान](#)

[विवाह](#)

[रानी](#)

[वारिस](#)

[मत्स्य](#)

[मृत्यु](#)

[पाँचाल](#)

[राज्याधिकारी](#)

[वेदना](#)

[स्वयंवर](#)

[तीन बहनें](#)

[अस्वीकृति](#)

[प्रतीक्षा](#)

[प्रतिहिंसा](#)

[मृत्यु](#)

[विधवाएँ](#)

[अन्य पुत्र](#)

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

नई आशा  
परिशिष्ट

Novels English & Hindi

## प्रस्तावना

### भीष्म

जिस तरह उनका पूरा जीवन पश्चातापों से भरा था, उनकी मृत्यु भी वैसी ही थी। बाणों की शय्या पर लेटे हुए, उन्हें उनकी चुभन से अधिक पीड़ा, अपनी यादों और स्मृतियों से हो रही थी, जो उनके परास्त मन को भेद रही थीं। वे अपने साथ पछातावों, खेदों, वचनों और दंडों का ज्वार लेकर आयीं। उनमें खुशी से भरे क्षणों, और आदर्शों से उत्पन्न पराक्रम की झलक भी नहीं थी। वे जानते थे कि उनके पास अधिक समय नहीं था और मृत्यु निकट आ गई थी। ... हाँ, यदि वे मरना चाहें तो...

वे तो बहुत पहले ही मर चुके थे; पर कब? क्या वे तब मरे थे, जब बीस वर्ष की आयु में उनसे उनके जीवन का उद्देश्य, उनका सिंहासन, उनकी पहचान, उनके पिता, उनका भविष्य छीन लिया गया था? या तब, जब काशी की राजकुमारी अम्बा ने उन्हें एक मृत्यु से बदतर जीवन का श्राप दिया था? या वे तब मरे थे जब बालों से घसीटकर द्रौपदी को उसी दरबार में लाया गया था, जहाँ उन्होंने अपनी सौतेली माँ सत्यवती के सम्मान की तो रक्षा की, पर अपने प्रपौत्रों की पत्नी, पाँचाल की राजकुमारी द्रौपदी की रक्षा नहीं की? क्या उनकी मृत्यु तब हुई जब द्रौपदी ने भरी सभा में अपने शब्दों से उनका उपहास किया था और उन्हें उनकी अयोग्यता का स्मरण कराया था? या तब, जब एक-एक करके उनके सौतेले भाई चित्रांगद और विचित्रवीर्य, उनके भतीजे पांडु और अन्य कई लोगों की मृत्यु हुई?

उनकी आँखों में आँसू भरे तो थे पर बहने का नाम नहीं ले रहे थे। यदि किसी चमत्कार से वर्तमान केवल भयानक स्वप्न साबित हो जाए, और वे दोबारा युवक बन कर खड़े हो जाएँ, तो क्या भीष्म वो गलतियाँ नहीं करते जिनसे अनगिनत जीवन नष्ट हो गए थे? क्या वे वत्सला से विवाह करते? अम्बा की मर्यादा और उसकी जान बचाने के लिए उससे विवाह करते? क्या उनके अपने बच्चे होते और उन्हें अपना सम्पूर्ण जीवन सौतेले भाइयों की देखभाल में व्यतीत न करना पड़ता? क्या वे सत्यवती की अवहेलना करके वह कठोर प्रतिज्ञा न करते? या सत्यवती से कभी मिलते ही नहीं?

सत्यवती।

मेरे पिता की पत्नी, राजमाता, उन्होंने गहरी सांस ली और उनके अन्दर मरने की तीव्र इच्छा जाग उठी; साथ-साथ जीवित रहने की लालसा भी। मात्र जीवित रहने के लिए नहीं, बल्कि अपने कर्मों को पलटने का अवसर पाने के लिए। उन कार्यों के लिए जो उन्होंने और सत्यवती ने अपरिवर्तनीय रूप से किए थे। किन्तु सत्यवती तो उन्हें अपने निरर्थक जीवन के साथ, अपने कर्मों के परिणाम को अकेले भोगने के लिए छोड़कर, बहुत पहले ही चल बसी थी।

उनकी सदैव अभिलाषा थी कि उनका जीवन न्यायपूर्ण, धार्मिक और विभूतिमान हो।

### मुझे मरने दो!

उन्होंने दूबते सूर्य को देखा; युद्ध और विजय का एक और दिन बीत गया था। जैसे अस्त हुआ सूर्य एक ही दिन में दोबारा नहीं उगता, वैसे ही मनुष्य का जीवन भी वापस नहीं लाया जा सकता; वह केवल अपने शेष जीवन को जकड़कर उसे बचा सकता है...।

किन्तु, उन्हें तो जीवन को बार-बार जीने का अवसर दिया गया था; पर उन्होंने भी युधिष्ठिर की तरह ही उसे दाँव पर लगाकर नष्ट कर दिया और कई अक्षम्य गलतियाँ कीं। नहीं, ये गलतियाँ नहीं, घोर पाप थे जिन्हें कभी क्षमा नहीं किया जा सकता। उन्होंने थककर अपनी आँखें मूँद लीं...। बस अन्त की प्रतीक्षा थी...।

वे आखिर कौन थे? वे प्रभास थे, वासु देव, जिनका जन्म देवब्रत के रूप में देवी गंगा से, ऋषि वशिष्ठ के श्राप को पूरा करने के लिए हुआ था। कोई भी अपनी नियति से नहीं बच सकता। वो तो हमें उस पथ पर भी मिल ही जाती है, जिसे हम उससे बचने के लिए चुनते हैं।

कई पीढ़ियों की अवधि से चला आ रहा उनका जीवन उनकी आँखों के सामने स्पष्ट दिखने लगा। उनके कर्मों के द्वारा उपलब्ध किए गए चमत्कार भी उनके सामने उभर आए। जब वे अपनी मृत्यु-शय्या पर पड़े थे, उनके सभी प्रियजन उनसे मिलने आए—प्रिय अर्जुन, अन्य पांडव, दुर्योधन, कर्ण, द्रौपदी और उरुवी। उन्होंने हरेक से क्षमा याचना की और उनसे प्रार्थना की कि वे उनसे हुई गलतियों को अपने जीवन में न दोहराएँ।

उन्होंने अपने सबसे बड़े पौत्र और हस्तिनापुर के युवराज युधिष्ठिर को आत्मसंयम सिखाने का प्रयास किया क्योंकि वे विश्व को बताना चाहते थे कि जब नायक ज्ञान एवं उपलब्धियों में विफल हो जाते हैं, अपनी प्रजा की रक्षा नहीं कर पाते, प्रेम करने में अक्षम, और पराजय से भयभीत होते हैं, तो क्या होता है...।

दूर क्षितिज पर, ढलते सूरज की किरणें नदी पर इतनी जोर से झिलमिला रही थीं कि उनका प्रकाश उनकी आँखों में चुभ रहा था; उनके जीवन के सत्य की तरह ही। वे

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

वही सुन्दर नदी बन जाना चाहते थे : वो माँ जो सदैव उनके साथ थीं, पर कभी उनके निकट नहीं। उन्हें बस मरना था, केवल मरना...। और कुछ नहीं।

उन्होंने आत्म-घृणा से अपनी आँखें मूँद लीं। अपने जीवन में आयी सभी महिलाओं को उन्होंने निराश किया था : उनकी माँ, गंगा; उनकी भावी वधू, वत्सला; अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका—वो तीन राजकुमारियाँ जिनका उन्होंने अपहरण किया था (विशेषकर अम्बा, जिसे उन्होंने प्रेम और द्वेष की अग्नि में खो दिया); कुन्ती, गांधारी और माद्री, उनकी पुत्र वधुएँ, जिनका उन्होंने राजनीतिक सत्ता के लिए मोहरों की तरह प्रयोग किया; कर्ण की पत्नी उरुवी, जिसे उन्होंने वचन दिया था कि वे उसकी पति की रक्षा करेंगे; और आखिरकार द्रौपदी, जिसकी वह उसी दरबार में सुरक्षा नहीं कर पाए, जहाँ वर्षों पहले उन्होंने कुरु रानी सत्यवती पर लांछन लगाने के दोषी एक मनुष्य का वध कर दिया था।

उन्होंने इन सब का बलिदान कर दिया था—केवल एक नारी के लिए...

सत्यवती!

## जन्म

राजसी कम्बल में लिपटे बच्चे को उस गोरे और लम्बे व्यक्ति ने देखने से मना कर दिया। उन्होंने पीछे मुड़कर उस मछुआरे पर कठोर दृष्टि डाली।

“माता ने जुड़वाँ बच्चों को जन्म दिया है, प्रभु,” मछुआरे दशराज ने कहा।

“हाँ, जानता हूँ। मैं बालक को अपने पास रखूँगा, तुम बालिका को रख लो”, राजा उपरिचर वसु ने कहा।

“दशराज अचम्भित होकर राजा को देखने लगे। राजा कन्या का परित्याग कर रहे हैं”

दशराज के भाव देखकर राजा थोड़े नर्म पड़ गए और बोले, “मैं जानता हूँ, तुम बहुत लम्बे समय से बच्चे के लिए तड़प रहे हो दशराज। बालिका को रख लो, आखिर वह तुम्हारी भाँजी ही तो है।” वे दशराज को समझाते हुए बोले, पर उनकी आवाज में कठोरता थी। वह विनती नहीं, राजकीय आदेश था।

दशराज अपनी खुशी छिपा न सके; वह बच्चा रख सकते थे! उन्होंने बच्ची की तरफ देखा। हाँ! उनकी भाँजी ही तो थी, उनकी मृत बहन अद्रिका की पुत्री। अद्रिका की तरह ही बालिका भी बहुत साँवली थी, उसकी त्वचा नरम और आँखें बड़ी-बड़ी थीं। वह सतर्क और चौकन्नी, उन दोनों को ऐसे देख रही थी जैसे सब कुछ समझ रही हो। दशराज सोच रहे थे, ‘क्या उसे पता था कि उसके पिता, चेदि के राजा, उसका परित्याग कर रहे थे? ’ दशराज का दिल बैठा जा रहा था। राजा सच कह रहे थे : वह वर्षों से बच्चे की कामना कर रहे थे और पिछले वर्ष पत्नी की मृत्यु के बाद वे बिलकुल अकेले हो गए थे। अब तो अद्रिका भी नहीं रही... उन्होंने दोबारा बच्ची की तरफ देखा। उन दोनों का विश्व में एक दूसरे के अलावा कोई नहीं था।

इससे पहले कि राजा का मन बदल जाए, दशराज झट से बोले, “ठीक है, महाराज, मैं इसे अपने साथ ले जाता हूँ।” बच्चे को गोद में उठाते ही उनका हृदय आनन्द से प्रफुल्लित हो उठा।

उन्होंने मन-ही-मन उस नन्ही-सी जान को वचन दिया, “मैं कभी तुम्हारा परित्याग नहीं करूँगा। मैं तुम्हें वो प्रेम और जीवन दूँगा जिसकी तुम पात्र हो। मैं तुम्हारी माँ के लिए कुछ अधिक नहीं कर पाया, परन्तु तुम एक राजा की पुत्री हो —जिसे अस्वीकृत

और त्यक्त किया गया है—पर तुम मेरी राजकुमारी हो। मैं कभी तुम्हारा विश्वास नहीं तोड़ूँगा। मैं तुम्हें राजकुमारी का स्थान दिलाकर रहूँगा, और एक दिन तुम रानी अवश्य बनोगी, जिसकी तुम हकदार हो।’



“नहीं! फिर से नहीं!” वे चिल्लाए; जब उन्होंने अपनी युवा पत्नी को अपने नन्हे पुत्र को गंगा में फेंकते हुए देखा। हस्तिनापुर के राजा शान्तनु अपने नवजात पुत्र को बचाने के लिए उसे अपनी पत्नी के हाथों से झपटते हुए चिल्लाए, “तुम एक और बच्चे को नहीं मार सकतीं! तुम पहले ही सात बच्चों की हत्या कर चुकी हो! तुम कौन हो... राक्षसी या हत्यारिन?”

“मैं गंगा हूँ, जलपरी, आपकी पत्नी, आपकी रानी... पर अब नहीं,” उस सुन्दर युवती ने कहा।

उनकी आँखों से अश्रुधारा बह निकली। उन्होंने अपने आठवें पुत्र को मृत्यु से बचा लिया था। उनका सुन्दर चेहरा क्रोध से तमतमा रहा था, “मैंने कभी नहीं सोचा था कि तुमसे इतनी घृणा भी कर पाऊँगा। कौन-सी माता अपने बच्चों की इस तरह हत्या करती है?”

उनकी पत्नी ने शान्तिपूर्वक कहा, “ऐसी माता जो अपने बच्चों को मोक्ष दिलाना चाहती है।”

उसकी शान्ति ने शान्तनु की पीड़ा और भी बढ़ा दी।

वह गुस्से से बोले, “पहेलियाँ मत बुझाओ, गंगा! जबसे मैं तुम्हारे प्रेम में पड़ा, तुम रहस्यमयी ही रही हो और तुमने अपने बारे में मुझे कुछ नहीं बताया। मैंने तुमसे प्रेम किया और तुमने केवल शर्तें रखीं। मैंने तुम्हारी सभी शर्तों और नियमों के बावजूद तुमसे विवाह किया। तुमने कहा, कभी मेरे किसी भी कार्य पर प्रश्न मत करना, नहीं तो मैं आपको छोड़कर चली जाऊँगी। इतने वर्षों में तुमने हमारे सात पुत्रों की हत्या कर दी और मैं चुपचाप देखता रहा। यदि तुम मुझे छोड़कर जाना चाहती हो, तो जाओ, गंगा। मुझे और धमकाना बन्द करो। मुझे तुमसे घृणा हो गई है, निर्दयी औरत! मैं तुम्हें हमारे आठवें पुत्र की हत्या नहीं करने दूँगा...” शान्तनु बच्चे को हृदय से लगाते हुए बोले।

गंगा ने धीरता से कहा, “आप उसे नहीं रख सकते। मुझे जाना होगा, और उसे भी।”

शान्तनु आग-बबूला हो गए, “तुम ऐसा करने का साहस भी मत करना!”

शान्तनु बड़े ही सज्जन पुरुष थे और गंगा ने अपने पति को इतना क्रोधित और हतोत्साहित कभी नहीं देखा था। वो शिशु उनकी आशा की एकमात्र किरण; उनका

पुत्र, और हस्तिनापुर का उत्तराधिकारी था। गंगा ने दुखपूर्वक कहा, “शान्तनु, हम शापित हैं, और यह शिशु भी। आज आपने मुझसे प्रश्न करके मुझे मेरे श्राप से मुक्ति दिला दी है; उसी तरह, जैसे मैंने अपने सात पुत्रों को उनके श्राप से मुक्त किया।”

शान्तनु को कुछ समझ में नहीं आ रहा था पर उनका क्रोध थोड़ा कम अवश्य हो गया था। “तुम किस श्राप की बात कर रही हो?”

गंगा अपनी मधुर आवाज़ में आगे बोली, “कुछ समय पहले, आठ वसु—भगवान विष्णु के सेवक—देवता-ऋषि वशिष्ठ के आश्रम में अपनी पत्नियों के साथ पधारे। उनमें से एक वसु की पत्नी, दिव्य गाय कामधेनु को अपने साथ ले जाना चाहती थी। उसने अपने पति, आकाश के देवता, प्रभास से हठ किया कि वह उसे चुरा लें। प्रभास और उनके सातों भाई कामधेनु को चुराते हुए पकड़े गए और ऋषि वशिष्ठ ने क्रोधित होकर उन्हें पृथ्वीलोक में मनुष्य-जन्म लेने का श्राप दे दिया। आठों भाई उनसे क्षमा-याचना करते रहे और आखिरकार ऋषि श्राप की अवधि कम करने के लिए मान गए। उन्होंने कहा कि आठों भाई मनुष्य के रूप में जन्म लेते ही श्राप से मुक्त हो जाएँगे। वसुओं ने मुझे आकर विनती की कि मैं उन्हें जन्म दूँ और जन्म होते ही उन्हें अपने जल में डूबा दूँ। मैं सात पुत्रों को मुक्त करने में सफल हो गई पर ये आठवाँ पुत्र...” वह उस सुन्दर शिशु को देखते हुए बोली, “यह वही शापित प्रभास है। यदि आपने मुझे टोका नहीं होता, तो यह भी ऋषि वशिष्ठ के श्राप से मुक्त हो गया होता।”

शान्तनु हैरान रह गए।

“तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया? हम सब इन दुखद घटनाओं से तो बच जाते...” उन्होंने काँपते हुए कहा।

गंगा बोली, “क्योंकि हम दोनों पर भगवान ब्रह्मा का श्राप था। पिछले जन्म में आप राजा महाभिष थे, जिन्हें ब्रह्मा के दरबार में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। हम दोनों वहीं मिले और एक-दूसरे से प्रेम कर बैठे। एक दिन, दरबार के समय, हवा के एक झोंके ने मेरा अंगवस्त्र उड़ा दिया। जब सभी देवों ने अपनी आँखें नीची कर लीं, आप मुझे एकटक देखते रहे। मैंने भी आपकी कामुक दृष्टि के उत्तर में आपको लालसापूर्वक देखा। हमारा रहस्य खुल गया। भगवान ब्रह्मा हमारे प्रेम के सार्वजनिक प्रदर्शन से क्रोधित हो गए और हमें श्राप दे दिया कि हमें पृथ्वी पर जन्म लेना होगा और आम मनुष्य की तरह प्रेम और विरह की पीड़ा को भोगना होगा। सब कुछ सत्य सिद्ध हुआ है, है न?” उसने शान्तनु को आँसुओं से भरी आँखों से देखते हुए कहा। “मैंने आपको बहुत दुःख दिया है।”

शान्तनु का चेहरा दुख से विवर्ण हो गया और गंगा के शब्दों की निर्णायिकता ने उन्हें झकझोर दिया।

शान्तनु दबी हुई आवाज़ में बोले—“नहीं! मुझे छोड़कर मत जाओ, मैं अपने सभी कटु शब्द वापस लेता हूँ। तुम जानती हो कि मैं तुमसे बहुत प्रेम करता हूँ... गंगा! कृपया रुक जाओ, मत जाओ गंगा!”

वह शिशु को गोद में लिए रोते रहे।

शान्तनु के हाथ से शिशु को लेती हुई, अपने आँसू पोंछती हुई, गंगा स्थिर आवाज़ में बोली, “मुझे जाना ही होगा।”

शान्तनु उसकी कलाई थामकर गिड़गिड़ाते हुए, धीमे से बोले, “नहीं! मत जाओ।”

“मैं जहाँ से आयी थी, मुझे वापस वहीं जाना होगा... इस शिशु के साथ।”

“क्यों? तुम मुझे ऐसा दंड क्यों दे रही हो? इसके बजाय, तुम मुझे मार क्यों नहीं डालतीं?” वह उससे विनती करते हुए बोले। फिर आकाश की ओर देखते हुए चिल्लाए, “हे भगवान, ये कैसा श्राप है, कि मुझे मेरी प्रिय पत्नी और पुत्र के बिना जीवित रहना होगा!”

वे अपने घुटनों पर गिरकर, फूट-फूटकर रोने लगे, “मुझे इस व्यथा से बचा लो गंगा! मुझे ऐसी मृत्यु से भी बदतर जीवन से बचा लो!”

गंगा उनके सन्तप्त चेहरे से मुँह मोड़ते हुए, कंधे सीधी करते हुए बोली, “मुझे अभी जाना होगा, पर मैं वचन देती हूँ कि सही समय आने पर मैं आपको आपका पुत्र वापस कर दूँगी।”

गंगा की बातों को समझने में शान्तनु को थोड़ा समय लगा। “तुम सच कह रही हो? क्या मुझे मेरा पुत्र वापस मिल सकता है?” उन्होंने आशापूर्वक पूछा।

गंगा ने अत्यन्त दुखी स्वर में कहा, “हाँ! इसलिए नहीं कि मैं आप पर कृपा करना चाहती हूँ, पर इसलिए क्योंकि यह बालक इस धरती पर एक अभिशप्त जीवन जीने वाला है। आपका पुत्र होने के नाते यह जन्म से ही धर्मनिष्ठ, विवेकी और निष्ठावान है, पर इसे आजीवन पीड़ा और कष्ट भोगना होगा। मैं इसे देवव्रत नाम देती हूँ, क्योंकि इसकी धर्मनिष्ठा देवतुल्य होगी। यह आपका पुत्र है, पर उसकी माँ होते हुए मैं इसे ऋषि-मुनियों का ज्ञान और देवताओं की युद्ध-कला सिखाऊँगी। उसके बाद मैं सही आयु का होने पर आपको आपके राज्य का उत्तराधिकारी दे दूँगी।”

हारकर, शान्तनु ने अपनी आँखें बन्द कर लीं। वो अपनी पत्नी और पुत्र को उनसे दूर जाते नहीं देखना चाहते थे।

लाचार और दुखी पिता शान्तनु गंगा नदी के तट पर खड़े होकर मन-ही-मन बोले, “मेरे पुत्र... मेरे देवव्रत, मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा।”

## मछुआरिन

मैल और सड़न की दुर्गाध से अविचलित, वो लड़की अकेली नदी के तट पर, एक चट्टान पर बैठी, चेहरे को हाथों से छिपाए फूट-फूटकर रो रही थी। आज तक कभी किसी ने मेरा इस तरह अपमान नहीं किया है। मैं, पढ़ी-लिखी, सुशील लड़की हूँ, मछुआरों के मुखिया की पुत्री हूँ... और राजा के इन सिपाहियों ने मुझ पर चोरी करने का सन्देह किया?... राजा के सिपाहियों ने उसकी नाव को उलट-पुलट दिया और एक आम नागरिक की तरह उसकी नाव की जाँच की। इससे बड़ा अपमान और क्या हो सकता है? वह क्रोधित हो सोचती रही। उसके मन में विचित्र विचार उठने लगे। यदि उन्हें शंका है कि मैंने चोरी की है तो वे मुझे निर्वस्त्र करके छानबीन कर सकते हैं और फिर मुझे बन्दी बनाकर अंधेरी कोठरी में डाल सकते हैं... ऐसी भयानक विचारों और अत्याचारों की कहानियों से वो घबरा गई और उसकी धड़कनें तेज़ हो गई। मेरे लिए कौन खड़ा होगा? मेरे बूढ़े और गरीब बाबा के पास तो मुझे छुड़ाने के लिए पैसे भी नहीं होंगे। यदि मुझे शहर में ले जाया गया तो मैं वहाँ बिना दोस्तों, और परिवारवालों के अकेली हो जाऊँगी। ये लोग मेरे साथ कुछ भी कर सकते हैं...

“काली!”

वो अनायास उस आवाज़ की तरफ मुड़ी। सभी उसे काली कहकर बुलाते थे— कदाचित उसके काले रंग, काले बाल और काली आँखों के कारण। वह उदास आँखों के साथ खड़ी हुई।

“तुम्हारे बाबा तुम्हें ढूँढ़ रहे हैं, तुम्हारे घर कोई अतिथि आए हैं,” उसकी पड़ोसन ने उसे आवाज़ दी।

काली ने अपनी नाव को नदी के तट पर बाँधा और जाल को समेटकर नाव में रख दिया। उनके पास यही एक फटा-पुराना जाल बचा था, और नया जाल खरीदने का समय आ गया था। परन्तु हमेशा की तरह उनके पास पैसों का अभाव था। राज्य के कर भरने में ही, लोगों को नाव से नदी पार कराकर कमाए हुए पैसे खत्म हो जाते।

अपने घर की ओर जाते हुए उसने निश्चय कर लिया कि वो बाबा को आज की निन्दनीय घटना के बारे में कुछ नहीं बताएगी। टूटी-फूटी झोपड़ियों से भरे उस गाँव में उसका एकमात्र पत्थर की छत वाला घर, अलग से दिख रहा था। सारी झोपड़ियाँ एक-

सी, चूल्हे के धुएँ से काली पढ़ी, मैली और उदास थीं। घरों से निकलते काले धुएँ में सब कुछ धुँधला और मलिन लग रहा था। उसे वहाँ रहने की आदत तो पड़ गई थी पर काली को अपना गाँव अनुशासनहीन और धिनौना लगता था। सड़कों के किनारे गन्दगी और मछलियों के सरहनों के ढेर लगे हुए थे और वहाँ आसपास नुक्कड़ों में खड़े पुरुष उसे धूर रहे थे। वह होंठ सिकोड़ती हुई मन-ही-मन बोली, आवारा, धटिया, गन्दे और थके लोग; मेरी ही तरह क्रोधित। औरतें अपने काम में व्यस्त आ-जा रही थीं। काली को अचानक बहुत क्रोध आया। इस गाँव की हर बात धिनौनी है। यहाँ तो ढंग के रास्ते भी नहीं हैं.. वो कीचड़ से गुजरती हुई सोच रही थी। गर्भियों के समय ये रास्ते सूखे और धूल-धूसरित रहते थे, पर वर्षा आरम्भ होते ही ये खुली नालियाँ बन जाती थीं, मैली, बदबूदार और बीमारियाँ फैलाने वाली। अपनी, मेहनत और कष्ट से भरी, मैली-कुचली, दुर्गध से भरे जीवन को देख, उसे बड़े घरों में रहने वाले कुलीन और राजसी लोगों से अत्यन्त धृणा होती।

गीले रास्ते पर टहलते हुए, उसे ध्यान आया कि हमेशा की तरह लोग उससे थोड़ी दूरी बनाए हुए थे। वो युवा और पढ़ी-लिखी थी, फिर भी, वह मछुआरिन थी, नमक, मछली और पसीने के दुर्गध से भरी। दुर्गध ही उसकी पहचान बन कर रह गई थी। काली ने देखा कि एक औरत उसे देखते ही, मुँह मोड़ती हुई, नाक पर हाथ रखती हुई उससे दूर हट गई। काली को, लोगों का उसके साथ अछूत की तरह व्यवहार करने की जैसे आदत पड़ गई थी। उसे थोड़ा-बहुत सम्मान केवल मछुआरों की गली में मिलता था, क्योंकि वह उनके मुखिया की पुत्री थी। सिर ऊँचा किए, तेज क्रदमों से चलती उस लड़की में राजत्व था और उसकी आँखें स्पष्ट रूप से तिरस्कारपूर्ण।

उसके घर कोई अतिथि आया था, अब एक और व्यक्ति को भोजन खिलाना होगा! वह अप्रसन्न होकर सोच रही थी।

घर आए अतिथि एक ऋषि थे। वे युवा, दुबले-पतले और विवर्ण थे। वे लंगड़े थे और उनमें एक अलौकिक प्रभा थी।

“सत्यवती, ये ऋषि पराशर हैं...”

कोई भी उसे सत्यवती के नाम से नहीं जानता था, केवल उसके बाबा उसे उस नाम से ही पुकारते थे।

“आप प्रख्यात ऋषि वशिष्ठ के यशस्वी पुत्र हैं,” दशराज ने कहा। “आप इस समय विष्णु-पुराण की रचना कर रहे हैं और पहला अनुक्रम लिख रहे हैं। आप अत्यन्त श्रेष्ठ वक्ता हैं, पर स्वयं को भ्रमणकारी गुरु कहते हैं। आप हमारे गाँव से गुजर रहे थे।”

उसके बाबा असामान्य रूप से आनन्दपूर्वक मुस्कुरा रहे थे। कुछ वर्षों पूर्व, जब एक तूफान में उनकी दर्जनों नाव खो गई थीं, तब से उनकी मुस्कान गायब ही हो गई थी। काली के पिता छोटे कद के थे। वे साँवले थे, उनका चेहरा कठोर था; उनके सिर

पर बहुत कम बाल बचे थे। फिर भी उनका व्यक्तित्व मोहक था। बाबा ने काली से कहा, “मुनिवर हमारे पास थोड़ा विश्राम करेंगे और यहाँ से किसी यज्ञ में जाएँगे। उनकी जब इच्छा हो, उन्हें दूसरे तट पर छोड़ आना।”

काली के मन में सवेरे की घटना की याद अभी भी ताज़ा थी, और वो दोबारा नदी के तट पर अपनी नाव पर जाने के नाम से ही काँप गई। किन्तु, वो इसलिए चुप रही कि यदि उसने अवज्ञा की तो उसे बाबा को सब कुछ बताना पड़ेगा।

उसने बड़ी विनम्रता से ऋषि से पूछा, “क्या आप हमारे साथ रात्रि का भोजन ग्रहण नहीं करेंगे?”

ऋषि अपनी गहरी, भावपूर्ण आँखों से उसकी ओर देखते हुए बोले, “नहीं। आज मेरा उपवास है।”

काली ने चैन की सांस लेते हुए मन-ही-मन सोचा, चलो एक थाली कम! अचानक उसके मन में एक विचार आया और उसने ऋषि को सन्देहपूर्वक देखते हुए सोचा, “आखिर, इतने बड़े ऋषि को एक गरीब मछुआरे के घर में आने की क्या आवश्यकता पड़ गई?”

“मत्स्यगंधा, अपने पिता को किसी भी तरह कम मत समझो।” ऋषि ने मुस्कुराते हुए कहा।

वह चकित रह गई कि ऋषि ने उसके मन की बात पढ़ ली थी। वो उपहासपूर्वक हँसी; फिर भी उसमें आकर्षण था। मत्स्यगंधा, मछली के गंध वाली लड़की! परन्तु ऋषि ने उसे सुगंध वाली लड़की बना दिया था!

“तुम्हें कदाचित पता होगा कि तुम्हारे पिता एक समय में मछुआरों के बहुत बड़े वर्ग के मुखिया थे, जिन्होंने कई युद्ध में सहायक योगदान दिया था।”

“थे,” काली उपेक्षापूर्वक बोली। “आप स्वयं देख ही सकते हैं कि हमारी स्थिति कितनी दयनीय है।”

“बहुत समय के लिए नहीं,” ऋषि बड़बड़ाए।

“मैं इसे आपका आशीर्वाद समझकर स्वीकारती हूँ, कामना नहीं,” उसने उँगली को अपने निचले हँठ पर रखते हुए, भौंहें चढ़ाते हुए तीखेपन से कहा।

ऋषि भावशून्यता से उसे देखते हुए बोले, “मैं अंधेरा होने से पहले प्रस्थान करना चाहूँगा। क्या तुम मुझे नदी पार करने में सहायता करोगी, मत्स्यगंधा?”

दोबारा वही नाम, और इस बार भी उन्होंने उसकी हिचकिचाहट को भाँप लिया था।

ऋषि सरलता से आगे बोले, “मैंने सुना है कि तुम यहाँ की सबसे विश्वस्त, और साहसी नाविका हो, जो वर्षा या तूफान में भी नाव चलाने से नहीं डरती।”

काली ने सहजता से कहा, “मनुष्य ही सबसे खतरनाक और हानिकारक होता है, प्रकृति नहीं। देखिए, शक्तिशाली और धनवान, हमारे जैसे गरीब और असहाय लोगों से कैसा व्यवहार करते हैं? हमें आत्म-सम्मान के साथ जीने का भी अधिकार नहीं और गरीबी और लाचारी के त्रास से सदैव पीड़ित रहना पड़ता है। जैसा आपने कहा, मेरे पिता मुखिया थे, महाराज के सहयोगी, पर आज वे केवल कंगाल और निर्बल मछुआरे ही रह गए हैं!”

दशराज ने कहा, “यह युद्ध के कारण हुआ है। हमारे अतिथि पर उन्हीं के आश्रम में आक्रमण किया गया। यह लंगड़ापन उसी की स्मृतिचिह्न है, है न?”

पराशर हल्के से मुस्कुराते हुए बोले, “युद्ध सब पर भारी पड़ा है।”

वह भड़कती हुई बोली, “पर राजा पर नहीं।”

दशराज उसे समझाते हुए बोले, “हमारे राजा तो हस्तिनापुर के महाराजा शान्तनु के शासनाधीन हैं...”

काली ने कठोरता से प्रत्युत्तर दिया, “हमारे राजा ने तो हस्तिनापुर के सामने घुटने टेक दिए। फिर भी, कुरु सेना ने हमारी भूमि पर कब्ज़ा कर लिया और दोनों राज्यों का दुगुना कर हम पर थोप दिया।”

“तुम इतनी छोटी हो, पर राजनीति का बहुत ज्ञान रखती हो।” पराशर ने कहा।

“यह राजनीति नहीं अन्याय है,” उसने झट से उत्तर दिया। “मैं पन्द्रह वर्ष की हूँ, उसका अनुभव करने के लिए छोटी, पर उसे समझने लायक बड़ी भी।”

पराशर प्रेमपूर्वक मुस्कुराए और काली थोड़ी शान्त हो गई। कुछ ही देर में दोनों नाव पर सवार होकर यमुना नदी में निकले।

“ऋषि धीरे से बोले, लगता है तुम इस क्षेत्र को अच्छी तरह जानती हो?”

काली जानती थी कि वे यमुना पर तैरती उसकी छोटी-सी नाव की बात नहीं कर रहे थे। दोनों आधी दूरी भी पार नहीं कर पाए थे कि आकाश पर काले बादल मंडराने लगे। यदि वर्षा हुई तो उसे तूफान में वापस लौटना पड़ेगा। उसने गुस्से से मुँह बनाया।

“यदि आप कह रहे हैं कि मैं बहुत अच्छी तरह नाव चलाती हूँ, तो हाँ, मैं इस नदी से परिचित हूँ। और यदि आप ये कह रहे हैं कि मैं दुनियादारी जानती हूँ तो हाँ, वो भी।” वह दांत भींचती हुई, जोर से तेज़ लहरों के ऊपर से नाव को खेती हुई बोली।

ऋषि अपने बाएँ पैर को थामे अटपटे ढंग से बैठे हुए थे। काली जानती थी कि ऋषि उसे ध्यान से देख रहे थे—उसकी सबल और सशक्त भुजाओं को, तैरती नाव की गति के साथ हिलते उसके लचीले शरीर को, पसीने से चमकती उसकी त्वचा को...। उसका अंगवस्त्र गीला होकर उसकी छाती से चिपक गया था। उसके वक्षस्थल का उभार निश्चित रूप से ऋषि की आँखों से अनदेखा नहीं रहा। काली उनकी दृष्टि को भाँप गई; वो कामुक थी। उसे उनकी दृष्टि से न द्वेष आया, न कोई आनन्द अनुभव

हुआ। यह सत्य था कि वो सुन्दर, सरल युवती थी, और वो सत्य ऋषि की आँखों में स्पष्ट दिख रहा था।

उसने युवा ऋषि की अवहेलना करने का निश्चय किया। दोनों नदी के मध्य भाग तक पहुँच चुके थे; वहाँ पर मौसम और जल दोनों थोड़े शान्त दिख रहे थे। उसने थोड़ा विश्राम करने का निर्णय लिया।

उन्होंने फिर से उसके विचार पढ़ लिए थे।

“मुझे कोई जलदी नहीं है। तुम थोड़ा विश्राम क्यों नहीं कर लेतीं?”

वह ना में सिर हिलाती हुई नाव चलाती रही। उसे पता था, यदि वे रुक गए तो क्या होगा। उसने अपनी आँखों के कोने से देखा कि वह उसके निकट आ रहे थे।

काली जोर से चिल्लाई, “हिलिए मत! नाव छूब सकती है!”

ऋषि ने पतवार पकड़े हुए उसके हाथ को छूआ। उनका स्पर्श उग्र था। उन्होंने नरमी से कहा, “हाथों को थोड़ा विश्राम दे दो।” हवा के गरजते शोर में उनकी आवाज़ रुक्ष लग रही थी।

उसने शिष्टतापूर्वक कहा, “यदि हम रुक गए तो नाव उलट सकती है।” वो जानती थी कि वे कोई साधारण मनुष्य नहीं हैं, सुप्रसिद्ध ऋषि हैं जिनको अद्वृत और अभौतिक शक्तियाँ प्राप्त हैं। क्योंकि वो ज्ञानी थे और उनके शब्दों का परिणाम श्राप या वरदान हो सकता था। उनकी आँखों में अनावृत उत्तेजना को देखकर वो मन-ही-मन दोहराई—अत्यन्त शक्तिशाली मनुष्य!

उसने भयभीत होकर अपने चारों ओर देखा : दोनों, यमुना के बीच में नाव में अकेले थे। ऋषि, युवा, शक्तिशाली मनुष्य थे और अपने पंगु पैर के बावजूद, उस पर हावी हो सकते थे। पर, उनके विपरीत, वह नदी में कूदकर सरलता से तैरती हुई तट तक पहुँच सकती थी। किसी कारणवश वह ऐसा नहीं करना चाहती थी। वे अत्यन्त मोहक मनुष्य थे। जिज्ञासा और आकांक्षा में जकड़ी, वो उनके अगले कदम की प्रतीक्षा करने लगी।

अपनी तीव्र आँखों से उसे देखते हुए उन्होंने अपना हाथ नदी के जल में डाला; नदी एकाएक शान्त हो गई।

उन्होंने अस्थिर स्वर में कहा, “अब नाव न डगमगाएगी, न झूबेगी,” और वे उसके अत्यन्त निकट आ गए। उनकी गरम सांसें काली के चेहरे पर थीं और उनका हाथ उसकी ज़ंघा पर।

“मैं तुम्हें पाना चाहता हूँ, मत्स्यगंधा।”

ये किसी प्रकार की स्वीकृति नहीं थी; वे इससे अधिक स्पष्टता से अपने उद्देश्य को व्यक्त नहीं कर सकते थे। काली को बिलकुल कोई भय, शंका या चिन्ता नहीं हो रही थी, बल्कि उसे ऐसा लगा जैसे उन पर उसका कोई विचित्र प्रभुत्व था।

उसने सहजता से कहा, “नाव खेना सरल बनाने के लिए धन्यवाद, हम शीघ्र ही पहुँच जाएँगे।”

उन्होंने नर्म, पर कठोर स्वर में कहा, “उस द्वीप पर चलते हैं।”

“द्वीप? यमुना नदी में कोई द्वीप नहीं है!” काली हँसती हुए बोली, नाव की दिशा में बहते भूखंड को देखकर उसकी हँसी रुक गई। उन्होंने अपनी दिव्य शक्ति से नदी के बीच द्वीप बना दिया था!

ऋषि चुपचाप उसके चेहरे को अपनी ज्वलन्त आँखों से देखते रहे। काली ने आशा की थी कि दूसरे छोर तक पहुँचते-पहुँचते ऋषि शान्त हो जाएँगे, पर ऐसा कुछ नहीं हुआ। नाव उस द्वीप के रेतीले तट से टकराई और रुक गई। काली ने पतवार रख दिए और हाथों को अपने गोद में रखकर गम्भीरता से बैठी उनके उतरने की प्रतीक्षा करने लगी। वो जानती थी कि वे ऐसा कुछ नहीं करेंगे। वे उसे सम्मोहित करना चाहते थे; किन्तु उसे ऐसा लग रहा था जैसे वही उन्हें वशीभूत कर रही थी। उसके मन में पूर्वानुमान की उत्तेजना और झिझक की मिली-जुली भावनाएँ उठ रही थी। वे मुझे पाना चाहते हैं; क्या मैं भी वही चाहती हूँ? उसके अन्दर अचानक कंपकंपी की लहर दौड़ गई। वो उनके साथ अकेली थी; वो उनके साथ कैसा व्यवहार करेगी?

उसने उन्हें संशयपूर्ण दृष्टि से देखा। एक महान ऋषि के साथ सम्भोग करने का अनुभव कैसा होगा? मैंनका ने शकुन्तला को ऋषि विश्वामित्र के साथ रहते हुए जन्म दिया था, वो ऋषि को उठते हुए देख अचरज से विचार कर रही थी। ये ऋषि मुझे क्या देंगे? काली प्रत्याशा से काँप गई।

पराशर अस्थिरता से उठे और ध्यानपूर्वक नाव से उतरे। उसे एक क्षण के लिए लगा कि वे बिना रुके चले जाएँगे। क्या उनकी ललक ठंडी पड़ गई थी? वे तभी मुड़े, और उनकी दृष्टि को देखते ही वो अपने प्रश्न का उत्तर समझ गई। उन्होंने धीरे से आकर उसकी कलाई पकड़ी। काली को उनके अन्दर धधकती अग्नि, उनकी आँखों और स्पर्श में स्पष्ट रूप से अनुभव हो रही थी।

काली समझ गई कि वो अब उनसे बच नहीं पाएगी। क्या उसे उनसे घृणा नहीं हो रही थी—उनके लंगड़ेपन से, या उसके लिए उनकी कामना से? यह अत्यन्त निर्णायिक क्षण था। मैं एक महान ऋषि के साथ सम्भोग करने वाली हूँ, किसी सामान्य ग्रामीण युवक या मछुआरे से नहीं। उसका हृदय जोरों से धड़क रहा था। भय, रोमांच और उत्तेजना की लहर उसके अन्दर उमड़ रही थी।

“डरो मत,” कहते हुए उन्होंने उसे खींचकर अपने लम्बे, दुबले शरीर से लगा लिया। उसे उनकी जाँधों का स्पर्श अनुभव हुआ उसने दक्षता से अपने पैर दूर कर लिये।

“क्या आपको स्वीकार या अस्वीकार करने का मेरे पास कोई विकल्प है?” उसने स्थिर आवाज़ में पूछा।

उसके प्रश्न से उनकी आँखों की ज्वाला एक क्षण के लिए थोड़ी मन्द हो गई।

“मैं तुमसे विनती करता हूँ, मुझे स्वीकार कर लो, मुझसे प्रेम करो!” ऋषि गहरी आवाज़ में बोले और उसे अपने निकट खींच लिया।

काली का शरीर तन गया और उनके बल के सामने उसके पास कोई दूसरा रास्ता नहीं था। उन्होंने दाहिने हाथ से उसकी कमर को कस लिया और बाएँ हाथ से उसकी कलाइयों को पकड़कर उसे जकड़ लिया। उसके अर्धनग्न तन को देख उनका आवेग और बढ़ गया। उन्होंने उसे रेतीली ज़मीन पर हल्के से लिटा दिया और घुटने टेकते हुए उसके ऊपर आ गए।

काली ने अपने हाथ उनकी धड़कती छाती पर रखे, पर उन्हें धक्का देकर दूर नहीं किया।

वो अपनी भौंहें सिकोड़ती हुई धीरे से बोली, “आपको अद्भुत शक्तियाँ प्राप्त हैं। मेरे शरीर से मछली की दुर्गाध आती है। क्या आप उसे दूर कर सकते हैं? लोग मेरी बदबू के कारण मुझसे दूर भागते हैं। यही कारण है कि मेरे गिने-चुने प्रशंसक ही हैं। किसी बदबूदार मछुआरिन से कौन सम्बन्ध रखना चाहेगा?”

“मैं चाहता हूँ, और तुम्हें इस बात का कभी पछतावा नहीं होगा,” वे बोले।

काली ने धड़कते दिल के साथ उनको देखा। “क्या उनकी शक्तियाँ सत्य थीं? वैसे, उन्होंने यमुना के उमड़ते जल को तो शान्त करके उसमें द्वीप बना दिया था!”

काली कौतूहल से बोली, “फिर मुझे सुगंधित बना दीजिए।” वो जानती थी कि वे उसकी दुर्गाध से बेपरवाह थे और अब उन्हें कोई भी नहीं रोक सकता था; फिर भी वो थोड़ा समय टालना चाहती थी।

“ठीक है!” ऋषि ने मुस्कुराते हुए अपने हाथ नदी के जल में डुबाए, उसके पैरों के तलवे पर रखे और अपने अँगूठों को गोल-गोल घुमाने लगे। उनका स्पर्श अत्यन्त कामुक था। उन्होंने अपने हाथों से उसके तलवे सहलाए और फिर उनके काँपते हाथ काली की एड़ियों से होते हुए उसके सुडौल पैरों से गुजरे; एक क्षण के लिए उसकी कमर पर रुके और उसके वक्ष को हल्के से स्पर्श करते हुए उसके चेहरे तक पहुँच गए। काली का शरीर अचानक तपने लगा और उसके चारों ओर चन्दन और गुलाब की खुशबू फैल गई।

“मत्स्यगंधा, तुम मेरी एकमात्र कमजोरी रहोगी,” उन्होंने अपने चेहरे को उसकी गर्दन में छिपाते हुए कहा। फिर वो उसकी चोटी को खोलते हुए, उसके खुले बालों में अपनी उँगलियाँ फेरते हुए, उसे अपने बेकल होंठों की तरफ खींचते हुए बोले, “और मैं वचन देता हूँ कि मेरी यह कमजोरी तुम्हें अत्यन्त शक्तिशाली बना देगी। क्या तुम सुगंध अनुभव कर पा रही हो?” वो कस्तूरी की मादक सुगंध से घिर गई थी। ऋषि आगे बोले, “यह सुगंध तुम्हारे शरीर से आ रही है। तुम अब बदबूदार मछुआरिन मत्स्यगंधा नहीं

रही, तुम योजनगंधा बन गई हो। तुम्हारी ये नई कस्तूरी की सुगंध मीलों दूर तक फैलेगी और तुम इससे किसी को भी लुभा सकोगी। भविष्य में तुम्हें काली कहने का साहस कोई नहीं कर पाएगा।”

धीरे से अपना सिर हिलाते हुए वो थोड़ी चिढ़ती हुई बोली, “मैं काली हूँ, मुझे मेरे साँवले रंग से कोई आपत्ति नहीं है। मुझे गोरा रंग नहीं चाहिए, वैसे आप मुझे और क्या दे सकते हैं?”

“मनुष्य की क्या इच्छा होती है : शाश्वत यौवन और सौन्दर्य,” वे धीरे से उसे कमर से पकड़कर अपने से लगाते हुए बोले। “तुम्हारी सुगंध और चिरसुन्दरता तुम्हारे आकर्षण और शक्ति को दुगुना कर देगी। तुम यही चाहती थीं न? वही असीम शक्ति और आकर्षण... जिससे तुमने मुझे इस समय वशीभूत किया है? मैं तुम्हारा दास हूँ!”

“और मैं कुँवारी भी हूँ,” उसने उन्हें अपने से दूर करते हुए, बेझिझक कहा।

उसके निग्रह ने उन्हें और भी उत्तेजित कर दिया और वे काँपते हुए उसकी ओर फिर से लपके।

काली अड़ी रही, “आप एक भ्रमणकारी भिक्षुक हैं और किसी भी स्थिति में मुझसे विवाह नहीं करेंगे। मैं अपने पुराने संसार में कैसे वापस जाऊँगी? और, यदि आपके कारण मैं गर्भवती हो गई तो क्या होगा?” उसने विचार करते हुए प्रश्न किया और उसके मन में दो औरतों की छवि उभर आयी—मेनका और शकुन्तला। “मुझसे विवाह कौन करेगा?”

“तुम जिससे करना चाहो! तुम कुँवारी ही रहोगी,” वो उसके कंधे को चूमते हुए हँसते हुए बोले; “या ऐसा कहूँ कि तुम जिस अगले व्यक्ति के साथ सम्भोग करोगी, उसे पता ही नहीं चलेगा कि तुम कुँवारी नहीं हो!”

काली विवाद करने के लिए मुँह खोलती, उससे पहले ही उन्होंने उसके होंठ अपने होंठों से बन्द कर दिए। “तुम अपने पुराने संसार और जीवन में बिना सन्तान के जा सकती हो। मैं उसे अपने पास रखकर एक ऋषि के पुत्र का जीवन दूँगा।” वो धीरे से उसकी खिलती मुस्कुराहट को देखते हुए बोले। “हमारा पुत्र बड़ा होकर एक महान ऋषि बनेगा, और तुम्हें बहुत सम्मान और कीर्ति दिलवाएगा।”

काली उनके लिए अपने होंठ खोलते हुए बोली, “आपके जैसा महान?”

“नहीं, मुझसे भी अधिक महान; कदाचित मेरे दादाजी से भी अधिक प्रसिद्ध।” उन्होंने वचन देते हुए कहा। “विश्व उसे हज़ारों वर्षों बाद भी याद करेगा। ऋषि विश्वामित्र ने मुझे यह वरदान दिया था। और तुम उस अद्वितीय पुत्र की माता कहलाओगी।”

उसने अपना चेहरा उनसे दूर हटाकर हिचकिचाते हुए पूछा, “ऋषिवर, मैं ऐसी सन्तान को कैसे स्वीकृति दिलाऊँ जिसका जन्म विवाह पूर्व हुआ हो?” फिर उसने

उग्रतापूर्वक कहा, “मैं अविवाहित माँ बनकर अपने पुत्र को न त्यागना चाहती हूँ, न उसे अवैध सन्तान होने का अपमान भुगतने देना चाहती हूँ।”

पराशर उसके तनाव को कम करने के लिए उसके गालों को चूमते हुए बोले, “वह हमारा पुत्र होगा, मत्स्यगंधा। वो इतना महान और श्रेष्ठ होगा कि किसी को उसे अवैध कहने का साहस नहीं होगा। तुम स्वयं अद्वितीय स्त्री हो। तुम किसी सामाजिक प्रथा या लोगों के कारण बँधने वाली नहीं हो। तुम्हारा जन्म राज करने के लिए हुआ है।”

उसकी उत्तेजना वासना से कम, और महत्वाकांक्षा के कारण बढ़ गई। मेरा जन्म राज करने के लिए हुआ है।

“मैं इसी कारण से तुम्हारे पास हूँ,” वे अपने होंठों से उसके होंठों को खींचते हुए बोले। उसके अन्दर गरम लहर-सी दौड़ गई और उसका शरीर उनकी शक्तिशाली बाँहों में धीरे-धीरे कमजोर होता गया। वो उनके शरीर के भार से दबी जा रही थी।

“अच्छा!” उसने भरी आवाज में कहा। अब वे काम-वासना से पागल हुए जा रहे थे। अब उनके होंठ उसके गले को स्पर्श करते हुए नीचे की ओर बढ़ रहे थे।

काली को उनकी बातें कुछ अधिक समझ में नहीं आ रही थीं, पर उसे उनकी भविष्यवाणी का बोध अवश्य हो गया था। यही उसके लिए एकमात्र अवसर था। वो उसके आम और शोषित जीवन को असामान्य बना सकते थे। उन्होंने उसकी कंचुकी को खोल दिया था और उनके दोनों हाथ उसके निर्वस्त्र वक्ष पर थे। उसने उनकी ओर हल्के से मुस्कुराते हुए देखा। उसकी आँखें, उनकी ज्वाला को और भी भड़का रही थीं।

वह ज्वलन्त आँखों के साथ, हाँफती हुई बोली, “हमें यहाँ कोई देख लेगा।”

“मत्स्यगंधा!” जैसे ही उनके होंठ उसके ऊपर कसते गए, उसे ध्यान आया कि द्वीप घने कोहरे से ढक गया था। “और कुछ?” ऋषि उसके वक्ष पर होंठों से स्पर्श करते हुए बोले।

उसने सिर हिलाया और अन्ततः विजयी भाव से अपने-आपको पूरी तरह से उन्हें समर्पित कर दिया। उसे ध्यान आया कि उन्होंने उसके ढीले अन्तरीय को ऊपर कर दिया था। अपने अन्दर उनके तीव्र और कठोर चुभन की पीड़ा से काली हाँफ गई। वो पीड़ा तो क्षणमात्र की थी, पर जाने-अनजाने उसे इस वेदना की यंत्रणा जीवन भर सताने वाली थी।

उसने स्वतंत्रता के लिए अपनी निर्मलता और अपने भोलेपन को खो दिया था।

## पुत्र

“क्या मुझे मेरे पिता के पास जाना होगा?”

गंगा ने अपने पुत्र की गहरी आवाज़ में छिपी हल्की-सी अधीरता को भाँप लिया। आवाज़ के साथ-साथ वह भी बदल गया था। देवव्रत बड़ा हो गया था; वो लम्बा-चौड़ा और गोरा था, उसके बाल काले, घने और धुँधराले थे। उसकी आँखें भूरी थीं और वो अत्यन्त रूपवान युवक बन गया था। अब वो उसे अपने पास और नहीं रख सकती थी...।

अधीर होना उसके स्वभाव में नहीं था। देवव्रत की आवाज़ मृदुल थी और वह कदाचित ही अपनी भावनाएँ व्यक्त करता था। उसने बीते एक वर्ष में यह प्रश्न अपनी माँ से कई बार पूछा था और बार-बार उसने उत्तर टाल दिया था।

“क्या तुम यहाँ बहुत खुश हो?” गंगा ने हल्के से पूछा था; पर उसकी नीली आँखें संशय से भरी थीं।

देवव्रत ने अपने कंधे उचकाए—असन्तोष का एक और संकेत... गंगा ने सोचा।

“क्या यहाँ मेरा प्रशिक्षण पूरा हो गया है?”

यह अत्यन्त संकेतक प्रश्न था।

गंगा ने उसके माथे से बालों की लट हटाते हुए धीरे से कहा, “हाँ, लगभग।”

देवव्रत ने अपनी अधीरता और तत्परता प्रकट करते हुए पूछा, “अब क्या बाकी है?” उसकी बालों की हठी लट वापस उसके चेहरे पर आ गिरी।

गंगा ना में सिर हिलाती हुई दोबारा उसके बाल ठीक करने गई तो उसने अपना चेहरा दूर कर लिया।

देवव्रत का प्रशिक्षण सम्पूर्ण हो गया था और उसने सबकी अपेक्षाओं से बढ़कर प्रदर्शन किया था। गंगा ने उसके लिए विविध क्षेत्रों के श्रेष्ठतम शिक्षकों और गुरुओं की व्यवस्था की थी जैसे ऋषि वशिष्ठ, ऋषि परशुराम, शुक्राचार्य और बृहस्पति। देवव्रत हर क्षेत्र में उत्कृष्ट सिद्ध हुआ। गंगा देवव्रत को भारतवर्ष के हर प्रसिद्ध गुरुकुल में ले गई थी। ऋषि मार्कडेय ने उसे ब्राह्मण-ग्रंथों से कर्तव्य और धर्म की जटिलता का ज्ञान दिया; भगवान ब्रह्मा के सबसे बड़े पुत्र सनतकुमार से उसने अन्विक्षिकी, मानसिक और आध्यात्मिक विज्ञान पर प्रभुत्व प्राप्त किया; असुरों और दानवों के गुरु शुक्राचार्य ने उसे

समाज-शास्त्र और विशेष रूप से राजनीति-शास्त्र का ज्ञान दिया; और ऋषि बृहस्पति ने उसे शास्त्र पढ़ाए।

“मैं जानता हूँ कि आप मुझसे जो भी चाहती थीं, उन सभी विषयों में मैंने प्रवीणता प्राप्त कर ली है, माँ। आपको मुझसे बहुत आकांक्षाएँ हैं...।”

“जानते हो क्यूँ? गंगा ने पूछा। “मैं चाहती थी कि तुम सर्वश्रेष्ठ ही नहीं, बल्कि अद्वितीय बनो। ऐसी कुशलता का क्या लाभ, यदि उसका प्रयोग नहीं किया जाए। जिस ज्ञान और कौशल के बीज बोए हैं, उनकी फसल को भोगना भी आवश्यक है। तुम विश्व को अपना कौशल कब दिखाओगे, देवव्रत? तुमने सभी कलाओं और विषयों पर सर्वोत्कृष्टता का प्रमाण देवलोक में दे दिया है, पर तुम यहाँ के नहीं हो पुत्र।” गंगा ने निर्दयतापूर्वक कहा।

उसकी आँखों में असामान्य ज्वाला थी, “क्यों? मुझे एक अवसर तो दीजिए माँ।”

गंगा ने आह भरते हुए कहा, “देवव्रत, तुम कोई देव, उपदेवता या गंधर्व नहीं हो जिसे इंद्रलोक में रहने की अनुमति दी जाए! तुम मनुष्य हो, जिसे पृथ्वी पर ही जीना होगा।” उन्होंने सरलता से कहा, “तुम्हें अपने पिता के राज्य में जाना होगा, पुत्र।” परन्तु, मन-ही-मन वो विचार कर रही थी, यह इतना सरल नहीं है। पृथ्वीलोक अत्यन्त क्रूर और संकटपूर्ण स्थल है।

“इसका अर्थ है, यहाँ पर मेरा कार्य सम्पूर्ण हो गया है और अब मुझे अपने पिता से मिलना होगा, जिन्हें न मैंने पहले कभी देखा है न जाना है,” देवव्रत ने जबड़ा कसते हुए कहा। इस बार यह न तो विनती थी, न प्रश्न था... केवल स्वीकारात्मक कथन था।

उस भयानक क्षण में गंगा को भास हुआ कि माता के रूप में उसका कर्तव्य शीघ्र ही समाप्त होने वाला था। पुत्र का अपने पिता के पास जाने का समय आ गया था। माँ और पुत्र, दोनों के लिए यह सरल नहीं होने वाला था, पर देवव्रत जान-बूझकर भावशून्य था। वो अपने सम्मानित प्रस्थान से अप्रसन्न है। परन्तु, उसे अपने पुत्र को समझाना ही होगा कि माँ अपने पुत्र से जितना भी प्रेम करे, उसे अपने पिता के साथ रहना ही होगा; सन्तान को माता और पिता, दोनों की आवश्यकता होती है... एक सन्तुलित स्वर ने गंगा को सूचित किया। गंगा का बचपन, अपने स्नेही माता-पिता और बहन के साथ अत्यन्त उल्लासपूर्ण था; और आज वो अपने पुत्र को पिता के स्नेह और उनके साथ समय व्यतीत करने का अवसर देने से हिचकिचा रही थी। गंगा को अपने स्वार्थी विचारों के लिए स्वयं से धृणा हो रही थी, परन्तु उसे पुत्र से वियोग अधिक कष्टप्रद लग रहा था। वियोग—इस शब्द से ही उसका हृदय बैठ जाता। वो दुखी होकर सोचने लगी, मुझे भी शान्तनु से अलग होना पड़ा था, और वह शून्यता आज तक उसे सता रही थी। शान्तनु ने भी इतने वर्ष गंगा और अपने पुत्र से दूर रहकर बिता दिए...

गंगा जानती थी कि वो अविवेकी हो रही थी, पर ममता चतुरतम औरत को भी भावुक बना देती है। उसका हृदय तार-तार हो रहा था; वह अपने पुत्र को दूर नहीं करना चाहती थी...

“माँ?” देवव्रत ने अपने बड़े हाथ गंगा के नर्म हाथों में रखते हुए कहा, “मुझे यहाँ रहने के लिए और कौन-सा प्रमाण देना होगा?” उसने आतुर आँखों से अपनी माँ को देखते हुए कहा, “मैंने भगवान इंद्र का कई युद्धों में साथ दिया और हम सभी युद्धों में विजयी रहे।”

वह कठिनाई से मुस्कुराती हुई बोलीं, “तुम्हें आत्म-प्रशंसा करना नहीं आता, है न? मुझे पता है, तुम्हारे कारण ही देवों की लगभग हर युद्ध में विजय हुई। इंद्र भी असामान्य रूप से खुश दिख रहे हैं और मानते हैं कि उन्हें तुम्हारी कर्मी बहुत अनुभव होगी...।”

देवव्रत ने व्यंग्यपूर्वक कहा, “जब भगवान विष्णु ने मुझे दानवों के साथ युद्ध में विजय प्राप्त करने की बधाई दी तो इंद्र को विशेष खुशी नहीं हुई थी।”

“इंद्र को किसी भी तरह की प्रतियोगिता असहनीय है। उनका अहम कैसे स्वीकार कर सकता है कि एक पन्द्रह वर्ष के बालक ने उन्हें विजय दिलाई।” गंगा कंधे उचकाती हुई उपेक्षापूर्वक बोली। “वे तुमसे निश्चित रूप से बहुत स्नेह करते हैं, नहीं तो तुम्हें अपने इतने शक्तिशाली शस्त्र नहीं देते। इंद्र का ऐसा व्यवहार असामान्य है! इंद्र और हमारे त्रिदेव, विशेषकर भगवान शिव, तुम्हारे पृथ्वीलोक में वापस जाने से अधिक उत्साहित नहीं हैं। तुम तो शिवजी के प्रिय हो।”

देवव्रत ने माँ के हाथों को दबाते हुए विनती की, “फिर मैं नहीं जाऊँगा! मैं आपका भी पुत्र हूँ—गंगापुत्र—क्या मुझे आपके साथ भी नहीं रहना चाहिए?”

“अब नहीं,” वह अत्यन्त दुखी होकर सिर हिलाते हुए बोलीं।

गंगा का हृदय बैठा जा रहा था। देवव्रत को पृथ्वी पर एक दिन लौटना ही होगा—वह शापित था और उसे इसके बारे में बिलकुल पता नहीं था। क्या मैं उसे बता दूँ नहीं? किन्तु गंगा को उसे बताना ही पड़ेगा, इसके अलावा कोई विकल्प भी नहीं था। उसे अपने जन्म, अपने भूतकाल, वर्तमान और अब अपने भविष्य के बारे में जानने का अधिकार था। गंगा ने संयम और स्पष्टता से देवव्रत को सब कुछ बता दिया। वह टूट जाएगा...। उनके हृदय से आवाज़ उठी, पर अपने हृदय को कठोर करके वो आगे बोलती गई।

गंगा ऐसी स्त्री थीं जो अपनी भावनाओं को कभी प्रकट नहीं करती थीं; और देवव्रत इस बात से बहुत अचम्भित था कि वो इतनी अड़ी हुई क्यों थीं, और साथ-साथ अनिच्छुक भी। अब उसे सब कुछ स्पष्ट हो गया। वो पन्द्रह वर्ष का हो गया था और अब तक उसे अपने पिता से मिलने की जिज्ञासा कभी नहीं हुई थी। उसकी माँ ही उसका

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

सर्वस्व, उसका विश्व थी; वो उन्हीं के साथ रहना चाहता था...। देवव्रत स्थिर और तीखी दृष्टि से उन्हें ध्यानपूर्वक देखता रहा।

“तो आपने मेरे लिए उनको त्याग दिया।” उसने एक दुखदाई विराम के बाद दबी आवाज़ में कहा।

आँखों में आँसू लिए, उसकी माँ ने हाँ में सिर हिलाया।

“उन्होंने अपना सर्वस्व, अपनी पत्नी, और अपने पुत्र को मेरे कारण खो दिया। उस श्राप के कारण, जिसके साथ मेरा जन्म हुआ था।” देवव्रत ने हर शब्द पर बल देते हुए कहा।

गंगा ने धीरे से सिर हिलाया।

“यदि आप मुझे उसी समय डूबा देतीं, आप अभी भी उनके साथ होतीं, है न? आप दोनों केवल मेरे कारण अलग रहे।” देवव्रत अड़ा रहा।

गंगा के पास कोई स्पष्टीकरण नहीं था। माँ के चेहरे की व्यथा उसके हृदय को भेद रही थी; उनका मौन देवव्रत के अपराध को व्यक्त कर रहा था; उसी ने अपने माता-पिता को अलग कर दिया था।

उसने अपनी माँ से धीरे से पूछा, “क्या आपको कभी उनके पास वापस जाने की इच्छा नहीं होती?”

गंगा उसके प्रश्न की स्पष्टता से चौंक गई। वो निर्भीक था, भगवान और देवों से भी प्रश्न करने से नहीं हिचकिचाता था; स्पष्टवादी था, अशिष्ट नहीं।

गंगा उसे सम्भ्रमित होकर देखती रहीं। क्या यही उसकी इच्छा थी : तीनों साथ रहें? किन्तु यह तो सम्भव ही नहीं था... मात्र मृगतृष्णा थी...।

“हम स्वर्ग में रहते हैं, और तुम तो अब तक जान ही चुके हो कि मनुष्य किसी अन्य लोक में रहते हैं,” गंगा ने भावहीन स्वर में कहा, “मैं उनके साथ सदा के लिए तो रह ही नहीं सकती थी।”

“यदि मैं मनुष्य का पुत्र हूँ, तो मुझे जाना ही होगा,” देवव्रत ने धीरे से अत्यन्त विवेकी भाव से कहा, परन्तु उसकी पीड़ा गंगा से छिपी नहीं रही।

“आप उनकी पत्नी हैं, फिर भी आप उनसे इतने वर्षों तक दूर रहीं और मुझे भी उनसे दूर रखा...”

गंगा को पहली बार भय का अनुभव हुआ। कहीं उसका पुत्र उनसे क्रोधित तो नहीं, कि उन्होंने उसे अपने पास रख लिया?”

“... आप देवी हैं और स्वर्ग या हिमालय ही आपका निवास है... मैं अब बच्चा नहीं रहा माँ,” वह सौम्य स्वर में बोलता गया। अकस्मात, उसकी आँखों में ज्ञान की चमक थी; अब उसे ही इस विदाई को सुखकर बनाना होगा। वो अपनी माँ को इस तरह तड़पता और व्यथित नहीं देख सकता था। “आप ठीक कह रही हैं, अब मेरी यहाँ कोई

आवश्यकता नहीं। मेरा कार्य पूरा हो गया है। आपने माँ होते हुए मुझे बहुत स्नेह दिया और मेरा मार्गदर्शन किया; मुझे श्रेष्ठ गुरुओं और गुरुकुलों में शिक्षा-दीक्षा दिलवाई। अब, पिता से ज्ञान पाने का समय आ गया है।”

जैसे ही उसने शान्त स्वर में स्वीकृति के यह शब्द बोले, गंगा फूट-फूटकर रोने लगी और निराशा में झूब गई।

वह आतंकित होकर चिल्लाई, “पृथ्वी नर्क है, प्रिय पुत्र! यहाँ के विपरीत, जहाँ अनन्त सुख है; वहाँ केवल दुख, हिंसा, और निराशा है। मैं भगवान ब्रह्मा, विष्णु और महेश से विनती करूँगी कि वे तुम्हें यहाँ रहने की अनुमति दें; और मैं उसके लिए कोई भी संघर्ष करने के लिए तैयार हूँ।”

उनकी आवाज में तीव्र उत्तेजना थी और उनकी गहरी नीली आँखों में क्रोधपूर्ण असमंजस झलक रहा था। देवव्रत ने अपनी माँ को कभी इतना निर्बल और संवेदनशील नहीं देखा था। उसे अपने साथ-साथ माँ के लिए भी साहसी बनना पड़ेगा।

“माँ, व्यर्थ की लड़ाई का कोई लाभ नहीं। आप तो वैसे ही इतना दंड भोग चुकी हैं, अब देवों के आक्रोश से क्यों भिड़ना चाहती हैं?” देवव्रत ने आहत स्वर में कहा।

उसने अपनी माँ का हाथ थामते हुए कहा, “माँ, मैं मनुष्य हूँ, याद है?” वो लज्जापूर्वक मुस्कुराता हुआ, सिर हिलाता हुआ बोला। माँ ने सहजता से उसके लट को उसके कानों के पीछे कर दिया। “मुझे पृथ्वी पर ही जीना और मरना होगा माँ।”

उसके शब्दों का माँ पर तीखा असर हुआ और उन्हें वास्तविकता का ध्यान आया। उसके पुत्र को जाना ही होगा, पृथ्वी पर अपना जीवन जीना होगा, अपने हिस्से का कष्ट भोगना होगा और अन्त में वहीं मरना होगा। उसके बाद वह अपनी माँ के पास वापस आ जाएगा...

गंगा ने अपने आँसू छिपाने के लिए मुँह मोड़ लिया।

“उन्होंने रूखेपन से कहा, “चलो, चलते हैं।” कदाचित वो उस पीड़ादायक संवाद का अन्त कर देना चाहती थीं।



काली ने पराशर को फिर कभी नहीं देखा। दोनों एक दूसरे से अपरिचितों की तरह विदा हुए थे; न कोई प्रेम था, न आँसू न कोई द्वेष। धुँध हट चुका था और जैसे ही नाव तट पर पहुँची, वे पीछे मुड़कर देखे बिना ही चले गए।

काली बदल चुकी थी: भोली-सी लड़की से एक स्त्री में, जिसे अपनी कामुकता और पुरुषों पर अपनी शक्ति और प्रभाव का भली-भाँति ज्ञान था।

वह दोबारा कुँवारी थी; काली होंठ सिकोड़ते हुए हल्के से मुस्कुराती हुई सोच रही थी...। पर सामाजिक मापदंडों के अनुसार पवित्र नहीं। उसे इन बातों की कोई परवाह नहीं थी; उसे तो यह बहुत ही हास्यास्पद लगता था कि कौमार्य एक ऐसा पदक था जिसकी अभिलाषा हर पुरुष को थी और उनके लिए बहुमूल्य थी। किन्तु वह इससे मुक्त हो गई थी और अब जीवन और प्रेम, दोनों उसके अपने नियंत्रण में था।

अचानक एक नई काली उसके गाँव-वालों को दिख रही थी—मछली की दुर्गंध के स्थान पर सुगंध फैलाती। जो पहले उससे मुँह मोड़ते थे, अब उसे स्पष्ट प्रशंसा और विस्मय से देखते। उपेक्षा शीघ्र ही सराहना में बदल गई थी। लोग नदी-तट के जल की तरह सतही थे, उनमें नदी जैसी गहराई कहाँ। सुन्दर, साहसी और अल्हड़ काली, गाँव के युवकों पर अपने रूप का प्रभाव देख सकती थी जो उसे उनकी आँखों, उत्तेजित चेहरों, और रुकी हुई सांसों में स्पष्ट दिखता था। वो अपने प्रशंसकों का चयन ऐसे करती जैसे टोकरी में से सबसे श्रेष्ठ मछली चुन रही हो; मुखिया की पुत्री की हैसियत से नहीं परन्तु एक आकर्षक युवती की हैसियत से। काली अपने कर्मों और निर्णयों पर खेदहीन थी और अपनी नई पहचान बना रही थी। कामना से न वो लज्जित होती, न वासना से अविभूत। पराशर के साथ हुए प्रसंग के बाद उसे स्पष्ट हो गया था कि अपने लिए बेहतर जीवन बनाने में वही उसका सबसे शक्तिशाली शस्त्र था।

साथ-साथ काली को अपनी बौद्धिक क्षमता पर भी गर्व था। अब वो गाँव की समस्याओं का समाधान करने में भी हाथ बंटाने लगी थी, जैसे, पारिवारिक मतभेद सुलझाने में, किसी विद्यालय के छत की मरम्मत करवाने में, या बड़े व्यापारियों से मछलियों के लिए अच्छी कीमत वसूलने में। वो गरीबों की आवाज़ बन गई थी, एक ऐसी नायिका, जिससे लोग डरते थे। उसे तो अब सिपाही भी धमकाने से कतराते थे।

कुछ महीनों बाद, जब उसने अनायास ही अपने बाबा को पराशर के बारे में बताया तो वो बिलकुल भी चकित नहीं दिखे।

“आप जानते थे, है न बाबा?” उसे अचानक ध्यान आया।

“हाँ पुत्री, मैंने तुम्हें ऋषि के साथ इसलिए भेजा क्योंकि मैं जानता था कि वे तुम्हें कोई न कोई वरदान अवश्य देंगे।” बाबा शान्तिपूर्वक बोले

काली ने भी बड़े स्थिर आवाज़ में कहा, “मैं उनके शिशु को जन्म देने वाली हूँ।”

“एकदम योजना के अनुरूप।” उन्होंने रहस्यमयी ढंग से कहा।

“योजना? आपका मतलब है, शारीरिक सम्बन्ध का उपकार, बाबा?” उसने चौंकते हुए अपने बाबा से पूछा; परन्तु उसके पिता शान्तिपूर्वक उसे देखते हुए बोले, “कुछ पाने के लिए, कुछ देना पड़ता है। तुमने परिस्थिति को अपने अनुकूल बनाकर अपनी इच्छानुसार वरदान पाया है।”

वह हल्के से मुस्कुराती हुई बोली, “मैं तो अपनी शर्तों की सूची से उन्हें दूर कर रही थी—शाश्वत यौवन, मेरी अपनी अनुपम सुगंध, अक्षत कौमार्य...”

उसके पिता धीरे से बोले, “वो केवल तुम्हें ही नहीं पाना चाहते थे, उन्हें तुमसे पुत्र की कामना थी।”

वह चकित होकर हँसी।

दशराज उसे विस्तार से समझाते हुए बोले, “कोई साधारण पुत्र नहीं, बल्कि महान बालक। मेरी बात याद रखना पुत्री! यह पूर्वनिर्धारित है! अपने दादाजी वशिष्ठ की तरह ही पराशर को भगवान शिव से वरदान प्राप्त था कि उनका पुत्र ब्रह्मऋषि होगा।”

चावल और मछली का भोजन करते हुए उसके पिता ने उससे पूछा, “क्या तुम चिन्तित हो कि तुम्हारा पुत्र अवैध कहलाएगा? नहीं, ऐसा कुछ नहीं होगा। हम कुछ समय के लिए इस गाँव से दूर चले जाएँगे। मैं लोगों से कह दूँगा कि मैं अस्वस्थ हूँ और अपने चचेरे भाई के पास जा रहा हूँ। पुत्र के जन्म के बाद हम वापस लौट आएँगे।” वो सरलता से बोले और फिर थोड़ी सावधानी से पूछा, “तुम इस बच्चे को अपनाओगी न?”

काली अपने होंठों पर उँगलियाँ फेरती हुई बोली, “नहीं, हमने निर्णय किया है कि पराशर ही इस बच्चे का पालन-पोषण करेंगे। उन्होंने मेरी स्वतंत्रता का मान रखा है और यही मेरे लिए सही है, क्योंकि मैं न तो इस समय बच्चे के साथ बँधना चाहती हूँ, न ही अविवाहित माँ का जीवन जीना चाहती हूँ।” काली बेचैन होकर बोली, “मुझे और बहुत कुछ चाहिए। मैं तो उन पर विवाह की शर्त भी लगा सकती थी, किन्तु मुझे ऋषि की पत्नी बनकर आश्रम का जीवन नहीं चाहिए। मैं जन्म से राजकुमारी हूँ और एक दिन रानी अवश्य बनूँगी।”

बाबा हल्के से हँसते हुए बोले, “तुम बहुत महत्वाकांक्षी हो।”

उसने चुनौतीपूर्वक कहा, “क्या यह गलत है? मेरे निर्णय के पीछे यही एक कारण नहीं। मैं अपने पुत्र को अपमान और सामाजिक कलंक से बचाना चाहती हूँ, मैं नहीं चाहती कि कोई मेरे पुत्र को अवैध सन्तान कहे। माँ होने के नाते उसके लिए इतना तो कर ही सकती हूँ।”

बाबा ने रूखेपन से कहा, “मुझे तो भय था कि उसे त्याग दिया जाएगा।”

“जिस तरह मेरे पिता ने मेरा परित्याग किया था! उसने क्रोधपूर्वक कहा। ऐसे कर्म तो राजा-महाराजा करते हैं, मैं नहीं।”

“मुझे भी वही चिन्ता है, पुत्री।” वो जानते थे कि उनकी पुत्री इस बात से कितनी आहत है। “इतनी कम आयु में ही तुममें कितनी कटृता आ गई है!” वे चिन्तित स्वर में बोले।

“यही तो विडम्बना है न बाबा? यह मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है, है न? आपने मेरे बारे में बड़ी मोहक कहानी बुनी थी—कि मैं चेदि के राजा उपरिचर वसु और एक अप्सरा अद्रिका की पुत्री हूँ। मुझे आपकी कहानी अच्छी तरह याद है : राजा वसु को शिकार करते समय अपनी सुन्दर रानी गीरिका की बहुत याद आ रही थी। एक बार, गीरिका का स्वप्न देखते हुए वे कामोत्तेजित हो गए और उनका वीर्यपात हो गया। उन्होंने अपने वीर्य को एक पत्ते में बाँधकर एक बाज को दिया और उससे कहा कि उसे उनकी पत्नी तक पहुँचा दे, किन्तु रास्ते में ही एक दूसरे बाज ने उस पर हमला कर दिया, और वीर्य एक नदी में जा गिरा। नदी में उसे अद्रिका नामक मछली निगल गई, जो असल में शापित अप्सरा थी। लगभग दस महीनों बाद एक मछुआरे, यानि बाबा, आपने उस मछली को पकड़ लिया। जब आपने उसे काटा तो उसके पेट में दो शिशु थे—एक बालक और एक बालिका। आप न्यायपूर्वक दोनों शिशुओं को राजा के पास ले गए। बालक बड़ा होकर विख्यात मत्स्य राजा बन गया, और बालिका को मत्स्यगंधा का नाम दिया गया और उसका पालन-पोषण एक निस्सन्तान मछुआरे के घर हुआ। बच्चों की मत्स्य-माँ, अद्रिका, अपने श्राप से मुक्त हो गई और वापस स्वर्ग लौट गई।” काली ने उदास हँसी के साथ कहा। “आपने भी संसार को मूर्ख बनाने के लिए कैसी परिकथा बुनी, बाबा! किसकी रक्षा करने के लिए? राजा की, या मेरी—उनकी त्यक्त पुत्री की? मेरी माँ कौन थी? अद्रिका, वो विस्मयकारी अप्सरा, या एक अबला मछुआरिन जिसे राजा वसु ने बहकाकर गर्भवती बना दिया और उसे त्याग दिया; और जिसकी मृत्यु प्रसव के समय हो गई?” काली ने घृणापूर्वक पूछा। “वो आखिर कौन थी, बाबा?”

दशराज, उलझन से नहीं, बल्कि अविस्मरणीय द्वेष के कारण झेंप गए और बोले, “वो मेरी बहन थी,” उन्होंने धीमे किन्तु क्रोधित स्वर में कहा, “राजा वसु उससे सम्मोहित हो गए और...।”

काली को अपनी अपरिचित माँ के लिए टीस हुई। उसने मन-ही-मन प्रण किया, मैं उनकी तरह दयनीय अहेर नहीं बनूँगी।

वह कठोरता से बोली, “उन्होंने माँ से विवाह नहीं किया। वो उनके लिए क्या—कामुक निमिष मात्र थीं?”

दशराज का चेहरा कठोर हो गया। “हाँ, और अद्रिका भी मूर्खतापूर्वक आशा करती रही कि वो विवाहित राजा उससे विवाह करेगा। वो एक दिन कालिंदी नदी के तट से गुजर रहे थे, उनकी दृष्टि अद्रिका पर पड़ी। वो अत्यन्त सुन्दर थी और राजा उस पर समझने लगी...” वे दुखभरी आवाज में बोले। “राजा तुरन्त चेदि के लिए निकल पड़े और कभी वापस नहीं आए। मैंने अपनी बहन को समझाने का भरसक प्रयत्न किया कि वो उसे त्याग चुके हैं, पर अद्रिका उनकी प्रतीक्षा करती रही...” दशराज उन क्षणों

को याद करते हुए बोले। “वो गर्भवती थी, पर हताश नहीं हुई; वो शिशु को जन्म देना चाहती थी और तुम दोनों के जन्म के कुछ क्षणों के बाद ही उसकी मृत्यु हो गई। अद्रिका ऐसी पीड़ादायक मृत्यु की पात्र नहीं थी!” दशराज आक्रोश से बोले। “उसने मुझसे विनती की कि मैं बच्चों को राजा के पास ले जाऊँ, जिससे उन्हें श्रेष्ठतर जीवन प्राप्त हो...” उनकी आवाज़ काँप रही थी और गला भर आया था। “मैंने उसकी अन्तिम इच्छा का पालन किया। राजा ने पुत्र को तो स्वीकार कर लिया क्योंकि वो उस समय निस्सन्तान थे; तुम्हारे भाई को स्वीकार करने के बाद उनके पाँच पुत्र हुए। उन्होंने तुम्हें स्वीकार करने से मना कर दिया और मैं तुम्हें, अपने राजा और अप्सरा वाली काल्पनिक कहानी के साथ लेकर घर वापस आ गया। इसके पीछे मेरा भी स्वार्थ था—मैं तुम्हें अपने पास रखना चाहता था; मैंने सब कुछ तुम्हारे लिए किया पुत्री।” वे असहाय होकर बोले।

“मैं तो जन्म से राजकुमारी थी,” काली बलपूर्वक बोली। “मैं अपने जुड़वाँ भाई के समान ही राजा की सन्तान हूँ। मैंने सुना है कि वो अब मत्स्य का राजा बन गया है—वही मत्स्य-राज्य जिसे चेदि को विभाजित करके बनाया गया है। वो राज्य भर में सुनहरी, तैरती मछली वाले श्वेत ध्वज लगे रथ पर भ्रमण करता है और मैं यहाँ नाव चलाती हूँ और मछलियों का व्यापार करती हूँ। मुझे मेरे अधिकार से वंचित क्यों रखा गया?”

बाबा पराजित स्वर में बोले, “क्योंकि तुम स्त्री हो। राजाओं को राजकुमारों की आवश्यकता है, राजकुमारियों की नहीं। उनका बस चलता तो वह तुम्हें नदी में झूबा देते,” दशराज बोले।

अपने पिता के चेहरे की पीड़ा और व्यथा को देखकर काली ग्लानि से भर गई। “मैं आपसे क्रोधित नहीं हूँ, बाबा, मैं तो आपकी ऋणी हूँ, फिर भी मैं भूल नहीं सकती कि मुझे मेरे अधिकार से वंचित किया गया।”

बाबा सिर हिलाते हुए बोले, “तुम्हें राजकुमारी होते हुए भी एक सामान्य मनुष्य का जीवन जीना पड़ा; पर मृत्यु से तो अच्छा ही हुआ न?”

काली ने तिरस्कारपूर्वक पूछा, “जीवित, किन्तु शोषित। है न बाबा? मैं हमारे अपमान को कैसे भूल सकती हूँ? उन्होंने मुझे अपना नाम तो नहीं दिया, लेकिन मेरी देखभाल के लिए आपको कुछ सोने की मोहरें तो दे ही सकते थे, जिससे हमारी गरीबी दूर हो जाती? हमारी इस झोपड़ी को देखिए! वे न तो उदारता दिखा पाए, ना विवेक।” काली लम्बी सांस छोड़ती हुई कटुता से बोली। जो हुआ, उसकी गम्भीरता वो कभी नहीं भुला पायी। उसके साथ अन्याय हुआ था और अपने अधिकार को पाने की ज्वाला उसके अन्दर दहक रही थी।

“न नियति, न ईश्वर—स्वयं मैं ही अपनी खुशी और भविष्य के लिए उत्तरदायी होऊँगी। मैं अपने आपको वचन देती हूँ कि अब मैं कभी पीड़ित नहीं होऊँगी, न ही मेरे पुत्र को होने दूँगी। उसका पिता प्रसिद्ध और सम्मानित है, इसीलिए उसे उन्हीं के साथ रहना होगा। एक अविवाहित मछुआरिन के साथ रहने से अधिक सम्मान उसे अपने विख्यात पिता से मिलेगा।”

वह होंठ कसते हुए, दृढ़तापूर्वक बोली, “मुझे अपनी आकांक्षाओं का सदुपयोग करना होगा। मुझे किसी शक्तिशाली व्यक्ति का प्रयोग करके उनका लाभ उठाना होगा, जैसा मैंने ऋषि पराशर के साथ किया। यदि मेरी सुन्दरता और वासना किसी पुरुष को कमजोर कर सकती है, तो मैं उनका अपने लाभ के लिए प्रयोग अवश्य करूँगी; मैं अपने उद्देश्य और इच्छाओं की पूर्ति के लिए सौन्दर्य और आकर्षण का प्रयोग करूँगी। धनवान और कुलीन लोगों की तरह सिद्धान्तों का पालन करने का सामर्थ्य मुझमें नहीं है। सदाचारी लोग कह सकते हैं कि यह न्यायसंगत नहीं है, पर मुझे अनैतिक कहलाने में कोई झिझक नहीं। मैं अपनी माँ की तरह विस्मृत दुर्घटना का शिकार बनकर नहीं जीना चाहती। यदि पुरुष, नारी का उपयोग कर सकते हैं, तो नारी भी कुछ पाने के लिए पुरुष का उपयोग क्यों नहीं कर सकती? सौन्दर्य और वासना—अपने उद्देश्य को पाने के साधन मात्र हैं।”

दशराज को अपनी पुत्री के शब्दों से बिलकुल आश्वर्य नहीं हुआ। उन्हें अपनी पुत्री में चतुराई और विवेक दिखाई दिया। वो भोली बालिका कहीं खो गई थी; उसके स्थान पर एक प्रताड़ित स्त्री खड़ी थी। दशराज ने उसी क्षण प्रण किया कि वो किसी दिन अपनी पुत्री को न्याय दिलाकर रहेंगे।

## पिता

शान्तनु को गंगा के तट पर बैठकर सूर्यास्त देखना बहुत अच्छा लगता था। उन्हें अब भी गंगा की कमी बहुत सताती थी। उन्होंने कई स्त्रियों के साथ सम्बन्ध और सम्पर्क से गंगा को भुलाने का भरसक प्रयत्न किया और अपनी कड़वाहट मिटानी चाही, पर विफल रहे। पराजित होकर उन्होंने सभी इंद्रिय सुख त्याग दिए और अपनी ऊर्जा पूरी तरह प्रजा और राज्य की सेवा, सेना के देखरेख और राज्य का विस्तार करने में समर्पित कर दी। फिर भी वे अकेलेपन और थकावट से त्रस्त रहते। दूबते सूरज की विसरित आभा उन्हें अपने जीवन का स्मरण कराती—उदासीन और व्यथित, अपने पुत्र और पत्नी के लिए तड़पते हुए...

अचानक नदी में हुई खलबली से उनके विचार टूट गए। क्या ये मेरी कल्पना है या नदी सचमुच अस्थिर हो गई है? ऊँची लहरें उठकर तट से जाकर जोरों से टकरा रहीं थीं। छोटी-छोटी नाव लहरों पर खतरनाक तरीके से हिचकोले खा रही थीं। मौसम साफ था पर नदी चंचल लग रही थी। शान्तनु उठे, और कारण का पता लगाने के लिए तट पर चलने लगे। वो कुछ एक मील चले होंगे कि अचानक रुक गए। उनके सामने एक लम्बा युवक खड़ा था जो नदी में तीर चला रहा था। उसका एक तीर हजारों तीरों में खंडित हो जाता और नदी के ऊपर एक बाँध-सा बन जाता; जल तीरों की दीवार से टकराकर मटमैले बवंडर की तरह गिरता। शान्तनु युवक की क्रीड़ा को हँसते हुए देखते रहे। शक्तिशाली गंगा के साथ कौन खेल रहा है? ये युवक तो गंगा को चोट पहुँचा रहा है! इस विचार से उन्हें अचानक ही क्रोध आ गया और उन्होंने युवक से मुकाबला करने का निश्चय कर लिया। पर उस युवक की कोई बात उन्हें रोक रही थी।

वह एक कदम आगे बढ़ाते, उससे पहले ही युवक उनकी छाती पर निशाना लगाए खड़ा था। युवक इतनी तेजी से मुड़ा कि शान्तनु को सँभलने का अवसर ही नहीं मिला; और तभी उन्हें ध्यान आया कि वे निशस्त्र थे।

शान्तनु ने गम्भीरतापूर्वक प्रश्न किया, “क्या ये तुम्हारे लिए खेल है? तुम तीरों से नदी पर बाँध क्यों बना रहे हो?”

युवक ने कंधे उचकाते हुए सरलतापूर्वक कहा, “ओह! मैं तो अपनी माँ के साथ खेल रहा था!”

शान्तनु ने क्रोधपूर्वक कहा, “तुम नदी को चोट पहुँचा रहे हो; और तुमने एक राजा पर तीर साधा है!”

युवक के हाथ स्थिर थे और वो शान्तनु के क्रोध से निर्भीक होकर खड़ा रहा।

शान्तनु उस युवक के दुस्साहस को देख त्योरियाँ चढ़ाते हुए बोले, “मैं तुम्हें राज-द्रोह और राजा की हत्या करने के प्रयत्न में बन्दी बना सकता हूँ।”

युवक ने प्रश्न किया, “आपकी तलवार कहाँ है राजन?”

शान्तनु क्रोधपूर्वक बोले, “मैं तो यहाँ विश्राम कर रहा था।”

युवक ने विनम्रतापूर्वक राजा को डॉटते हुए कहा, “राजा कभी विश्राम नहीं करते; न अपने लिए, न प्रजा के लिए। उन्हें उनकी और अपनी सुरक्षा के लिए सदैव सशस्त्र होना चाहिए।” युवक अपने चारों ओर देखता हुआ बोला, “आपके अंगरक्षक कहाँ हैं? क्या आपका उनके बिना घूमना-फिरना खतरनाक नहीं? मैं तो बड़ी सरलता से आपको, आत्मसुरक्षा के लिए मार सकता था।” वो नटखट स्वर में बोला। जब शान्तनु ने उसे उत्सुकतापूर्वक देखा तो युवक ने स्पष्टीकरण देते हुए कहा, “आप ही मेरे पीछे से आए थे राजन।”

तभी एक मीठी, कोमल आवाज आयी, “उन्हें सताना बन्द करो, देव!” शान्तनु उस आवाज की ओर मुड़ते, उससे पहले ही युवक ने अपना धनुष नीचे रखते हुए कहा, “प्रणाम पिताजी।” उसका सिर झुका हुआ था और हाथ नमस्कार मुद्रा में थे।

यदि उस समय देवव्रत ने सामने देखा होता तो उसे न जाने कितने भाव उस प्रौढ़ चेहरे पर दिखते।

“मेरा पुत्र?” शान्तनु ने धीरे से पूछा।

उसी मीठी कोमल आवाज ने उत्तर दिया, “हाँ! आपका पुत्र, जैसे मैंने आपको वचन दिया था।” शान्तनु को वह आवाज अत्यन्त परिचित लगी।

गंगा! वो अभी भी वैसी ही लग रही थी, जैसा उन्होंने उसे अन्तिम बार देखा था। लम्बी, सुडौल, गोरी और कोमल; अपने कमर तक गिरते लम्बे, काले बालों में अलौकिक लग रही थी। उसकी, हल्की नीली आँखों में आँसू छलक रहे थे... या उनमें असीम आनन्द था?

शान्तनु का हृदय जोरों से धड़कने लगा। ये कोई स्वप्न तो नहीं था!

गंगा ने अपनी उँगलियों से हल्के से उन्हें छुआ और अपने हाथों से उनकी बाँहों को थामकर उन्हें सँभाल लिया। पुत्र ने उनके कंधे थाम लिए।

पहली बार शान्तनु ने ठीक से अपने पुत्र को देखा। वो उनसे भी अधिक लम्बा था, उसका शरीर दुबला था पर उसके कंधे चौड़े और बलवान थे। वो अपनी माँ के समान बहुत गोरा था, पर उसका चौड़ा माथा, काले लम्बे केश, हल्की भूरी आँखें, तराशी हुई नाक और पतले होंठों के कारण वो योद्धा नहीं, ऋषि जैसा लग रहा था। सोलह वर्ष का

होते हुए भी उसमें तनिक भी बालपन नहीं था, वो परिपक्व पुरुष जैसा था। उसकी वास्तविक आयु केवल उसकी कोमल और अबोध आँखों में झलकती थी। वो जब मुस्कुराता, उसके गढ़े हुए चेहरे पर लज्जाभरी अनिश्चितता छा जाती।

गंगा अचम्भित शान्तनु को चिढ़ाती हुई बोली, “अब उसे धूरना बन्द कीजिए; ये हमारा पुत्र है! ये अब बालक नहीं रहा, सर्वज्ञानी बन गया है। मैंने इसे अपने वचन के अनुसार राजनीति, अध्यात्म, धर्म और युद्धकला का परम-ज्ञानी बना दिया है। वो क्षत्रिय धर्म का पालन ऐसे करेगा जैसा आज तक किसी ने न किया होगा, और न भविष्य में कोई करेगा। युद्ध कला में वो ऋषि परशुराम जितना ही प्रवीण है...”

शान्तनु ने अविश्वास से कहा, “परशुराम? वे तो स्वयं सर्वश्रेष्ठ योद्धा हैं, किन्तु उन्हें तो योद्धाओं से घृणा है; फिर वे देवव्रत को अपना शिष्य बनाने के लिए सहमत कैसे हुए?”

गंगा हल्के से अपना सिर हिलाती हुई सरलतापूर्वक बोली, “मैंने उनसे बहुत विनती की, अनुनय-विनय किया, तब जाकर परशुराम हमारे पुत्र को अपना शिष्य मानकर उसे धनुर्विद्या के गूढ़ रहस्य और ज्ञान देने के लिए सहमत हुए।”

शान्तनु को अपने कानों पर विश्वास ही नहीं हो रहा था। “फिर तो हमारे पुत्र की निपुणता अद्वितीय होगी!”

गंगा मुस्कुराती हुई बोली, “शान्तनु, मैंने बहुत कष्ट करके हमारे पुत्र को सबसे श्रेष्ठ गुरुजनों से शिक्षा प्राप्त करवाई। हमारे पुत्र ने ऋषि वशिष्ठ से वेदों और वेदांत का ज्ञान प्राप्त किया, शुक्राचार्य से विज्ञान और कला सीखी। अब आप अपने पुत्र को स्वीकार कीजिए— सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर और नीतिज्ञ, जो अपने पिता और अपने वंश को अविस्मरणीय प्रसिद्धि दिलाने के लिए नियत है... कुरु वंश का महानतम व्यक्तित्व।”

देवव्रत ने कहा, “मैंने अपनी सारी अपेक्षाएँ पूरी की हैं और भविष्य में भी करता रहूँगा!”

शान्तनु खुशी से हँसते हुए बोले, “इसकी विनम्रता अत्यन्त मनोहारी है।”

गंगा समझ गई कि उसके जाने का समय आ गया है। उसने पिता और पुत्र को मिला दिया था। उसने अन्तिम बार अपने पुत्र को देखा; उसके माथे पर गिरती धुँधराले बालों की लट हटाती हुई... स्वर्ग से पृथ्वी, या उसके लिए नरक तो नहीं... वो विचार करती हुई, अपने आँसुओं को रोकती रही। उसे भय था कि कहीं उसके आँसू धरती को सुखा न दें। उनका पुत्र, जो अपनी माँ के संसार को छोड़ने के लिए अनिच्छुक था, अब एक ऐसे प्राचीन राजमहल में राजकुमार बनकर फँसने वाला था, जिसमें वह कभी स्वयं रहती थी और छोड़ आयी थी।”

“अपने पुत्र को अपने साथ राजमहल में ले जाइए,” वह हल्की से दुखभरी मुस्कुराहट के साथ बोली। फिर देवव्रत की ओर मुड़ती हुई बोलीं, “मैं और अधिक नहीं

रुक सकती। पुत्र, मुझे वचन दो कि तुम अपने पिता और इस राज्य की देखभाल करोगे। इन दोनों कार्यों में मुझे कभी निराश मत करना। तुम्हारे पिता अब वृद्ध हो गए हैं, पर इस सत्य को स्वीकार नहीं करना चाहते,” गंगा हँसती हुई बोली।

देवव्रत ने धीरे से सिर हिलाया। उसका गला भर आया था और उसके हृदय में तीव्र पीड़ा हो रही थी। वो उसे छोड़कर जा रही थीं, सदा के लिए। अपने पिता से मिलने की भावनाएँ अभी थमी भी नहीं थीं कि उसे इस असीम दुख का सामना करना पड़ रहा था। अपने आपको माँ से एक अन्तिम बार गले लगाने से रोकने के लिए उसने अपनी मुट्ठी बाँध ली; इसलिए नहीं कि वो अपनी भावनाओं को व्यक्त नहीं करना चाहता था, बल्कि इसलिए कि उसकी माँ दृढ़ रह सकें। उसके पास उसके पिता होंगे, पर उसकी माँ के साथ कौन होगा? स्वर्गलोक जितना मनोरम था, उतना ही भावशूच्य और एकाकी।

वो झुककर उनके चरण स्पर्श करता हुआ धीरे से बोला, “आप जब चाहें, मुझसे मिलने आइएगा माँ। आप आएँगी न?”

“हाँ पुत्र, अवश्य आऊँगी!” गंगा निर्जल आँखों के साथ, उसके बालों को कानों के पीछे समेटती हुई बोली। देवव्रत को उनकी आवाज में आँसुओं का कंपन स्पष्ट सुनाई दे रहा था। उसे अपने हाथों पर उनके उष्ण हाथों का स्पर्श महसूस हुआ, पर वो उन्हें थाम पाता, इससे पहले ही वो उन दोनों को छोड़कर शीघ्रता से जल के बवंडर में खो गई।

देवव्रत अपने उदास पिता का हाथ पकड़े हुए सोच रहा था... एक कथा का अन्त हुआ और दूसरे का आरम्भ होने वाला था...

बच्चे का जन्म समय से पहले ही हो गया था।

जैसा पराशर ने कहा, बालक का जन्म हुआ था। काली बहुत घबराई हुई थी। उसने अपने गोद में चैन से सोते हुए शिशु को देखा। वो अपने पिता के समान गोरा नहीं, बल्कि उसके जैसा साँवला था; उसके बाल काले थे और आँखें गहरी और पलकें घनी थीं। काली को बहुत गर्व हो रहा था; उसने अपनी छाप शिशु पर छोड़ी थी। वो उसका पुत्र, उसकी पहली सन्तान था, परन्तु, उसे शिशु का त्याग करना होगा।

ऋषि पराशर ने शिशु को अपने आश्रम में ले जाने के लिए एक स्त्री को भेजा था। वचन के अनुसार वही अपने पुत्र का लालन-पालन करने वाले थे। उन्होंने काली को अपने पुत्र से मिलने की पूरी स्वतंत्रता दी थी, पर काली क्या ऐसा करेगी?

काली सोते हुए बच्चे के गाल को हल्के से थपथपाते हुए धीरे से बोली, “कृष्ण द्वैपायन, यहीं तुम्हारा नाम है। कृष्ण, क्योंकि तुम मेरी तरह साँवले हो और द्वैपायन, क्योंकि तुम्हारी उत्पत्ति ज्ञान, विवेक और समृद्धि के जल से घिरे एक द्वीप पर हुई थी।”

काली ने बेद्धिझक शिशु को उस स्त्री को सौंप दिया और वो सिर झुकाती हुई जितनी शीघ्रता से आयी, उतनी ही शीघ्रता से शिशु को लेकर चली गई। काली अब भी चकित थी कि वो किसी अपरिचित से क्यों मिली और उनके पुत्र को जन्म भी दे दिया। सब कुछ किसी कारण के लिए ही होता है। ऐसा क्या कारण होगा जिसके लिए उसने ऋषि पराशर जैसे अन्तर्यामी ऋषि से हुई क्षणिक भेंट को पूर्णता तक पहुँचा दिया? अपने घर आए अतिथि के पुत्र की माँ बन गई और किसी उपहार की तरह शिशु को उन्हें वापस कर दिया।

उसके अन्दर तर्कहीन क्रोध और निराशा की लहर दौड़ गई। उसे अपने जीवन से घृणा हो रही थी—निरन्तर अनजान लोगों को नाव में नदी पार कराना उसे किसी निष्ठुर उपहास जैसा लगता था। वो लोगों को उनके गंतव्य तक पहुँचा रही थी, पर उसे स्वयं अपनी यात्रा का अन्त नहीं दिख रहा था। सच तो ये था कि, उसके क्षितिज में तो कोई यात्रा ही नहीं थी, जिस पर निकला जाए और पार किया जाए।

जब उसे कभी-कभी अपने पुत्र की कमी अनुभव होती, तो वो चौंक जाती। वो केवल एक सप्ताह उसके पास था, फिर भी वो एक ही था जिसे वह अपना कह सकती थी। वो उसे परिवार और उसके अस्तित्व का बोध कराता था। काली उसकी माँ थी और वो उसका अपना पुत्र। उसके पिता के विपरीत—अपना...

उसके असली पिता, विख्यात राजा वसु आखिर कौन थे, जिन्होंने उसे त्याग कर उसके जुड़वाँ भाई को अपना लिया था? उन्होंने उसे इतनी सरलता से कैसे त्याग दिया?

काली उस विचार से ही काँप गई : उसने भी अपने पुत्र का त्याग कर दिया था; बड़ी सरलता से। परन्तु यह अच्छा ही हुआ कि उसका पुत्र अपने पिता के पास था, उसके पास नहीं। वो सम्मान के साथ बड़ा होगा, और उसे श्रेष्ठतम शिक्षा प्राप्त होगी। उसने वही निर्णय किया जो उसके पुत्र के लिए उत्तम था, और उसके साथ ही जीवन का एक अध्याय समाप्त हो चुका था।

बार-बार उसके विचार अपने माता-पिता पर आकर रुक जाते। उसकी माँ तो अंधकार से घिरा जीवन जीकर चल बसीं थी। क्या वो भी इस गन्दे, दुर्गंध से भरे गाँव में, टूटे-फूटे घर में अपना जीवनयापन करेगी? क्या वो किसी मछुआरे या साधारण गाँव वाले से विवाह करके साधारण जीवन जीएगी? काली के अन्दर आवेश की शीत लहर दौड़ गई। वो अपनी माँ की तरह असहाय नहीं होगी, पृथकता का जीवन जीती, तिरस्कारपूर्ण और मर्यादाहीन मृत्यु मरती। उसने उग्रतापूर्वक प्रण किया कि वो दोबारा कभी अपना उपयोग नहीं होने देगी, कभी नहीं! पराशर भी राजा वसु की तरह ही उत्तेजना और अविवेकी क्षण में बहक गए थे। यदि एक के पास शक्ति थी, दूसरे के पास ज्ञान—दोनों प्रभावशाली और प्रतापी थे—निर्बल और असुरक्षित पर हावी होते। पर अब वो न तो निर्बल थी, न असुरक्षित।

एक दिन उसने दशराज से सीधे-सीधे पूछा, “मेरे पिता कौन थे? आपने उनके लिए काम किया है न? मुझे उनके बारे में बताइए बाबा।”

“जिससे तुम उनसे अधिक घृणा कर सको या थोड़ा कम द्वेष कर सको?” दशराज ने तीक्ष्णता से प्रश्न किया।

काली सिर हिलाती हुए बोली, “नहीं, मैं प्रयत्न करूँगी कि सब कुछ जाने बिना उनकी आलोचना न करूँ।”

दशराज अपनी पुत्री को ध्यानपूर्वक देखते हुए बोले, “तुम्हारे पिता अत्यन्त रोचक व्यक्ति हैं, और हमेशा से थे। वे पुरु वंश के उत्तराधिकारी थे, पर उन्हें राज-पाट से कोई लगाव नहीं था। उन्हें तो ऋषि बनना था इसलिए छोटी आयु से ही ध्यान और साधना करने लगे थे। वे प्रबुद्ध ऋषि बनने के इतने समीप आ गए थे कि भगवान इंद्र भी चिन्तित हो गए थे। उन्होंने घबराकर हमेशा की तरह राजकुमार की तपस्या भंग करने के लिए अप्सरा या औरत को नहीं भेजा; अपितु उन्हें दो अद्वितीय प्रलोभन दिए : शाश्वत आमोद का जीवन, और देवों की मित्रता। उसके अतिरिक्त, इंद्र ने उन्हें चेदि राज्य दिया, जो पृथ्वी का सबसे धनाढ़्य राज्य था। चेदि की धरती उपजाऊ और पावन थी, पशु और वन्य जीवन से भरपूर, खनिज पदार्थों और मूल्यवान रत्नों से भरी; और वहाँ की प्रजा नेक और निष्ठावान थी। अन्त में इंद्र ने उन्हें एक अद्भुत रथ का प्रलोभन दिया, वही जिसे उन्होंने वसु के प्रख्यात पूर्वज राजा ययाति को भी दिया था। ये ऐसा विमान था जिसकी कामना विश्व के हर राजा को थी। वसु मान गए और विश्व भर में भ्रमण के कारण वे उपरिचर-वसु कहलाए—अर्थात ऊपर उड़ने वाले! वसु जितने प्रख्यात हैं, उतने ही दयालु भी...”

काली उपहासपूर्वक गुराई।

दशराज उसे अनदेखा करते हुए बोलते गए, “उपरिचर-वसु ने इंद्र की सहायता से चेदि पर आक्रमण किया और आश्वर्यजनक रूप से किसी राजकन्या से नहीं, बल्कि कोलाहल की गिरिका नामक पहाड़ी लड़की से विवाह किया। वो उन्हें तब मिली, जब वे सुक्तिमती नदी पर बाँध बनवा रहे थे। गिरिका के विषय में ऐसे लोकवाद थे कि उसका जन्म संदिग्ध था।”

“क्या? आपका तात्पर्य है कि उसका जन्म बलात्कार के कारण हुआ था?” काली भौंचककी रह गई।

“किसी को सत्य पता नहीं था, और बुरे लोकवादों से बचने के लिए उसके जन्म के विषय में सुविधाजनक ढंग से कथाएँ रच दी गईं। इन सभी घिनौनी बातों को अनसुना करके राजा वसु उस अनाथ लड़की से प्रेम कर बैठे और उससे विवाह कर लिया।”

काली क्रोधित होकर चिल्लाई, “इसके बावजूद उन्होंने मेरी माँ को बहकाया?”

दशराज हताश होकर सिर हिलाते हुए बोले, “हाँ, वो विवाहित हैं और अपनी पत्नी से बहुत प्रेम करते हैं, इसीलिए उन्होंने अद्रिका को नहीं अपनाया। वो मेरी बहन के साथ एक कमजोर क्षण में अभिभूत हो गए। उन्हें उसका बहुत खेद था, किन्तु उन्होंने बालक को तो अपना लिया... क्योंकि उन्हें उत्तराधिकारी की आवश्यकता थी; पर उन्होंने तुम्हें मुझे सौंप दिया। कोई भी अवैध पुत्री को क्यों अपनाता? ऐसी राजकुमारी से कौन विवाह करेगा? मुझे नहीं पता कि राजवंशियों के मस्तिष्क कैसे काम करते हैं, पर मैंने तुम्हें खुशी से अपना लिया। तुम मेरा लहू हो!”

काली की आवाज थोड़ी नर्म पड़ गई और उसने उदास स्वर में पूछा, “इसलिए कि मैं अद्रिका की एकमात्र स्मृतिचिन्ह थी?” उसे अपने पिता के लिए बहुत दुख हो रहा था, जिन्हें अपनी बहन की व्यथा और मृत्यु का साक्षी बनना पड़ा। काली बाबा से अप्रतिबन्धित प्रेम करती थी, परन्तु आज पहली बार उसे उनके आत्मसम्मान और सत्यनिष्ठा पर गर्व हो रहा था।

“बाबा, क्या मेरे साथ इतिहास दोबारा दोहराया जाएगा?” काली ने डरते हुए बाबा से पूछा। उसका चेहरा बहुत उदास था। “पराशर के कर्मों के लिए क्या मेरे पुत्र को भी वही अपमान और अस्वीकृति सहनी पड़ेगी? क्या मेरा अतीत उसके भविष्य को त्रस्त करेगा? क्या मेरा पुत्र भी मुझसे वैसी ही घृणा करेगा, जैसे मैं अपने पिता से करती हूँ?” काली अपने हाथों में मुँह छिपाए रोने लगी। “मुझे मेरे प्रश्नों का उत्तर नहीं पता; मुझे नहीं पता कि मैं किससे अधिक द्वेष करती हूँ—मेरे पिता से, पराशर से, उनकी वासना से, या अपने आपसे!”

“अपने लिए इतनी कठोर मत हो पुत्री,” दशराज उसके कंधों को सहलाते हुए बोले। “तुम्हारा पुत्र उसके पिता के पास है। यही महत्वपूर्ण तथ्य है। तुम्हें अपने तरीके से जीवन जीने की स्वतंत्रता है। तुम यही चाहती थीं न?”

उसने क्रोधित होकर प्रश्न किया, “हाँ, पर मैं किस बात की निमित्त थी?”

“उस विलक्षण प्रतिभा के जन्म की,” दशराज धीरे से बोले। “मैंने तुमसे पहले ही कहा था कि पराशर धन्य थे। वे जानते थे कि वे कभी विवाह नहीं करेंगे। तुममें उन्हें वो आदर्श स्त्री दिखी जो उनके पुत्र को जन्म दे सकती थी; उनका वो पुत्र जो पूर्वनिर्धारित था।”

काली उपेक्षापूर्वक बोली, “एक अबला नाविका जिसे वह शोषित कर सकते थे?”

“नहीं; ऐसी स्त्री जो सामाजिक रीतियों की परवाह नहीं करती, जिसमें परिस्थिति और उसके परिणाम का सामना करने का साहस हो। उन्हें अपना असाधारण पुत्र, एक असाधारण स्त्री से ही चाहिए था। वो तुम हो पुत्री। इस बात को कभी मत भूलना। वो तुम्हारी पृष्ठभूमि जानते थे और तुम्हारे अन्दर धधकते क्रोध को पहचानते थे। इसीलिए उन्होंने तुम्हारी सारी शर्तें मान लीं; जिससे तुम और सशक्त हो जाओ। यह मात्र वासना

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

और सम्मोहन की घटना नहीं थी; तुम इसके फलस्वरूप सम्पूर्ण नारी बन गई हो। तुमने न केवल एक पुत्र को जन्म दिया, इससे तुम्हारा भी पुनर्जन्म हुआ है।”

काली चुपचाप बाबा की बातें सुनती रही, ये जानती थी कि वो उस द्वेष से कभी मुक्त नहीं होगी जिसे वो बचपन से पाल रही थी; उस राजसी पिता के लिए जिनके विचारशून्य निर्णय ने उसके भाग्य और भविष्य को ध्वंस कर दिया था; अपनी माँ के साथ हुए अन्याय के लिए, अपने शोषण का अवसर देने के लिए; अपनी गरीबी के लिए। उसका क्रोध और द्वेष उसके चारों ओर फैली मछलियों की दुर्गंध जितना ही व्यापक था; नदी की उन लहरों जैसे जो उसकी नाव को पटक सकते थे और उसे अपने बवंडर में डुबा सकते थे। उसने दृढ़निश्चय कर लिया कि वो अब कष्ट नहीं भोगेगी, परन्तु जीवित रहने के लिए संघर्ष अवश्य करेगी। कभी-न-कभी उसका समय अवश्य आएगा।

अपने मन में उभरते विचारों को हटाने के लिए उसने जोर से सिर हिलाया और तीखेपन से बोली, “मैं पुरुषों के तौर-तरीके समझ गई हूँ। मैंने अपने जन्मदाता पिता और पराशर, दोनों के व्यवहार को देखा है—दोनों अभिलाषा और कामुकता से प्रेरित हैं, परन्तु भावनाओं से निर्लिप्त। मैंने भी पुरुष की तरह प्रेम करना सीख लिया है—भावनाहीन प्रेम; और मैं इस शिक्षा को जीवन में कभी नहीं भूलूँगी।”

## युवराज

देवव्रत ने मेरु-पर्वत की तरह ही राजमहल को अपना घर बना लिया। उसे अपनी माँ और मेरु-पर्वत की बहुत याद आती थी, पर उसे अपने वृद्ध पिता से भी बहुत लगाव था और वो जानता था कि उन्हें उसकी अधिक आवश्यकता है। सर्वे, सूर्योदय के समय पिता के साथ उपवन में सैर करते हुए उसे एक मनमोहक और आनन्दमय दिनों की शुरुआत का अनुभव हुआ और उसे मेरु-पर्वत पर माँ के साथ बिताए बचपन के उल्लासपूर्ण दिनों की याद आ गई। अचानक उसने प्रेमपूर्वक अपने पिता के दुर्बल हाथों को थाम लिया। वो उन्हें अपने साथ पाकर बहुत खुश था; उसे पता था कि वे अत्यन्त एकाकी और उदास थे, और गंगा को बहुत याद करते थे। देवव्रत अपनी माँ की कमी को कभी पूरा नहीं कर सकता था, किन्तु उसे आशा थी उसकी उपस्थिति उसके पिता के चेहरे पर मुस्कुराहट अवश्य ला सकती है। दोनों भावुक होकर वापस राजमहल में प्रविष्ट हुए; जलपान और मिठाइयों को देख देवव्रत को अपना बचपन याद आ गया। आनन्दमय वर्तमान, बीते दिनों के छाप के साथ मिलकर देवव्रत के हृदय को भेद रहे थे; फिर भी वह खुश था।

आश्चर्यजनक रूप से देवव्रत ने देखा कि राजमहल में उसके पिताजी के अतिरिक्त और कोई परिवार का सदस्य नहीं था। राजमहल में ममता, वात्सल्य और मातृत्व का अभाव स्पष्ट था क्योंकि वहाँ दस वर्षीय कृपि के अलावा कोई स्त्री नहीं थी। कृपि और उसके जुड़वाँ भाई कृपा को देवव्रत के पिता ने गोद लिया था जब वे उन्हें जंगल में पड़े मिले थे। न जाने कौन ऐसे निष्ठुर माता-पिता होंगे जो ऐसे असहाय बच्चों को खतरनाक जंगल में छोड़कर चले जाते हैं? मनुष्य कभी-कभी जानवरों से भी क्रूर हो सकते हैं।

इंद्रलोक में देवव्रत अप्सराओं, गंधर्वों, देवों, ऋषियों और गुरुओं से घिरा रहता था। विश्वकर्मा, वसु, तिम्बुर, इंद्र, वरुण, अग्नि, मेनका, रम्भा और उर्वशी... सब उसके परिवार के सदस्य थे और उसे समय-समय पर उनकी बहुत याद आती।

उत्सुक बालक की तरह शान्तनु अपने पुत्र और अपनी पत्नी के जीवन की हर छोटी-बड़ी बात जानना चाहते थे। क्या गुरु परशुराम अपनी ख्याति के अनुरूप कठोर थे? क्या शुक्राचार्य भी उतने ही कटु थे? देवव्रत धैर्यपूर्वक पिताजी के हर प्रश्न का उत्तर देता। शान्तनु, गंगा की प्रशंसा करते नहीं थकते और उनकी बातें सुनकर देवव्रत के मन

में कई भावनाएँ एक साथ उठतीं। वो अपनी माँ के विषय में चर्चा नहीं करना चाहता था क्योंकि उसे उनकी कमी बहुत खलने लगती। जब भी वो अपनी माँ के विषय में किसी प्रश्न का उत्तर देता, उसे ध्यान आ जाता कि वो अपने माता और पिता, दोनों के साथ कभी नहीं रह पाएगा—उसे एक के साथ रहने के लिए दूसरे को खोना पड़ेगा। उसके पिताजी गंगा के बारे में जितने प्रश्न करते, देवव्रत उतना ही मौन हो जाता।

शान्तनु दिन में कई बार देवव्रत से कहते, “तुम अपनी माँ के जैसे हो। तुम्हारा बात करने का तरीका, तुम्हारी भाव-भंगिमा—सब कुछ उसी के समान सौम्य हैं, पर साथ-साथ दृढ़ भी। पता नहीं तुममें मेरा कोई अंश है भी कि नहीं।” देवव्रत भी हँसते हुए कहता, “वो भी यही कहती थीं, कि मैं बिलकुल आप जैसा हूँ, विशेषकर जब मेरा कद शीघ्रता से बढ़ रहा था।”

“शान्तनु ने सिर हिलाते हुए कहा, “हाँ, हम सभी कुरुवंशी बहुत लम्बे हैं, परन्तु मैं अपने भाइयों में सबसे छोटा होते हुए भी सबसे लम्बा हूँ।”

“आपके भाई भी हैं? अर्थात्, मेरे ताऊजी भी हैं?” देवव्रत ने चकित होकर पूछा। “कहाँ हैं वो?”

शान्तनु ने कहा, “तुम हमारे प्राचीन कुल के विषय में कुछ नहीं जानते, है न? चलो, मैं तुम्हें अपने पूर्वजों का भवन दिखाता हूँ। तुम्हें उससे कुछ जानकारी अवश्य मिल जाएगी।”

शीघ्र ही देवव्रत को पता चला कि उसके दो ताऊजी थे : देवपि और बहलिक, जो पड़ोसी राज्य बहल के राजा थे। हस्तिनापुर के राजा प्रतिप के सबसे बड़े पुत्र, और कुरु राजकुमार, देवपि, अपनी प्रजा और दरबारियों के बीच समान रूप से लोकप्रिय थे; पर, राजपरिषद ने आदेश दिया था कि कुष्ठरोग से ग्रसित होने के कारण वो सिंहासन पर नहीं बैठ सकते। इस बात से उनकी प्रजा अत्यन्त दुखी थी।

शान्तनु ने आगे कहा, “राज-पुरोहितों और प्रजा के बीच गृह-युद्ध छिड़ सकता था। अश्वावर नामक धूर्त मंत्री और कुछ पुरोहितों ने मेरे बड़े भाई के धर्म और रीति-रिवाजों को लेकर उदार विचारों के कारण उनका विरोध किया। देवपि ऐसे हर रीति-रिवाज के विरोधी थे जो लोगों को जाति और वर्ग के आधार पर विभाजित कर दे। प्रत्याशित गृह-युद्ध को रोकने का देवपि के पास एक ही समाधान था—राजसिंहासन का त्याग करके वन में चले जाने का। वे शीघ्र ही ऋषि बन गए और कल्पग्राम में बसकर ध्यान और तपस्या में लीन हो गए। उसी समय हस्तिनापुर में भीषण अकाल पड़ा—कहते हैं, देव भी योग्य युवराज के राजसिंहासन से वंचित किए जाने पर क्रोधित हो गए थे। देवपि ने भगवान इंद्र और अग्निदेव से विनती की और उनकी कृपा से राज्य में वर्षा हुई और बारह वर्ष लम्बे अकाल का अन्त हुआ।”

देवव्रत ने कहा, “उन्होंने वही किया जो राज्य के लिए उत्तम था।”

शान्तनु ने व्यंग्यपूर्वक पूछा, “अच्छा? देवपि बहुत ही श्रेष्ठ राजा होता। जब उसने हस्तिनापुर छोड़ा तो मैं बहुत छोटा था, परन्तु मैं उसे अपना आदर्श मानता हूँ।”

देवव्रत ने अपने पिताजी से प्रश्न किया, “और आपके दूसरे भाई?”

“जब देवपि युवराज थे, मेरे दूसरे भाई बहलिक को सेनापति की उपाधि दी गई थी। वो युद्धों और सैनिक कार्यवाहियों में व्यस्त रहते थे।” शान्तनु ने वर्णन किया। “उन्हें बहल राज्य दिया गया जो मेरी माँ रानी सुनंदा के राज्य का भाग था; परन्तु उसे हस्तिनापुर में अधिक रुचि थी। जब गृह-युद्ध के आसार मंडरा रहे थे, बहलिक ने भी राजसिंहासन को अस्वीकृत करते हुए घोषणा की, कि वे अपने भाई के अधिकार को कभी नहीं छीनेंगे। मेरे पिताजी बहुत हतोत्साहित हो गए क्योंकि उन्होंने अपने दो पुत्र खो दिए थे। वे मुझे राजसिंहासन का उत्तरदायित्व देकर दुखी मन से वनवास पर निकल पड़े। मैं उस समय मात्र आठ वर्ष का था। हस्तिनापुर का राज-पाट सँभालने में बहलिक ने ही मेरा मार्गदर्शन किया, और आज तक करते हैं।” शान्तनु ने प्रेमपूर्वक कहा। “मैं आज भी उनकी सम्मति के बिना कोई निर्णय नहीं लेता।”

देवव्रत ने चतुराई से पूछा, “सम्मति या आदेश?”

“तुम उसे कुछ भी कह सकते हो,” शान्तनु हँसते हुए बोले। “मेरे लिए उनका मत बहुत ही महत्वपूर्ण है। गंगा के चले जाने के बाद उन्होंने मुझे पुनर्विवाह की अनुमति नहीं दी क्योंकि उनके अनुसार पिता होने के नाते मुझे अपने पुत्र की प्रतीक्षा करनी चाहिए।” उन्होंने कहा था, “उस वीर योद्धा के लिए रुक जाओ। उसके लिए की जाने वाली लम्बी प्रतीक्षा बहुमूल्य सिद्ध होगी; और वे सही थे।”

देवव्रत को अपने ताऊजी के प्रति स्नेह का अनुभव हुआ। वो न्याय और निष्ठा के प्रतीक थे और उन्होंने बेझिझक अपने व्यक्तिगत मूल्यों के लिए राजगद्दी अपने भाई को सौंप दी थी।

देवव्रत परिवार पाकर खुश था और उसने कहा, “मैं उनसे मिलना चाहता हूँ। क्या आप अपने भाइयों से अक्सर मिलते हैं?”

“देवपि हमारे राजपुरोहित हैं, विशेष उत्सवों और कार्यक्रमों के लिए ही आते हैं।” शान्तनु मुस्कुराते हुए बोले। “वो वयोवृद्ध हो गए हैं और उनके लिए राजदरबार के सभी समारोहों में आना सम्भव नहीं, पर वो अब भी कृपा का प्रशिक्षण कर रहे हैं।” उन्होंने समझाते हुए कहा।

कृपा और उसकी जुड़वाँ बहन कृपि, छोटे होते हुए भी वेदों में पारंगत हो गए थे।

शान्तनु आगे बोले, “मैं अपने भाई के बाद कृपा को राजपुरोहित बनाना चाहता हूँ। मैं इस बात का ध्यान रखूँगा कि तुम्हारे युवराज के रूप में राज्याभिषेक पर देवपि भी उपस्थित रहें।”

देवव्रत ने स्थिरता से अपने पिता को देखते हुए कहा, “मैं आपका पुत्र अवश्य हूँ, परन्तु मैंने अभी तक अपने आपको युवराज बनने के योग्य सिद्ध नहीं किया है।”

शान्तनु अपने पुत्र की सत्यता देखकर दंग रह गए। ये सत्यता थी या विनम्रता? वह हँसते हुए बोले, “तुम गंगापुत्र हो; राजगद्वी पर बैठने के लिए तुमसे अधिक योग्य और कौन हो सकता है? तुमने न केवल राजनीति और शासन-विधि में निपुणता पायी है, तुम राजपद की मानवीयता भी समझते हो। तुम कभी किसी पराजित का अपमान नहीं करते और न ही ओछी राजनीति करते हो।” शान्तनु गर्व से भरी आवाज़ में बोले। ऐसे क्षणों में जब वे देवव्रत को देखते, उन्हें गंगा की अनुपस्थिति बहुत खलती। अपने पुत्र को देख उन्हें अपने अतीत की बातें याद आ जातीं और उनमें अतीत को दोबारा अनुभव करने की इच्छा जाग उठती। वे अचानक उदास हो गए और धीरे से बोले, “मैं बूढ़ा हो चला हूँ पुत्र; मैं थक गया हूँ। मेरी इच्छा है कि अब तुम सब कुछ सँभाल लो। यहीं तुम्हारी परीक्षा होगी।”

“यह उचित नहीं है!” देवव्रत चिल्लाया।

“नहीं! यहीं यथेष्ट है,” शान्तनु खिलखिलाते हुए बोले। “तुम परशुराम और शुक्राचार्य के सर्वश्रेष्ठ शिष्य हो, राजनीति में निपुण हो! तुम कभी दरबार और प्रशासन के साधारण से साधारण विषयों को भी नहीं टालते; तुम युद्धकला और कूटनीति में प्रवीण हो। तुमने पूरे राज्य में भ्रमण करके अपने राज्य और प्रजा को जाना और समझा है। तुमने अपने आपको योग्य सिद्ध कर दिया है, तुम्हें युवराज घोषित किए जाने के लिए और कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है।”

देवव्रत ने तर्क किया, “पिताजी, आप मेरे बारे में क्या जानते हैं? अभी-अभी आपने हमारे परिवार की गौरव गाथा सुनाई और हर सदस्य की महानता के बारे में उल्लेख किया। मैं आपका पुत्र हूँ, मुझे अपने आपको योग्य सिद्ध करने का एक अवसर दीजिए।”

शान्तनु उदासी से मुस्कुराते हुए बोले, “तुम क्या अपनी योग्यता सिद्ध करने के लिए युद्ध चाहते हो पुत्र? न मुझे, न हमारे किसी भी मंत्री या दरबारी को तुम्हारी योग्यता पर कोई शंका है। तुमने इंद्र को युद्ध में विजय प्राप्त करवाई है, और समय आने पर तुम मेरे और हस्तिनापुर के लिए भी वही करोगे। तुम्हें अपनी योग्यता का प्रमाण देने की कोई आवश्यकता नहीं है।” राजा गहरी सांस लेते हुए बोले। “तुम मेरे इकलौते पुत्र हो, देवव्रत, और तुम्हीं मेरे उत्तराधिकारी होंगे। बस सही समय की बात है।”



चार वर्षों बाद देवव्रत ने समझा कि उसके पिता ठीक कह रहे थे। शासन करना युद्ध से कहीं अधिक कठिन था—नियमित और नीरस। युद्ध की समाप्ति विजय या पराजय के साथ हो जाती है, शासन का ऐसा कोई ठोस परिणाम नहीं होता—क्योंकि इसमें पराजय जैसा कोई विकल्प ही नहीं होता। इसमें विजय प्राप्त करना ही होता है; राज्य और प्रजा, दोनों के लिए।

देवव्रत ने राज्य में प्रवेश पाने वाले व्यापारियों के कर को मान्यता दे दी थी, अब वो अपने आपको पड़ोसी राज्य शल्व के आक्रामक राजकुमार चित्रमुख के बारे में विचार करने से नहीं रोक पा रहा था। प्रायः युद्ध किसी राजवंशी के अहंकार और अतृप्यलोभ को शान्त करने के लिए आरम्भ होते हैं। देवव्रत को युद्ध से घृणा थी। युद्ध के कारण सबसे अधिक कष्ट और पीड़ा राज्य और प्रजा को ही होती है। देवलोक और पृथ्वीलोक के युद्धों में कोई अन्तर नहीं था। इंद्र किसी तुच्छ राजकुमार जैसे ही थे, जो अपनी सनक और हठ के लिए युद्ध और हिंसा को चुनौती देते रहते थे। युद्ध किसी भी समस्या का समाधान नहीं; वह तो सदैव शक्तिप्रदर्शन और षड्यंत्र का प्रश्न था, जिसे राजनीति और कुशाग्रता से सँभालना होता है।

“तुम अभी तक जगे हुए हो? देवव्रत के विचार एक चकित आवाज़ के कारण थम गए। उसके पिता अपने पुत्र के कक्ष में पधारे थे। “तुम देर रात तक किस काम में लगे हुए हो? कल तुम्हारे राज्याभिषेक का दिन है। तुम्हें सवेरे बहुत जल्दी उठकर अनुष्ठान करने हैं, वैसे भी सूर्योदय में केवल एक घंटे का समय शेष है।”

देवव्रत ने त्योरी चढ़ाते हुए पूछा, “किन्तु आप क्यों जगे हुए हैं, पिताजी?”

“वो मैं...” शान्तनु बोले, “मेरी आयु बहुत अधिक हो गई है। मैं आज इतना उत्साहित हूँ कि मुझे नींद नहीं आ रही है, इसीलिए मैंने करवटें बदलते रहने के बजाय ठहलने का निश्चय किया। वैसे भी मैं ठीक से सो नहीं पाता।”

देवव्रत चिन्तित होकर बोला, “आजकल आपकी सैर बहुत लम्बी और नियमित होती जा रही है। उस दिन तो मुझे आपको ढूँढ़ने के लिए सैनिक भेजने पड़े!”

“और सैनिकों ने क्या देखा? बरगद के वृक्ष के नीचे मुझे चैन से सोता हुआ पाया। मैं अब शीघ्र ही इस राज-पाठ से निवृत्त होने वाला हूँ, देवव्रत। मुझे अपनी स्वतंत्रता का आनन्द लेने दो!”

“यदि आप और कुछ दूर जाते, तो मत्स्य राज्य में पहुँच गए होते और कदाचित युद्ध की शुरुआत हो गई होती।” देवव्रत मुस्कुराता हुआ बोला।

शान्तनु सरलता से कंधे उचकाते हुए बोले, “मत्स्य हमारा मित्र-देश है, जिसे मेरे मित्र चेदिराज वसु ने हाल ही में स्थापित किया है। उन्होंने इस राज्य को अपने पुत्र मत्स्य के लिए स्थापित किया, जिसका जन्म सन्देहास्पद परिस्थितियों में हुआ।” वे

हँसते हुए आगे बोले, “उन्होंने तो अपने राज्य के उस क्षेत्र को भी अपने पुत्र का नाम दिया है!”

देवव्रत थोड़ा सोचते हुए बोला, “किसी भी बच्चे का जन्म सन्देहास्पद या संदिग्ध नहीं होता। हाँ! गर्भधारण भले संदिग्ध हो सकता है, जिसका दायित्व अभिभावकों का है, सन्तान का नहीं।” उसे अपने पिता की वाणी का छिछोरापन और **असंवेदनशीलता** ठीक नहीं लगी।

क्या वो स्वयं ‘अवैध या संदिग्ध जन्म का था,’—एक अप्सरा और मानवी राजा के परिणति का परिणाम? क्या वो युवराज बनने योग्य था या यह उसके कुलीन जन्म का अधिकार था?

देवव्रत बहुत व्याकुल हो गया।

शान्तनु आगे बोले, “मुझे बहुत प्रसन्नता है कि कल तुम्हारा राज्याभिषेक है। कल से श्रावण मास आरम्भ हो रहा है और अत्यन्त शुभ मुहूर्त है। मैं राज्याभिषेक को टालता आया, क्योंकि तुम मुझे काम नहीं करने देते। मेरे दोनों भाई भी मुझसे अप्रसन्न हैं। विशेषकर बहलिक, जो मेरे उत्तरदायित्व लेने में डिलाई से असन्तुष्ट हैं। वो यहाँ कुछ ही घंटों में पहुँचने वाले हैं और यहाँ रहकर तुम्हारा मार्गदर्शन और सहायता करेंगे। उनके स्वागत की तैयारी आरम्भ कर दो। वो सबसे पहले तुमसे ही मिलना चाहते हैं।”

जब भी देवव्रत अपने ताऊजी को देखता, दोनों भाइयों की भिन्नता उसे स्पष्ट दिखती। दोनों लम्बे-चौड़े और सुन्दर थे, किन्तु, अपने बलवान भाई के सामने उसके पिता उसे विशेष प्रभावशाली नहीं लगते। दोनों के बीच की भिन्नता शारीरिक ही नहीं बल्कि उनके चेहरे पर भी दिखती थी। उसके पिता का चेहरा पारम्परिक तरीके से सुन्दर था पर उनका चेहरा ताऊजी के समान सुदृढ़ नहीं था। पिताजी की आँखें स्वप्निल और धुँधली थीं, और उनके चेहरे की नरमी उनकी अदृढ़ ठोड़ी के कारण और भी बढ़ जाती। उनके भरे-पूरे होंठ अत्यन्त कामुक थे।

इसके विपरीत, ताऊजी गोरे थे और उनके चेहरे पर हल्की-सी दाढ़ी थी। उनके बाल काले, लम्बे और धुँधराले थे और उनकी भौंहे घनी और लम्बी थीं। उनकी आँखें छोटी और तीक्ष्ण थीं और उनमें चतुराई की चमक थी।

जब वे सवेरे हस्तिनापुर पहुँचे, तो उन्होंने बिना किसी औपचारिकता के देवव्रत से कहा, “मैं जब भी तुमसे मिलता हूँ, मुझे गंगा की याद आ जाती है। तुम सचमुच गंगापुत्र हो; और बिलकुल उसके जैसे दिखते हो। वे प्रसन्नता से देवव्रत को प्रेमपूर्वक गले लगाते हुए बोले। वे सामान्यतया अपनी भावनाओं को स्पष्टता से व्यक्त नहीं करते थे; और देवव्रत उनके इस भाव-प्रदर्शन से बहुत खुश हुआ। उन्होंने आगे कहा, “मैं जितनी बार भी गंगा से मिला, मुझे लगा कि वो एक अद्वितीय महिला है जो मेरे भाई को नियंत्रण में रखना जानती है। मेरा भाई वैसे भी बड़ी सरलता से स्त्रियों के वशीभूत हो जाता है।”

वे अपनी हँसी रोकते हुए, थोड़े गम्भीर स्वर में बोले, “तुमने न केवल उसकी सुन्दरता विरासत में पायी है, तुममें उसका विवेक और लोगों के साथ आचरण करने की क्षमता भी है। तुम बड़ी सरलता से अधिकारियों, सैनिकों, सामान्य लोगों, और अपने हठी पिता, सबसे, विवेकपूर्वक व्यवहार करते हो। तुम जितने ध्यान से मेरा अवलोकन करते हो, वैसे ही मैं भी पिछले कुछ वर्षों से तुम्हें देख रहा हूँ।” वे मुस्कुराते हुए बोले। “तुम्हें कौन-सी चिन्ता खाये जा रही है वत्स? क्या तुम अभी भी राजा बनने के बारे में सुनिश्चित नहीं हो?”

देवव्रत को अपने ताऊजी की स्पष्टवादिता बिलकुल बुरी नहीं लगी; बल्कि उसे उनका ये गुण प्रशंसनीय लगा। बहलिक राजा थे पर उनमें राजसी अहंकार या मीठी-कूटनीति नाममात्र भी नहीं थी। वे बेझिझक अपना मत व्यक्त करते थे।

“पुत्र, वरदान भी सावधानी से माँगो... अनिच्छुक युवराज किसी भी राज्य के लिए अच्छा नहीं होता; और हम नहीं चाहते कि राजमुकुट किसी और के सिर चढ़े!” वे तीव्र स्वर में बोले। “ऐसा हमारे परिवार में पहले भी बहुत बार हो चुका है और हमारे वंश के लिए अभिशाप है।”

वो केवल अपने भाइयों के बारे में नहीं कह रहे थे, देवव्रत अपने वंश का इतिहास अच्छी तरह जानता था, वो उनके कुल के संस्थापक, शकुन्तला और राजा दुष्यन्त के पुत्र राजा भरत के बारे में कह रहे थे। भ्रान्तिमुक्त राजा ने अपने नौ योग्य पुत्रों को उत्तराधिकारिता से वंचित करके ऋषि भारद्वाज के रिश्तेदार वित्थ को अपना उत्तराधिकारी चुना था।

तब से ज्येष्ठाधिकार की प्रथा जो अधिकांश राज-परिवारों में प्रचलित थी, उनके परिवार के लिए अनिवार्य नहीं रही। वंशक्रम विशेषाधिकार नहीं; उसे अपनी योग्यता और कौशल से प्राप्त करना पड़ता था। देवव्रत को अपने परिवार की परम्परा को प्रचलित रखना था।

बहलिक ने चेतावनीपूर्ण आवाज में कहा, “याद रखना पुत्र, राजा का चयन योग्यता के बल पर होता है, उसके जन्म से नहीं। यह हमारे परिवार की पवित्र विधि है। तुम ऐसे समय में राज्य सँभालने वाले हो जब दो प्राचीन राजवंश—कुरु और पाँचाल अपने मतभेद भुलाकर सामान्य लोक-नीति और अर्थ-नीति का पालन करने के लिए सहमत हुए हैं। शान्ति है, किन्तु अस्थाई और अल्पकालिका।”

देवव्रत के ताऊजी पुरानी शत्रुता का उल्लेख कर रहे थे। पड़ोसी राज्य पाँचाल, पुरु-वंशज थे और पीढ़ियों से कुरुओं से उनकी शत्रुता थी। उनकी शत्रुता अकाल के समय आरम्भ हुई जब राजा ययाति के वंशज, पाँचाल नरेश सुदास, ने हस्तिनापुर पर आक्रमण किया और पराजित राजा समवरन को सिंधु नदी के किनारे वनवास पर जाना पड़ा। उनके पुत्र कुरु को महान ऋषि वशिष्ठ ने पुनर्स्थापित किया। कुरु ने खोई भूमि

वापस प्राप्त की और अपने राज्य के गौरव को पुनर्स्थापित किया। यह कहानी देवव्रत की माँ ने उसे इस तथ्य को समझाने के लिए कई बार सुनाई थी, कि विरासत जन्म के कारण प्राप्त होती है, उसे बनाए रखने में योग्यता ही काम आती है। देवव्रत के लिए विरासत का बोझ अभी से भारी होने लगा था।

देवव्रत ने तर्क किया, “किन्तु युद्ध ही किसी समस्या का समाधान नहीं। हमें पड़ोसी राज्यों से संधि भी करनी चाहिए।”

बहलिक प्रभावित होते हुए बोले, “तुम राजनीतिक आचरण और राजतंत्र में अत्यन्त कुशल हो। शान्तनु, तुम्हें अपने उत्तराधिकारी पर गर्व होना चाहिए। मैं समझता हूँ, इसने मुझे ही नहीं, तुम्हें, कुरुओं और समस्त प्रजा को अपनी श्रद्धा और व्यवहार से प्रसन्न कर दिया है। आयुष्मान भव पुत्र!”

शान्तनु ने अपने बड़े भाई को देखते हुए कहा, “समारोह की विधि आरम्भ हो! ” देवपि के सौम्य चेहरे पर सन्तुष्टि की चमक थी।

वह देवव्रत को आशीर्वाद देते हुए बोले, “तुम हमारे वंश का सबसे उज्ज्वल सितारा हो, अभी और सदा के लिए।”

इतनी प्रशंसा सुनकर देवव्रत नम्रता से झुक गया और ऋषि की बातों से उसकी आशंकाएँ और तीव्र हो गईं। अब उसके पास शंका का विकल्प नहीं बचा था। मध्याह्न से पहले, देवव्रत को हस्तिनापुर का युवराज घोषित कर दिया गया। उसे सब कुछ मिल गया था; बस उसकी माँ साथ नहीं थी।

Hindi

## राजा और मछुआरिन

“क्या आप रास्ता भटक गए हैं?” काली ने रूखेपन से पूछा। वो मनुष्य उसका पीछा करता हुआ नदी के तट तक पहुँच गया था।

वे खोए हुए लग रहे थे, उनकी आँखें भावशून्य थीं। कहीं उन्होंने मदिरा तो नहीं पी हुई थी? उनकी त्वचा क्षीण लग रही थी। वे वृद्ध थे और उनके रेशमी पोशाक और रत्नजड़ित गहने देखकर वे स्पष्ट रूप से धनवान लग रहे थे। हो सकता है कोई दरबारी होंगे, काली ने सोचा। मेरे प्रशंसकों में से एक न हो... काली दुष्ट और बूढ़े पुरुषों से थक गई थी।

उसने अपना प्रश्न दोहराया।

“नहीं,” वे मधुर आवाज़ में नम्रतापूर्वक बोले। “मैं इस क्षेत्र को अच्छी तरह जानता हूँ। मुझे तो नदी के उस पार जाना है। क्या तुम मुझे नदी पार करवा सकती हो?”

काली को सन्देह हुआ कि ये उसके साथ समय व्यतीत करने का कोई बहाना तो नहीं। उसने नाव की तरफ इशारा किया। वे सँभलते हुए धीरे से नाव पर सवार हुए। नाव थोड़ा हिल गई। वो मन-ही-मन मुस्कुरा रही थी; वो जानती थी कि अक्सर लोग इस आकस्मिक गतिविधि के लिए तैयार नहीं होते थे।

वो नाव में बैठ गए और उसे अपलक देखने लगे। “आशा है मैं अशिष्टा नहीं कर रहा। मैंने एक अत्यन्त सुहावनी सुगंध को अनुभव किया, और बहुत देर से उसी का पीछा करता हुआ यहाँ तक आ गया...” वे थोड़े व्याकुल होते हुए बोले। “मुझे पहले लगा कि मेरा भ्रम है, किन्तु क्या ये सुगंध तुमसे आ रही है?” उन्होंने उसे ध्यानपूर्वक देखते हुए चकित होकर पूछा।

“हाँ!” वह व्यंग्यपूर्वक बोली, “एक ऋषि से पाया हुआ वरदान है।”

वृद्ध की भौंहें चढ़ गईं। “किस बात के लिए वरदान?”

वे काली को नाव खेते हुए देखते रहे। उनके शरीर में तरंग-सी फैल गई। युवती की सुन्दरता अति मनमोहक थी। वो बहुत लम्बी थी और उसका शरीर तराशा हुआ था। वो सरलता से लकड़ी के नाव को नदी के लहरों पर चला रही थी। युवती साँवली और आकर्षक थी; उसके चौड़े कंधे, आकर्षक वक्ष, पतली कमर, सुडौल और लम्बी सुदृढ़

टाँगें उसे अति सम्मोहक बना रहे थे। नाव की उछाल और गति के साथ उसका अन्तरीय उसके नर्म जाँधों तक चढ़ जाता। उसके लम्बे, घने, खुले बाल उसके निर्वस्त्र कंधों पर झूल रहे थे। वृद्ध उसकी सुन्दरता का भरपूर रसास्वादन ले रहे थे। वो पारम्परिक तरीके से सुन्दर नहीं थी : उसका मुँह बहुत चौड़ा था, होंठ पतले थे, नाक बहुत लम्बी और तीखी थी, फिर भी उन्होंने पहले कभी इससे अधिक कामुक स्त्री नहीं देखी थी। उसे देखकर उनके होंठ सूख गए और उनके शरीर में उत्तेजना की लहर-सी दौड़ गई।

दोनों लम्बे समय तक एक दूसरे को देखते रहे; उसके होंठ खुले और वो उन्हें देखकर मुस्कुराई। उसके सुन्दर, दमकते दांत उसे और भी दिव्य बना रहे थे।

“इसीलिए अब मुझे योजनगंधा कहते हैं; पर मेरा असली नाम मत्स्यगंधा ही रहेगा,” वो धीरे से बोली। वो जानबूझकर अपने बारे में कोई अतिरिक्त जानकारी नहीं दे रही थी। उसने झटके से अपने बाल कंधे से हटाए और जुड़े में बाँध दिए।

“क्या तुम जलपरी हो?” उन्होंने उसके शंख से बनी पायल को देखते हुए पूछा।

“नहीं, मैं तो केवल एक नाविका हूँ, जो आजीविका के लिए लोगों को अपनी नाव में नदी पार करवाती हूँ,” वो रूखेपन से बोली।

काली ने उस व्यक्ति को ध्यानपूर्वक देखा। बैठे हुए भी वे बहुत लम्बे लग रहे थे। वे रूपवान थे और उनके घने बालों में सफेदी झलक रही थी। वे उसके बाबा के आयु के ही होंगे, पर स्वस्थ और तन्दुरुस्त थे। उनके दुबले शरीर पर ढीलेपन के तनिक भी लक्षण नहीं थे। कदाचित धनवानों के खान-पान का परिणाम होगा... काली ने कटुतापूर्वक सोचा। उसने उनकी आतुर आँखों से ही उनकी मंशा भाँप ली, और उनसे छुटकारा पाने के लिए जल्दी-जल्दी नाव खेने लगी।

अचानक काली को नदी में कोई हलचल दिखाई दी; उसने तुरन्त नाव को रोका और जाल को नदी में फेंका।

उन्होंने चकित होकर पूछा, “ये क्या कर रही हो?”

“मछली पकड़ रही हूँ। बहुत बड़ी मछली है और मुझे इसके अच्छे पैसे मिलेंगे।”

मछली के जाल में फँसते ही वो जाल को नाव के अन्दर खींचने लगी, पर मछली अपेक्षा से कहीं अधिक भारी थी।

उस व्यक्ति ने आगे आते हुए कहा, “मैं तुम्हारी सहायता करता हूँ।”

“नहीं!” वो छटपटाती मछली को देखती हुई चिल्लाई। “नाव हिलने लगेगी और हम दोनों पानी में गिर जाएँगे... मैं सँभाल लूँगी।” वो हाँफते हुए बोली। मछली जाल से निकलने के लिए उसे जोर-जोर से खींच रही थी।

काली ने जोर से आदेश देते हुए उनकी कमर की तरफ इशारा करते हुए कहा, “मुझे अपनी कटार दीजिए।”

वे चुपचाप काली को कटार पकड़ते हुए उसे मंत्रमुग्ध होकर देखते रहे। काली ने दक्षता से कटार को छटपटाती हुई मछली पर मारा। वो सीधे मछली के गले में लगी और वो शान्त हो गई।

“आखिर पकड़ ही लिया!” काली प्रसन्नता से खिलखिलाती हुई बोली। “मछली पकड़ने का यही प्रमुख रहस्य है; अवसर मिलते ही पकड़ लेनी चाहिए, नहीं तो हाथ से निकल जाती हैं, और कभी दोबारा अवसर नहीं मिलता,” वो विजयी मुस्कुराहट के साथ अपने हाथ में लगे रक्त को पोंछती हुई बोली।

“तुम्हें चोट लगी है!” वे चिन्तित स्वर में बोले।

काली कंधे उचकाती हुई, उपहासपूर्वक हँसती हुई बोली, “मुझे तो उसे नंगे हाथों से पकड़ना पड़ा, नहीं तो वो खोए हुए अवसर की तरह छूट जाती।”

“तुम किसी अवसर को हाथ से निकलने नहीं देती न?” वे उसके व्यावहारिक विचार से प्रभावित होते हुए बोले। “इस प्रक्रिया में तुम आहत हो जाओ तो भी?”

“हमें तो किसी भी हाल में अपने हाथों से ही काम करना है; वही तो हमारी पूँजी है।”

“तुम्हें नहीं लगता कि तुम उस मछली को पकड़ने का अनावश्यक हठ कर रही थी। तुम्हें बुरी तरह चोट लग सकती थी।”

“श्रीमान, भाग्यशाली धनवानों के विपरीत, मैं अपने वर्तमान और भविष्य, दोनों के लिए इन्हीं हाथों पर निर्भर हूँ। काली का चेहरा तन गया और वो व्यंग्यपूर्वक बोली। धनवान तो अपनी सम्पत्ति को हाथ में लिए घुमते हैं; और वैसे भी धन ही तो शक्ति है।”

“तुम्हारी शक्ति तो तुम्हारे हाथों में है।”

काली ने बलपूर्वक कहा, “आपका तात्पर्य मजदूरी से है। इसीलिए तो हम गरीबों को इतना परिश्रम करना पड़ता है। शक्ति मन में होती है, हृदय में होती है; केवल हाथों में नहीं।”

वे उत्सुकतापूर्वक बोले, “जितना हाथों में समाए, उतना ही रखना उचित नहीं?”

“ये तो लोगों को सीमित करने की बात होगी।” काली ने चुनौतीपूर्वक कहा, “फिर तो गरीब, गरीब ही रह जाएँगे और धनवान लोग आलसी और दम्भी। यदि हमारी अभिलाषा और आकांक्षा को इन छोटे-छोटे हाथों में सीमित रखना होता तो ईश्वर ने हमें इतने विशाल आकाश को देखने के लिए ये दो छोटी आँखें ही क्यों दी होतीं? बड़े-बड़े तूफानों को सुनने के लिए दो छोटे कान ही क्यों दिए होते? नहीं, श्रीमान, हम अपना भविष्य इन हाथों से बना सकते हैं।” वो हँसती हुई बोली, “और अपने मन-मस्तिष्क से बड़े-बड़े सपने देख सकते हैं।”

काली नाव खेती रही पर पतवारों के घर्षण से उसके हाथों से लहू बह निकला। उसने तुरन्त अपने अंगवस्त्र को फाड़कर कपड़े से अपने दोनों हाथों में पट्टी बाँधी।

वे उसके हाथों को देखते हुए कोमलता से बोले, “अब वापस लौट जाना ही अच्छा होगा।”

हवा के तेज झाँके को अपने चेहरे पर अनुभव करते ही काली को वर्षों पूर्व पराशर के साथ हुई घटना याद आ गई...

वो निश्चित रूप से जानती थी कि नाव पर सैर उसके साथ समय बिताने का बहाना ही था।

उसने शान्त स्वर में पूछा, “आप क्या चाहते हैं?”

“तुम्हें मैं तुम्हें पाना चाहता हूँ।” उन्होंने उत्तर दिया।

ये उनके मन में उठने वाले असंख्य भावनाओं की स्वीकृति थी। उन्होंने जब से उसे सवेरे देखा, जब से उसकी मोहक सुगंध को अनुभव किया, वे मदहोश हो गए थे और उन्हें कुछ सूझ नहीं रहा था। वे उस क्षण से उससे अपनी आँखें हटा नहीं पाए थे।

उन्होंने उस जैसी सुन्दरी आज तक नहीं देखी थी। वो साँवली और अत्यन्त कामुक थी, शान्तनु उसके असीम आकर्षण के जाल में फँसे जा रहे थे। शान्तनु को गंगा से उनकी भेंट याद आ गई।

क्या ये रहस्यमयी औरत... सच थी या वो गंगा की कल्पना तो नहीं कर रहे थे?

नहीं, ये गंगा नहीं है। गंगा तो गोरी थी, ये तो साँवली है, फिर भी उतनी ही आकर्षक। ये कौन है?

शान्तनु जानते थे कि वे स्वयं अत्यन्त रूपवान थे और किसी भी औरत को मोहित कर सकते थे। परन्तु इसे नहीं। वे हताश होकर सोच रहे थे। वे उसके अत्यन्त निकट बैठे उसके शरीर की उष्णता को अनुभव कर रहे थे...

“मैं तुम्हें पाना चाहता हूँ।” उन्होंने अनायास ही कह दिया था।

काली नाव को खेती हुई सोच रही थी, क्या सभी पुरुष मुझे सरल शिकार ही समझते हैं? उसे अति-प्रशंसा और स्पष्ट प्रस्तावों की आदत-सी पड़ गई थी। काली अपने सौन्दर्य की शक्ति को जानती थी और उसे किसी ऐसे-वैसे व्यक्ति पर व्यर्थ न्योछावर नहीं करना चाहती थी। उसे पता था कि उसके सामने बैठा मनुष्य उससे अत्यन्त प्रभावित था। जब भी कोई पुरुष उसके सौन्दर्य से प्रभावित हो जाता और उसकी लालसा करने लगता, वो उसकी भावनाओं को भाँप जाती, इस समय वो अपनी भावनाओं के बारे में ही निश्चित नहीं थी : क्या मुझे इसके प्रस्ताव को ठुकरा देना चाहिए, या मुझे इस परिस्थिति से दोबारा गुजरकर अपने लिए लाभ का एक और सौदा करना चाहिए?

अचानक नाव रेतीले तट से टकराई और रुक गई; काली उस मनुष्य और उसके प्रस्ताव को अनदेखा और अनसुना करती हुई दक्षता से नाव से उतरी और नाव को बाँधने लगी।

“मैंने कहा, मैं तुम्हें पाना चाहता हूँ, मुझे तुमसे प्रेम हो गया है,” उन्होंने दोहराया।

काली अपनी भौंहें उठाती हुई उपेक्षापूर्वक मुस्कुराती हुई बोली, “किस रूप में चाहते हैं मुझे—सेविका के रूप में?” वे उसके निकट आते हुए विनती भरी आवाज़ में बोले, “मुझे चिढ़ाओ मत! हे सुन्दरी, मैं तुम्हारे प्रेम-जाल में फँस गया हूँ।”

वो अपनी आँखें चौड़ी करते हुए बोली, “हम दोनों अभी-अभी तो मिले हैं। मैं तो आपको ठीक से जानती तक नहीं!”

“प्रिय कन्या, तुम जानती भी हो, कि तुम कितनी सुन्दर हो?” वे आह भरते हुए, उसके अंग-अंग को निहारते हुए बोले।

उसने किसी भी अन्य गरीब मछुआरिन की तरह रूखे सूती वस्त्र पहने हुए थे। कम कपड़े गरीबी के कारण पहने थे, किसी को आकर्षित करने के लिए नहीं—उसकी छोटी-सी उत्तरीय, उसकी चोली को ढकने के लिए पर्याप्त नहीं थी, और उसका अन्तरीय बहुत ही छोटा था, उसने कमरबन्द भी नहीं पहना था। कमरबन्द की जगह उसका अन्तरीय उसकी कमर पर गाँठ से बंधा हुआ था और उसकी सुडौल जांघें और लम्बी टांगें खुली हुई थीं। गहने के नाम पर उसने दाएँ हाथ में सीपों से बना कंगन पहना था और दाएँ पैर में वैसे ही पाजेब पहने थे, फिर भी वह अत्यन्त कुलीन और राजसी लग रही थी। युवती की इसी बात ने उन्हें पहली दृष्टि में ही मोहित किया था। उसे देखकर उनके रगों में रक्त का प्रवाह तीव्र हो गया। वे उनके बीच की व्यर्थ बातों को बन्द करके उसे जकड़कर शान्त कर देना चाहते थे, लेकिन वे संयम बरतते हुए चुप रहे। उन्होंने गहरी सांस ली और उसकी मोहक सुगंध ने उन्हें फिर से लालायित कर दिया। उन्होंने अपनी मुट्ठी बाँधते हुए कहा, “मैं तुम्हें जानता हूँ—तुम वही हो जिससे मुझे प्रेम हो गया है... और मैं,” कहते हुए वे रुक गए।

वे अनायास ही अपने राजसी अवतार में आ गए और उनके हाव-भाव अहंकारी और सचेत हो गए।

“मैं राजा हूँ,” उन्होंने दृढ़तापूर्वक घोषित किया।

उसके प्रारम्भिक अविश्वास के बावजूद, काली से उनकी आवाज़ की हल्की हिचकिचाहट नहीं बच पायी। राजा! ये राजा हैं! उसकी आँखों ने अविश्वास प्रकट तो नहीं किया, पर वो उनकी हिचकिचाहट का कारण नहीं समझ पायी। स्पष्ट था कि वे अपनी पहचान प्रकट नहीं करना चाहते थे। ये उनकी अन्तिम युक्ति थी। उसने गम्भीरता से विचार किया, अवसर मिलता तो वे तत्काल अज्ञातकृत प्रलोभन को ही चुनते। परन्तु, वो किसी भी स्थिति में पुरुष की विजय-वस्तु नहीं बनेगी। वही उनको पराजित करके, उन्हें हासिल करेगी। केवल इस बारा उसने कठोरता से शपथ ली।

काली ने जानबूझकर मासूमियत और संकोच से भरी मुस्कुराहट के साथ उन्हें देखा; वो जानती थी कि वे निश्चित रूप से क्रोधित हो जाएँगे; फिर भी उसने अपनी

छाती को उनकी तरफ झुकाते हुए, अपनी भौंहें उठाते हुए मीठे स्वर में कहा, “आप हमारे क्षेत्र के राजा नहीं हो सकते। ये मुझे प्रभावित करने की कोई चाल तो नहीं?”

“मैं हस्तिनापुर का राजा हूँ,” वे तपाक से बोले। “महाराजा शान्तनु। जब मैं इस गाँव की ओर से गुजर रहा था, मैंने तुम्हें यमुना के तट पर देखा। मैं तुम्हें आज सवेरे से देख रहा हूँ।”

काली ने उनकी बातें ठीक से सुनी भी नहीं : हस्तिनापुर के महाराजा, सबसे महान राजवंश के सबसे शक्तिशाली राजा! उसका हृदय जोरों से धड़कने लगा। वो अपने राज्य के राजा के सामने बैठी थी, उसके सारे दुखों के निमित्त और साथ-साथ उसके लिए अपनी लालसा के दास! उसने एक क्षण के लिए उस व्यक्ति पर अपने प्रभाव का आनन्द लिया और फिर सभ्यता से सिर झुकाती हुई धीमी आवाज़ में कहा, “हमारे राजा के लिए।”

उसके मन में विचारों का बवंडर उठ रहा था। उसने कभी उन्हें फौंसने का प्रयत्न नहीं किया था, फिर भी वे उसके जाल में फँस गए थे। क्या मैं इन्हें चाहती हूँ? उसने अपने आपसे प्रश्न करते हुए उनके पके हुए बालों, चेहरे की लकीरों और हाथों की झुर्रियों को देखा। क्या मैं इस वृद्ध की प्रेमिका बनकर सुरक्षा और समृद्धि के लिए अपने यौवन का त्याग कर द्तूँ? मैं तो एक वृद्ध राजा की युवा रानी बन जाऊँगी...

काली ने गहरी सांस ली और सफलता के खारे स्वाद का आनन्द उठाया। वो महत्वाकांक्षा को कुत्सित शब्द नहीं बनने देगी। उसकी महत्वाकांक्षा ही उसकी रक्षा करेगी, और उसके पुनर्जन्म का कारण बनेगी। वो गरीबी से तंग आ गई थी, व्याधिग्रस्त हो गई थी। उसे उपचार की आवश्यकता थी; धन और ऐश्वर्य की आवश्यकता थी, जो सबसे बड़ी शक्ति थी। उसे अधिकार और सत्ता भी चाहिए थी।

काली ने आँखें उठाकर उन्हें नई दृष्टि से देखा। उनके सफेद बालों, गोरे रंग, सुन्दर चेहरे, रेशमी वस्त्रों, और सादे आभूषणों में वो निश्चित रूप से विलक्षण महाराजा लग रहे थे। क्या इसी तरह बेधड़क अपने राज्य में भ्रमण करते हुए राजा वसु ने उसकी माँ को मोह लिया था?

उसका हृदय कठोर हो गया, पर उसकी आँखों में नरमी थी।

“आप महान राजा शान्तनु हैं—और मैं एक साधारण, गरीब मछुआरिन,” उसने आँखें झुकाकर धीमें और विनम्र स्वर में कहा।

“किन्तु अब नहीं,” वे निर्णयात्मक ढंग से बोलते हुए उसकी ओर बढ़े। उनके अन्दर उत्तेजना की लहर-सी दौड़ रही थी।

काली जानती थी कि शान्तनु उसे स्पर्श करने के लिए आतुर थे। उसकी सुगंध और भी गहरी हो गई और राजा की आँखें उत्तेजना से चमक उठीं। वो सबसे

शक्तिशाली पुरुषों को आकर्षित करने में सफल हुई थी—पहले पराशर और अब शान्तनु। काली विजय के मादक बोध में झूबी जा रही थी।

राजा शान्तनु धीमी आवाज़ में बोले, “मेरे धनवान और तुम्हारे गरीब होने से क्या फर्क पड़ता है? तुम तो मेरे साथ रहोगी!”

काली अपने होंठों पर जीभ फेरते हुए खड़ी थी। वो हिचकिचाती हुई, अनिश्चितता से बोली, “मुझे मेरे बाबा से पूछना होगा...” वे अब उसके इतने निकट आ गए थे कि यदि उसने अपना सिर नहीं झुकाया होता तो वो उसे निश्चित ही चूम लेते।

“अभी नहीं, प्रिये, बाद में, मैं तुम्हारे पिताजी से मिलूँगा,” वे उसके हाथ थामते हुए अधीर होकर बोले। इतनी कड़ी मेहनत के बावजूद उसके हाथ बहुत ही नर्म थे। वो झिझकी पर अपने हाथ नहीं छुड़ाए। शान्तनु ने उसकी कलाई मोड़कर उसकी हथेलियाँ खोल दीं।

“उसने धीरे से पूछा, “क्या आप ऐसे रूखे हाथों वाली लड़की को अपने अन्तःपुर का हिस्सा बनाना चाहते हैं?” वो उसे गंगा की तरह ही चिढ़ा रही थी और शान्तनु की धड़कनें तीव्र होती जा रहीं थीं।

“मेरा कोई अन्तःपुर नहीं है,” वह रूखेपन से बोले। “तुम मेरे साथ हस्तिनापुर के राजमहल में रहोगी। प्रिये, मैं वचन देता हूँ कि महल में तुम्हारा विशेष स्थान होगा।”

“आपकी रानी?” उसने भोलेपन से, आशा और विश्वास से प्रश्न किया। काली आश्वस्त थी कि वो उनके हृदय को पिघलाने में सफल हो गई थी। वासना तो चिंगारी की तरह होती है जो शीघ्र ही बुझ जाती है, पर अनुत्तरित प्रेम बहुत लम्बे समय तक जलता रहता है। काली चाहती थी कि वे न केवल उसके लिए तड़पें, बल्कि उसके प्रेम में बावले हो जाएँ।

शान्तनु ने गहरी सांस ली। वे कुछ कह नहीं पा रहे थे। अवसर देखकर काली ने अपने हाथ खींच लिए। शान्तनु को लगा जैसे उनके जीवन से आशा और उत्साह निकला जा रहा था।

“काली धीरे से बड़बड़ाई, “देर हो रही है; अब मुझे जाना होगा...” झूठे भय से उन्हें देखती हुई बोली, “बाबा प्रतीक्षा कर रहे होंगे।” शान्तनु उसकी ओर बढ़ते, उससे पहले ही वो अपनी नाव के ऊपर से उछलती हुई नदी के तट पर दौड़ती हुई झाड़ियों की तरफ भागी।

वे तेज़ क्रदमों से उसके पीछे चलते हुए चिल्लाए, “तुम मुझे फिर कब मिलोगी?”

काली उनकी ओर मुड़कर मुस्कुराई और झाड़ियों में खो गई। काली तो हिरणी की तरह फुदकती हुई झुरमुटों के बीच से निकल गई। वे उसके पीछे भागे, पर गीली मिट्टी के कारण उनकी गति धीमी पड़ गई।

कदाचित वो वापस आएगी; मुझे उसकी प्रतीक्षा करनी चाहिए... इसी विचार के साथ वे उससे दोबारा मिलने की आशा के उन्माद में खो गए।

काली लम्बे, घने घास और झाड़ियों के पीछे छिपकर उन्हें देखती रही। वे हताश होकर सामने की ओर देख रहे थे, खोए हुए, व्याकुल और क्रोधित। वो सही समय पर उनसे दूर हुई थी। वे आने वाले कई दिनों तक उसे ढूँढ़ते रहेंगे। वो खुशी से मुस्कुराई; उसने इतने शक्तिशाली राजा को बड़ी सरलता से अपने वशीभूत कर लिया था। काली को समझ में नहीं आ रहा था कि उसे इस घटना के बारे में अपने बाबा को बताना चाहिए या नहीं। उसने आखिर न बताने का निश्चय किया।

उसके अनुमान के अनुसार अगले दिन सवेरे राजा शान्तनु नदी के तट पर उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वे काली से बात करने के लिए आगे बढ़े, पर काली ने उनकी बात ढूँढ़ता से काट दी।

“सुप्रभात श्रीमान,” वो उत्साहपूर्वक झुकते हुए बोली। “मैं आपके साथ नहीं बैठ सकती, मुझे काम पर जाना है और इन लोगों को नदी पार करवानी है।” वो मुस्कुराती हुई, भोलेपन से आँखें मटकाते हुई बोली। दोबारा भव्यता से झुकती हुई, वो थोड़ी दूरी पर खड़े लोगों की तरफ चल पड़ी। वो जानती थी कि शान्तनु की आँखें और उनका हृदय दोनों उसके लिए तड़प रहे हैं।

जब वह शाम को देर से लौटी तो वे झाड़ियों के बीच खड़े उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। आकाश में चंद्र चमक रहा था और ये गर्मी की गर्म रात थी। दूर से कुत्तों के भौंकने की आवाजें आ रही थीं। जैसे कोई चेतावनी के संकेत होंगे!

“मत्स्यगंधा,” उन्होंने अपने गम्भीर राजसी आवाज़ में कहा। काली उनकी तरफ मुड़कर मुस्कुराई और उसकी मुस्कुराहट देखते ही उनके चेहरे का क्रोध गायब हो गया, उनकी आँखें नर्म पड़ गईं। वे जोर से चिल्लाकर कहना चाहते थे कि वे काली को हर कीमत पर पाना चाहते हैं, वे उससे प्रेम करना चाहते हैं। चंद्रमा के प्रकाश में वो उनके लिए मात्र एक युवती नहीं, बल्कि चांदनी में एक सुन्दर शरीर थी, झाड़ियों के पीछे लज्जित होकर छिपी एक आकर्षक आकृति जिसे भोगने के लिए वे आतुर थे।

“भगवान के लिए, मुझे और न तड़पाओ। चलो उस झुरमुट के पीछे चलते हैं!”

काली हैरान थी, पर फिर भी चुपचाप उनके पीछे चल पड़ी। उन्होंने उसे कठोरता से अपनी ओर खींचा और वो कुछ कहती, उससे पहले ही उन्होंने अपने लालायित होंठ से काली के होंठ बन्द कर दिए। काली ने उन्हें नहीं रोका और आँखें बन्द करके उस आवेग में बह-सी गईं। वो अपने हाथ कोमलता से उनके पीठ पर फेरने लगी। उसे उनकी सिहरन महसूस हुई और उसके मुँह से उन्मत्त कराह निकल गई, जिसे सुनकर वे और भी बावले हो गए। अपनी अधखुली आँखों से उसने उनके होंठों को नीचे की ओर गले से होते हुए उसके वक्ष के गोल उभार तक सरकते देखा। उनका एक हाथ उसकी

कंचुकी के गांठ को दक्षतापूर्वक खोलने में लगा था और दूसरा हाथ उसकी रेशमी जांघों पर ऊपर सरक रहा था। ये अत्यन्त पारंगत प्रेमी लगते हैं। उन्होंने महल की दासियों के साथ ये सब कुछ अवश्य किया होगा, काली मन-ही-मन तिरस्कारपूर्वक सोच रही थी।

उसकी कंचुकी पूरी तरह खुल गई और उनकी आँखों को उसकी नगनता को निहारते देख वह कांप गई। उसने कुछ क्षणों तक उन्हें उसके सुन्दर वक्ष को देखने दिया और फिर अचानक झूठी घबराहट के साथ एक कदम पीछा हट गई और शर्माती हुई अपनी गिरी हुई उत्तरीय से अपने आपको ढकने लगी।

“नहीं, नहीं, मैं ऐसा नहीं कर सकती!” वो चीखी। “मेरे बाबा को पता चल गया तो वे मुझे मार डालेंगे!”

“क्या?” वे हाँफते हुए व्यग्र होकर दूर होती काली को देखकर चिल्लाए, “तुम ये क्या कर रही हो? वापस आ जाओ!”

काली ने उत्तर देने का प्रयास भी नहीं किया और कोमलता से दौड़ती हुई दूर चली गई, उन्हें वासना की अग्नि में धधकता छोड़।

~

वो गुनगुनाती हुई अपने घर पहुँची और द्वार खोला। उसकी सुगंध ने पहले ही बाबा को उसके आने का संकेत दे दिया था।

दशराज फटे हुए जाल पर गांठ बाँधते हुए बोले, “आज बहुत खुश लग रही हो! कोई बड़ी मछली हाथ लगी क्या?”

हल्की-सी मुस्कुराहट के साथ काली ने सिर हिलाते हुए कहा, “हाँ बाबा। बड़ी, पर जल वाली नहीं।”

दशराज के हाथ एकाएक रुक गए।

“राजा शान्तनु,” काली ने अचानक कहा और अपने शब्दों के असर की प्रतीक्षा करती रही।

बाबा ने आश्वर्यचकित होकर पूछा, “तुम उनसे मिलीं? वे यहाँ क्या कर रहे थे?”

“कदाचित शिकार के लिए आए होंगे, और उनकी दृष्टि मुझ पर पड़ गई। या हो सकता है वे मेरी सुगंध का पीछा करते हुए यहाँ तक आ पहुँचे।” उसने लापरवाही से कहा।

“उन्होंने तुम्हें रिझाने का प्रयत्न तो नहीं किया न?” उन्होंने पूछा, पर काली को उनका भय स्पष्ट सुनाई दे रहा था।

“उन्हें लगता है कि उन्होंने मुझे मोह लिया है, किन्तु सत्य तो ये है कि मैं ही उन्हें बहका रही हूँ।” वो नदी के तट पर हुई संक्षिप्त घटना को याद करते हुए सिहर गई। “मैं

उन्हें मुझे लुभाने का अवसर दूँ उससे पहले मैं उनसे विवाह कर लूँगी। इस समय मेरी अनुपस्थिति उन्हें धीरे-धीरे बेसुध कर रही है।”

“उन पर विश्वास मत करो। वे मूर्ख नहीं हैं, सत्यवती। अत्यन्त दक्ष व्याभिचारी हैं।” उन्होंने सचेत करते हुए कहा। “ये उनके परिवार की परम्परा है। तुम्हें उनके पूर्वज राजा दुष्यन्त की कहानी तो याद होगी, जिन्होंने बड़ी सरलता से अपनी पत्नी शकुन्तला को भुला दिया और जब उसने उनसे प्रश्न किया तो उन्होंने उस बात का खंडन कर दिया। शकुन्तला अपने पुत्र के अधिकार के लिए बड़ी मर्यादापूर्वक लड़ी, और दुष्यन्त ने अपने पुत्र को केवल इसलिए अपनाया क्योंकि वे निस्सन्तान थे, और उन्हें उत्तराधिकारी की आवश्यकता थी। ये भी उनके जैसा ही है। अपनी पत्नी गंगा से अलग होने का शोक मनाने के बहाने से...”

“अलग हुई?” काली ने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

“हाँ, राजा शान्तनु उस सुन्दर महिला से गंगा नदी के तट पर मिले, उससे प्रेम कर बैठे और अपने पिता के आशीर्वाद से उससे विवाह कर लिया। उनके सात पुत्र हुए, पर कदाचित रानी को किसी तरह की बीमारी थी। लोकवाद के अनुसार सातों पुत्रों की मृत्यु हो गई। सबसे घिनौनी बात तो ये है कि माँ ने अपने सातों पुत्रों को स्वयं गंगा नदी में डुबा दिया। किसी को सत्य का पता नहीं है, पर हमारे वर्तमान युवराज, गंगा और शान्तनु की आठवीं सन्तान हैं। गंगा उसे जन्म के बाद अपने साथ ले गई, और सुनने में आया था कि राजा शान्तनु, पत्नी और पुत्र के चले जाने से शोक से पागल ही हो गए थे। अब ये निश्चित नहीं हैं कि वो सचमुच वियोग था या काम-वासना, पर लोगों के अनुसार उन्होंने महल की आधी दासियों और सेविकाओं को अपनी वासना का शिकार बनाया है और अन्य को अपने अन्तःपुर का हिस्सा। जबसे कुछ वर्षों पहले उनके पुत्र उनके पास आए हैं, वे नियंत्रण में हैं।”

“उनका पुत्र वापस आ गया है?” काली ने कौतूहल से पूछा और अचानक उसके सामने युवा शान्तनु की छवि उभर आयी।

“हाँ, देवव्रत ही युवराज हैं। क्या हो रहा है सत्यवती?” बाबा ने तीक्ष्णता से प्रश्न किया।

“संक्षेप में कहूँ तो, राजा शान्तनु मुझे चाहते हैं...”

बाबा ने तपाक से हस्तक्षेप करते हुए पूछा, “इतने हताश कि तुमसे विवाह कर लेंगे?”

काली ने दृढ़तापूर्वक कहा, “मैं उन्हें मुझसे विवाह करने के लिए विवश कर दूँगी। वे कहते हैं कि उन्हें मुझसे प्रेम हो गया है,” वो खिलखिलाती हुई बोली। “मैं भी उनके साथ ये स्वांग जारी रखूँगी, पर उनकी इच्छानुसार उनके अन्तःपुर की सदस्य बन कर

नहीं, अपितु, उनकी पत्नी, उनकी रानी बनकर। हस्तिनापुर की रानी!” काली हर शब्द का आनन्द लेती हुए बोली।

दशराज चौंकते हुए बोले, “तुमने योजना तो बहुत अच्छी बनाई है।”

“बाबा, मुझ पर शंका मत कीजिए,” काली ने स्पष्टता से कहा। “मैं किसी प्रकार की जल्दबाजी नहीं करूँगी। इस समय मैं एक गरीब, अपने न्यायसंगत पिता से भयभीत लड़की की भूमिका निभा रही हूँ।”

दशराज सिर हिलाते हुए विचारमग्न होकर अपनी पुत्री को देखते रहे। काली धीरे से जाल को खींच रही थी और राजा उसमें अपरिवर्तनीय रूप से फँसे जा रहे थे और बच निकलने के लिए छटपटा रहे थे।

अगले दिन सवेरे काली को असहाय और निराश राजा को उसकी प्रतीक्षा करते देख तनिक भी अचरज नहीं हुआ।

काली को देखते ही वे चिल्लाए, “मत्स्यगंधा!” जब उसने कोई उत्तर नहीं दिया तो उन्होंने ‘काली’ कहकर पुकारा।

अब उनकी आवाज़ से राजसी प्रभुत्व गायब था; उसमें केवल हताश विनती ही थी।

वो अपना असली नाम सुनकर चौंककर मुड़ी।

“आप मेरा नाम कैसे जानते हैं?”

“मैंने आसपास पूछताछ की, सब तुम्हें काली के नाम से जानते हैं।”

काली हल्की-सी मीठी और अत्यन्त मनमोहक हँसी के साथ बोली, “मैं साँवली हूँ न, इसलिए।”

“और अत्यन्त सुन्दर भी!” वे आह भरते हुए, उसकी ठोड़ी को अपनी ओर उठाते हुए बोले। वे उसके होंठों को चूमने के लिए उसकी ओर आतुरता से झुके। शान्तनु भूखे भेड़िये की तरह उसके होंठों को चूमते हुए उसका भक्षण करने के लिए तत्पर थे। उसने उन्हें नहीं रोका, परन्तु जैसे ही वे और उतावले हुए, उसने उनको दृढ़ता से पीछे धकेल दिया।

“नहीं श्रीमान!, मैंने आपसे पहले ही कहा था, मैं आपकी प्रेमिका नहीं बन सकती,” वो लाचार आँखों से उन्हें देखती हुई बोली। “मेरे पिता इसकी अनुमति कभी नहीं देंगे।”

“पर मैं तुमसे प्रेम करता हूँ,” उन्होंने तर्क देते हुए कहा।

“मैं भी आपसे प्रेम करती हूँ,” काली ने सरलता और गम्भीरता से झूठ बोला।

“किन्तु हमारा क्या होगा? हमारे भविष्य का क्या होगा?”

“मैं तुम्हें अपने साथ ले जाकर सदा के लिए अपने साथ रखूँगा।”

“रखैल की तरह; पर रानी की तरह नहीं?” काली ने शान्तिपूर्वक पूछा।

शान्तनु दंग रह गए। उन्होंने व्यग्र होकर पूछा, “पत्नी?”

“हाँ, आपकी पत्नी।”

वे शान्त खड़े रहे।

“क्या मैं केवल प्रेम और सम्भोग के योग्य हूँ, पत्नी बनने के लिए नहीं?” उसने थरथराते होंठों के साथ दुखभरी आवाज़ में पूछा।

शान्तनु अपने आपको सँभालते हुए, थोड़े क्रोधित होते हुए बोले, “जैसा तुमने कहा, तुम तो केवल एक मछुआरिन हो, मैं तुमसे विवाह नहीं कर सकता।” वे उत्तेजित होकर बोले।

काली धीरे से बोली, “क्या इसलिए कि मैं जन्म से कुलीन या राजकुमारी नहीं हूँ? आप मुझे जी भर के प्रेम करेंगे, मुझे मोहित करेंगे और फिर मुझे त्याग देंगे?” वो कांपती आवाज़ में बोली। उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली।

उसकी पीड़ा देख शान्तनु द्रवित हो गए।

“मैं तुम्हें कभी नहीं त्यागूँगा। मैं तुम्हें सदा के लिए अपने साथ राजमहल में रखूँगा,” वे उसे कंधे से पकड़ते हुए बोले; “रानी की तरह।”

“परन्तु आपकी रानी बनकर नहीं,” उसने उनके शब्दों को सुधारते हुए, अपनी बड़ी-बड़ी गीली आँखों से देखते हुए कहा। “मैं आपसे प्रेम करती हूँ, पर मैं आपसे विवाह करने का स्वप्न भी नहीं देख सकती, है न?” अपनी आवाज़ में सही मात्रा में संवेदना घोलते हुए वो बोली। “क्या मैं अपनी सीमा लांघ रही हूँ, राजन?” उसने कामुकता से अपने होंठ सिकोड़ते हुए पूछा। “क्या मैं कुछ अधिक माँग रही हूँ?”

राजा उत्तेजित हो गए। काली ने उनके उत्तर की प्रतीक्षा न करते हुए उन्हें अत्यन्त निराश दृष्टि से देखा और रोती हुई टूटी आवाज़ में बोली, “मैं आपको कभी नहीं भूलूँगी, राजन, मैं आपसे विदा लेती हूँ।”

वो शान्तनु की पुकार को अनसुना करती हुई उनसे दूर होती चली गई। वो जानती थी कि यदि वो रुक गई तो अपनी लड़ाई हार जाएगी। मुझे जीतना ही होगा! उसने मन-ही-मन प्रण किया। वे मेरे पीछे अवश्य आएँगे।

अगले दो दिनों तक काली काम पर भी नहीं गई।

दशराज उसे डांटते हुए बोले, “पैसों की बहुत क्षति हो रही है।”

“हम पैसों से कहीं अधिक कमाएँगे बाबा।” काली उन्हें आश्वस्त करती हुई बोली। “बाबा, मुझे सम्मान चाहिए। मैं चाहती हूँ कि वो मेरे लिए तड़पें।” काली अपने होंठों को ऊँगली से थपथपाती हुई विचार करते हुए बोली, “मुझे न पा सकने का अनुभव उन्हें होना चाहिए और मैं चाहती हूँ कि वह रेंगते हुए मेरे चौखट पर आएँ।”

वो शान्तनु को लगभग एक सप्ताह बाद मिली। वे उसकी नाव के पास बैठे हुए थे। उसने उन्हें देखते ही चौंकने का स्वांग किया और अचानक रुक गई। उनका चेहरा उसे

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

देखते ही प्रसन्नता से खिल गया। वो थोड़ी चिन्तामुक्त हो गई—मछली उसके फंदे में फँसने लगी थी। वो उसके पास आते ही थोड़ा हिचकिचाए और अचानक उसे कमर से पकड़ लिया। उनके हाथ धीरे-धीरे उसकी पीठ पर सरकने लगे और उसकी सुडौल कमर की ओर बढ़े। उन्होंने उसे जोर से अपनी ओर खींचा और अपने होंठ उसके होंठों से लगाते हुए बोले, “मुझे कभी छोड़कर मत जाना!” वे उसके चेहरे को व्यग्रतापूर्वक चूमते हुए बोले, “मैं जानता हूँ कि अब मैं तुम्हारे बिना नहीं जी सकता! हाँ, मैं तुमसे विवाह करूँगा; तुमसे विवाह करूँगा!”

## असमंजस

काली के घर के बाहर खलबली-सी मची हुई थी। वो रोज की तरह बच्चों के खेलने का शोरगुल नहीं था। उसने खिड़की से बाहर झांका। खलबली का कारण देखकर वो दंग रह गई। राजा शान्तनु कीचड़ भरी संकरी गली पर पैदल चले आ रहे थे। उनकी धोती पर मिट्टी चिपकी हुई थी और उनकी पादुकाएँ कीचड़ से सनी हुई थीं; पर उनका हर कदम उद्देश्यपूर्ण ढंग से बढ़ता हुआ उन्हें काली के घर तक ले जा रहा था। वे अकेले नहीं थे; उनके साथ एक वयोवृद्ध मनुष्य भी थे, जो उनके वस्त्रों से राजा के सेवक जैसे लग रहे थे।

“बाबा, जैसा मैंने कहा था, वे हमारे चौखट तक आ गए हैं!” काली उपहासपूर्वक बोली।

उसने लम्बी सांस ली और जब दरवाजे पर खटखटाहट हुई, उसने जानबूझकर दरवाजा खोलने में देरी की और संकोच भरी मुस्कुराहट के साथ उनका स्वागत किया।

काली की टूटी-फूटी झोपड़ी उसकी मादक सुगंध से भरी हुई थी, और शान्तनु उस सुगंध से मंत्रमुग्ध हो गए। उनकी दृष्टि कमरे के एक कोने में बैठे, जाल को सिलते वृद्ध पर पड़ी। काली शान्तनु के कुछ कहने की प्रतीक्षा करती रही; पर वे हिचकिचाते हुए खड़े रहे। घर के बाहर उमड़ती भीड़ को देखते हुए अचानक बोले, “मुझे पता नहीं था कि मेरा पुत्र यहाँ भी इतना लोकप्रिय है। ये युवराज देवव्रत को अतिशीघ्र राजगद्दी पर देखना चाहते हैं।”

काली का गला घबराहट से सूख गया। उसे शान्तनु से ऐसी बात की अपेक्षा नहीं थी। देवव्रत राजा बनेगा... वो विचलित हो गई और उसे लगा जैसे रानी बनने की उसकी सारी आशाएँ धूमिल होती जा रही थीं; यदि उसने तुरन्त ही कोई युक्ति नहीं सोची तो ये व्यक्ति और उसके साथ-साथ उसका भविष्य भी हाथ से निकल जाएगा। सब कुछ उसकी मूर्खता होगी, उसकी गलती होगी...

अपनी भावनाओं को छिपाती हुई मुस्कुराहट के साथ बोली, “अति उत्तम! मैंने सुना है कि युवराज अत्यन्त योग्य युवक हैं! मैंने समझा था कि आप मेरे पिता से हमारे विवाह की अनुमति माँगने आए हैं...” वो निराश आँखों से उन्हें देखती हुई, आह भरती हुई बोली।

शान्तनु को अपने निर्णय पर सन्देह होने लगा... क्या मैं सही कर रहा हूँ? मैं अकेलेपन में क्यों जियूँ? क्या मुझे किसी सहचरी का अधिकार नहीं? राजा होते हुए मैंने अपने राज्य और प्रजा के सारे उत्तरदायित्व पूरे किए हैं। क्या मुझे अपनी वृद्धावस्था में सुख और प्रेम का अधिकार नहीं?

“हाँ, मैं अपने वचनानुसार उसी के लिए आया हूँ,” शान्तनु शीघ्रता से बोले।

काली उन्हें घर के और अन्दर तक ले गई। शान्तनु इस बात से चिढ़ गए कि काली के पिता उन्हें देखकर तुरन्त खड़े भी नहीं हुए और उनका स्वागत नहीं किया। स्वागत की जगह, दशराज ने राजा को केवल जिज्ञासापूर्वक देखा।

“मैं हस्तिनापुर का राजा हूँ : राजा शान्तनु,” उन्होंने सूचित किया। “मैं विवाह के लिए आपकी पुत्री का हाथ माँगने आया हूँ।”

उन्होंने स्पष्टापूर्वक अपना निर्णय सुनाया। उनकी आवाज़ में विनती कम और राजसी आदेश अधिक था।

काली के चेहरे पर विजय की खुशी फैल गई। अब वो उनकी रानी बनने वाली थी। पहली बार काली शान्तनु को देखकर हृदयपूर्वक मुस्कुराई और उसकी आँखें अव्यक्त कृतज्ञता और विजयी उल्लास से भर गई।

शान्तनु भी उसे देखकर ऐसे मुस्कुराए जैसे उन्होंने उसे पा लिया हो। वो अधीरता से काली के पिता की ओर मुड़े। दशराज ने अभी तक एक शब्द भी नहीं बोला था। ये साधारण, घृणास्पद मछुआरे क्यों नहीं मानेंगे, शान्तनु ने मन-ही-मन तर्क किया। वो अपनी पुत्री का विवाह एक राजा से करने के इच्छुक क्यों नहीं होंगे? उन्हें तो खुशी से नाचना गाना चाहिए। किन्तु उस वृद्ध ने ऐसा कुछ भी नहीं किया; वो अपनी कुटिल और विचारशील आँखों से शान्तनु को देखते रहे। शान्तनु थोड़े व्याकुल हो गए। परिस्थिति उनकी कल्पना से कहीं अलग थी। पुत्री प्रसन्न थी, किन्तु पिता तनिक भी उत्साहित नहीं थे। शान्तनु को उस वृद्ध के कठोर चेहरे और छोटी आँखों से अत्यन्त घृणा हुई।

काली भी निराश होती जा रही थी। बाबा उत्तर देने में इतना समय क्यों ले रहे थे? हम दोनों ने तो निश्चय किया था कि मुझे पाने के लिए विवाह ही एकमात्र शर्त होगी। अब जब राजा मुझे स्वयं लेने आए हैं, तो बाबा इतना क्यों विचार कर रहे हैं? निश्चित ही काली के पिता ने अलग ही कोई योजना बनाई थी। काली बहुत घबरा गई।

“ये मेरा सौभाग्य है कि आपने मेरी पुत्री से विवाह करने का निर्णय लिया है,” दशराज ने भावहीन स्वर में बोलना आरम्भ किया। उनके चेहरे पर आभार या चाटुकारिता की झलक तक नहीं थी। “आपको इससे विवाह करके लज्जा तो नहीं होगी कि ये एक निर्धन नाविका है, दरिद्र मछुआरे की पुत्री है। ये अत्यन्त बुद्धिवान, सुशिक्षित, और सुन्दर युवती है—हर तरह से आपकी रानी बनने योग्य,” दशराज आगे बोले।

उस कमरे की नीरवता गर्जनापूर्ण थी; अकथित उपहास वृद्ध राजा के कानों को भेद रहा था। वो युवती थी, और राजा काली के पिता की आयु के थे। काली ने झट से परिस्थिति का अनुमान लगा लिया। उसके पिता राजा को दर्शाना चाहते थे कि वे काली के पति बनने के योग्य नहीं हैं। वे राजा हो सकते हैं, पर काली को तो यथा योग्य और श्रेष्ठ वर निश्चित रूप से मिल ही सकता था।

शान्तनु का चेहरा लाल हो गया और वे क्रोध से अवाक् रह गए।

दशराज ने प्रस्ताव रखते हुए कहा, “अच्छा नहीं होगा कि काली आपके पुत्र, युवराज देवव्रत से विवाह कर ले? मैंने सुना है कि वो विवाह-योग्य है, सुन्दर, सुशील, और वीर हैं, मेरी पुत्री के लिए योग्य।”

काली और शान्तनु स्पष्ट रूप से दंग रह गए। मेरे पिता ये क्या कर रहे हैं? क्या अपनी योजना से वे राजा को हमसे दूर कर रहे हैं? वो व्यग्रतापूर्वक बाबा को देखती रही। अपनी उँगलियों को मरोड़ती हुई व्याकुल होकर विचार करती रही कि बाबा उसका विवाह राजा की जगह युवराज से क्यों करना चाहते थे!

“परन्तु आपकी पुत्री मुझसे प्रेम करती है,” राजा धृष्टापूर्वक बोले। काली एक क्षण के लिए चौंक गई, वो तो उनके लिए अपनी भावनाएँ पहले ही स्पष्ट कर चुकी थी। “मैं उससे प्रेम करता हूँ, इतना कि मैं उससे विवाह करना चाहता हूँ।” वे दृढ़तापूर्वक बोले, “मैं उसे अपनी रानी बनाना चाहता हूँ।”

“हाँ! आपसे विवाह करके वो आपकी रानी अवश्य बनेगी, किन्तु उससे हुई आपकी सन्तान क्या राजसिंहासन के उत्तराधिकारी होंगे?” दशराज ने पूछा। “नहीं, वे केवल आपके कई सन्तानों में से एक होंगे। युवराज का चयन तो पहले ही हो चुका है। और वो शीघ्र ही राजा बनने वाले हैं।”

अब काली अपने पिता के तर्क की दिशा समझ गई। शान्तनु को भी तुरन्त ही उनके शब्दों का तात्पर्य समझ में आ गया और उनका चेहरा लाल हो गया।

“देवव्रत मेरा एकमात्र पुत्र है,” वे क्रोधित होते हुए बोले। “वो युवराज है, और हाँ, वही राजा बनेगा। सभी लोग उससे बहुत स्नेह करते हैं।”

“निश्चित,” दशराज सिर हिलाते हुए बोले। “परन्तु मेरी पुत्री के बच्चों का क्या होगा? वे कभी, किसी स्थिति में राजा नहीं बन पाएँगे। वे तो देवव्रत की कृपा पर जीने वाले राजकुमार ही रह जाएँगे,” उन्होंने शान्तनु को स्मरण करते हुए स्थिर आवाज़ में कहा।

“मैं कभी उनका त्याग नहीं करूँगा!” शान्तनु ने जोर से खंडन करते हुए कहा। देवव्रत अपने सहोदरों का अहित कभी नहीं चाहेगा।”

“परन्तु, आपके स्वर्गवास के पश्चात क्या होगा?” दशराज ने सावधानीपूर्वक प्रश्न किया। “आप बूढ़े हो गए हैं राजन, पर मेरी पुत्री अभी भी तरुण है। आपकी मृत्यु के

बाद उसका और उसकी सन्तान का क्या होगा?” उन्होंने सीधे-सीधे प्रश्न किया।

शान्तनु अटक गए, उनका सुन्दर चेहरा मुरझा गया। शान्तनु कुछ कहते उससे पहले दशराज बोले, “या तो मेरी पुत्री युवराज से विवाह करेगी, जो उसी की आयु के हैं; या आपसे तभी विवाह करेगी जब आप वचन देंगे कि उसकी सन्तान ही हस्तिनापुर के राजसिंहासन के उत्तराधिकारी होंगे। दोनों ही परिस्थितियों में उसे और उसके बच्चों को राज्य में स्थान निश्चित प्राप्त होगा। कहिए, आप कौन-सा विकल्प चुनेंगे?”

“आपकी पुत्री का युवराज से विवाह का तो प्रश्न ही नहीं उठता,” शान्तनु रुखी आवाज़ में बोले। “मैं उससे प्रेम करता हूँ” वे दयनीय स्वर में बोले। शान्तनु ने गहरी सांस ली, उनका चेहरा विवर्ण हो गया, और उनकी आवाज़ तेज़ हो गई। “मैं उससे प्रेम करता हूँ,” वे दोबारा बोले... इतना कि उससे विवाह कर लूँ परन्तु इतना भी नहीं कि अपने पुत्र को उसके अधिकार से, उसके राजसिंहासन से वंचित कर दूँ। कदापि नहीं!” वे आक्रोशित होकर बोले। “हे दुष्ट, कपटी बुद्धे, मेरी बात सुनो। तुम्हारी पुत्री से विवाह करने का वचन देकर मैं अपने पुत्र से उसका राजपद नहीं छीनूँगा। मैं तुम्हारे प्रस्ताव को ठुकराता हूँ। मैं तुम्हारे लोभ के कारण देवव्रत को कष्ट भुगतने नहीं दूँगा!”

काली का हृदय बैठ गया। वो अपने पिता को निवेदन भरी आँखों से देखती रही, पर वे अडिग थे।

“मैं लोभी नहीं हूँ!” उन्होंने उत्तर में कहा। “मुझे अपने लिए कुछ नहीं चाहिए। मैं तो केवल अपनी पुत्री का अधिकार, उसका भविष्य और उसकी सन्तान की सुरक्षा का ध्यान रख रहा हूँ।”

“आपने राजा के वचन पर सन्देह करने का दुस्साहस कैसे किया?” शान्तनु गरजे।

“मैं तो आपके वचन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ,” दशराज शान्तिपूर्वक बोले। जब तक आप मुझे वचन नहीं देते, मैं अपनी पुत्री का हाथ आपको नहीं दूँगा; और आप न ही उससे दोबारा मिलेंगे,” वे जानबूझकर बोले। “हम आपके उत्तर की प्रतीक्षा करेंगे, राजन,” उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा। “उसके बाद आप इसे अपनी पत्नी और रानी अवश्य बना सकते हैं।”

शान्तनु दंग रह गए और काली की तरफ निराशा से देखते हुए उसके कुछ कहने की प्रतीक्षा करते रहे। किन्तु उसने चुपचाप अपना सिर झुका लिया। वो अत्यन्त व्याकुल थी, पर उसे राजा के असीम प्रेम के बावजूद, अपने पिता पर अधिक विश्वास था। आखिरकार उसने सिर उठाते हुए दुखी और पीड़ित आँखों से राजा को देखा।

“आशा है ये हमारी अन्तिम भेंट नहीं होगी, राजन,” वो धीरे से बोली। उसकी आँखों में दुख से नहीं बल्कि निराशा के आँसू भर आए। “मैं हृदय से आपकी भावनाएँ समझ सकती हूँ, किन्तु आप भी समझिए... मैं अपने पिता की इच्छाओं की अवज्ञा नहीं कर सकती। मैं आपकी प्रतीक्षा करूँगी राजन!”

शान्तनु उसे दयनीय और निराश आँखों से देखते हुए, उसके रूखे हाथों को थामते हुए बोले, “मुझे अभी भी याद है, तुमने कुछ दिनों पहले कितनी कठिनाई से, हाथों में चोट होते हुए भी संघर्ष करके वो बड़ी मछली पकड़ी थी। किन्तु मैं अपने पुत्र का अधिकार नहीं छीन सकता। तुम्हारे पिताजी की माँगों से मेरा हृदय अत्यन्त पीड़ित है, परन्तु मैं किसी भी परिस्थिति में उनकी आकांक्षाओं के कारण अपने पुत्र को हानि पहुँचने नहीं दूँगा।” इन शब्दों के साथ वे दरवाज़ा बिना बन्द किए, काली के घर से तेजी से निकल गए।

काली झूलते दरवाजे को बन्द करके क्रोधित होकर अपने बाबा की ओर मुड़ी। “हमने उन्हें खो दिया! वे अब कभी वापस नहीं आएँगे!” वो रोषपूर्वक चिल्लाई।

“शान्त हो जाओ सत्या,” बाबा उसे आश्वासन देते हुए बोले। “वे अवश्य वापस आएँगे। जिस तरह तुम निश्चिन्त थी, मैं भी उतना ही आश्वस्त हूँ कि वे वापस आएँगे। वे तुमसे प्रेम करते हैं।”

“उन्हें कोई भी अन्य युवा लड़की मिल जाएगी, जो आनन्दपूर्वक उनके साथ बिस्तर साझा करने के लिए सहमत होगी।” काली बोली।

“किन्तु उनका सिंहासन नहीं! और तुम, किसी भी साधारण लड़की की तरह उसके लिए तैयार हो?” दशराज ने पूछा। “मेरा अनुमान था कि तुम इससे कहीं अधिक महत्वाकांक्षी होगी।”

काली के कंधे निराशापूर्वक झुक गए। “सब कुछ व्यर्थ हो गया,” वो आह भरती हुई बोली। “मैं रानी बनना चाहती थी, किन्तु आपने कुछ अधिक ही माँग लिया।”

दशराज उसकी बात नकारते हुए बोले, “तुम तो केवल रानी बनने के पीछे पड़ी हुई हो; तुम्हें उसके बाद क्या होगा, इसकी तनिक भी परवाह नहीं है। मैं तुम्हारा भला ही चाहता हूँ। क्या तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं?”

काली ने हताश होकर सिर हिलाया।

“शान्तनु बूढ़े हो गए हैं, और शीघ्र ही उनकी मृत्यु हो जाएगी,” दशराज उसे धैर्यपूर्वक समझाते हुए बोले। “उसके बाद तुम उनकी रानी नहीं, बल्कि विधवा होगी। और यदि तुम्हारे बच्चे हुए तो उनका क्या होगा? मैंने सुना है कि देवव्रत दयालु है; वो कदाचित तुम्हें और तुम्हारे बच्चों को छोड़ दे। सौतेले भाई-बहनों की हत्या करवा देना, उन्हें बन्दी बना देना या उन्हें गायब कर देना कोई विशेष बात नहीं, क्योंकि वे राजसिंहासन के लिए खतरा बन जाते हैं। सिंहासन पर अधिकार की लड़ाई अत्यन्त हिंसक हो सकती है, पुत्री।”

काली उनकी बातें सुनकर सिहर गई।

“तुम केवल अपने निकट भविष्य के स्वप्न देख रही हो—हस्तिनापुर की रानी बनने का स्वप्न। अपनी सन्तान के बारे में भी तनिक विचार करो।” दशराज उसे आगाह

करते हुए बोले। अपनी सन्तान के लिए स्वप्र देखो, देवव्रत की सन्तान के लिए नहीं। यदि मैं शान्तनु से वचन लेने में सफल हो गया तो तुम्हारा भविष्य सुरक्षित हो जाएगा। हमारे पास उसे पाने के लिए ये प्रस्ताव ही एकमात्र शस्त्र है। विवाह केवल एक प्रेमकथा नहीं, एक संधि—राजनीतिक समझौता और प्रतिज्ञा भी है, और मैं तुम्हें उनके साथ जाने की अनुमति तब तक नहीं दूँगा, जब तक वे मुझे अपना वचन नहीं दे देते।”

“मुझे सन्देह है कि वे नहीं मानेंगे,” काली भारी आवाज़ में बोली। “वो भी ठीक ही सोच रहे हैं; मैं उनके पुत्र के भविष्य की कीमत पर रानी नहीं बन सकती।”

“फिर तो तुम मूर्ख हो!” दशराज उसे डांटते हुए बोले।

“पुत्री होते हुए मुझे मेरे अधिकार से वंचित रखा गया; मैं युवराज देवव्रत के साथ यही अन्याय नहीं होने दे सकती।” काली ने बलपूर्वक तर्क देते हुए कहा। “किसी और को दुख देकर मैं कैसे खुश रह सकती हूँ?”

“तुम शान्तनु या देवव्रत की किसी प्रकार से ऋणी नहीं हो। किन्तु तुम्हारा अपनी सन्तान के प्रति कर्तव्य अवश्य है; उन्हें वो भविष्य देना जो मैं और मेरी बहन तुम्हें नहीं दिला पाए। उन्होंने कठोरतापूर्वक उसे स्मरण कराते हुए कहा। “यदि तुम राजमहल में रहना चाहती हो, तो तुम्हें वहाँ के नियमों का पालन भी करना पड़ेगा, और ये नियम वहाँ के भोग-विलास और शान की तरह सुनहरे नहीं होते।” वे ताना मारते हुए बोले। “राजमुकुट में जड़े रत्नों के साथ-साथ, वहाँ हिंसा और षड्यंत्र भी भरपूर होता है। तुम इस सत्य से नहीं बच सकतीं, पर तुम चतुरता से अपने दांव खेलकर वहाँ जीवित अवश्य रह सकती हो। सत्या, या तो उसका भाग बनो, या उससे दूर रहो। तुमने अब तक केवल एक चाल चली है, ये तो केवल शुरुआत है; राजमुकुट पहनना और उसे पहने रखना कठिन परीक्षा होती है, मात्र प्रतियोगिता नहीं।”

“मुझे तो लगता है कि मैं दौड़ आरम्भ होने से पहले ही हार गई हूँ,” वो अपने निचले होंठ को ऊँगलियों से ढबाती हुई निराश स्वर में बोली। “आपने महाराज को इतने जटिल विकल्प दिए हैं कि वो कभी मुझे नहीं चुनेंगे।”

“सदैव किसी भी मनुष्य को दो अस्वीकार्य विकल्प देने चाहिए, और वह आखिरकार उसी विकल्प का चयन करेगा जो तुम चाहो,” दशराज खिलखिलाते हुए बोले। “उन्हें या तो तुम्हारा विवाह युवराज के साथ करवाना होगा या उसे अधिकार से वंचित करते हुए तुमसे विवाह करना होगा। दोनों ही परिस्थितियाँ हमारे लिए उत्तम सिद्ध होंगी, किन्तु उनके लिए एक ही विकल्प लाभकारी होगा। तुम तो जानती हो कि वो कौन-सा होगा।”

“राजा अपने वचन निभाने के लिए नहीं जाने जाते हैं, और शान्तनु भी उसे टालने का प्रयत्न अवश्य करेंगे,” वो सिर हिलाती हुई निराशापूर्वक बोली।

“मानता हूँ,” दशराज गम्भीरता से बोले। “इसीलिए तुमसे विवाह करने से पहले उन्हें अपने राज्य में इस निर्णय की घोषणा करनी पड़ेगी। तुम्हें याद है, किस तरह राजा दशरथ कैकेयी के पिता, कैकेय के राजा अश्वपति को दिया हुआ अपना वचन भूल गए। उन्होंने अपनी युवा राजकुमारी का हाथ कोसल के वृद्ध राजा के हाथ में देने के लिए एक ही शर्त रखी थी : कि उसका पुत्र ही भविष्य में राजा बनेगा।” परन्तु, तुम्हें पता है क्या हुआ। उन्होंने अपना वचन नहीं निभाया, और उनकी पत्नी को उसके लिए लड़ना पड़ा, जिसके कारण वो अपने पुत्र और परिवार से विमुख हो गई। कैकेयी ने अपना सब कुछ खो दिया—अपना पति, पुत्र, अपना सम्मान और इतिहास की सबसे घृणित स्त्री बन गई। क्या तुम चाहती हो कि तुम्हारे साथ भी ऐसा ही हो?”

काली उनके हर शब्द को सुनती हुई उनके आशय के साथ संघर्ष करती रही। उसके पिता लोभी या मूर्ख नहीं थे। वो उसके पिता थे, स्नेही और रक्षात्मक; वे मछुआरों के मुखिया एवं चतुर व्यापारी भी थे। उनमें मछुआरों को प्राप्त स्वाभाविक क्षमता थी जिसके कारण वे जलधारा के प्रवाह को परख लेते और अवसर का समय से लाभ उठाने में दक्ष थे। इस समय वे उसके लिए वही कर रहे थे।

“भावुक मत हो काली; राजाओं, राजमुकुटों और राज्यों के अतिरिक्त राजनीति भावनाओं पर भी राज करती है,” बाबा ने उसे परामर्श दिया। “सभी उस राजसिंहासन पर बैठने की स्पर्धा में ही लगे होते हैं। राजनीति का खेल जानने के लिए राजसी परिवार या वंश का होना अनिवार्य नहीं; तुममें केवल उसे खेलने का साहस और चातुर्य होना चाहिए। इस खेल को सही तरीके से खेलो, क्योंकि ये क्षमाशील खेल कदापि नहीं हैं; ये तो निष्ठुर प्रतियोगिता है जिसमें विजय सबसे शक्तिशाली की नहीं बल्कि सबसे कुशाग्र और चतुर खिलाड़ी की होती है।”



“तुम्हारे पिता कहाँ हैं?” बहलिक ने बढ़ती घबराहट के साथ पूछा।

“वे वापस आ गए हैं, परन्तु कल शाम से अपने कक्ष से बाहर नहीं आए हैं।” देवव्रत ने चिन्तित स्वर में उत्तर दिया।

“उनकी चिन्ता मत करो,” ताऊजी ने देवव्रत के कंधे पर हाथ रखकर आश्वासन देते हुए कहा। “क्या उन्हें तुम्हारे अद्वितीय विजय के बारे में जानकारी है? तुमने तो अपना सबसे पहला युद्ध बिना एक बूँद रक्त बहाए ही जीत लिया।” बहलिक प्रसन्नतापूर्वक देवव्रत को आलिंगन में भरते हुए बोले; जिसे देखकर देवव्रत झेंप-सा गया और उसे देखकर कृपा हँस पड़ा।

“हाँ, कुछ रक्त तो बहा था, वो भी शत्रु का” कृपा मुस्कुराते हुए बोला।

दोनों देवव्रत की शल्व के राजकुमार चित्रमुख पर विजय पर प्रफुल्लित हो रहे थे, जिसने अपनी सेना को हस्तिनापुर की सीमा तक भेज दिया था। उन पर पलटवार करने के बजाय देवव्रत ने चित्रमुख को द्वंद्व युद्ध के लिए ललकारा। देवव्रत ने उसे पराजित करके अपमानित राजकुमार को वापस शल्व की राजधानी सौभ भेज दिया था।

“युवराज की जय हो!” की घोषणा करते हुए बहलिक ने देवव्रत को मदिरा का पात्र दिया।

“तुम अब बड़े हो गए हो, पुत्र; बच्चे नहीं रहे,” उसके ताऊजी उत्साहित स्वर में बोले। तुम्हारी आयु कितनी है? बीस वर्ष? तुम अपनी योग्यता सिद्ध करना चाहते थे, तुमने कर दिया। हम सबके समक्ष! हस्तिनापुर के भावी राजा की जय हो!” वे जय जयकार करते हुए बोले।

देवव्रत ने मदिरा का एक घूँट पीया। उसे आनन्दित होने के लिए मदिरा की आवश्यकता नहीं थी। उसकी तो सबसे बड़ी इच्छा पूरी हो गई थी—युद्ध भूमि में जाने की। वो वहाँ थोड़े ही समय के लिए था, घोड़ों की चाप और टकराते तलवारों की आवाज़ और उड़ते धूल के सुगंध का आनन्द उठाता हुआ...

बहलिक अपनी मूँछों पर उँगली फेरते हुए, एक क्षण विचार करके बोले, “कदाचित्, तुमसे एक छोटी-सी गलती हुई है... क्या उस पाजी को जीवित जाने देना सही था?”

देवव्रत ने आँखें झपकाई। उसे न केवल ताऊजी से, किन्तु अपने आपसे भी सत्य कहना होगा। वो धीरे से सिर हिलाते हुए बोला, “मैं समझता हूँ,” उसने पछतावे और आत्म-तिरस्कार के साथ कहा। “मेरा ये कदम उदार प्रतीत हो सकता है, किन्तु गलत निर्णय लेना छोटी बात नहीं है।”

“ऐसा कभी-कभी हो जाता है; तुम धीरे-धीरे सीख जाओगे,” ताऊजी कंधे उचकाते हुए बोले। जैसा तुम समझते हो, क्षमापूर्वक लड़ने के बजाय, क्रूरता के साथ लड़ना अधिक श्रेष्ठ होता है। लोग क्षमा का कई बार गलत अर्थ निकालते हैं। सम्भवतः उस मूर्ख के पिता तुम्हारे ऋणी हो जाएँगे, या तुमसे प्रतिशोध भी ले सकते हैं... अरे, तुम्हारे पिताजी कहाँ हैं? उन्हें इस समय हमारे साथ होना चाहिए,” वे बड़ी मुस्कान के साथ बोले। “मदिरा का आनन्द लो, बड़े-बड़े घूँट लो पुत्र!”

ताऊजी अत्यधिक उल्लासपूर्ण लग रहे थे, और देवव्रत जानता था कि ये केवल मदिरा का प्रभाव नहीं था।

“तुम अब राजगद्वी पर बैठने, युद्ध करने, मदिरापान करने और विवाह करने योग्य हो गए हो!” बहलिक हँसते हुए बोले, पर अचानक उनकी आवाज़ गम्भीर हो गई। “क्या तुमने इस विषय में विचार किया है पुत्र?”

“किस विषय में?” देवव्रत ने चौंकते हुए पूछा।

“विवाह, पुत्र!” उसके ताऊजी हँसे। क्या तुम विवाह नहीं करना चाहते?”

देवव्रत झेंप गया, और उसे अपने गले से होते हुए चेहरे तक फैलती गरमाहट से घृणा-सी होने लगी।

“ताऊजी, हर कार्य का उचित समय होता है,” वो उदासीनता से बड़बड़ाया। “कितने लम्बे समय के बाद मुझे मेरा पहला युद्ध लड़ने का अवसर मिला। अब अन्य कार्य भी हो जाएँगे।”

“लाड़-प्यार से पले राजकुमारों के साथ इसका ठीक विपरीत ही होता है!” ताऊजी ने तर्क दिया। “पहले स्त्री, उसके बाद युद्ध! क्या तुम अब तक किसी स्वयंवर में नहीं गए हो? तुम तो लगभग बीस वर्ष के हो गए हो, तुम्हें तो अब अपना घर बसा लेना चाहिए।”

ताऊजी देवव्रत के चेहरे को लज्जा से लाल होता देख मुस्कुराने लगे। “मेरी भी पत्नी है और तीन पुत्र हैं, देव, उनके कारण जो सन्तोष मुझे मिलता है... वो अपार धन, युद्ध, या कोई राजमुकुट भी नहीं दे सकता! युद्ध समाप्त हो गया है, अब तुम्हारे विवाह की बारी है। पुत्र। मेरा भाई अब तक क्या कर रहा है?” वे चिल्लाए। “उसका इकलौता पुत्र, युवराज राज्य का सबसे योग्य कुमार है और अब तक उसके पिता ने उसके लिए कोई वधू नहीं ढूँढ़ी है!”

उसके ताऊजी की ऊँची, विनोदी आवाज में देवव्रत को खिजलाहट की झलक सुनाई दी।

“क्या तुम्हारे मन में कोई लड़की है?” बहलिक अपने भांजे को गर्वपूर्वक देखते हुए अड़े रहे। वो सचमुच सुन्दर था, और बहलिक उसके लिए सबसे योग्य और सुन्दर राजकुमारी लाएँगे।

“ताऊजी, मैं तो किसी लड़की को नहीं जानता,” देवव्रत झूठी गम्भीरता के साथ बोला, “मेरी बहन कृपि के अतिरिक्त!”

“इंद्रलोक की अप्सराओं को भी नहीं?” ताऊजी उसे चिढ़ाते हुए बोले। “तुम वहाँ क्या कर रहे थे? मैं तुम्हारे लिए सर्वश्रेष्ठ राजकुमारी लाऊँगा, पुत्र। मैंने सुना है कि काशी की राजकुमारी अत्यन्त सुन्दर है; मैं उसके पिता से शीघ्र ही बात करूँगा। वही तुम्हारी रानी बनेगी।”

“किस रानी की बात कर रहे हो?” शान्तनु ने कक्ष में प्रवेश करते हुए प्रश्न किया।

“अरे, अच्छा हुआ तुम आखिरकार आ ही गए। हम देव के विवाह के विषय में चर्चा कर रहे थे। मैं राजा काशीराज से उनकी पुत्री राजकुमारी वत्सला के लिए बात करने का विचार कर रहा हूँ। तुम्हारी क्या राय है, शान्तनु?”

शान्तनु स्तब्ध रह गए। “मैं इसका पिता हूँ: आपने इस विषय में पहले मुझे क्यों नहीं पूछा?” वे क्रोधपूर्वक बोले।

“मैं अभी वही तो कर रहा हूँ,” उनके बड़े भाई ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया। “तुम कहाँ थे?” उन्होंने जिज्ञासापूर्वक पूछा। “राजसभा और हृदय की समस्या का अतिशीघ्र समाधान करना आवश्यक होता है। मैं तो वर से, वधु से बात करने की सहमति ले रहा था। वही सबसे महत्वपूर्ण है। विवाह स्वर्ग में निश्चित नहीं होते, यहाँ हमारे हाथों से बनते हैं।”

शान्तनु ने व्यंग्यपूर्वक पूछा, “तो मेरे पुत्र का विवाह कब होने वाला है? कदाचित्, मैं ही विवाह का सबसे सम्मानित अतिथि बनूँगा?”

“यदि काशीराज सहमत हो जाएँ तो चार महीनों बाद का मुहूर्त उचित रहेगा,” बहलिक शान्तिपूर्वक बोले।

शान्तनु उदासी से अपने भाई और पुत्र को देखते हुए बोले, “एक परखवाड़े के अन्दर देवव्रत का राज्याभिषेक होने वाला है। सब कुछ योजनाबद्ध रीति से हो रहा है।”

उनके शब्द हवा में गूँजते रहे, वो चुपचाप वहाँ से चले गए। देवव्रत अपने उदासी और परेशान पिता को जाते हुए देखता रह गया। वो चिन्तित होकर अपने ताऊजी की ओर मुड़ा। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि उसे ताऊजी से अपनी चिन्ता व्यक्त करनी चाहिए या नहीं। बीते कुछ दिन उसके और उसके पिता के लिए अत्यन्त कठिन थे, और उसे उसका कारण नहीं पता था। कुछ दिनों से वो अपने पिता को ठीक से देख भी नहीं पाया था, वो या तो अपने कक्ष में बन्द रहते या शाम को इतनी जल्दी सो जाते कि उन्हें अपने पुत्र का सामना ही न करना पड़े। देवव्रत समझ गया था कोई बड़ी समस्या होगी। वो जब भी अपने पिता से बात छेड़ने का प्रयत्न करता, शान्तनु या तो तटस्थ रहते या कठोरतापूर्वक उसे अपने कक्ष से जाने के लिए कह देते। जैसा उन्होंने अभी भी किया था।

“तुम्हारा राज्याभिषेक और विवाह—अतिउत्तम!” ताऊजी आनन्दपूर्वक बोले। “कृपा, हमें देवपि के साथ अतिशीघ्र विचार-विमर्श करके शुभ मुहूर्त का चयन करना होगा। मैं अभी काशी नरेश को पत्र भेजता हूँ।”

“रुक जाइए ताऊजी,” देवव्रत हड़बड़ते हुए बोला। “मुझे लगता है पिताजी इन बातों से अत्यन्त अप्रसन्न हैं। कितनी विचित्र बात है न?”

“उस पर ध्यान मत दो पुत्र,” बहलिक बोले, “अब तुम्हारी बारी है; तुम राजा बनने वाले हो और शीघ्र ही तुम्हारा विवाह भी होने वाला है। उसके बाद तुम उनकी चिन्ता कर लेना। तब तक वे भी उत्साहित हो जाएँगे, मैं निश्चित रूप से कहता हूँ।”

“नहीं, इसमें अवश्य कोई और बात है,” देवव्रत अड़ा रहा। “जब से पिताजी यमुना के निकट आखेट से लौटे हैं, उनका व्यवहार अत्यन्त विचित्र है... तब तक सब कुछ ठीक था; जब से लौटे हैं, वे मुझसे मिलने से मना कर रहे हैं।” देवव्रत अपना दुख

छिपाते हुए बोला। उसने ताऊजी से पूछा, “उस दिन वन में क्या हुआ? क्या आपने पता करने का प्रयत्न किया कि वे इतने दिन कहाँ थे?”

बहलिक अपने होंठों पर जीभ फेरते हुए सिर हिलाते हुए बोले, “वो कुछ भी बताने से मना कर रहा है।” देवव्रत को उनकी आवाज़ में थोड़ी हिचकिचाहट-सी लगी।

“बताइए न ताऊजी, क्या बात है?”

“पुत्र, मैं तुमसे स्पष्टता से बात करना चाहता हूँ,” बहलिक हिचकिचाते हुए बोले। “मैं अपने भाई को अच्छी तरह जानता हूँ। उसकी मनोदशाएँ होती हैं, विशेषकर उसकी कुछ हरकतों के बाद...”

“उनकी हरकतें?” देवव्रत ने दोहराया। “इसका अर्थ है, कोई स्त्री है?” उसने अनुमान लगाया।

“स्त्रियाँ,” बहलिक सुधारते हुए उपेक्षापूर्वक बोले। “वो उनसे दूर होकर दुखी होगा, बस। शान्तनु अपने कारनामे करके उदास और टूटे अभिमान के साथ वापस आता है। वो कई बार लज्जित भी हो जाता है—जब उसे गंगा के साथ विश्वासघात करने पर ग्लानि होती है, या फिर कोई स्त्री उसे अस्वीकार कर देती है... परन्तु बहुधा उसकी इच्छा पूर्ण हो जाती है। वैसे भी राजा को अस्वीकार करने का साहस कौन कर सकता है? हो सकता है इस बार किसी ने उसे अस्वीकार कर दिया होगा। उसे अपने आप पर दया आ रही होगी! इसीलिए इतना चिड़चिड़ा हो रहा है। शान्तनु के साथ हर बार किसी स्त्री की ही समस्या होती है!” बहलिक तिरस्कारपूर्वक बोले।

देवव्रत के कंधे पर आश्वासन से हाथ रखते हुई उन्होंने चर्चा वहीं रोक दी, किन्तु देवव्रत अत्यन्त बेचैन था, और इसका उसके आने वाले राज्याभिषेक या विवाह से कोई सम्बन्ध नहीं था। उसके पिता ही उसकी बेचैनी का कारण थे... उसे उनसे बात करनी ही पड़ेगी; अब वैसे ही बहुत देर हो चुकी थी।

उस दिन, शाम के समय वो धीरे-धीरे अपने पिता के कक्ष की ओर बढ़ा। “ओह, मुझसे अब राजकाज के विषय में कुछ मत पूछना,” देवव्रत को आते देख शान्तनु थकी आवाज़ में बोले। “अब सब कुछ तुम्हारे हाथ में है। हस्तिनापुर तुम्हारा है।”

“हमारा है,” देवव्रत ने सुधारते हुए कहा। “ये हमारा उत्तरदायित्व है।”

“अब नहीं,” शान्तनु आह भरते हुए बोले। “मैं थक गया हूँ पुत्र। मैं अगले सप्ताह ही तुम्हारे राज्याभिषेक की व्यवस्था कर देता हूँ। जितनी शीघ्रता से हो जाए, वही अच्छा रहेगा।”

“किसके लिए अच्छा पिताजी?” देवव्रत ने चतुराई से पूछा।

“मैं औपचारिक रूप से सेवामुक्त होना चाहता हूँ,” शान्तनु अनापेक्षित क्रोध के साथ बोले। “तुम्हारा समय आ गया है; तुम्हें राजा बनना होगा।”

जितनी बार भी शान्तनु देवव्रत की ओर देखते, उन्हें उस औरत की याद आ जाती जिसे उन्होंने अपने पुत्र के कारण खो दिया। वो क्रोध और निराशा से भर जाते; उनके लिए पुत्र का चेहरा देखना अचानक कष्टप्रद हो गया था। वे जानते थे कि प्रेम की कमी उन्हें बहुत सता रही थी। मत्स्यगंधा की सुगंध उन्हें उत्पीड़ित कर रही थी, उसकी परछाई उन्हें दिन-रात धिक्कारती रहती और वो रात भर जागते रहते। उन्होंने अपने पुत्र को मिली-जुली भावनाओं के साथ देखा: यदि ये न होता तो वो इस समय मेरे पास होती...

उन्हें तुरन्त ही अपने विचारों पर खेद हुआ, किन्तु उस विचार को मिटाना असम्भव था। जैसे-जैसे देवव्रत उनसे पूरी गम्भीरता से बात कर रहा था, उनके अन्दर एक अज्ञात भाव जाग उठा।

“चुप हो जाओ, देव, मेरे साथ तर्क मत करो!” शान्तनु भ्रमित होकर क्रोधपूर्वक चिल्लाए।

अपने पुत्र के हतप्रभ चेहरे को देखकर वह थोड़े नरम पड़ गए और धीरे से बोले, “मैं थक गया हूँ, हम फिर कभी बात कर सकते हैं...”

“क्या बात है पिताजी?” देवव्रत ने कोमलता से प्रश्न किया। “आपको कौन-सी चिन्ता खाए जा रही है?”

अपने पुत्र की विचारशीलता देखकर शान्तनु का हृदय तार-तार हो रहा था। उन्होंने उससे मुँह मोड़ लिया।

“कोई बात नहीं है,” वे निरुत्साही ढंग से बोले। “मैं तो हमारे लिए चिन्तित था, तुम्हें लेकर...”

“मुझे लेकर?” देवव्रत का सुन्दर चेहरा चिन्ता से भर गया। “मुझे तो कुछ नहीं हुआ है,” वो हल्के से मुस्कुराता हुआ बोला।

“राजा का यदि एक ही पुत्र हो तो उसे खो देने का भय सदैव रहता है। उत्तराधिकारी को खोने का,” शान्तनु बोले। देवव्रत ने उनकी हिचकिचाहट भाँप ली। “इस महान कुरुवंश को एक अतिरिक्त सन्तान की आवश्यकता है, क्योंकि तुम जितने भी महान योद्धा हो जाओ देवव्रत, यदि युद्ध-भूमि में तुम्हारी मृत्यु हो गई तो हमारे वंश का अन्त हो जाएगा। गुरुओं और सज्जनों के अनुसार, एक ही पुत्र का होना एक ही नेत्र होने जैसा है। ये एक गम्भीर कमी है। यदि इकलौते पुत्र की मृत्यु किसी कारणवश अपने पिता से पहले हो गई तो वंश का सर्वनाश हो जाएगा...”

देवव्रत हैरान था, परन्तु उसने अपने चेहरे पर अपनी बढ़ती घबराहट की छाया नहीं आने दी। पिताजी इतने घबराए हुए क्यों हैं? क्या वो अपनी मृत्यु से भयभीत हैं या मेरी? और दूसरी सन्तान की बात कहाँ से आ गई?

शान्तनु ने जैसे उसके विचारों को पढ़ लिया था। वे आगे बोले, “मैंने उस धूर्त चित्रमुख से हुई तुम्हारी अकारण मुठभेड़ के बारे में सुना! तुम्हारी मृत्यु हो सकती थी! फिर मेरा क्या होता?” वे थोड़ा रुके और विचार करके आगे बोले, “और हस्तिनापुर? तुम युवराज हो देवव्रत। तुम इस तरह असावधान नहीं हो सकते। यदि तुम्हें कुछ हो जाता तो हम अपने एकमात्र वारिस से हाथ धो बैठते!”

“फिर उसका अतिशीघ्र विवाह करवा दो,” देवपि के शान्त स्वर ने अवरोध किया। “बहलिक ने मुझे तुम्हारे साथ राज्याभिषेक की तिथि के विषय में विचार-विमर्श करने के लिए कहा है। शान्तनु, तुम बिना कारण चिन्ता कर रहे हो। देवव्रत युवा है और राजगद्दी सँभालने और पिता बनने योग्य है।”

शान्तनु ने क्रोध से त्योरियाँ चढ़ा लीं। दोनों भाई एक दूसरे को ध्यान से देखते रहे। देवपि शान्तनु के कक्ष में चुपचाप आए थे और उन्होंने शान्तनु के पास रखी अधभरी मदिरा की प्याली देख ली थी : शान्तनु को आरम्भ से ही मदिरा और स्त्रियों से लगाव था। उसे देखते ही देवपि भाँप गए कि शान्तनु ने किसी स्त्री के साथ समय बिताया था। उनके सुन्दर चेहरे के सन्तुष्ट और तनावमुक्त भाव को देखकर ही देवपि की शंका दूर हो गई थी। ये आम बात थी और देवपि को विशेष चिन्ता भी नहीं हुई; किन्तु शान्तनु का अहंकारी चेहरा देवपि को देखते ही चिढ़ में बदल गया।

देवपि चौंक गए। उनके भाई के चेहरे पर निराशा छाई हुई थी, जिसे देवपि ने पहली बार देखा था।

“मैं गम्भीरता से कह रहा हूँ,” देवपि दृढ़ता से बोले। “देवव्रत का अब तक विवाह हो जाना चाहिए था, और भविष्य के बारे में विचार करने के बजाय कदाचित तुम्हारे पौत्र भी हो गए होते,” वे हल्के से डॉट्टे हुए बोले।

शान्तनु ने गहरी सांस ली, “मुझे क्षमा कीजिए। मेरे चिड़चिड़ेपन के कई कारण हैं, मेरे मन में कई बातें एक साथ घूम रही हैं।” वे निर्बलता से बोले, और देवव्रत ने उनके शब्दों और उनकी थकी आँखों के खोखलेपन को पढ़ लिया।

अब एक ही व्यक्ति उसकी सहायता कर सकता था : मंजुनाथ, उसके पिता का निजी सारथी। उसे तो निश्चित रूप से पता होगा कि उसके पिता पिछले कुछ सप्ताहों में कहाँ गए थे। देवव्रत जान गया था कि अब उसे अपने सभी प्रश्नों के उत्तर मिल ही जाएँगे।

## प्रतिशा

काली को दूर से आती हुई घोड़ों की टापों की आवाज़ सुनाई दी; उसकी धड़कनें तेज़ हो गई और वो झट से खड़ी हो गई। एक बार फिर राजा के सैनिक आए होंगे, *AISI AUR BOOKS KE LIYE TELEGRAM CHANNEL JOIN KARE @BOOKHOUSE1* उसने भयपूर्वक अनुमान लगाया। उसे विश्वास था कि उसके पिता की धृष्टता से शान्तनु इतने क्रोधित हो गए होंगे कि उन्होंने उसके पूरे गाँव को नष्ट करने के लिए सैनिक भेज दिए होंगे।

काली ने घबराकर अपने बाबा को देखा; वे अत्यन्त शान्त बैठे हुए थे। काली ने घबराते हुए खिड़की के बाहर झाँका।

“अरे, स्वयं युवराज आए हैं,” उसने चिन्तित स्वर में धीरे से कहा। क्या वो अपने पिता के साथ उसे उनके अधिकार से वंचित करने का प्रयत्न करने के अपराध में उससे बहस करने आए हैं? युवराज के आने की खबर सुन उनके घर के सामने लोगों की भीड़ लगने लगी।

युवराज उसी साँवले, अधेड़ उम्र के व्यक्ति—राजा के सारथी के साथ आए थे। काली ने उन्हें गली के अन्त में मोड़ से उनके घर की ओर बढ़ते देखा। उसने उत्सुकतापूर्वक युवराज को देखा, और उसकी उँगलियों की कुलबुलाहट रुक गई। वो उनकी चौखट पर सारथी के सामने खड़े थे। उनका चेहरा दूसरी तरफ मुड़ा हुआ था; उसमें एक अद्भुत आकर्षण था। काली ने जैसे ही देवव्रत को देखा, उसके कंठ में गांठ-सी पड़ गई।

“क्या वे हमें बन्दी बनाने आए हैं, बाबा?”

काली को सैनिकों के हाथों हुआ अपना अपमान याद आ गया। नहीं, यदि वो उन दोनों को बन्दी बनाना चाहते, तो वे स्वयं नहीं आते। अपने सैनिकों को भेज देते, वो बार-बार यही कहकर अपने भय को भगाने का प्रयास करती रही।

“शक्ति, विशेषकर बलशाली लोगों की शक्ति को निर्बल लोग अकसर गलत समझ लेते हैं,” बाबा रहस्यमयी ढंग से बोले और तभी दरवाजे पर हल्की-सी खड़खड़ाहट हुई। स्तब्ध काली को पूर्वानुभव का भास हुआ—उस दिन जब शान्तनु इसी दरवाजे के बाहर खड़े थे तब आशा की किरण थी, किन्तु आज जैसी दम घोंटने वाली घबराहट नहीं।

युवराज के प्रवेश करते ही, कमरा उसकी उपस्थिति से भर गया। धड़कते हृदय के साथ अपनी उत्सुकता और भय पर नियंत्रण करती हुई, काली ने उसे देखने का साहस किया।

वो हर तरह से सचमुच गंगापुत्र था, गंगापुत्र! वो देव-समान लग रहा था। उसकी सुन्दरता, काले बाल, तीखी भेदती आँखें, लम्बा कद और रेशम, रत्नों और मोतियों से सुसज्जित शरीर। वो सर्वश्रेष्ठ राजकुमार था, बस उसका सौन्दर्य बालों की एक अनियंत्रित लट का उसके चौड़े माथे पर बार-बार गिरने के कारण थोड़ा कुंठित हो रहा था। परन्तु उसके कारण उसमें मानवीयता भी आ गई थी।

उसका चेहरा सूखा था और उसके होंठ बहुत पतले और गठे हुए थे। काली को उसके आकर्षण और प्रतिभा की अनुभूति तब तक नहीं हुई जब तक उसने देवव्रत की आँखों की शक्ति और गहराई नहीं देखी। वो उसे अत्यन्त ध्यानपूर्वक, एकटक देख रहा था। काली को हल्का-सा पसीना आने लगा; उसने सतर्कता से उसे धूरने से अपने आपको रोक लिया।

काली को देखकर देवव्रत भौचक्का रह गया, पर उसने अपनी भावनाओं को तुरन्त नियंत्रित कर लिया। हे भगवान्, क्या यहीं वो है जिससे मेरे पिता इस तरह बेतहाशा प्रेम कर बैठे हैं? उसे तो किसी स्त्री की अपेक्षा थी, पर उसके सामने बहुत ही युवा लड़की खड़ी थी : दुबली-पतली, साँवली और आकर्षक, लगभग उसी की आयु की, या कुछ छोटी भी; उसने काली के भावों से अनुमान लगाया कि उसकी बालवत मनोहारिता के पीछे तीक्ष्ण बुद्धि भी छिपी थी। किन्तु, उसकी काया किसी तरह से अपूर्ण नहीं बल्कि स्त्रियोचित थी, और रमणीय भी। वो तत्काल समझ गया कि उसके पिता इसके प्रेम में क्यों पड़ गए।

देवव्रत अपनी विचारों की धारा को रोकते हुए उस वृद्ध की ओर मुड़ा, जो उसे सतर्कतापूर्वक देख रहे थे : अप्रिय, अस्त-व्यस्त और मैले-कुचले। उनके नीरस चेहरे पर अप्रसन्नता के भाव थे, जैसे किसी बात से अपमानित हों।

“मैं इस तरह अचानक आने के लिए आपसे क्षमा चाहता हूँ, महोदय,” वो कोमलता से, हर शब्द पर जोर देते हुए धीरे-धीरे बोला। “मैं हस्तिनापुर का राजकुमार देवव्रत हूँ, आपसे महत्वपूर्ण विषय में चर्चा करने आया हूँ।”

उस वृद्ध और उस लड़की, दोनों ने कुछ नहीं कहा।

“ये मेरे पिताजी के विषय में हैं,” उसने चतुराई से कहा। देवव्रत दृढ़ निश्चय करके आया था कि आज वो इस रहस्यमयी औरत और अपने पिताजी की पहेली बुझा कर ही रहेगा। “मैंने सुना है कि वो यहाँ आपसे मिलने आए थे? और जब से वो वापस आए हैं, बदल से गए हैं। स्पष्ट है कि वे यहाँ घटी किसी घटना के कारण विचलित हैं। मुझे

अनुमान नहीं है कि क्या हुआ होगा; क्या आप इस विषय में मेरी सहायता कर सकते हैं, श्रीमान?”

“मैं दशराज हूँ, मछुआरों के इस गाँव का मुखिया, और ये मेरी पुत्री सत्यवती है,” वृद्ध ने कहा। वही चालाक, स्थिर और सतर्क आँखें, देवव्रत ने देखा। “स्थिति स्पष्ट है, तुम्हारे पिता सत्यवती से विवाह करना चाहते हैं।”

देवव्रत ने अपनी स्तब्धता प्रकट नहीं होने दी। इसका अर्थ है कि ये कोई निरर्थक हठ नहीं था; उसके पिता को इस लड़की से अवश्य सच्चा प्रेम हो गया होगा, जिसके कारण वे विवाह के लिए भी तैयार हो गए थे। देवव्रत ने दोबारा उस लड़की को ध्यानपूर्वक देखा : क्या ये भी उनसे प्रेम करती है, या अवसरवादी है जो परिस्थिति का लाभ उठाना चाहती है? उसके भावशून्य चेहरे से उसके विचारों का कुछ पता नहीं चल रहा था।

“फिर समस्या क्या है?” उसने विचलित स्वर में पूछा।

“समस्या आप हैं,” वृद्ध ने स्पष्टता से कहा।

देवव्रत ने उस लड़की को हिचकते हुए देखा; वह घबराई हुई उँगलियों से अपने होंठों को टटोल रही थी।

“मैं?” देवव्रत ने चौंककर पूछा।

मछुआरे ने हाँ में सिर हिलाते हुए कहा, “हाँ, आप ही वो कारण हैं जिसके लिए आपके पिता मेरी पुत्री से विवाह करने के लिए तैयार नहीं हैं।”

“मेरा, पिताजी के इस निर्णय से क्या सम्बन्ध है?” देवव्रत ने उस मनुष्य की कपटता पर उत्सुक होते हुए पूछा। वो जानता था कि उस पर अकारण जोर डाला जा रहा है, पर किस बात पर?

काली ने युवराज की आँखों में उपेक्षा की झलक पढ़ ली। इसे लगता है कि हम कपटी और लोभी हैं, विशेषकर मैं, जिसने राजा को राजसिंहासन और धन के लिए अपने प्रेमजाल में फँसा लिया है। वो उसके उपेक्षापूर्ण दृष्टि से चिढ़-सी गई थी।

“जब आपके पिता ने मेरी पुत्री से विवाह का प्रस्ताव रखा तो मैंने भी पिता होने के नाते विवाह के लिए एक शर्त रखी,” दशराज ने विवरण देते हुए कहा।

मैं सही सोच रहा था—अवश्य पिताजी को किसी कठोर शर्त में फँसाया गया होगा। देवव्रत ने सोचा। वो निश्चल होकर स्थिरतापूर्वक वृद्ध के आगे बोलने की प्रतीक्षा करता रहा।

“राजा मेरी पुत्री से इसी शर्त पर विवाह कर सकते हैं कि उसी की सन्तान राजसिंहासन के उत्तराधिकारी होंगे, तुम नहीं,” दशराज बोले। “यदि वो रानी बनने के योग्य हैं तो क्या आपके पिता से हुई उसकी सन्तान उत्तराधिकारी बनने के योग्य नहीं

होगी? किन्तु, आपके पिता को यह स्वीकार्य नहीं है। वो आपको आपके अधिकार से वंचित नहीं करना चाहते, युवराज।”

देवव्रत के सामने उसके पिता का निराश चेहरा और उसकी माँ की विनती करती हुई छवि आ गई, और उसके हृदय को भेदने लगी। “अपने पिता का ध्यान रखना पुत्र!”

पिछले चार वर्षों में देवव्रत समझ गया था कि उसके पिता वास्तव में दुख और निराशा में लिपटे एकाकी व्यक्ति थे। आज तक एक दिन भी ऐसा नहीं बीता था जब उन्होंने कड़वाहट से, शोकाकुल होकर गंगा को याद ना किया हो। वो उनका खोया प्रेम थी; ऐसा प्रेम जो वे अन्य औरतों में तलाशते थे, जिसके कारण उन्हें व्याभिचारी होने का अपयश भोगना पड़ा था। ये कठोर सत्य था, जो पूर्णतः न्यायपूर्ण नहीं था। शान्तनु को गंगा की अनुपस्थिति बहुत खलती थी और वो देवव्रत की तरह कभी उनके पास वापस नहीं आने वाली थी। देवव्रत ने कई बार अपने पिताजी की आँखों में रिक्त आशा की किरण देखी थी, कि काश देवव्रत की जगह गंगा उनके पास होती। वर्षों पहले, यदि गंगा ने उसे नदी में डुबा दिया होता, वो अपने श्राप से मुक्त हो गया होता, और उसकी माँ अपने पति के साथ आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत कर रही होतीं...

परन्तु, मेरे कारण ऐसा कुछ नहीं हुआ। माँ ने पिताजी को मेरे कारण छोड़ दिया; उन्हें मुझे पालने के लिए स्वर्ग लौटना पड़ा। मैं अपने पिता की निराश, रिक्त, खोखली आँखें नहीं देख सकता, मैं उनके बोझ तले दबा जा रहा हूँ और मेरी ग्लानि मुझे खाए जा रही है। अब जब पिताजी को दोबारा प्रेम नसीब हुआ है, मैं फिर से उनके लिए अङ्गचन बन गया हूँ...

देवव्रत अचानक एक झटके के साथ वर्तमान में खींचा चला आया। उसने उस लड़की को दोबारा देखा; उसके पिता उसके आसपास रक्षात्मक तरीके से मंडरा रहे थे।

“मेरा युवराज होना मेरे पिताजी के निर्णय में बाधा नहीं बनना चाहिए। ये आपकी मूर्खता थी जो आपने मेरे पिता से वो वस्तु माँगी जो असल में मेरी थी,” देवव्रत स्थिर आवाज़ में बोला। “मेरे पिताजी, श्रीमान आपको, या आपको...,” वो काली की ओर भव्यता से झुकते हुए बोला, “...न आपके पुत्रों को हस्तिनापुर का राजमुकुट देने का वचन दे सकते हैं क्योंकि वो उसे मुझे पहले ही दे चुके हैं।”

काली उसकी आवाज़ की निर्णायिकता सुनकर समझ गई कि वो उनसे लड़ने आया है। उसने अपनी निराशा और भय को नियंत्रित करने के लिए अपनी मुट्ठी बाँध ली। उसके बाबा बिलकुल गलत थे...

राजकुमार कोमल आवाज़ में आगे बोले। “राजमुकुट तो उनका था ही नहीं जो वे उसे आपको दे देते। परन्तु जो मेरा है, मैं आपको अवश्य दे सकता हूँ,” वे काली की ओर दृष्टि डालते हुए विनयपूर्वक झुकते हुए बोले, “मैं इसी क्षण, राजसिंहासन पर अपने अधिकार का परित्याग करता हूँ,” वो शान्त स्वर में बोले, और उसे लड़की के

हाँफने की आवाज आयी। “मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि आपकी पुत्री की सन्तान ही राजसिंहासन की उत्तराधिकारी होंगी; मैं नहीं। कृपया इस छोटी-सी बात को उनकी खुशी के बीच न आने दें।”

देवव्रत को लगा कि अचानक उसके ऊपर से बड़ा बोझ उतर गया हो। अब वो कभी राजा नहीं बनेगा; उसका हृदय भारमुक्त हो गया। वो निश्चित रूप से जानता था कि उसे कभी राजा बनने की इच्छा थी ही नहीं। उसने कभी नहीं चाहा कि उसके सिर पर बलपूर्वक मुकुट केवल इसी कारण से पहनाया जाए, क्योंकि वो अपने पिता का इकलौता पुत्र है। ऐसे पिता, जिनको वो ठीक से जानता तक नहीं था; ऐसा राज्य जो उसका कभी अपना था ही नहीं।

अब वो लड़की उसे स्पष्ट अविश्वास से देख रही थी। उसके चेहरे पर प्रसन्नता नहीं, बल्कि केवल भ्रान्ति छाई हुई थी। या वो अपराध बोध था? उसके पिता भी अचम्भित लग रहे थे, और थोड़े व्याकुल भी। क्या राजसिंहासन का आकर्षण इतना प्रभावशाली था कि वो प्रलोभन और सौदा करने का माध्यम बन गया था, देवव्रत ने कौतुकपूर्वक सोचा। फिर उसने ध्यान से उस घर के परिवेश को देखा—उस जीर्ण कमरे को, पतली, कमजोर दीवारों को; उस लड़की को, जो अपने मलिन और फटे-पुराने वस्त्रों में भी गर्व से खड़ी थी; उस थके और क्षीण वृद्ध को। कदाचित्, उनके लिए ऐश्वर्य और शक्ति स्वप्न होगा, महत्वाकांक्षा होगी। क्या उसे वो सब कुछ बड़ी सरलता से मिल गया था?

काली अपनी उलझी हुई उँगलियों को देखती खड़ी रही, वो युवराज के खुले, उदार चेहरे को देखने में अक्षम थी। उसने अभी-अभी उससे उसका राजसिंहासन अपने और अपनी आने वाली सन्तान के लिए छीन लिया था। उसे तो प्रसन्न होना चाहिए था—उसके रास्ते का सबसे बड़ा अवरोध दूर हो गया था। परन्तु, इस युवक ने तो स्वयं को हटाकर, बहुत ही शिष्टापूर्वक उसके रास्ते से दूर हो गया था। उसकी उदारता से काली को लज्जा और तुच्छता का अनुभव हो रहा था। उसकी महत्वाकांक्षा ने उसे अपने आदर्शों और मूल्यों से समझौता करने और अपनी नीतियों को भंग करने पर विवश कर दिया था। उसे ही इस अक्षम्य अतिक्रमण का बोझ उठाना होगा।

“यदि यही विषय मेरे पिताजी को उनके सुख से दूर कर रहा है,” वो अब काली को सीधा देखते हुए बोला, “मैं वचन देता हूँ कि मैं कभी सिंहासन पर नहीं बैठूँगा। माता सत्यवती यथा शीघ्र मेरे पिताजी से विवाह कर सकती हैं।”

काली का हृदय एक क्षण के लिए थम-सा गया और फिर तेजी से धड़कने लगा। देवव्रत के मुँह से नई उपाधि सुनकर वो हिल गई।

बूढ़े मछुआरे ने अपने आपको झट से सँभाल लिया और बोले, “युवराज, आप भरतवंश के सबसे दीप्तिमान रत्न हैं। आपने जो किया है, वो आज से पहले किसी राजपरिवार के सदस्य ने नहीं किया...”

देवव्रत ने मुस्कुराते हुए सिर हिलाया, पर काली चकित रह गई कि ऐसी परिस्थिति में भी कोई मुस्कुरा सकता है। “नहीं श्रीमान, ऐसा मेरे परिवार में अक्सर हुआ है!” वो रूखेपन से बोला। “मेरे ताऊओं ने मेरे पिताजी के लिए राजगद्दी त्याग दी, वो सबसे छोटे थे, फिर भी! हाँ, हमारे पूर्वज, राजा भरत ने अपना राजसिंहासन अपने पुत्र को नहीं सौंपा क्योंकि उनका मानना था कि वे उसके योग्य नहीं थे, और उन्होंने ऋषि भारद्वाज के सगे और अपने दत्तक पुत्र को राजसिंहासन का उत्तराधिकारी चुना।”

दशराज थोड़े नियंत्रित हो गए थे, परन्तु वो सहजता से आगे बोले, “फिर भी आप महान हैं, युवराज देवव्रत! राजसिंहासन त्याग देना इतना सरल नहीं होता। आपने तो अब पूरी तरह से अपना अधिकार त्याग दिया है और ये आपकी उदारता है! इतिहास आपके इस बलिदान को सदा याद रखेगा। किन्तु, मुझे अभी भी एक शंका सता रही है। यदि आपके पिता को आपकी ओर से वचन देने का अधिकार नहीं है, तो आप अपने पुत्रों की ओर से वचन देने का अधिकार कैसे ले सकते हैं? यदि आपके पुत्रों ने आपकी बात नहीं रखी और राजसिंहासन के लिए मेरे पौत्रों के विरुद्ध शस्त्र उठा लिए तो क्या होगा? क्या आपकी आने वाली पत्नी और बच्चे इस निर्णय को स्वीकार करेंगे? क्या वे इस निर्णय का विरोध नहीं करेंगे, अपने सौतेले भाइयों और सौतेली माँ के विरुद्ध विद्रोह नहीं करेंगे? मैं कैसे मान लूँ कि वे भी आपकी तरह अपने अधिकार से पलट जाएँगे? यदि वो आपकी तरह होंगे, तो वो भी वीर और शक्तिशाली योद्धा होंगे जो अपना जन्मसिद्ध अधिकार पाने के लिए कुछ भी कर सकते हैं। इस स्थिति में मैं अपनी पुत्री और उसकी सन्तान की सुरक्षा कैसे करूँ, युवराज?”

देवव्रत ने अपने सामने खड़े व्यक्ति को ध्यानपूर्वक देखा; उसके मन में उस वृद्ध के लिए विचित्र-सा सम्मान जाग उठा। किसी भी पिता को ऐसा ही होना चाहिए, अपनी सन्तान और उसके भविष्य के लिए मर्यादा और दृढ़ विश्वास के साथ लड़ना चाहिए।

देवव्रत झुका और बोला, “आप सही कह रहे हैं, श्रीमान! मैं अपने पुत्रों की ओर से कोई निर्णय या वचन नहीं दे सकता। परन्तु, मैं अपने लिए, स्वयं निर्णय तो ले ही सकता हूँ। आपकी सन्तान और उनके भविष्य के विषय में किसी भी शंका को दूर करने के लिए मैंने इसी क्षण निश्चय किया है कि मैं कभी विवाह नहीं करूँगा। समाधान सरल है, श्रीमान। आपकी पुत्री के अधिकार को छीनने के लिए मेरी कोई सन्तान होगी ही नहीं,” वह आगे बोला, और अपने दाहिने हाथ को ऊपर की ओर उठाते हुए उसने प्रतिज्ञा की, “मैं आपको वचन देता हूँ, श्रीमान, कि मैं कभी विवाह नहीं करूँगा, और आज से मैं आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा। मैं वचन देता हूँ कि मैं किसी नारी के साथ न सम्बन्ध रखूँगा और न ही कोई सन्तान को जन्म दूँगा। मेरी माता गंगा और समस्त देव मेरी इस प्रतिज्ञा के साक्षी बनें—मैं, देवव्रत, गंगा और शान्तनु का पुत्र, प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं जीवन भर विवाह नहीं करूँगा और न किसी सन्तान को जन्म

दूँगा। मैं अपने अन्तिम सांस तक बिना पत्नी के जियूँगा, वंशहीन ही रहूँगा। ये मेरी आपसे अखंड प्रतिज्ञा है।”

उसके शब्द ने काली की धड़कने रोक दीं। क्या पूरा विश्व इस भयानक स्तब्धता में डूबा जा रहा था? ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे पूरा ब्रह्मांड और पृथ्वी पर जीने वाला हर जीव उनकी शब्दों की गम्भीरता सुनकर मौन हो गया था। अचानक हवा का एक तेज झोंका घर के अन्दर आया मानो वहाँ बोले गए शब्दों को तितर-बितर करके पूरे ब्रह्मांड में फैला देना चाहता हो, जिससे पूरा विश्व और सारे देवता उन्हें सुन सकें। हवा का झोंका देवव्रत के चारों ओर उड़ा और उस पर फूलों की बौछार कर दी, जैसे वो उसके असाधारण प्रण को स्वीकार करके उसकी प्रशंसा कर रहा हो।

वो भीषण प्रतिज्ञा थी। वो न केवल उसका और उसके भविष्य का अन्त था, उसके पास जीवन और मृत्यु में उसका अपना कोई नहीं होगा—न पत्नी, न बच्चे, न सिंहासन, न राज्य, और न ही देने के लिए कोई विरासत; उसके पास केवल उसकी आत्मा थी जो चिरकाल तक इस प्रतिज्ञा से बंधी रहेगी।

“भीष्म!” ऐसा प्रतीत हुआ जैसे हवा से आवाज़ आयी, और जोर पकड़ती हुई उत्कर्ष तक पहुँचकर पवित्र मंत्रोच्चार में परिवर्तित हो गई।

“भीष्म,” दशराज ने सच्ची श्रद्धा के साथ सिर झुकाते हुए कहा। “देवों ने तुम्हें नया नाम दिया है, राजकुमार। ‘भीष्म’ का अर्थ है, जिसने अत्यन्त भीषण प्रतिज्ञा की हो।”

जिसे लेने के लिए मैंने तुम्हें विवश किया, काली दुखपूर्वक, भारी मन से विचार कर रही थी। उसे बाहर खड़े सैनिकों के उद्घोष की आवाज़ आयी।

“भीष्म!”

अचानक ही द्वार जोर से खुला, हवा के कारण नहीं, बल्कि घबराए हुए सारथी के कारण।

मंजुनाथ देवव्रत के चरणों पर गिरकर फूट-फूटकर रोते हुए बोले। “ये आपने क्या कर दिया, राजकुमार? आपकी प्रतिज्ञा ने पूरे ब्रह्मांड को झकझोर कर रख दिया है। मेघ क्रंदन करते हुए बरस रहे हैं और देव पृथ्वी लोक पर उतरकर आप पर फूल बरसाकर आपको आशीष दे रहे हैं। आपके शब्द इन दीवारों को चीरते हुए आकाश में फैल गए हैं और आप स्वयं देखिए कि कैसा तूफान आरम्भ हो गया है! काल ने आज तक किसी को ऐसी भीषण प्रतिज्ञा करते नहीं देखा है, न कभी देखेगी। बाहर खड़े हर सैनिक की आँखें नम हैं,” वो बाहर की ओर इशारा करते हुआ बोले। “लोगों ने राजकुमारों और राजाओं को आज तक अपने शक्ति और बल का प्रदर्शन करने के लिए निर्बल लोगों का संहार करते देखा है, और एक आप हैं, सर्वशक्तिमान राजा, अपने वृद्ध पिता के लिए

अपना सर्वस्व त्याग रहे हैं। मैं नहीं जानता कि इस काल के सबसे ऐतिहासिक क्षण को देख पाने के लिए हम भाग्यशाली हैं या शापित!”

मंजुनाथ कुछ समय के लिए रुके। “यदि मैं आपको इस अभिशप्त घर तक नहीं लेकर आता, आप इस राक्षसी से कभी नहीं मिलते!” वे काली को घृणापूर्वक देखते हुए गुर्राए। काली उनकी दृष्टि देखकर कांप गई। “ये मेरा ही दोष है कि मैं आपको इससे और इसके कपटी पिता से मिलवाने के लिए आया। राजकुमार, आप अपनी भलमनसाहत के कारण, और ये, अपने लालच और छल के कारण, आपकी भीषण प्रतिज्ञा का न केवल कुरुवंश के भविष्य पर, किन्तु हस्तिनापुर के भविष्य पर होने वाले असर का अनुमान आप नहीं लगा पा रहे हैं। आपने अपनी कुलीनता और उदारता के कारण कह दिया और इन्होंने भी आनन्दपूर्वक सुन लिया, किन्तु, ये सर्वनाश हैं। प्रिय राजकुमार, अपने शब्द वापस ले लीजिए। हमें इसकी बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ेगी!”

मंजुनाथ के शब्दों की शक्ति और उनकी पूर्वसूचना से वह कमरा गूँज उठा। काली विवर्ण हो गई; भयग्रस्त हो गई : पहले वो प्रतिज्ञा और अब राज-सारथी के चेतावनीपूर्ण शब्द। ये मैंने क्या कर दिया?

देवव्रत निर्भीक होकर शान्तिपूर्वक बोले, “मेरे पिताजी अब सुखी रहेंगे।”

काली कांपती हुई, दबी आवाज में बोली, “नहीं! आप ये प्रतिज्ञा नहीं कर सकते!”

“माते,” वह झुकते हुए बोले, “वो तो मैंने कर ली।”

माता— ये शब्द काली को अत्यन्त विचित्र लग रहा था और वो उसके बोझ तले दबी जा रही थी। राजकुमार उस शब्द का उच्चारण ऐसी निर्लिप्तता के साथ कर रहा था; कि काली को वो तेज़ तमाचे जैसा लगा। उसे अपनी माँ कहकर वो उसे याद दिलाना चाहता था कि वो कौन थी : उसके पिता की पत्नी। वो लड़की जो रानी बनने के सपने देख रही थी। वो लड़की जिसने उसके पिता से विवाह करने के लिए षड्यंत्र रचा। वो रानी जिसने उसका सिंहासन हड्डप लिया। वो स्त्री जो उसकी माँ कभी नहीं बन सकती। वो शब्द उनके नए सम्बन्ध के लिए एक अपवित्र और तिरस्कारपूर्ण अपशब्द था।

क्या काली यही चाहती थी? उसे रानी बनाने के लिए उसके पिता ने किसी और का जन्मसिद्ध अधिकार छीन लिया था। न राजसिंहासन, न राजमुकुट, न पत्नी, न सन्तान, ये किस प्रकार का जीवन व्यतीत करेंगे, राजकुमार?

अपने अल्प जीवन में पहली बार काली को अपराधबोध हुआ। उसने पहले क्रोध, लज्जा और अपमान अनुभव किए थे, पर अपराधबोध, कभी नहीं। ये उसके लिए अपरिचित भावना थी : पीड़ादायक, हृदय-विदारक, उसे इस बात का कठोर बोध कराती हुई, कि उसने किसी निर्दोष व्यक्ति से धोखा किया है। उसकी घृणात्मक कृत्य

का परिणाम इतना अपरिहार्य था कि वो ग्लानि और अविश्वास की धारा में डूबी जा रही थी। उसे लग रहा था जैसे उसने अपना आत्मसम्मान खो दिया हो; जैसे उसका अस्तित्व ही कलंकित हो गया था।

“नहीं! कृपया अपनी भीषण प्रतिज्ञा वापस ले लीजिए, राजकुमारा!” वो दशराज की घूरती आँखों को अनदेखा करती हुई विनतीपूर्वक बोली। “जो मेरे पिता माँग रहे हैं, वो तो आपके जीवन से भी बड़ा है; इससे तो मृत्यु भली,” उसकी आवाज़ हर शब्द के साथ स्थिर होती गई। “आप अकारण ही बलिदान दे रहे हैं, मेरे पिता की इच्छाओं के लिए अपना सब कुछ त्याग रहे हैं...।”

“नहीं,” राजकुमार मुस्कुराते हुए बोले; उनकी आँखें उपहासपूर्ण थीं। “मैं ये अपने पिताजी के लिए कर रहा हूँ।”

तुम्हारे लिए नहीं, उनका तात्पर्य यही था। वो काली के पिता के दबाव में आकर नहीं, बल्कि स्वेच्छापूर्वक अपना सब कुछ त्याग रहे थे, केवल एक व्यक्ति—अपने पिता के लिए। ये नम्र संशोधन काली को मुँह पर तमाचे जैसा लगा। काली, या काली ने जो कुछ भी उससे छीना, राजकुमार के लिए कोई अर्थ नहीं रखता था। ऐसा लग रहा था जैसे वे उन पर उपहासपूर्वक हँस रहे थे।

काली अड़ी रही और बोली, “आपके पिताजी इस असंगत प्रतिज्ञा को अपनी सहमति कभी नहीं देंगे। कौन से ऐसे पिता होंगे जो अपने पुत्र की आकांक्षाओं का बलिदान देखकर खुश होंगे?”

“ये मेरी प्रतिज्ञा है, माते; इसे मुझसे छीनने का अधिकार मेरे पिताजी को भी नहीं है,” देवव्रत ने शान्त और दृढ़ आवाज़ में उत्तर दिया।

काली उसे आश्वर्यचकित होकर देखती रह गई। क्या ये भोला है या मूर्ख? या आदर्शवादी? किन्तु कुछ क्षणों में वो ये अवश्य जान गई थी कि देवव्रत अत्यन्त ढीठ युवक था और किसी भी परिस्थिति में अपना मत न बदलने का दृढ़ संकल्प रख सकता था। वो अपने निर्णय पर अटल था और कभी अपने शब्दों, अपनी कार्यप्रणाली, अपना जीवन और अपने भविष्य पर पुनर्विचार करना स्वीकार नहीं करेगा।

इन सबका भार मुझ पर पड़ेगा, वो भारीमन से सोचती रही। न शान्तनु, न उनका राज्य और न ही संसार मुझे कभी क्षमा करेगा।

“अब जब मैंने आजीवन ब्रह्मचर्य का प्रण ले ही लिया है, और राजमुकुट का परित्याग कर दिया है, मुझे आशा है कि अब आपके और मेरे पिता के विवाह में कोई अड़चन नहीं आएगी, माते। क्या अब हम हस्तिनापुर के लिए प्रस्थान कर सकते हैं?” राजकुमार ने नम्रतापूर्वक काली से पूछा। “हाँ, यदि आपके पिताजी को मुझ पर और मेरी प्रतिज्ञा पर विश्वास हो तो?” उसने थोड़ी घृणापूर्वक कहा।

काली लज्जित हो गई, और उसे अपने पिता की ओर देखने का भी साहस नहीं हुआ, और न ही राजकुमार को देखने का। वो राजकुमार पर हुए इस अन्याय का कोई तर्कसंगत कारण कभी नहीं दे पाएगी।

“क्या मैं प्रस्थान से पहले उनसे बात कर सकती हूँ?” काली ने धीरे से पूछा।

देवव्रत झुकते हुए बोला, “मैं बाहर आपकी प्रतीक्षा करता हूँ,” कहते हुए वो मंजुनाथ का हाथ थामते हुए घर से बाहर चला गया।

जैसे ही दरवाज़ा बन्द हुआ, काली क्रोधित होकर अपने पिता की ओर मुड़ी। वे उसके लिए तैयार खड़े थे।

“आप अत्यन्त निष्ठुर हैं!” वो चिल्लाई। “परन्तु पूरा विश्व मुझ पर उँगलियाँ उठाएगा, आप पर नहीं। सब मुझे लोभी और स्वार्थी समझेंगे।”

“इसे आत्मसुरक्षा कहते हैं,” बाबा ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया। “जैसा तुमने कहा, पीड़ित या शिकार कहलाने से तो मोहिनी कहलाना अच्छा है, है न?”

“आपने जो राजकुमार के साथ किया, अक्षम्य है बाबा,” वह खोखलेपन से बोली। “मैं उससे दृष्टि कभी नहीं मिला पाऊँगी। मेरी आत्मा पर इसका बोझ सदा के लिए रहेगा।”

“बाद में पछताने से तो अच्छा है न? तुम इन राजपरिवारों के खेलों को नहीं जानती हो।” यदि तुम राजा से विवाह करना चाहती हो तो तुम्हें ये भी समझना होगा कि हर वस्तु का मूल्य चुकाना पड़ता है।” दशराज कठोरतापूर्वक बोले।

“वापस ले लीजिए, बाबा, कृपया वापस ले लीजिए!” काली ने विनती की।

“उसने प्रतिज्ञा की है, मैंने नहीं। मैं उस पर अपने शब्द वापस लेने के लिए कैसे दबाव दे सकता हूँ?”

“क्या आप समझ भी रहे हैं कि आपने क्या किया है? आपने उससे उसका सर्वस्व छीन लिया है, उसका सर्वनाश कर दिया है, उसका वर्तमान, उसका भविष्य सब कुछ...”

“मैं जानता हूँ,” दशराज जोर देते हुए बोले।

काली निराशा से सिर हिलाती हुई बोली, “मैं तो केवल रानी बनना चाहती थी, परन्तु इस मूल्य पर नहीं।”

“तुम बन सकती हो, और तुम बनोगी!” वे बलपूर्वक बोले। “मैं अपनी बहन के लिए कुछ नहीं कर पाया; मैं उसकी पीड़ा, उसका शोक... देखता रह गया...” वे कांपती आवाज़ में बोले। “मैं उसकी तरह तुम्हें तड़पने नहीं दूँगा। मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उस गलती का दंड कौन भुगत रहा है। चेदि के राजा नहीं तो युवराज की सही! वही तुम्हारा अधिकार दिलवाएँगे। इसलिए मेरी योजना को नष्ट मत करो।”

काली ने निर्बलतापूर्वक बोलना आरम्भ किया, “शान्तनु नहीं तो कोई और विवाहार्थी...”

“कोई और राजा जो हमारे गाँव की मैली, दुर्गधपूर्ण गलियों से चलकर आएगा और तुम्हारा हाथ माँगेगा?” उसके पिता उदास हँसी के साथ बोले। “यथार्थवादी बनो पुत्री! तुमने आरम्भ किया, और मैंने तुम्हारे लिए समाधान निकाला। सब कुछ योजनाबद्ध तरीके से हुआ है। अपनी अन्तरात्मा को तुम्हारे और तुम्हारे बच्चों के भविष्य को हानि पहुँचाने मत दो!”

काली कुछ कहने ही वाली थी कि अचानक द्वार खुला और रेशमी वस्त्र लिए एक सैनिक अन्दर आया।

“राजकुमार ने आपके लिए भेजे हैं, देवीजी,” उसने धीमी आवाज़ में, झुकी आँखों के साथ घोषणा की।

काली को इस तरह के सम्मान और आदर का अभ्यास नहीं था। अब उसे इन सबकी आदत डाल लेनी होगी, काली ने सोचते हुए वस्त्र स्वीकार किए : वे गहरे जामुनी रंग के थे, रानी के योग्य। रानी! उसने शब्द को मन-ही-मन दोहराया। प्रफुल्लता की लहर में उसकी आत्मा को भेदने वाली ग्लानि दूर हो गई।

## बलिदान

हस्तिनापुर का स्वरूप और उसका स्वागत, दोनों ही अत्यन्त विस्मयकारी थे। नगर-केंद्र से जाते हुए, सड़कों के दोनों तरफ खुश नागरिकों की भीड़ लगी हुई थी जो, हँसते हुए, आदरपूर्वक झुकते हुए, हाथ हिलाते हुए, जयजयकार करते हुए **उनका अभिवादन** कर रहे थे। कुछ घंटों पहले तक काली भी उनमें से एक थी; अपार जनसमूह में खोई एक नगण्य व्यक्ति।

“राजकुमार देवव्रत! देवव्रत! हमारे नए राजा!” सब जयजयकार कर रहे थे।

सब लोग उसे बहुत चाहते थे। ये उल्लास, स्तुति और श्रद्धा, सब कुछ देवव्रत के लिए है, मेरे लिए नहीं, काली ने अपने आपको स्मरण कराया। किन्तु, एक दिन ये मेरा भी नाम इसी श्रद्धा और आदर के साथ लेंगे, उसने संकल्प किया। मेरे रानी बनते ही, उन्हें मेरे आधिपत्य को स्वीकार करना होगा... काली अपने निचले होंठ को उँगली से दबाते हुए सोच रही थी।

“उनको उत्तर दीजिए,” देवव्रत की कठोर आवाज़ ने उसके विचारों की लहर को रोक दिया; वो उसे अपने गहरी आँखों से देखते हुए बोला, “अपने हाथ जोड़कर अपना आभार व्यक्त कीजिए।”

काली को देवव्रत के बोलने का तरीका बुरा लगा, पर उसने चुपचाप उसका आदेश मान लिया। तुरन्त ही लोगों ने जोर से चिल्लाकर उसका स्वागत किया। देवव्रत और काली एक क्षण के लिए एक दूसरे को देखते रहे। देवव्रत स्पष्टता से बोला, “जब आप सम्मान देंगी, तभी आप सम्मान पाएँगी।”

काली को उसकी बातें चुभ रहीं थीं, उसने सिर झुकाए अपने घने पलकों के नीचे से उसे विद्रोहपूर्वक देखा। उसे देवव्रत के हावभाव में उसके लिए उपेक्षा दिखी।

अचानक देवव्रत ने सीधे-सीधे उसकी ओर देखा। वो अब तक थोड़ा सँभला हुआ था, परन्तु एक क्षण के लिए काली को उसकी आँखों में स्पष्ट घृणा नज़र आयी। अपने बारे में उसकी ओछी धारणा देखकर वह चौंक गई। किन्तु, जो काली ने उसके साथ किया, उसके बाद तो ये अपेक्षित ही था। वो उसे न तो दोष दे सकती थी, न ही उससे अपेक्षा कर सकती थी, पर वो चकित अवश्य थी। अब उसे लगने लगा था कि सब कुछ अत्यन्त जटिल होने वाला था।

देवव्रत गम्भीरतापूर्वक बोलता गया, “प्रजा ही सदैव किसी को राजा बनाती है।”

कोई षड्यंत्रकारी खेल नहीं, देवव्रत उस पर लांछन लगा रहा था। उसके अन्दर क्रोध की लहर दौड़ गई।

“प्रजा तो सदा राजा, या रानी के सामने ही झुकेगी,” काली ने उसे रुखेपन से याद दिलाया। “राजा कैसा भी हो—नेक या दुष्ट, लोग तो राजमुकुट से विस्मित ही रहते हैं; वे राजा से डरते हैं, प्रेम नहीं करते। मैं जानती हूँ, राजकुमार, मैं भी उनमें से एक ही थी।”

देवव्रत ने दूर क्षितिज में देखते हुए मुँह फेर लिया; उसके प्रतिरोध से देवव्रत को हँसी आ गई, जिसे देखकर काली और भी चिढ़ गई।

राजमहल इतना विशाल था कि दूर से भी स्पष्ट दिख रहा था। काली का हृदय, प्रत्याशा से नहीं बल्कि भय से भर आया। छोटी-सी पहाड़ी पर खड़ा राजमहल किसी किले से कम नहीं लग रहा था, विशाल और भयावह! अब उसे वहीं रहना होगा, धनवान, शक्तिशाली और विशिष्ट लोगों के साथ, काली ने अस्वाभाविक उत्साह के साथ सोचा। वो इसके लिए वर्षों से प्रतीक्षा कर रही थी, अपने निराश बचपन से लेकर आज तक! परन्तु, आज जब वो उसके इतने निकट आ गई थी, राजमहल का चकाचौंध उसे विशेष आकर्षक नहीं लग रहा था। क्या ये नगर में प्रवेश करते ही हुए उसके स्वागत के कारण था या देवव्रत के मौन द्वेष के कारण? काली का चेहरा अनायास ही ऐंठ गया : निचले स्तर के लोगों की तुलना में इन धनवान और शक्तिशाली लोगों के साथ सम्बन्ध रखना कहीं अधिक कठिन होता है।

काली अपने हावभाव और मनोभाव छिपाने में प्रशिक्षित थी, फिर भी राजमहल की भव्यता ने उसके होश उड़ा दिए। काली के लिए, जो जन्म से ही गरीबी और दरिद्रता में रही थी, राजमहल स्वर्ग से कम नहीं था। ऊँचे, विशाल गुम्बज उलटी हुई पंखुड़ियों जैसे दिख रहे थे। उनके नीचे लम्बे खम्भों वाले भवन थे, अलंकृत जंगले और नक्काशीदार प्रवेशद्वार थे। ऊँची दीवारों के किनारे से लगभग कई वर्ग तक हरी घास की चादर हल्की ढलान पर बिछी थी जो घुमावदार पगड़ंडी की ओर जाती थी। सभी रास्ते चौड़े थे और उन पर पथर लगे हुए थे। इन रास्तों पर तो हाथी भी सरलता से चल सकते हैं। काली ने मुस्कुराते हुए सोचा। विस्तारपूर्वक सजा, विषादपूर्ण और गम्भीर पुराना उद्यान, लगभग पौन मील तक गंगा के तट तक फैला हुआ था। नदी के तट पर उद्यान, गहरी मिट्टी की ढलान में मिलता था, जिसके पास ऊँचे वृक्ष थे। नीचे, गंगा का पानी अस्नेही रूप से झिलमिला रहा था और पक्षी दुखी कूक के साथ आसपास उड़ रहे थे; काली को उनका स्वर अनिष्ट लग रहा था। किन्तु, राजमहल के निकट, प्रांगण और उद्यानों में उस गर्मी की ऋतु में वातावरण उल्लासित और सजीव था। चारों ओर अद्भुत

गुलाब, चमेली और गेंदे के फूल हर रंग में खिले हुए थे। काली को पूरा दृश्य किसी स्वर्ग से कम नहीं लग रहा था।

“कितना सुन्दर है!” वो झट से अचम्भित होकर बोल पड़ी।

“हाँ!” पहली बार देवव्रत हल्के से मुस्कुराया पर उसके चेहरे की गम्भीरता कम नहीं हुई। “मैं मानता हूँ कि हर व्यक्ति की किसी न किसी विषय में रुचि होनी चाहिए,” वो अपने चौड़े कंधे उचकाते हुए बोला। “मुझे फूल बहुत पसन्द हैं और जहाँ मैं पलाबढ़ा, वो स्थान फूलों से भरा हुआ था। मुझे उस स्थान का एक छोटा-सा भाग यहाँ भी रखना था!” कहते हुए अचानक वो रुक गया, जैसे वो बहुत अधिक बोल गया हो।

“इतने सुन्दर फूल मैंने आज तक कभी नहीं देखे,” वो स्नेहपूर्वक मुस्कुराती हुई बोली।

देवव्रत लज्जित हो गया। उनका रथ एक संगमरमर के मंडप के सामने के सुन्दर, गोलाकार उद्यान के निकट आकर रुका। वहाँ काली के स्वागत के लिए कई सेविकाएँ और सेवक खड़े थे; सब शान्तिपूर्वक उसे स्पष्ट अविश्वास और उत्सुकतापूर्वक देख रहे थे।

देवव्रत उसे संगमरमर के लम्बे गलियारों और सीढ़ियों से होते हुए महल में ले गया। काली सिर ऊँचा करके, धड़कते हृदय के साथ उसके पीछे चल रही थी। उसे आश्चर्य हुआ कि उसका प्रारम्भिक भय और विस्मय कम हो गया था—वहाँ की अलंकृत साज-सज्जा बेढ़गी थी और वहाँ के सर्वव्यापी दीपवृक्ष और झाड़-फानूस भड़कीले थे। क्या धनवान लोग ऐसे ही जीते हैं? इस तरह अपने धन, स्वर्ण और रत्नों का प्रदर्शन करते हैं? राजमहल अत्यन्त आड़म्बरपूर्ण और गुहमय था, और शान्तनु के कक्ष तक की दूरी बहुत अधिक थी।

काली को अचानक ध्यान आया कि वे शान्तनु के आवासीय भाग तक पहुँच गए थे। उसे थोड़ा डर लगने लगा : क्या शान्तनु चौंक जाएँगे, क्रोधित होंगे या उसे देखकर प्रसन्न होंगे?

“पिताजी, मैं आपके लिए किसी को लाया हूँ,” देवव्रत ने शान्तनु के कक्ष में प्रवेश करते हुए धीरे से सूचना दी। उत्तर में उसे दुखद शान्ति ही मिली; शान्तनु ने अनासक्ति से पूछा, “कौन है?”

“मैं हूँ, मत्स्यगंधा,” काली ने नम्रतापूर्वक कहा।

देवव्रत ने अपने अचरज को सरलता से छिपा लिया। वो उसके इस नाम को सुनकर चौंक गया। उसने काली के सुगंध को अनुभव किया था, जो सचमुच मादक सुगंध थी। काली उसे अद्भुत और अभूतपूर्व गहने की तरह प्रदर्शित करती, जिससे देवव्रत को हल्की-सी खिजलाहट होती थी।

शान्तनु तेजी से उनकी ओर घुमते हुए बोले, “कैसे?” उनके चेहरे पर अविश्वास था और आवाज़ में आश्र्य।

देवव्रत ने अपने पिता के चेहरे पर फैलते प्रत्यक्ष आनन्द को देखा।

“मैंने इनके पिताजी की इच्छा पूरी की, और वे इनका विवाह आपसे करने के लिए सहमत हो गए,” देवव्रत संक्षेप में बोला। “मैं इन्हें यहाँ आपके लिए लाया हूँ: आपकी नई रानी। मेरी माता।”

देवव्रत ने अपने पिता के चेहरे से आनन्द को उतनी ही शीघ्रता से कम होते देखा।

“तुमने क्या किया?” शान्तनु भारी आवाज़ में बोले, उनका चेहरा श्वेत पड़ गया। वे अब काली की तरफ देख भी नहीं रहे थे; उनकी आँखें अपने पुत्र पर गड़ी हुई थीं।

“भगवान के लिए कह दो कि तुमने इसके पिता की कठोर शर्तें नहीं मानी!” शान्तनु भयभीत होकर बोले।

फिर वे काली की ओर मुड़ते हुए दोषारोपण करते हुए चिल्लाएं, “तुमने इससे ये क्या करवा दिया?”

काली की घबराहट देखकर देवव्रत ने कहा, “पिताजी, ये मेरा निर्णय था, मैंने किया। किसी ने मुझे विवश नहीं किया।” वो शीघ्रतापूर्वक बोला।

“नहीं! मैं तुम्हें ऐसा नहीं करने दूँगा!” शान्तनु अपने पुत्र का हाथ थामते हुए बोले। “ये तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है! तुम इस राजसिंहासन के न्यायपूर्ण उत्तराधिकारी हो! मैं तुम्हें इसे त्यागने नहीं दूँगा! नहीं!”

उनका अपराधबोध संक्रामक था, और काली के हृदय को भी भेद रहा था। काली लज्जित होकर सिर झुकाए अपने हाथों को देखती खड़ी थी। उसे लगा था कि पुरुष और सिंहासन को पा लेना सरल होगा; उसे उसके साथ जुड़ी कुरुक्षेत्र और कटुता का अनुमान नहीं था।

“पिताजी, आप ठीक कह रहे थे। हस्तिनापुर को वारिसों की आवश्यकता है : बड़े भरे-पूरे राजपरिवार की,” देवव्रत हल्के से मुस्कुराता हुआ बोला। “इसमें दुखी होने की कोई बात नहीं है, ये तो उत्सव मनाने का समय है, मैं अभी तैयारियाँ आरम्भ करता हूँ...” “चुप हो जाओ देव!” शान्तनु कठोर आवाज़ में बोले। “कोई विवाह नहीं होगा! मैं तुम्हारा सर्वनाश होते हुए देखकर, मत्स्यगंधा को नहीं अपना सकता,” शान्तनु स्पष्ट रूप से उद्धिग्न थे। “मैं तुम्हारे साथ ऐसा नहीं कर सकता, मैं तुम्हारा पिता हूँ” वे अपने हाथों में मुँह छिपाकर रोने लगे।

“और मैं आपका पुत्र,” देवव्रत शान्त स्वर में बोला। “आपको प्रसन्न देखना मेरा कर्तव्य है।” अपने पिता के कड़े विरोध को अनसुना करते हुए वो दृढ़तापूर्वक बोला, “मैंने अपनी प्रतिज्ञा कर ली, और कुछ भी उसे वापस नहीं ले सकता, मेरी मृत्यु भी नहीं।”

उसके शब्दों में कठोर निश्चितता थी, और काली से उसका दृढ़ संकल्प छिपा नहीं था। कुछ भी उसे वापस नहीं ले सकता, मेरी मृत्यु भी नहीं। वो आखिरकार जीत गई थी। काली को अपने विजय का आभास थोड़े विलम्ब से हुआ।

देवव्रत के दुराग्रही आत्म-विनाश ने शान्तनु के पश्चाताप को भंग कर दिया। “तुम भीष्म हो!” शान्तनु आदरपूर्वक बोले। “मैं तुम्हारे योग्य नहीं हूँ; मैं तुम्हारा पिता होने के योग्य नहीं हूँ।”

अपने पिता के चेहरे की स्पष्ट व्यथा देवव्रत के हृदय को चीर रही थी, और वो इस सौच में पड़ गया कि उनके दुख को कम कैसे करे। “किन्तु मैं तो आपका ही पुत्र हूँ, पिताजी,” वो निर्बलता से उन्हें मनाने का प्रयत्न करते हुए बोला। “क्या पुत्र अपने पिता को कुछ नहीं दे सकता; क्या सदैव माता-पिता को ही देते रहना होगा?”

“परन्तु, मैंने तुम्हें कुछ नहीं दिया है, पुत्र!” शान्तनु रोते हुए बोले। “न मेरा प्रेम, न मेरा आशीर्वाद, और अब न मेरी विरासत!”

शान्तनु के होंठ कांप रहे थे; गंगा के शब्द उनकी कानों में गूँज रहे थे, “हमारा पुत्र शापित है!” उसके कथन का सत्य उनके सामने प्रकट हो रहा था। और उन्होंने अनजाने में अपने पुत्र के पूर्वनिर्धारित दुर्भाग्य में अपनी भूमिका निभाई थी।

“नहीं!” वे रोए, उनकी आँखों से पश्चाताप और खेद की अश्रु धारा बह निकली। “मुझे मेरे पुत्र का अभिशाप मत बनाओ, हे भगवान्!” वो परिस्थिति की भयावहता की अनुभूति से हिल गए।

काली शान्तनु को सँभालने के लिए आगे बढ़ी, परन्तु देवव्रत उससे पहले उनके पास पहुँच गया। वो शान्तनु की बातों को ठीक से समझ नहीं पायी, पर इतना तो स्पष्ट था कि शान्तनु टूट गए थे; वे पराजित, लज्जित पिता थे जो अपने पुत्र की उदारशीलता के बोझ तले कुचले जा रहे थे। देवव्रत की प्रतिज्ञा इन्हें मार डालेगी, काली घबराकर सौच रही थी। बाबा, ये आपने क्या किया? मैंने क्या कर दिया? राजमुकुट की चमक तो अभी से फीकी पड़ गई है।

शान्तनु अपने पुत्र की आँखों में देखते हुए बोले, “मेरे पुत्र! मैं तुम्हें इस आशीर्वाद के अतिरिक्त और कुछ नहीं दे सकता...” वे दयनीय स्वर में बोले।

“तुम महान हो, देवव्रत, और सम्पूर्ण विश्व तुम्हें भीष्म के नाम से जानेगा,” वे खोखली आवाज़ में बोले। “मैं तुम्हें केवल इच्छामृत्यु का वरदान दे सकता हूँ—जिससे तुम अपनी मृत्यु का समय स्वयं निश्चित कर पाओगे।

शान्तनु निराशापूर्वक विचार करने लगे, मैंने तुमसे तुम्हारा सर्वस्व छीन लिया, किन्तु इस वरदान के बल से तुम जिस धरती पर जन्म लेने और जीने के लिए शापित हो, उस पर और अधिक क्रूरता से बच सकते हो, देवव्रत। मैंने तुम्हें निराश किया है, पुत्र। गंगा, मैंने तुम्हें भी निराश किया है। वे चुपचाप रोते रहे। क्या मेरा वरदान देवव्रत

को इस पृथ्वीलोक से मुक्ति दिला सकता है; ऐसा लोक जिसमें वो अपने जन्म के कारण फँसा है? अपनी प्रतिज्ञा के कारण वो राज्य और परिवार के बंधन से तो मुक्त हो गया था, परन्तु उसे इच्छामृत्यु की शक्ति मिल गई थी। उनका शापित पुत्र अब इस लोक को छोड़कर जाने के लिए स्वतंत्र था। किन्तु, अपने दृढ़-निश्चयी पुत्र को देखकर शान्तनु जान गए थे कि कोई भी वरदान उसे उसके कूर नियति से नहीं बचा सकता, और वो प्रेम और कर्तव्य की बेड़ियों में फँस जाएगा। मैं ही वो बेड़ी हूँ और हस्तिनापुर उसका उत्तरदायित्व।

काली स्पष्ट रूप से अचान्मित थी, उसकी आँखें बारी-बारी से पिता और पुत्र को देख रहीं थीं। कौन-सा पिता अपने पुत्र की मृत्यु की कामना करता है और उसे वरदान के रूप में वही देता है? देवव्रत ने अपने बलिदान के बदले में क्या पाया: इच्छामृत्यु?

शान्तनु ने जो देवव्रत को विरासत में दिया वो तो मृत्यु से भी बदतर था।

“मैं धन्य हूँ, पिताजी। मैं आपका और गंगा का पुत्र हूँ” देवव्रत अपने पिता के निराश चेहरे को शान्तिपूर्वक देखते हुए बोला। उसे पता था कि इस वरदान में बहुत शक्ति थी, वो किसी अमंगल का सूचक भी था...

“क्या आप अपने पुत्र को केवल यही दे सकते हैं?” एक क्रोधित आवाज़ आयी। “मृत्यु की कामना?”

देवव्रत अपने ताऊजी की आवाज़ सुनकर डर गया, उसे आने वाली परिस्थिति का अनुमान हो गया था।

“तुम कैसे पिता हो, शान्तनु, कि तुम अपने पुत्र की खुशी की कीमत पर अपना सुख छूँढ़ रहे हो?” बहलिक का चेहरा क्रोध से लाल हो गया था। “तुम्हारा पुत्र तुम्हारे लिए पत्नी लेकर आया है, जबकि तुम्हें उसके लिए पत्नी लानी चाहिए थी!” बहलिक काली की ओर उपेक्षापूर्वक देखते हुए बोले।

लम्बे-चौड़े और बलवान बहलिक, अपनी चोंचदार, मोटी नाक और पतले, कूर होंठों के कारण काली को एक चौकस रक्षक की तरह लगे। उनकी छोटी, ओजहीन आँखें खुली घृणा के साथ काली के ऊपर रेंग रही थीं।

देवव्रत समझ गया कि उसे ही परिस्थिति को सँभालने के लिए कुछ करना होगा।

“ताऊजी, ये विवाह की तैयारी करने का समय है, विवाद का नहीं!” वो विनतीपूर्वक बोला।

“नहीं, शोक करने का समय है!” बहलिक क्रोध से दमकती आँखों के साथ चिल्लाए। “मैं ये अन्याय नहीं होने दूँगा। ये पूर्णतया मूर्खता है। कल की लड़की रानी बनने का स्वप्न देखती है, और तुम्हारा सिंहासन छीन लेती है!” वे काली की ओर एक बार और देखते हुए बोले। वो उस लम्बे कक्ष के एक कोने में निड़र और गर्वपूर्वक खड़ी थी।

“हम अपने अतिथियों के साथ इस प्रकार दुर्व्यवहार नहीं करते,” वो दांत भींचती हुई धीरे से बोली।

बहलिक उसे घृणापूर्वक घूरने लगे। उसका साँवला रंग, पतली, कामुक काया, उसकी बड़ी-बड़ी मादक आँखें और उसके कठोर होंठों को देख उनकी शंका और स्पष्ट हो गई। “तुम अतिथि नहीं हो; तुम कुछ भी नहीं हो!” बहलिक आवेशपूर्वक बोले। “यदि तुम्हें मेरे शब्द बुरे लगे हों तो तुम जाने के लिए स्वतंत्र हो!”

शान्तनु थोड़ा-सा हिले, पर क्रोधित बहलिक ने उनकी प्रतिक्रिया देख ली।

“देखो, मेरे भाई को अपने पुत्र से अधिक इस लड़की की चिन्ता है!” बहलिक निन्दापूर्वक बोले। “शान्तनु, क्या तुम अब यही बनकर रह गए हो—एक वृद्ध जो किसी अवसरवादी लड़की के जाल में फँस गया है और उसके लिए अपने पुत्र को जीते-जी मृत्यु दे रहा है?”

शान्तनु का चेहरा श्वेत पड़ गया। “तुम मेरा अपमान कर रहे हो!”

“तुम, मेरे प्रिय अनुज, स्वार्थी मूर्ख हो!” बहलिक क्रोध से चिल्लाए। “जैसे हमारे पिता ने किया, तुम्हें भी सेवामुक्त होकर, सिंहासन त्यागकर अपने युवा पुत्र को सौंप देना चाहिए। बजाय इसके, तुम अपने लिए दुल्हन ले आए! तुम अपनी पुत्री की आयु की लड़की को अपना संयम और विवेक खोने पर विवश करने कैसे दे सकते हो? तुम राजा हो, पिता हो; और तुम दोनों ही भूमिकाओं में विफल रहे हो!”

काली को अपने अपमान पर विश्वास नहीं हो रहा था। वो क्रोध से उबल रही थी, पर शान्त रही; कोई भी गलत कदम सब कुछ नष्ट कर सकता था।

राजकुमार को ही एक बार और मेरा रक्षक बनना होगा, उसने सोचा, क्योंकि इस समय वही एक ऐसा व्यक्ति है जिसकी बात ये क्रोधित बुद्धा सुनेगा।

देवव्रत अपने पिता के बचाव में बोला, “ताऊजी, शान्त हो जाइए। ये मेरा निर्णय था। पिताजी का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है।” “इसका पूरा सम्बन्ध है, पुत्र” बहलिक देवव्रत को टोकते हुए बोले। “शान्तनु ने ये समस्या हमारे ऊपर लाद दी है।” वे सिर हिलाते हुए आगे बोले, “इस लड़की के द्वारा इस तरह छला जाना...”

शान्तनु निराशापूर्वक सामने देखते हुए बोले, “मैं इससे प्रेम करता हूँ, बहलिक। इस तरह उसका अपमान मत करो!”

बहलिक क्रोध से गुराते हुए बोले, “यदि तुम अपनी वासना और लालसा पर नियंत्रण नहीं कर सकते, तो तुम्हें उसे अपने अन्तःपुर में रख लेना चाहिए था, भाई। उसे तुम्हारा सिंहासन चाहिए, तुम नहीं, मूर्खी!”

शान्तनु क्रोध से लाल हो गए, “आप अपनी सीमा लांघ रहे हैं, बहलिक!”

“नहीं, तुमने लांघा है, भाई, और अब बहुत देर हो चुकी है,” बहलिक बोले। “हम सबके लिए बहुत देर हो गई है। तुम्हें अभी भी अनुमान नहीं है कि तुम कितनी गहरी

खाई में गिरे हो, इस निन्दनीय लड़की के कारण नहीं, बल्कि अपने अहंकार और स्वार्थपरता के कारण भी। तुम सदैव ही बिगड़े हुए बालक थे, क्योंकि तुम्हारा जन्म बहुत लम्बे समय के बाद हुआ, हमारे माता-पिता के वृद्धावस्था में। परन्तु मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि तुम इस तरह पथभ्रष्ट और चरित्रहीन हो जाओगे!” बहलिक उपहास और आशा-भंग से चमकती आँखों से चिल्लाए। “यदि मुझे अनुमान होता तो मैं हस्तिनापुर तुम्हारे हाथों में कभी नहीं सौंपता, शान्तनु, जिसे तुम इतनी सरलता और लापरवाही से मात्र किसी युवती की वासना के खातिर गँवा रहे हो!”

काली को उनके माथे पर फड़कती नस स्पष्ट दिख रही थी, और उसे लगा कि वे क्रोध से फट ही जाएँगे।

बहलिक अपने चेहरे को अपने भाई के विवर्ण चेहरे के पास लाते हुए बोले, “तुम हमारे पिता, राजा प्रतिप के पुत्र कैसे हो सकते हो? क्या तुममें कहीं हमारे स्वार्थी और पतित पूर्वजों-ययाति और दुष्यन्त का लहू तो नहीं बह रहा है?”

“अपनी पत्नी, देवयानी से विश्वासघात के कारण समय-पूर्व वृद्धावस्था से शापित ययाति ने अपने युवा पुत्र पुरु से युवावस्था उधार लेने की धृष्टता की थी। बहुत समय बाद, हमारे ही वंश में दुष्यन्त ने अपने पुत्र भरत को लगभग अपने नाम से वंचित कर दिया था। तुम भी उन्हीं की तरह तुच्छ हो!” बहलिक गरजे। “हमारे पौरव वंश का इतिहास भी ऐसी कथाओं से भरा है जहाँ पुत्रों को बार-बार अपने स्वार्थी पिताओं की सनक और हठ के लिए बलिदान देने पड़े हैं। क्या ये सच नहीं, भाई?” उन्होंने क्रूरतापूर्वक कहा। “परन्तु तुमने तो सारी सीमाएँ तोड़ दी। हमारे पूर्वजों के समय में लगभग सभी युवराजों ने अपना अधिकार और राजसिंहासन वापस पा लिया; किन्तु देव का क्या? क्या तुम उसे वो सब वापस दे पाओगे, जो तुमने उससे छीन लिया है?” उन्होंने प्रश्न किया। “तुम वासना में लिप्त जीवन जियोगे, और वो आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करे; कितनी कूर बात है? ययाति को भी जब अपनी गलती का अहसास हुआ, उसने पुरु को उसका यौवन वापस दे दिया। तुम्हें पता है उसने अपने पुत्र से क्या कहा, शान्तनु? ययाति ने स्वीकार किया कि संसार की सारी मदिरा, सारा धन और सभी स्त्रियाँ पुरुष की वासना और लालसाओं को तृप्त नहीं कर सकतीं। अपने अतिरेक के चरम पर पहुँचकर ययाति ने प्रज्ञता पाकर, वृद्ध मनुष्य के तौर पर अपना राज्य त्याग दिया और अपना शेष जीवन संन्यासी की तरह व्यतीत किया। उनके अन्तिम दिनों में ही उन्हें मुक्ति मिली, शान्तनु; जो उसके भोग-विलासी जीवन ने नहीं दिया। किन्तु, क्या तुम्हें कभी भी पछतावा होगा?” वो गम्भीरतापूर्वक सिर हिलाते हुए बोले। “मैं यहाँ रहकर अपने परिवार का सर्वनाश होते नहीं दे सकता।”

वे काली की ओर मुड़े, “हमारा परिवार इस बात के लिए जाना जाता है कि एक भाई ने खुशी-खुशी दूसरे भाई के लिए राजमुकुट त्याग दिया। किन्तु, तुमने उसे

मरोड़कर देवव्रत को वही करने पर विवश कर दिया। इसमें कोई बड़प्पन या महानता नहीं है। इससे तुम्हारी विकृत सोच ही सिद्ध होती है। मैं तुम्हें श्राप नहीं ढूँगा; क्योंकि ऐसा करके मैं अपने वंश को अप्रतिष्ठित नहीं कर सकता। तुम वैसे भी अपने घर में और मेरे भतीजे के जीवन में दुर्भाग्य ला ही चुकी हो। तुम अपने हर गलत निर्णय पर पछताने के लिए दीर्घायु हो!”

उनकी धधकती आँखें काली को झुलसा रहीं थीं, और उसे लगा जैसे उनका निशब्द श्राप फैलकर उसके हृदय और मस्तिष्क में रिसता जा रहा था। बहलिक की आँखों की स्पष्ट कटुता काली के लिए बहुत बड़ा झटका था। उसका चेहरा श्वेत पड़ गया और वो क्रोध और भय से कांप गई।

“मैं आपके भाई से प्रेम करती हूँ, श्रीमान्,” वो गम्भीरतापूर्वक बोली।

“किन्तु, तुम्हें तो उसके राजमुकुट से अधिक प्रेम है,” वृद्ध ने आगे झुकते हुए उपहासपूर्वक कहा। “तुम सरलता से शान्तनु और देव को मूर्ख बना पायीं, पर मुझे नहीं। तुम रानी बनना चाहतीं थीं, और तुमने मेरे भाई का उपयोग करके मेरे भतीजे का सर्वनाश कर दिया। मुझे आशा है कि तुम्हें विश्वास होगा कि कहीं, कोई ईश्वर है, न्याय है।”

“देव ने अपना सर्वस्व खो दिया; तुम्हें पता है हमारे परिवार के साथ आगे क्या हो सकता है?” उन्होंने पिता और पुत्र दोनों को सम्बोधित करते हुए, काली को कठोरतापूर्वक देखते हुए कहा। “ये लड़की रानी होगी, उस राजवंश की राजमाता होगी, जिसकी ये शुरुआत करने वाली है। तुम्हारे साथ-साथ, आगे से इसकी वंशावली भी होगी।”

देवव्रत अपने ताऊजी को शान्त करने के लिए आगे बढ़ा। “आप हस्तिनापुर से इस तरह क्रोधित होकर नहीं जा सकते,” वो विनती करते हुए बोला।

देवव्रत ताऊजी को अपने सामने झुकते हुए देखकर चौंक गया। “तुम राजा बन सकते थे, राजकुमार देवव्रत। मैं हस्तिनापुर उसके लिए वापस आया था, मेरे भाई के लिए नहीं,” वो भावशून्य स्वर में बोले। “मैं तुम्हारे लिए लौटा, देवपि भी। हम दोनों तुम्हें आशीर्वाद देने आए थे... हस्तिनापुर के भावी राजा, भावी राजकुमार को। किन्तु, तुमने सब कुछ इतनी लापरवाही से, बिना सोचे-समझे, अपने राज्य और अपनी प्रजा के बारे में विचार किए बिना त्याग दिया; जिनके लिए तुम नैतिक रूप से उत्तरदायी हो। तुमने उन लोगों के बारे में विचार ही नहीं किया जो तुम्हें चाहते हैं, जिन्हें तुमसे अपेक्षाएँ हैं और जिन्होंने तुम्हें राजा बनाया। तुमने राज्य के नियमों और सिद्धान्तों के बारे में चिन्ता नहीं की और इस बात पर विचार नहीं किया कि राजा का सबसे पहला दायित्व राजसिंहासन और प्रजा के लिए होता है, अपने परिवार के लिए नहीं।

देवव्रत के हृदय में अनजान-सी आशंका फैल गई : उसके ताऊजी, उसके गुरु, उसके सलाहकार, आज न केवल क्रोधित और अप्रसन्न थे; वे उससे निराश थे, जो सबसे गम्भीर बात थी।

“देव, तुमने ये क्या कर दिया?” ताऊजी ने पूछा। “यदि मैं अपने भाई से क्रोधित हूँ और मुझे इस लड़की से घृणा हो रही है, तो मुझे तुम्हारे किए पर भी बहुत दुख है। तुमने मुझे निराश किया है, देव, और हस्तिनापुर को भी। तुम महान राजा बन सकते थे, पर तुमने अपने पिता की जिद के लिए सब कुछ गँवा दिया। राजमुकुट के लिए तुम्हारे उत्तरदायित्व का क्या?”

“मैं अपने उत्तरदायित्व से नहीं भाग रहा हूँ, ताऊजी,” देवव्रत धीमी आवाज़ में बोला। “मैंने राजमुकुट त्याग दिया है, परन्तु, मैं सदा इस राज्य के प्रति निष्ठावान रहकर अपनी अन्तिम सांस तक इसकी सचाई से सेवा करूँगा,” वो भावपूर्वक बोला, उसकी आवाज़ कोमल थी पर उसमें प्रशंसनीय संकल्प का अन्तर्प्रवाह था।

राजमुकुट की सेवा किस अधिकार से करोगे, पुत्र?” बहलिक व्यंग्यपूर्वक बोले। “निष्ठ सेवक, मंत्री, सरदार या राज्याधिकारी बनकर? अब तुम राजमुकुट की नहीं, बल्कि किसी भी ऐसे व्यक्ति की सेवा करोगे जो इसे पहनने का इच्छुक हो!” वे लगातार आगे बोलते गए, “तुम राज्य की सेवा नहीं, बल्कि राजा की सेवा करोगे। तुम मात्र चल-सम्पत्ति बनकर रह जाओगे; बिना किसी आवाज़, अभिप्राय या सत्ता के।”

देवव्रत शान्त स्वर और स्थिर आँखों के साथ बोला, “मैं आनन्दपूर्वक यह कार्य करूँगा, ताऊजी। मेरा जन्म हस्तिनापुर में हुआ। मैं उसी के लिए जियूँगा, उसकी सुरक्षा करूँगा और उसी के लिए मरूँगा। ये मेरा आपके समक्ष वचन है।”

उसके पिता का चेहरा विवर्ण था; वो लड़की घबराई हुई खड़ी थी, पर शान्त और अचल थी।

“एक और वचन!” बहलिक चिल्लाए। “ये हमारे लिए अभिशाप हैं, वरदान नहीं, पुत्र। तुम्हें इस स्त्री और इसके आनेवाली सन्तान के लिए राजमुकुट का त्याग करने का अधिकार किसने दिया? किसने तुम्हें राजसिंहासन के साथ खिलवाड़ करके, उसे अपने पिता के तर्कहीन प्रेम के लिए दाँव पर लगाने का अधिकार दिया? इसे दाँव पर लगाने के लिए ये तुम्हारा है ही नहीं, देव; ये तो राज्य की प्रजा का है। ये तो हस्तिनापुर राज्य का है। न तुम, न शान्तनु, न ये निन्दनीय लड़की हस्तिनापुर से बड़े हैं। तुम जीवनभर हस्तिनापुर की देखभाल करने का वचन दे रहे हो, परन्तु पुत्र, तुमने अपनी प्रतिज्ञा के द्वारा एक झटके में इसका सर्वनाश कर दिया है।”

देवव्रत ने दुखी होकर अनुभव किया कि सबसे कठोर शब्द उसी के लिए आरक्षित थे। उसने उनके शब्दों के रोष से बचने के लिए अपना सिर झुका लिया।

“तुम समझ रहे हो कि अपना जन्मसिद्ध अधिकार दाँव पर लगाकर तुमने अपने पिता की सहायता की है, पर, तुम अपने निर्णय का परिणाम नहीं समझ पाए हो। तुमने न केवल अपना जीवन उलट-पलट कर दिया, बल्कि अपने वंश को भी हिलाकर रख दिया है। एक व्यक्ति को खुश करने के प्रयास में, तुमने इस राज्य की प्रजा को दिए हुए अपने वचन को भी त्याग दिया है। तुम अत्यन्त भावुक हो और इसके लिए तुम जीवन भर कष्ट उठाओगे, भीष्म! तुमने जो किया, वो उत्तम नहीं था, बल्कि एक अयोग्य मनुष्य के लिए तुम्हारी निष्ठा थी!” बहलिक दुखी आँखों से उसे देखते हुए, निराशापूर्वक बोले। “तुम्हारे नए नाम के समान ही आदर्श और वास्तविकता के बीच परछाई गिरती है। तुम पतित नायक हो देव; ऐसा नायक जो बड़ी शीघ्रता से पराजित हो गया! तुम्हारा संकल्प स्वेच्छाचारी कृत्य है; न्यायसंगतता न देख पाने की तुम्हारी असमर्थता! ये निर्णय कोई व्यक्तिगत नहीं, बल्कि राजनीतिक होना चाहिए था,” बहलिक अपने भतीजे की सन्तप्त, भूरी आँखों में देखते हुए बोले।

उनका हरेक शब्द कोड़े की मार की तरह था, और देवव्रत ने उन्हें मौनपूर्वक सुन लिया क्योंकि उसके पास अपने निर्णय के लिए कोई तर्क नहीं था। क्योंकि वो अपने माता-पिता को अलग करने के लिए अपने आपको कभी क्षमा नहीं कर सकता था; वो अपना सबसे कष्टप्रद अपराधबोध अपने ताऊजी को नहीं बता सकता था। उसने भरसक प्रयत्न किया, अपना सर्वस्व अपने पिता और उनके नए प्रेम को साथ लाने के लिए बलिदान कर दिया था। क्योंकि, उन्होंने और सबने मान लिया था की देव के तर्कहीन कर्तव्यपरायणता ने उसे ऐसा निर्णय लेने के लिए बाध्य कर दिया था। पर ये सत्य से बहुत दूर था।

उसके पिताजी अभी भी सदा की तरह कायर थे और, बहलिक के अमंगल शब्दों के भय को छिपाने में असमर्थ, क्रोध से कांपते हुए खड़े थे। क्या उसके ताऊजी ठीक कह रहे थे? क्या उसके पिता को उनकी खोई खुशी लौटाने की इच्छा ने उसे उन्हीं की तरह ही अप्रभावी बना दिया था?

काली शान्त खड़ी रही। ये व्यक्ति निर्दयी थे, पिता-पुत्र, दोनों को अपने शब्दों के प्रहार से आहत कर रहे थे। उसे इस व्यक्ति से सँभलकर रहना होगा; शान्तनु या देवव्रत से नहीं। जैसा बहलिक ने कहा था—दोनों कमजोर हृदय वाले थे। पर, ये नहीं। वो आभारी थी कि वो उन्हें और उनके राज्य को छोड़कर जा रहे थे।

“तुम, मेरे भाई और इस स्त्री ने हस्तिनापुर के पतन की शुरुआत कर दी है,” बहलिक धीरे से, झुके कंधों के साथ बोले। इतने विशालकाय मनुष्य के मुँह से निकली वो अत्यन्त दुखी, कोमल और टूटी आवाज़ थी।

“मैं जा रहा हूँ, क्योंकि मैं अपने घर, परिवार, और राज्य का सर्वनाश होते नहीं देख सकता, भीष्म,” वे बलपूर्वक बोले, “क्योंकि अब ये केवल तुम्हारा नाम ही नहीं,

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

बल्कि आने वाला भयंकर जीवन भी है! ”  
वे अपने पीछे पीड़ादायक निस्तब्धता छोड़ गए।

Novels English & Hindi

## विवाह

काली अपने विवाह की तैयारियों में व्यस्त थी। अपनी त्वचा पर रेशम के वस्त्रों का स्पर्श और गले में हीरों की चमक उसके लिए नई थी। ये मेरी तरह ही हैं, वो मुस्कुराई, सुन्दर और आकर्षक, जिनकी चमक कभी कम नहीं होती। हीरों की चमक उसके साँवले चेहरे से प्रतिबिम्बित होकर उसे एक अद्भुत चमक दे रही थी, उसकी काली आँखें दमक रही थीं। आज राजा के साथ उसका विवाह होने वाला था; वो रानी बनेगी; उसका सपना आरम्भ हो चुका था। फिर भी, उसके चारों ओर एक झलक देखने से उसे आने वाले समय की चेतावनी ही दिखती थी। काली ने ऐसा वैभव पहले कभी नहीं देखा था—ठंडे संगमरमर के फर्श को गरम करने के लिए बिछे कीमती कालीन, उत्कीर्ण साज-सामान, उत्कृष्ट चित्रपट और बहुत बड़ा पलंग। पर, उसने इतना स्पष्ट विद्वेष भी नहीं देखा था। सेविकाएँ निष्ठापूर्वक उसे वस्त्र पहनने में सहायता कर रहीं थीं, पर काली को उनका द्वेष उसे दिए हुए बड़े, प्रज्ज्वलित कक्ष में स्पष्ट रूप से अनुभव हो रहा था। वे उसके आसपास निर्लिप्त भाव से शत्रुता के साथ मंडरा रहीं थीं। काली को अपने काम के लिए बार-बार अनुरोध करना पड़ रहा था।

“असाधारण रूप से पूरा राजमहल बधिरता से ग्रस्त लग रहा है,” उसने पूरे अहंकार के साथ कहा। “और इसके लिए मेरे पास एक उपचार है : स्पष्टता से सुन लीजिए, अपने कार्यों से अभ्यस्त हो जाइए और मुझे दोहराने पर विवश न करें। मैं आपकी रानी हूँ, और सबको मेरी सेवा करनी पड़ेगी,” उसने कठोर स्वर में कहा।

सेविकाओं ने दृष्टि उठाकर पहले की तरह उसे नहीं देखा; वे द्वेशपूर्वक सिर झुकाए खड़ी रहीं। मनुष्य को जन्म से राजवंशी होना चाहिए, काली ने कटुतापूर्वक सोचा, नहीं तो उसे सम्मान प्राप्त नहीं होता। राजमहल का यही नियम लगता है। जब उसने ये बात शान्तनु से कही—वही एक थे जिनसे वो बात बता सकती थी—उन्होंने न में सिर हिलाया।

“वे तुमसे इसलिए द्वेष नहीं करते क्योंकि तुम मछुआरिन हो, तुम उन्हें इसलिए अच्छी नहीं लगती क्योंकि उनकी दृष्टि में तुम केवल...”

“आगे बोलिए,” वो रक्षात्मक ढंग से बोली।

“...एक साधारण चोर जिसने देव का अधिकार छीन लिया, और फिर भी राजमहल में स्वतंत्रतापूर्वक घूम रही है। क्या बहलिक के अन्तिम शब्द इसका संकेत नहीं थे?”

शान्तनु ने गहरी सांस ली, उनका झुर्राया चेहरा स्पष्ट रूप से पीड़ा से भरा था। वे उसका हाथ थामते हुए बोले, “आने वाला समय अत्यन्त कठिन होने वाला है, हम दोनों के लिए।”

वो स्तब्ध थी, कि बहलिक के उग्र शब्दों और प्रस्थान के बाद, उसे शान्तनु से भी कटुता का सामना करना पड़ा था, जिन्होंने उससे कह दिया था कि उनका विवाह अत्यन्त शान्त और आडम्बर-रहित होगा।

“मुझे पता नहीं लोगों की प्रतिक्रिया कैसी होगी। मुझे पता चला है कि वे इस समाचार से अत्यन्त अप्रसन्न हैं कि देव अब उनका युवराज नहीं रहा...” वे सन्देहपूर्वक बोले।

राजा अपनी प्रजा से क्यों डरेगा भला, काली विस्मित होकर सोच रही थी। उन्हें राजा के सामने झुकना चाहिए, उनसे प्रश्न नहीं करना चाहिए।

काली ने निश्चय किया कि इस समय अपनी अप्रसन्नता व्यक्त करना ठीक नहीं होगा। “क्या आप मेरे कारण लज्जित हैं, अपनी पत्नी के रूप में मेरा परिचय कराने में आपको लज्जा आती है?” उसने अपनी निराशा छिपाते हुए पूछा। “अपनी रानी के रूप में?” उनके मुरझाए हुए गालों पर हाथ फेरती हुई सहजता से बोली।

शान्तनु ने सावधानीपूर्वक कहा, “उन्हें अपनी रानी गंगा से बहुत स्नेह है, वो उनके लिए अपूरणीय है। उन्हें देव से भी अत्यधिक प्रेम है। वे तुम्हें अतिक्रमी और अनाधिकार-ग्रही समझते हैं—जिसने उसका अधिकार, उसका राजमुकुट और भविष्य छीन लिया। वे तुमसे घृणा करते हैं, मत्स्यगंधा, और तुम्हें कभी क्षमा नहीं करेंगे, न ही मुझे। वे अब मुझसे भी घृणा करते हैं।”

काली के लिए ये नया अनुभव था; वो नायिका थी, अपने गाँव के लोगों के बीच लोकप्रिय थी। परन्तु, सदैव नहीं, उसे उनका सम्मान जीतना पड़ा था। उसे हस्तिनापुर में भी वही करना होगा।

काली ने शान्तनु को तीक्ष्णता से देखा। पिछले कुछ दिनों में, जब से वो राजमहल में आयी, वे और भी वयोवृद्ध लगने लगे थे। उसे लगा था कि वे उसे अपने पास पाकर खुशी से खिल उठेंगे, पर वो तो मनस्ताप से फटे जा रहे थे : अपने भाई से हुए झगड़े और भीष्म की प्रतिज्ञा से। यदि उसने सोचा था कि ये दोनों बातें उसके लिए वरदान थीं, शान्तनु और हस्तिनापुर पर अधिकार पाने का सरल रास्ता थे, तो वो गलत थी। दोनों उसकी पकड़ से बाहर थे। सबसे पहले उसे शान्तनु को उनके अवसाद से निकालना होगा।

“नहीं, वे आपसे घृणा नहीं करते, आप उनके राजा हैं।” काली हल्के से मुस्कुराती हुई बोली। “वे आपसे प्रेम करते हैं, और आपकी हर इच्छा पूरी करेंगे...”

“वे क्रोधित हैं, और द्वेषी प्रजा अच्छी नहीं होती—न राजा के लिए, ना राज्य के लिए। मैं उन्हें और निराश नहीं करना चाहता, इसलिए हमें सरल और आडम्बर-रहित विवाह करना चाहिए। यही ठीक रहेगा।”

काली ने धीरे से हामी भरी, पर वो व्याकुल थी क्योंकि उन्होंने उसे अपनी इच्छा पूरी करने की अनुमति नहीं दी। उसे लगा था कि वे सरलता से मान जाएँगे। “फिर भी, ये तो राजसी, उल्लासमय अवसर है, कोई शोकसभा नहीं”, वो हल्के से हँसती हुई बोली। “जब वे आपको खुश देखेंगे, वे भी खुश हो जाएँगे,” वो उन्हें समझाती हुई बोली। “क्या वे भी अपने राजा को वर्षों बाद खुश और मुस्कुराते हुए नहीं देखना चाहते होंगे?”

“तुम मेरी पत्नी बनने वाली हो, मत्स्यगंधा, और मैं तुम्हें पाकर अतिप्रसन्न हूँ... पर मैं इस क्षण को उनके साथ नहीं बाँट सकता क्योंकि वे सब देव के विवाह की अपेक्षा कर रहे थे, मेरी नहीं!” वे अधीर होकर सिर हिलाते हुए बोले। हमने अनगिनत लोगों को आहत किया है, निराश किया है...” वे बड़बड़ाते हुए एक क्षण रुककर बोले, “मत्स्यगंधा, समझने का प्रयास करो। तुम भूल रही हो कि तुम भी एक समय उनमें से एक थीं!”

वो कठोरतापूर्वक मुस्कुराती हुई बोली, “नहीं, मैं नहीं भूली। हमें अपने राजा के आदेशों का पालन करने की आदत है—वे जो भी कहें या करें। हमें उनकी आज्ञा का पालन करना ही था।”

“पर, ये हस्तिनापुर है।” शान्तनु धीरे से बोले, “यहाँ राजा प्रजा के सामने झुकते हैं, उनकी बात सुनते हैं और शासन करते हैं। देव को ही इसके लिए चुना गया था, विशेषाधिकार के कारण नहीं, बल्कि उसकी योग्यता को देखते हुए। इसके अतिरिक्त, प्रजा ने भी उसे चुना। तुम—हम...” उन्होंने शीघ्रता से सुधार करते हुए कहा। हमने जो देवव्रत के साथ किया, उसके लिए वे हमसे घृणा करते हैं।”

काली का चेहरा तन गया। “मानती हूँ, हमें उनका विश्वास दोबारा जीतना होगा। अभी भी आप ही राजा हैं,” उसने दृढ़ स्वर में कहा। “किसी भी असम्मति और अशान्ति को विरोध का रूप लेने से पहले ही कठोर हाथों से रोका जा सकता है। यदि आप अपनी प्रजा की हर बात मानेंगे, आप दुर्बल राजा कहलाएँगे,” वो आगे बोली और शान्तनु को उसके स्वर में हल्के उपहास का आभास हुआ। “लोगों को दुर्बलता पसन्द नहीं है, वे प्रभुत्व और शक्ति का आदर करते हैं, और उससे डरते भी हैं।”

शान्तनु उसे लम्बे समय तक देखते रहे। “क्या तुम आम लोगों की भावनाओं को भूल चुकी हो?”

काली उत्तेजित होकर गम्भीर मुस्कुराहट के साथ बोली, “मैं ऐसा इसलिए कह रही हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं देखा और अनुभव किया है।”

“लोग मुझसे क्रोधित और निराश हैं। मैं अपने दो भाइयों... और मेरे पुत्र का सम्मान खो चुका हूँ,” वे हताश होते हुए बोले। “देव अपने भावों को दर्शाता नहीं, पर मैं अनुभव कर सकता हूँ। मैंने सबको खो दिया है, मत्स्यगंधा!” वे खाँसते हुए बोले, और उनकी आवाज़ बढ़ती खाँसी के आवेग में ढूब गई।

काली ने उन्हें झट से पानी का पात्र देते हुए कहा, “आप निराश न हों; मैं समझ सकती हूँ।” वह हल्के से मुस्कुराती हुई बोली, “मैं भी उनमें से ही एक थी। इसीलिए कहती हूँ, हमें भव्य विवाह करना चाहिए, जिसके लिए हम न केवल अन्य राज्यों के राजाओं और वरिष्ठजनों को आमंत्रित करें, बल्कि हमारी प्रजा को भी बुलाएँ। लोगों को इस तरह के उत्सव बहुत पसन्द हैं; हम उन्हें भी राजसी आनन्दोत्सव का भागीदार बनाते हैं। हमारा विवाह एक सार्वजनिक उत्सव होना चाहिए, जिससे सम्पूर्ण हस्तिनापुर एक हो जाए। ये विवाह ही नहीं; आगे से हमें अपने सारे पर्व और उत्सव भी लोगों के साथ मनाने चाहिए। इस तरह, वे अपना बैर भूलकर हमें कदाचित क्षमा कर देंगे।”

शान्तनु की भौंहें चढ़ गई और वे विचारमग्न हो गए। काली कुछ समय तक चुप रही। “हाँ, मुझे भी लगता है, इस तरह लोग प्रसन्न हो जाएँगे और हम उनका स्नेह दोबारा पा सकेंगे। मैं भीष्म को सूचित करता हूँ।”

काली ने मुस्कुराती हुई हामी भरी।

शान्तनु ने भीष्म को बुलवाया, और वो तुरन्त ही आ गया।

“तुम्हारे पिता अत्यन्त अशान्त हैं, वे सरल और सादा विवाह चाहते हैं...” काली तुरन्त मुख्य विषय पर आती हुई बोली।

“अच्छा?” भीष्म चकित होकर बोला। “पर तैयारियाँ तो जोर-शोर से चल रहीं हैं।”

काली चौंक गई। तैयारियाँ तो उसके राज्याभिषेक की थीं, जो काली के राजमहल में आने से पहले ही आरम्भ हो चुकीं थीं। उसने शान्त नेत्रों वाले लम्बे युवक को देखा। विवाह तो इसका होना चाहिए था, काली का नहीं। इसी महीने में काशी की राजकुमारी के साथ उसका विवाह होना निश्चित था। उसके स्थान पर वो अपने पिता के विवाह की तैयारी में व्यस्त था। काली को हल्की-सी टीस लगी; क्या उसे कभी आनन्द की झलक नहीं मिलेगी; उसी आनन्द का भाग जिसे उसने इस युवक से छीना था? क्या वो भी उसी की तरह शापित होगी?

शान्तनु त्रस्त लग रहे थे। “हम सार्वजनिक विवाह नहीं कर सकते! मैं मत्स्यगंधा से अभी यही कह रहा था।”

“पर...” भीष्म ने विरोध किया।

“हम पहले ही ताऊजी को क्रोधित कर चुके हैं,” काली ने सावधानीपूर्वक बोलना आरम्भ किया। “हम लोगों को और क्रोधित नहीं करना चाहते... मैंने सोचा है कि हम एक भव्य समारोह आयोजित कर सकते हैं जिसके लिए हम हस्तिनापुर की प्रजा को राजमहल में आमंत्रित करें और उन्हें उत्सव में भाग लेने का अवसर दें।”

भीष्म चकित रह गया, और कुछ समय के मौन के बाद सिर हिलाता हुआ बोला, “बहुत अच्छा सुझाव है।”

वो अपने पिता की ओर मुड़ा। “चिन्ता ना करें, पिताजी। आप हिचकिचा रहे हैं क्योंकि आपको लगता है कि लोग निराश हो जाएँगे, किन्तु मैं आपको आश्वासन देता हूँ, हस्तिनापुर का हर घर खुशियाँ मनाएगा।”

देवव्रत की आँखों की चमक देखकर काली के विजय की खुशी कुंठित हो गई, और वो अपराधबोध से भर गई। वो उनकी खुशी पर कितना आनन्दित था; उसे अपने-आपसे घृणा होने लगी और उसने मुँह मोड़ लिया। काली ने देवव्रत को अपने संयम के कवच को तोड़कर पहली बार स्पष्ट रूप से उल्लासित होते देखा। उसे देवव्रत का अपने पिता के लिए प्रेम भी दिखा, जिनके लिए वह कुछ भी करने के लिए तैयार था। काली बेचैन होकर अपनी उँगलियाँ मरोड़ती खड़ी रही। ये उसका दिन तो था ही नहीं; इसे तो देवव्रत का होना चाहिए था।

भीष्म ने काली को हिचकिचाते हुए मुस्कुराते देखा। “आशा है लोग मुझे क्षमा कर देंगे,” वो बोली। “मैं उन्हें और क्रोधित नहीं करना चाहती, और न ही तुम्हें मेरे कारण लज्जित देखना चाहती हूँ।”

“तुम्हें कोई दोष नहीं दे रहा है,” शान्तनु ने दुर्बल, आश्वासनपूर्ण मुस्कुराहट के साथ कहा।

“मैंने पहले ही आपके भाई को आपके विरुद्ध कर दिया है,” वो बोली और भीष्म उसकी आवाज़ का कंपन सुनकर चकित रह गया। “दरबार के वरिष्ठ अधिकारी भी अप्रसन्न होंगे; सब कुछ मेरे कारण...”

“जो भी स्पष्ट रूप से तुम्हारे विरुद्ध थे, उन सबको मैंने निकाल दिया है, मत्स्यगंधा,” शान्तनु उसकी बात दम्भपूर्वक काटते हुए बोले।

“मैं जानती हूँ। इस विवाह के कारण लोगों के बीच आपसी शत्रुता नहीं बढ़नी चाहिए, बल्कि हमें सबको साथ लाना चाहिए,” वो रुकी, और शान्तनु के सामने नीचे गिरकर, उनके घुटनों पर अपना सिर रखते हुए बोली, “मैं इतनी अभागी हूँ कि आपको खुश करने के बजाय आपको दुखी कर रही हूँ। आप सचमुच दयातु और अद्भुत मनुष्य हैं...” वो अपने आँसू निगलती हुई बोली। “आपको मेरे कारण केवल उपेक्षा और निंदा मिली है!” वो आगे बोलती गई, उसकी आवाज़ का कंपन भी बढ़ता गया। “मैं जानती हूँ

कि मैं आपकी पत्नी ही रहूँगी, ऐसी रानी नहीं जिसे सबका सम्मान मिले। क्योंकि मैं गरीब, युवा, मछुआरिन हूँ, पर मैं क्या करूँ!”

भीष्म ने अपने पिताजी को व्याकुल होते देखा; उनके चेहरे पर मूर्खता-भरी, बालवत कातरता थी।

“प्रिय, तुम मुझे गलत समझ रही हो,” वे असहाय होकर उसके बालों और कंधों पर हाथ फेरते हुए धीरे से मुस्कुराते हुए बोले। “मुझे क्षमा कर दो, मैं अन्यायी था और मुझे अपने आपसे और उन सबसे घृणा है जो तुमसे घृणा करते हैं! यदि तुम भव्य विवाह चाहती हो; तो वैसा ही होगा और हम तुम्हारी इच्छानुसार पूरे नगरवासियों को भी आमंत्रित करेंगे!”

इसने बड़ी अच्छी चाल चली, भीष्म ने सोचा। इसका अर्थ है, इसे भव्य समारोह चाहिए। भीष्म को उस औरत के प्रति अपने पिता का दासभाव देखकर, अत्यन्त खीझ हो रही थी, और काली की कपट की गहराई से भी।



मत्स्यगंधा का इच्छानुसार विवाह अत्यन्त भव्य था। विवाह की विधियाँ राजमन्दिर के शान्त परिसर के अन्दर सम्पन्न हुईं। विवाह समारोह में देवव्रत और कुछ गिने-चुने वरिष्ठजनों ने ही भाग लिया, पर उसके बाद के उत्सव सभी के लिए खुले थे। राजपुरोहित, देवपि ने विवाह का अनुष्ठान करवाने से मना कर दिया था, और उनकी अनुपस्थिति काली के लिए उनके उबलते आक्रोश को स्पष्ट कर रही थी।

नव-वधु अपने नए गहनों में अत्यन्त सुन्दर लग रही थी, और भीष्म उसे दुल्हन की पोषाक में पहचान ही नहीं पा रहा था। समारोह अत्यन्त भव्य था और उसने अपने आपको उपयुक्त ढंग से सजाया था; राज-वधु के रूप में भीष्म को मानना पड़ा कि वो बहुत सुन्दर थी और विजयोल्लास से दमक रही थी। काली अपनी प्रसन्नता को नियंत्रित नहीं कर पा रही थी और उसके आनन्द की चमक उसके गहनों से कहीं अधिक थी।

पूरा राजमहल सजा हुआ था और चारों ओर मोगरे के फूलों और धूप की सुंगंध फैली हुई थी। पीले गेंदों के फूलों की दमक हर कोने में प्रज्ज्वलित दीयों की चमक के साथ सम्मलित हो रही थी। काली को उसके कक्ष से सूरज के प्रकाश से खिले आंगन से होते हुए गोलाकार द्वारों से होते हुए बड़े से उपवन के बीच खड़े मन्दिर तक ले जाया गया। छह थके हुए पुरोहित उसे उपेक्षापूर्वक घूर रहे थे।

ये तो उत्सव नहीं, शोक जैसा अधिक लग रहा है। आशा है मुझे इससे भव्य अन्त्येष्टि दी जाएगी, उसने विनोदपूर्वक सोचा। मैं ऐसी कई छोटी-छोटी लड़ाइयाँ हार जाऊँगी, पर मैं युद्ध जीत गई। मैं हस्तिनापुर के राजा से विवाह कर रही हूँ और शीघ्र ही

रानी के रूप में अभिषिक्त हो जाऊँगी... आज काली का सत्यवती के रूप में पुनर्जन्म होगा।

भीष्म यज्ञ की अग्नि को देखते हुए अपने पिता के पास बैठा था। वो समारोह में उदासीन भाव से भाग ले रहा था, जबकि सारी तैयारियाँ उसने स्वयं की थीं।

‘वो क्या सोच रहा होगा? उस राजकुमारी के बारे में जिससे उसका विवाह होने वाला था? वो सब कुछ जो उसने खो दिया? काली को उसी अपरिचित भावना का अनुभव हुआ : जब भी वो भीष्म को देखती, उस भाव से सन्तप्त हो जाती। क्या ये उसका अपराधबोध था? या ऐसा कुछ, जिसे वो समझ नहीं पा रही थी। उसे अपने विजय के क्षण पर घृणा हो रही थी, जिसे इस अज्ञात भाव ने भंग कर दिया था।

यज्ञकुंड के सामने बैठकर, उसने भीष्म की ओर दृष्टि उठाई, और उसे अपने पास बुलाया। वो उसके पास आया और अपने कान उसके पास झुकाकर खड़ा हो गया। काली ने उसके कानों में कहा, “मैं जानती हूँ कि कोई भी इस विवाह से प्रसन्न नहीं है, पर क्या ये सम्भव है कि एक सप्ताह तक हस्तिनापुर के हर घर में राजमहल की रसोई से भोजन भेजा जाए? मछुआरों के समुदाय में भी? उन्हें भी इस समारोह का हिस्सा बनने की इच्छा होगी,” वो रुखेपन से बोली।

“हाँ, अवश्य,” भीष्म नीरसता से बोला, पर काली को उसके स्वर में स्वीकृति की झलक दिखाई दी। काली ने उसे किसी दरबारी को आदेश देते देखा। काली ने आह भरते हुए अपना ध्यान वापस विधियों पर लगाया। उसे केवल इन्हीं की आशा थी, देवब्रत का सम्मान और लोगों का आशीर्वाद। पर उसकी स्वीकृति काली के लिए इतनी महत्वपूर्ण क्यों थी?

कृपा ने कठोरतापूर्वक कहा, “मंत्रोच्चार के समय बातें मत करो। ये विवाह और निष्ठा के मंत्र हैं।”

कृपाचार्य अत्यन्त रुखे लग रहे थे, यज्ञ के समय काली को भीष्म से बातें करते देख अपमानित अनुभव कर रहे थे। वे बहुत लम्बे थे और युवा भी, उनकी नाक लम्बी और सीधी थी, आँखें गहरी और मेधावी थीं, उनका माथा गोलाकार था, जो उनके सुन्दर चेहरे के तिरस्कारपूर्ण भाव को और भी तीव्र कर रहा था।

काली सहम गई, उनकी डांट से आहत, वो निराशा से व्यग्र होकर इधर-उधर देखने लगी।

उस विशाल अस्नेही राजमहल में उसे अचानक एकाकीपन का अनुभव हुआ। उसके पिता अस्वस्थ थे और हस्तिनापुर तक की यात्रा नहीं कर पाए; जबकि भीष्म शिष्टापूर्वक उनके लिए विशेष रथ भेजने के लिए तैयार था। दशराज ने आने से मना कर दिया, और उसकी माँ के चाँदी के पायल उपहारस्वरूप उसके लिए भेज दिया। काली ने वो पायल पहने थे; चाँदी की पतली तार में चाँदी की दो सुन्दर मछलियाँ

आपस में गुथी हुई थी। उन्होंने अपना वचन निभाया था; कि एक दिन वे उसे रानी बनाकर रहेंगे। पर उसके पिता चाहते थे कि काली विवाह के पश्चात् अपने पैरों पर खड़ी रहे और सब कुछ सँभाल ले। काली को राजमहल का वातावरण किसी युद्धभूमि जैसा लग रहा था। सभी अधिकारी और मंत्री उदासीनतापूर्वक सभ्य थे, और राजमहल के कर्मचारी रूखे और द्वेषी। केवल विभा को छोड़कर, सोलह वर्षीय लड़की, जिसे काली की निजी सेविका के रूप में नियुक्त किया गया था।

मुझे इतने भयानक विचार क्यों आ रहे हैं? काली परिस्थिति को अवश्य बदलेगी और अत्यन्त शीघ्रता से। उसने अपने आपसे प्रण किया। वो इन लोगों को अपने सामने झुकने पर विवश करके रहेगी!

विवाह का दिन कष्टप्रद तो था ही, अब विवाह की पहली रात्रि उसके सामने मंडरा रही थी। उसकी उँगलियाँ मुट्ठी में कस गई—अब मुझे शान्तनु के साथ सम्भोग करना ही होगा। छिपते-छिपाते चुम्बन, बेधड़क झपटे, झाड़ियों में छिपकर छेड़-छाड़ नहीं, बल्कि प्रेमिका और प्रेमी की तरह; पत्नी और पति की तरह; नववधू और वर की तरह।

काली जानती थी वो काम-क्रीड़ा में पारंगत थी, फिर भी, वो अस्थिर और अशान्त होकर थोड़ी कांप-सी गई। शान्तनु के क्लांत चेहरे पर उनकी क्षीण सुन्दरता की झलक अभी भी शेष थी, पर वो इस बात को नहीं भुला पा रही थी कि वे वृद्ध और झुर्रिदार थी... वो अपने ऊपर उनकी शुष्क और रूखी त्वचा के स्पर्श को याद करके सिहर गई, उनके गीले होंठों का उसके होंठों पर स्पर्श, उसके चेहरे पर उनकी बेस्वाद और नीरस सांसें... नहीं! अब वो ये सब नहीं झेल सकती; केवल आज रात ही नहीं, पर अब से उसके जीवन के हर दिन उनके साथ...

पर उसे करना ही पड़ेगा। वो उनकी रानी थी और ये उसका कर्तव्य था। रानी के रूप में उसकी प्रतिष्ठा तब तक अनिश्चित ही रहेगी जब तक वो उत्तराधिकारी को जन्म नहीं दे देती। और उसके लिए, उसे अपने राजा के सामने आत्मसमर्पण करना ही होगा, प्रतिदिन...

उसे द्वार के खुलने की आवाज़ आयी, और उसने भीष्म को अपने पिता के साथ शयनकक्ष में प्रवेश करते देखा। उन दोनों को देखकर उसकी सांसें थम गईं। शान्तनु, थके हुए, अपने पुत्र का सहारा लिए, झुके हुए, मदोन्मत्त खड़े थे; और भीष्म लम्बा, युवा, सुन्दर, संकोच-भरी मुस्कुराहट, आँखों पर गिरती बालों की लट और गूढ़ आँखों के साथ स्थिर खड़ा था।

क्या देवव्रत अपने झुके हुए नेत्रों से उसकी मनोस्थिति देख सकता था? काली ने अपने होंठ दबाते हुए झट से मुँह फेर लिया। यही इस परिस्थिति के लिए उत्तरदायी था, वो अनुचित कटुता से मौनपूर्वक चिल्लाई, और उसकी आँखों में क्रोधपूर्ण आँसू चुभने लगे। वही उसे हस्तिनापुर लाया था, वही उसके लिए बाबा से लड़ा था, इसी ने उसका

विवाह अपने पिता के साथ रचाया था, और अब वही अपने पिता को अपनी नववधु उसकी माता, के शयनकक्ष तक लेकर आया था, काली ने कूरतापूर्वक सोचा।

काली ने अपनी आँखें कसकर भींच लीं, उसके अन्दर निराशा की लहर दौड़ गई। मैं राजा से पहले क्यों मिली, राजकुमार से क्यों नहीं, उसने भीष्म को कक्ष से बाहर जाते हुए देखकर सोचा। अचानक वो अकेलेपन से भर गई।

उसे शान्तनु के पसीने से गीले हाथ अपने कंधों पर अनुभव हुए और उसने बलपूर्वक उनकी तरफ देखा। वो फिर से कांप गई। उसे अब वो सब कुछ स्पष्ट दिख रहा था जो आज तक उसने नहीं देखा था : उनकी नीरस आँखों के कोने पर पड़ी लकीरें, उनका झुर्रीदार चेहरा, ढीले जबड़े जो उनके चेहरे को क्षीण भाव देते थे, उनके नम, लटकते होंठ, ये सब किसी बिगड़े हुए मनुष्य के चिह्न ही नहीं, उनके निरन्तर खाँसने का परिणाम भी थे। काली ने, उन्हें और राजमुकुट को पाने की लालच में इन सभी लक्षणों को अनदेखा कर दिया था।

काली को कथित रूप से इस मनुष्य के प्यार में होना चाहिए था। पर ऐसा नहीं था, वो किसी से भी प्रेम करने में असमर्थ थी। किसी से प्रेम करने के लिए लड़खड़ाना पड़ता है, ठोकर खानी पड़ती हैं; और मैं कभी भी लड़खड़ाने या गिरने वालों में से नहीं हूँ। उसने गम्भीरतापूर्वक विचार किया। पर राजा पर स्वामित्व पाने के लिए, उसे स्वयं को समर्पित करना होगा।

जैसे ही उसने शान्तनु को अपने ऊपर लेटा हुआ पाया, वो निराशा से भर गई। भीष्म के मुस्कुराते, युवा चेहरे, उसकी भूरी आँखें, उसके आकर्षक होंठों की छवि उसके सामने आ गई। भीष्म उसकी कानों में उपहासपूर्वक फुसफुसा रहा था, “मातो!”

उसने अपनी आँखें बलपूर्वक बन्द कर लीं। अब अन्तिम विधि पूर्ण करने का समय आ गया था।

## रानी

उस दिन से, वो काली नहीं रही; सत्यवती, शान्तनु की पत्नी बन गई थी। परन्तु, अब तक, राजमुकुट से सम्मानित, उनकी रानी नहीं बनी थी। सत्यवती सोने से सजे छत को देखती हुई लेटी थी, जब उसे अपने बगल में हरकत महसूस हुई। शान्तनु उसके पास, थके-हारे, ये सोचते हुए लेटे थे कि आज तक किसी औरत ने उन्हें अपनी नई दुल्हन की तरह अभिभूत नहीं किया था।

सत्यवती अचानक क्रोधित गर्जना की आवाज़ सुनकर चौंक गई। वो भय से तन गई। शान्तनु खिड़की तक पहुँचकर बाहर की ओर देख रहे थे। क्या आज का दिन भी कल की तरह ही कष्टप्रद होने वाला था? वो जानती थी कि उसने शान्तनु को सन्तुष्ट कर दिया था, पर वो बीती रात की छवि याद करके सिहर गई। अब उसे ऐसी अनगिनत रातें गुजारनी होंगी।

“क्या बात है?” उसने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

“राजमहल के बाहर जन-समूह इकट्ठा हो गया है,” वे संक्षिप्त रूप से बोले।

“अपने सैनिकों से कहकर उन्हें बन्दी बना लीजिए,” उसने अंगड़ाई लेते हुए कहा। वो शय्या से, दुशाला को लपेटते हुए उतरी और उनकी ओर बढ़ी; शान्तनु उसके सुन्दर और सुडौल पीठ, कमर और उसकी लम्बी, पतली टांगों को देखते खड़े रहे; उनके अन्दर लालसा की लहर दौड़ गई।

“बस, कुछ शोर-गुल है। देव सँभाल लेगा,” वे लापरवाही से बोले, और उसे कमर से पकड़कर विशाल शय्या की तरफ ले जाने लगे। “सुबह का आरम्भ किसी अच्छी बात से करते हैं, “कहते हुए उन्होंने अपने होंठ उसके होंठों पर रख दिए। उसे अपनी ओर खींचते हुए वे अपने हाथ उसकी पीठ पर फेरने लगे। उसकी दुशाला को हटाकर उन्होंने उसकी कमर को पकड़ लिया। काली ने अपनी आँखें बन्द कर लीं। उनकी उँगलियाँ उसके शरीर को जकड़ रही थीं और उसे उबकाई-सी आने लगी। वो तन गई और उन्हें हाथों से धकेलती हुई कठिनाई से मुस्कुराती हुई बोली, “क्या आपको देरी नहीं हो रही है? आज भी बहुत कार्य करने हैं...”

“हाँ, तुम्हारा रानी के रूप में राज-तिलक करना है,” वे उससे दूर होते हुए, गहरी सांस लेते हुए बोले। “पर यह अत्यन्त संक्षिप्त और सादा समारोह होगा, हमारे विवाह

की तरह नहीं। यह तो मात्र औपचारिकता है।”

काली थोड़ी तनावमुक्त हो गई। “मुझे लगता है बाहर खड़े जन-समूह के बारे में कुछ करना ही होगा, वे अत्यन्त अप्रसन्न प्रतीत होते हैं।”

प्रजा ही नहीं, राजदरबार के अधिकारी और वरिष्ठजन भी अप्रसन्न थे। दरबार में और आम लोगों में राजा शान्तनु की कड़ी आलोचना हुई थी, क्योंकि उन्होंने युवराज को अपना उत्तराधिकारी नहीं बनाया था। भीष्म को लोगों का सामना करना पड़ा और उन्हें समझाना पड़ा था कि वो उसका व्यक्तिगत निर्णय था, और उसके पिताजी दोषी नहीं थे। पर, ऋषि देवपि आश्वस्त नहीं थे, और उन्होंने भीष्म से प्रश्न किया, कि यदि भविष्य में आने वाला उत्तराधिकारी योग्य नहीं हुआ तो इसका उत्तरदायी कौन होगा। भीष्म ने फिर एक और प्रण लिया : कि वे सदा राजसिंहासन पर बैठें किसी भी व्यक्ति की सेवा और मार्गदर्शन करेंगे। कोई भी खुश नहीं था। राजमहल के पास जमी भीड़ भी उद्घोष करने लगी।

“ भीष्म! भीष्म! हमारे राजकुमार! हमारे राजा! ”

सन्देश स्पष्ट था : प्रजा केवल भीष्म को ही चाहती थी।

“ये लोग इस तरह कब तक विरोध करेंगे?” काली ने शान्तिपूर्वक पूछा।

“जब तक वे तुम्हें स्वीकार करना नहीं सीख जाते। हमें,” शान्तनु सुधारते हुए बोले। उनका चेहरा भी उनकी आवाज़ जितना ही थका हुआ था। “इन सब बातों को अपनी खुशी के आड़े मत आने दो।”

आज वे असामान्य रूप से चिन्तित लग रहे थे। क्या उन्होंने उसकी कुछ देर पहले की और कल रात की अरुचि भाँप ली थी? उसने तो छिपाने का बहुत प्रयत्न किया था। या ये आने वाले दिन के बारे में कोई संकेत था, जब उसे रानी के रूप में अभिषिक्त किया जाने वाला था। क्या वे अभी से अपने निर्णय पर पछता रहे थे?

एक सेवक ने आकर भीष्म की उपस्थिति की सूचना दी। भीष्म ही वो पहले व्यक्ति थे जिन्हें शान्तनु उठते ही सबसे पहले मिलते थे, और आज भी वही हुआ। सत्यवती पिता और पुत्र को अकेला छोड़कर बाहर टहलने चली गई। वो एक किशोर लड़की को अपने कक्ष में खड़ी देखकर चौंक गई।

“मैं कृपि हूँ” लड़की ने मुँह फुलाते हुए कहा।

“पर तुम हो कौन?” सत्यवती ने शान्तिपूर्वक पूछा। “तुम्हारे आने की तो कोई सूचना नहीं दी गई।”

उस लड़की ने भौंहें उठाते हुए कहा, “मेरे आने की सूचना देने की कोई आवश्यकता नहीं है। मैं यहीं रहती हूँ, रानी दासेयी; तुम यहाँ नई आयी हो।”

सत्यवती इस स्पष्ट निरादर से दंग रह गई। ‘दासेयी’ का अर्थ था—दासों में से एक, आदिवासी औरत। “और तुम, जो भी हो, तुम्हें कुछ शिष्टाचार सीखना चाहिए,”

सत्यवती रूखेपन से बोली। “मेरा नाम सत्यवती है।”

कृष्ण उसे मौनपूर्वक घूरती रही, और सत्यवती के सुडौल काया को धृणापूर्वक देखा। सत्यवती उसके निशब्द आंकलन को समझा गई : यह धृष्ट लड़की स्पष्ट रूप से उसे दुष्ट मोहिनी समझती है जिसने राजा को मोह लिया।

“मैं जानती हूँ। सत्यवती के नाम से तुम सत्य का प्रतीक हो,” कृष्ण धीरे से बोली, पर उसके शब्दों का तात्पर्य बिलकुल विपरीत था। “तुम तो काली के नाम से प्रसिद्ध हो। मैंने तो राजा को तुम्हें मत्स्यगंधा कहकर बुलाते हुए भी सुना है, और तुम अपनी उपस्थिति तुम्हारे... सुगंध...” उसने उस बात को ऐसे कहा मानो नई रानी से आने वाली गंध सड़न से आने वाली दुर्गंध थी।

“... मैंने तुम्हें दासेयी कहकर कोई गलती तो नहीं की। तुम तो मछुआरे दशराज की पुत्री हो, है न?” कृष्ण ने झूठे भोलेपन के साथ पूछा।

“मैं सत्यवती कहलाना पसन्द करूँगी,” नई रानी ने रुखाई से कहा।

“तो क्या तुम अपने पिता की पुत्री नहीं?” कृष्ण ने व्यंग्यपूर्वक पूछा।

सत्यवती कुछ नहीं बोल पायी, वो फँस गई थी। “रानी दासेयी, आज तुम्हारा रानी के रूप में राजतिलक होने वाला है, और मैं तुम्हें विधियों के विषय में निर्देश देने आयी हूँ,” कृष्ण ने समझाते हुए कहा। “मैं तुम्हारी प्रशिक्षिका हूँ।”

सत्यवती अपना विस्मय नहीं छिपा पायी। “क्या तुम ऋषि हो?” उसने स्पष्ट आश्वर्य के साथ पूछा। वो लड़की तो बहुत छोटी थी, कदाचित बारह-तेरह वर्ष की...

“मैं ऋषि की पुत्री हूँ,” कृष्ण ने सुधारते हुए कहा। “मैं स्वयं विदूषी हूँ, और शास्त्रों में पारंगत, और राजदरबार के दैनिक कारभार से भी अवगत हूँ। तो आरम्भ करें?”

जब कृष्ण उसे कुछ विधियाँ समझा रही थी, सत्यवती उसके आत्मविश्वास की प्रशंसा किए बिना नहीं रह पायी। उसने कृष्ण को ध्यानपूर्वक देखा। वो विवेकपूर्ण तरीके से सुन्दर थी। उसकी त्वचा विवर्ण थी, और उसकी मुखाकृति तीक्ष्ण और व्यवस्थित। वो सुन्दर कम और बुद्धिमान अधिक थी, व्यवहार शैली में भी। उसका गोरा रंग, तीखी सीधी नाक और सतर्क आँखें थीं। कृष्ण दुबली-पतली और छोटे कद की थी, पर उसका अहंकार उसकी इस कमी को पूरा कर रहा था, सत्यवती ने चिढ़कर सोचा।

काली ने एक घंटे बाद पूछा। “क्या आज का कार्य पूरा हो गया?”

कृष्ण उसे दयनीय ढंग से देखती हुई बोली, “स्पष्ट है, रानी दासेयी, कि तुमने आज तक उपनिषदों और वेद मंत्रों को पढ़ा नहीं है, मुझे तुम्हें उनके विषय में परिचित कराना होगा,” वो सरलतापूर्वक बोली। “और चूँकि तुम रानी बनने वाली हो,” वो तीखेपन से आगे बोली, “शीघ्रता से प्रारम्भ करना ही योग्य है। हाँ! राजनीति तो तुम्हारे लिए सरल विषय होगा, पर तुम्हें अपने आपको अन्य विषयों में भी शिक्षित करना होगा। और राजा शान्तनु ने मुझे तुम्हारी शिक्षिका के रूप में नियुक्त किया है,” कृष्ण बलपूर्वक बोली।

सत्यवती ने उसके व्यंग्य पर कोई उत्तर नहीं दिया। “पर, स्वयं कृपाचार्य क्यों नहीं?” सत्यवती ने पूछा। अचानक उसे ध्यान आया कि ये लड़की थोड़ी परिचित-सी क्यों लग रही थी। ये विवाह के समय गुरु कृपाचार्य के आसपास घूम रही थी, और उनके साथ मंत्रपाठ भी कर रही थी। अच्छा तो ये कृपाचार्य की बहन हैं!

“उन्हें राजदरबार के अन्य महत्वपूर्ण कार्य हैं, रानी दासेयी,” कृपि भावशून्यता से बोली।

कृपि द्वारा ‘रानी’ और ‘दासेयी’ शब्दों के द्वेषपूर्ण संसर्ग को सुनकर वो अचम्भित रह गई, पर सत्यवती को सदा ही साहस पसन्द था और उसके सम्मुख एक अत्यन्त साहसी लड़की खड़ी थी। स्पष्ट रूप से कृपि राजमहल की सबसे प्रभावशाली व्यक्तियों में से एक थी।

~

कृपि ने दृढ़तापूर्वक इस बात का ध्यान रखा कि सत्यवती राजतिलक समारोह के लिए उपयुक्त वस्त्र पहने : सत्यवती ने सेविकाओं को निर्देश दिया कि वे उसे सुनहरे और सिंदूरी रंग के वस्त्र पहनाएँ।

“लाल अधिक श्रेष्ठ रहेगा। तुम अभी भी दुल्हन हो,” कृपि ने कपटपूर्ण तरीके से कहा। सत्यवती को बहुत क्रोध आ रहा था, पर लम्बे, सुनहरे दर्पण में अपनी छवि देखकर वो खुश हो गई। वो ज्वलन्त लाल रेशमी वस्त्रों में अत्यन्त तेजस्वी लग रही थी। उसके वस्त्र उसकी भरी-पूरी काया पर कसकर लिपटे हुए थे और उन पर की गई सुनहरी कढ़ाई उसकी दमकती त्वचा पर प्रतिबिम्बित हो रही थी।

“सिर पर कम गहने ही पहनना, रानी दासेयी, क्योंकि तुम शीघ्र ही राजमुकुट पहनने वाली हो,” कृपि ने कठोर स्वर में सूचित किया। “वो बहुत भारी हो सकता है।”

सत्यवती को समझ में नहीं आ रहा था कि उसे कड़ा प्रत्युत्तर देना चाहिए या रानी होते हुए उदारतापूर्वक विनम्र रहना चाहिए। उसने झट से उत्तर दिया, “मैंने जीवन का भार इतने वर्षों तक, इतनी सफलतापूर्वक उठाया है तो मैं जानती हूँ कि राजमुकुट पहनना कठिन नहीं होगा।” उसने कृपि के चेहरे पर आश्वर्य को देखकर निर्णय किया कि बालों पर अधिक गहने नहीं पहनेगी। चाँदी की थाल पर इतने भिन्न-भिन्न तरह के गहने थे कि वो ये सोचकर विस्मित रह गई कि इनका निर्माता कितना प्रवीण होगा! बालों की हरेक लट, और शरीर के हर अंग के लिए अलग-अलग गहने थे!

कुछ घंटों बाद सत्यवती पहली बार राजदरबार में प्रविष्ट हुई। उस भवन की भव्यता देखकर उसके होश उड़ गए। भवन के दोनों तरफ ऊँचे स्तम्भों से सुसज्जित पथ थे। हरेक संगमरमर के स्तम्भ पर अप्रतिम नक्काशी की गई थी और उनमें रंग-बिरंगे

रत्न जड़े हुए थे। भवन के वैभव और शोभा को देखकर वह स्तब्ध थी—तो यही राजसी भव्यता थी जो उसे हर पत्थर, ईंट और स्तम्भ में दिख रही थी, और वो अपने आपको उसकी तुलना, अपने टूटे-फूटे घर तक जाती मैली-कुचली गलियों से करने से नहीं रोक पायी।

सत्यवती ने उस याद को भुलाने के लिए अपने आपको झकझोरा। वो ऐसी स्मृति थी जिसका बोझ वो और नहीं उठाना चाहती थी। वो एक नए संसार में प्रवेश करने वाली थी : राजा की पत्नी बनकर, और अब, हस्तिनापुर की रानी बनकर।

राजमहल की दीवारों की दूसरी तरफ से उसे विरोध और निंदा से भरी नारों की आवाज़ आयी, जो ऊँचे गुम्बदों और दमकती दीपवृक्षों से टकराती हुई उसे याद दिला रही थी कि वो इस समय हस्तिनापुर की सबसे घृणित व्यक्ति थी। कोई भी प्रसन्न नहीं था; राजभवन में उपस्थित एक भी व्यक्ति नहीं। वो उनके लिए मात्र एक अवसरवादी थी; जिसने युवराज से उसका राजमुकुट छीन लिया था। पर, सत्यवती परिस्थिति को बिलकुल भिन्न रूप से देख रही थी। सब एक ऐतिहासिक अवसर को देखने के लिए विवश थे—एक साधारण मछुआरिन रानी बन गई थी। एक अवैध, अस्वीकृत और तुच्छ अनाथ बालिका ने विश्व को उसे रानी के रूप में स्वीकृत करने पर विवश कर दिया था। मत्स्यगंधा अब रानी थी। काली अब रानी सत्यवती थी!

उसने भीष्म को झुकते हुए उसकी ओर आते देखा। उन्होंने एक दूसरे पर दृष्टि डाली। “तुम्हें मुझे अपरिचित बनाने की आवश्यकता नहीं है,” वो सावधानीपूर्वक बोली। “अब तो हमें एक दूसरे से मिलते रहना होगा; इसलिए अच्छा है कि हम, स्नेहपूर्ण न सही, शिष्ट तो रहें।” देवव्रत ने उसे ऊँगली से अपने निचले हाँठ को दबाते देखा; उसका चेहरा विचारमग्न था। देवव्रत को ध्यान आया कि यह उसकी आदत थी, खासकर जब भी वो चिन्तित होती या विचार कर रही होती।

देवव्रत अचानक ऊँखें मिचकाते हुए हल्के से हँस पड़ा।

“ये आपका दिन है माते,” वो भावशून्यता से बोला, और उसे राजसिंहासन की ओर ले गया। “आप मेरे पिताजी की रानी बनेंगी।” कृपाचार्य उसे राजा के सिंहासन के बगल वाले सिंहासन पर विराजमान होने के लिए कह रहे थे, पर वो उनकी आवाज़ ठीक से सुन नहीं पा रही थी। वो हिचकिचाते हुए उस पर बैठी, और जैसे ही कृपाचार्य के मंत्रोच्चार के बीच गम्भीर मुद्रा में शान्तनु ने उसके शीर्ष पर मुकुट रखा, उसका हृदय प्रफुल्लित हो उठा। कृपि पास ही में शान्त खड़ी थी, और उसके पीछे भीष्म था, सुन्दर, शिथिल संगमरमर की मूर्ति समान। सत्यवती ने तुरन्त मुँह मोड़ लिया, उसकी मुस्कुराहट गायब हो गई और वो इस विजय के क्षण में उसका सामना नहीं कर पा रही थी।

जैसे ही राजमुकुट उसके सिर पर रखा गया, उसके अन्दर शक्ति की लहर-सी दौड़ गई। शक्ति और अधिकार को अक्सर घातक, संकटमय, और अदृश्य संचालक समझा जाता है। वो इस बात से भली-भौंति परिचित थी; वो उसका प्रयोग कर रही थी, उसका अनुभव कर रही थी। सिर पर मुकुट पहनी, सिंहासन पर बैठी हुई, ये उसी अदृश्य शक्ति का मुखर प्रदर्शन था—अत्यन्त मादक और प्रेरक।

सत्यवती ने धीरे से शान्तनु के निकट अपने सिंहासन को देखा। निस्सन्देह, मुख्य सिंहासन एक के लिए ही था—मात्र राजा के लिए। अब तक, राजा का साथ देने के लिए कोई रानी थी ही नहीं।

“हमें बड़े सिंहासन की आवश्यकता है,” उसने कृपाचार्य से अभ्यस्त मुस्कुराहट के साथ कहा। “हम दोनों को एक साथ बैठने के लिए,” वो सौम्यता से बोली, उसकी वाणी में साम्राज्ञी से अपेक्षित दम्भ की झलक स्पष्ट थी।

“हो जाएगा, रानी दासेयी,” कृपि ने झूठे सम्मान के साथ कहा।

एक क्षण के लिए वहाँ स्तब्ध मौन छा गया। शान्तनु अचम्पित थे, पर कुछ नहीं बोले। उस क्षण से सभी उसे रानी दासेयी कहकर सम्बोधित करने लगे, मानो उसे याद दिलाना चाहते हों कि राजमहल में उसका स्थान क्या था।

भीष्म खुश था की अच्छा ही हुआ उसके दोनों ताऊ इस दृश्य को देखने के लिए वहाँ उपस्थित नहीं थे : बहलिक और देवपि अपमान से बच गए थे। राजदरबार नई रानी की दयनीय प्रयासों के बावजूद उनका स्पष्टता से उपहास कर रहा था। भीष्म को अकस्मात् अपने पिता पर असीम क्रोध का आभास हुआ। शान्तनु ने, जैसा उनके भाई कहते थे, अपने आपको निर्बल प्रमाणित कर ही दिया था। उनका पुत्र अब उनकी निर्बलता का साक्षी था।

भीष्म ने देखा कि कृपि उसे देख रही थी; कदाचित पूरा संसार आज उसे देख रहा था, और उसके लिए दुखी था। उसे उनकी सहानुभूति की आवश्यकता नहीं थी, वो क्रोध से उबल रहा था। कुछ समय से ही सभी उसे सहानुभूतिपूर्वक देखने लगे थे। उसकी तीव्र इच्छा होती कि वो इन लोगों से, इस स्थान से और इस अन्तहीन त्रासदी से कहीं दूर भाग जाए।

उसे अपने पिताजी के वरदान की याद आयी। इच्छामृत्यु! वो जब चाहे मर सकता था। क्या मृत्यु ही इस नवनिर्मित नर्क से छुटकारा पाने का एकमात्र मार्ग था? क्या मृत्यु को स्वीकार करके इस दुर्भाग्यपूर्ण जीवन से बच जाना साहस की निशानी होगी? उसकी प्रतिज्ञा केवल सत्यवती के पिता के लिए नहीं थी, बल्कि हस्तिनापुर के लोगों के लिए भी थी जिनके साथ उसने विश्वासघात किया था। वो अपने वरदान को तब तक स्वीकार नहीं कर सकता, जब तक हस्तिनापुर योग्य हाथों में न हो। पर आज सुबह हुए

राजतिलक समारोह के दृश्य को देखकर, भीष्म कांप गया—क्या नई पत्नी के मायाजाल में जकड़े हुए उसके पिता योग्य शासक बन पाएँगे?

चूँकि वो स्वयं अपने पिता की इस परिस्थिति के लिए उत्तरदायी था, बहलिक की उलाहना से भाग नहीं सकता था : तुमने मुझे निराश किया है, देव, और हस्तिनापुर को भी। तुम महान राजा बन सकते थे, पर तुमने अपने पिता की जिद के लिए सब कुछ गँवा दिया। राजमुकुट के लिए तुम्हारे उत्तरदायित्व का क्या?”

स्वयं भीष्म ने इस लड़की को अपने पिता की पत्नी बनने की अनुमति दी थी; उसे रानी बना दिया था। इसके लिए वही उत्तरदायी था, और कोई नहीं। अब उसे क्रोधित होने का अधिकार नहीं। उसे इस अर्थशून्य भावना को अनुभव करने की विलासिता उपलब्ध नहीं थी। उसने अपने अपराधबोध को कम करने, और अपने पिता के दुख को कम करने के लिए उन्हें नया प्रेम भेंट किया था, ताकि वे गंगा के जाने के दुख को भुला सकें। उसने अपने पिता को उनका खोया समय, उनका खोया प्रेम और उनकी खोई खुशी लौटाने का प्रयत्न किया था। पर हस्तिनापुर और उसकी प्रजा की कीमत पर नहीं, बहलिक की क्रोधपूर्ण बातें उसके अशान्त मन में टौड़ी जा रही थीं।

उसने अपने माता-पिता को निराश किया था। जिस तरह उन्होंने भी किसी स्तर पर उसे भी निराश किया था। उसे अपनी माँ से इस बात की शिकायत थी कि उन्होंने उसे इस संसार में त्याग दिया था—अपने सात भाग्यशाली ढूबे अल्प-वयस्क और असहाय भाइयों के समान नहीं—बल्कि एक युवा के रूप में उनकी सुरक्षित, स्नेहमयी संसार को छोड़कर अपने पिता के अनिश्चित संसार में कदम रखने के लिए। अब उसे इस संसार के रीति-रिवाजों, इस राज्य से, उसके लोगों से, राजदरबार से और उसके अपरिचित परिवार से लगाव होने लगा था। पर एक-एक करके सब उससे दूर हो गए थे—उसके दोनों ताऊ, उसके पिता से अप्रसन्न होकर; उसके पिताजी इस साँवली सुन्दरी के लिए; पटरानी के लिए। उसके पिता ने भी उसे निराश किया था; ये सिद्ध करके कि ये स्त्री उनके लिए अपने पुत्र से कहीं अधिक महत्वपूर्ण थी। परन्तु, उसने अपने-आपको सबसे अधिक निराश किया था—वो अपनी विफलता का स्वयं ही कारण था। समारोह के समाप्त होते ही, वो गहरी सांस लेता हुआ राजदरबार से निकल गया।

सत्यवती ने भीष्म को जाते देखा; उसने अपना दमकते राजमुकुट से सजा सिर ऊँचा उठाया। उसका चेहरा शान्त था, कोई उसके अन्दर बह रही विजय की तरंग को नहीं देख सकता था, उसने बड़ी कठिनाई से आनन्द की लहर को नियंत्रित किया हुआ था। उसे अपने सिर पर कठोर और शीत मुकुट का स्पर्श अनुभव हो रहा था। मुकुट काफी भारी था, जबकि हीरों और मोतियों से जड़ित, वो मुकुट उसे कोमल लगा था।

“मुकुट तुम पर भी बहुत अच्छा लग रहा है,” शान्तनु ने उसे आश्वस्त करने का प्रयत्न करते हुए कहा। “गंगा को श्वेत रंग बहुत पसन्द था; उसे भड़कीले रंग बिलकुल

पसन्द नहीं थे।”

“मैंने उसका मुकुट पहना है?” वो चौंककर हकलाती हुई बोली।

उधार की रानी के लिए उधार का मुकुट, उसकी अन्तरात्मा ने टिप्पणी की। दूसरी रानी, दूसरी पत्नी और घुसपैठ। उसे इस सत्य को भुलाने नहीं दिया जाएगा।

उसकी खुशी जितनी शीघ्रता से आयी थी, उतनी ही शीघ्रता से लुप्त भी हो गई। वो गंगा का मुकुट पहनने वाली थी; उसने गंगा के पति को छीना था, उसकी जगह ले ली थी और उसकी भूमिका भी। गंगा के पुत्र को भी। गंगा! उसने खिड़की से, दूर बहती, झिलमिलाती नदी को देखा; उसकी शान्त उपस्थिति अब उसके जीवन का अभिन्न अंग बन गई थी। पर, अब वो सत्यवती थी, रानी थी, गंगा के पति—राजा शान्तनु की पत्नी, उसके पुत्र—भीष्म की माता।

उसका रक्त जम गया : उसे उस शब्द से अत्यन्त घृणा थी। वो उसकी माँ नहीं थी! जब भी भीष्म उसे उस तरह सम्बोधित करता, सत्यवती थोड़ी मुरझा जाती। वो उसके सबसे बड़े अपराध का सूचक था। वो ऐसे व्यक्ति की माँ कैसे बन सकती थी जो लगभग उसी की आयु का था और जिससे उसने उसका सब कुछ छीन लिया था—उसका प्रेम, जीवन, विवाह, सन्तान, राजमुकुट और राज्य? माँ तो वो होती है जो निस्वार्थ होकर सब कुछ दे देती है; उसने तो देवव्रत से सब कुछ ले लिया था।

उसने दोबारा भीष्म की दिशा में देखा, कृपि भी उसके पीछे चल रही थी। सत्यवती अचानक क्रोध से भर गई। कृपि ने उसे दासेयी नाम दे दिया था : दासी-रानी। वो निश्चित थी कि इस अपमान की गूँज राजमहल के बाहर भी दूर-दूर तक फैलेगी।

उसका विश्वास था की यदि वो शान्तनु से कहे, तो वे कृपि को उसकी सेवा से हटाने के लिए सहमत हो जाएँगे, पर उन्होंने स्पष्ट रूप से इनकार कर दिया। उन्होंने आज तक उसकी हर विनती, हर इच्छा पूरी की थी, पर वो उनकी असहमति देखकर चौंक गई थी। जहाँ तक कृपा और कृपि के साथ सम्बन्ध की बात थी, उनका हठ तर्कहीन था।

कृपि, राजा शान्तनु और राजकुमार, दोनों पर अपने प्रभाव की गहराई को जानती थी। यहीं उसे प्रकट रूप से विरोध करने का आत्मविश्वास देती थी। सत्यवती ने उसके बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त करने का निश्चय किया, जिसके अनुसार, कृपि और उसके जुड़वां भाई कृपा को शान्तनु ने गोद लिया था, जब वे उन्हें नदी के तट पर पड़े हुए मिले थे। तब दोनों बहुत ही छोटे थे। जैसे ही उसने ‘परित्यक्त’ शब्द सुना, उसका हृदय उन बच्चों के लिए पिघल गया। ये भी मेरे जैसे ही हैं, परन्तु, मुझसे अधिक भाग्यशाली, क्योंकि इनको मेरी तरह राजमहल की सुख-सुविधा और अधिकार भोगने के लिए कठिन संघर्ष नहीं करना पड़ा, उसने अपने आपसे कहा। उसके विपरीत, ये

भाई-बहन अवियोज्य थे; उसके जुड़वां भाई को मत्स्य का राजा बनाया गया था, जबकि वो तिरस्कारपूर्ण जीवन जीने के लिए विवश थी।

“जब मैंने उन्हें नदी के तट पर घास पर पड़ा देखा, मुझे मेरे सात खोए पुत्रों की याद आ गई...” शान्तनु ने अत्यन्त दुखभरी आवाज़ में उसे उनकी कहानी बताई थी। “मैं निसन्तान था, इसलिए मैं उन्हें घर ले आया और अपने बच्चों की तरह उनका पालन-पोषण किया। मुझे बहुत ढाढ़स मिला जब उन्होंने हस्तिनापुर में भीष्म का खुले हृदय से स्वागत किया।”

“उन्हें तो ऐसा करना ही था,” वो रूखेपन से बोली। “वे आपके दत्तक सन्तान हैं, शान्तनु, देव की तरह आपका रक्त नहीं।”

शान्तनु उसे विचित्र ढंग से देखते हुए बोले, “फिर भी दोनों देवत्रत से बहुत स्नेह करते हैं। कृष्ण उसे अपना बड़ा भाई मानती है और कृष्ण उसे अपना सबसे अच्छा मित्र।”

सत्यवती से उनकी आवाज़ में चेतावनी की झलक छिपी नहीं रही; उसे उन दोनों से मित्रता करनी ही पड़ेगी। भीष्म उससे अभी भी निर्लिप्त और विलग था। उसने अभी तक कृष्ण से स्वयं कोई बात नहीं की थी, पर उसने उसके लिए अपनी धृणा बिलकुल छिपाई नहीं थी। कृष्ण के लिए सत्यवती वो स्त्री थी जिसने उसके मित्र का भविष्य और सुख उससे छीन लिया था।

“क्या आपने पता लगाया कि इन्हें किसने त्यक्त किया था?” उसने शान्तनु से पूछा। कहीं इन्हें भी किसी निर्मम पिता ने ही तो नहीं त्याग दिया था?

“हाँ! कुछ वर्षों बाद, मैं ऋषि शरद्वान को राजमहल में देखकर चौंक गया। उन्होंने दावा किया कि बच्चे उनके और अप्सरा जानपदी के हैं। अप्सरा जानपदी को इंद्र ने ऋषि को लुभाने के लिए भेजा था। उसके छल से क्रोधित होकर, वे वन में चले गए और अपनी तपस्या पूरी की। वर्षों बाद उन्हें पता चला कि अप्सरा ने अपने जुड़वां बच्चों को त्याग दिया था। वे उनको छूँढ़ते हुए हस्तिनापुर तक पहुँच गए और उन्हें अपने साथ ले जाना चाहते थे, पर बच्चों ने जाने से मना कर दिया...”

“मैं उन्हें दोषी नहीं मानती,” सत्यवती ने व्यंग्यपूर्वक कहा।

शान्तनु ने कहा, “भगवान इंद्र ने शरद्वान का ध्यान भंग करने के लिए कई अप्सराएँ भेजीं, पर वे अडिग रहे। फिर भी जानपदी उनका ध्यान भंग करने में सफल हो गई। लोकवाद के अनुसार, उनका वीर्यपात हो गया, और वीर्य सरकंडे के समूह पर गिरकर दो भागों में विभक्त हो गया, जिससे एक कन्या और एक पुत्र का जन्म हुआ...”

सत्यवती की हँसी से वे रुक गए, “सचमुच, आप इन बातों पर विश्वास करते हैं? ऐसा लगता है यह दिव्य कथा ऋषि और अप्सरा के अवैध सम्बन्ध को गुप्त रखने के लिए गढ़ी गई है!” वो तिरस्कारपूर्वक बोली।

ये कथा उसके जीवन से बहुत मेल खाती थी; राजा और मछुआरिन की कहानी जिसे दिव्य प्रेम का स्वरूप दिया गया हो। “ये सब चतुर कथाएँ हैं जो गन्दे रहस्यों को छिपाने के लिए गढ़ी जाती हैं।”

शान्तनु नासमझी से त्योरी चढ़ाते हुए बोले, “तुम्हें जुड़वां बच्चों से इतनी सहानुभूति क्यों है?”

“मुझे उनकी परित्यक्तता की कहानी सुनकर बहुत दुख होता है,” वो हल्के से मुस्कुराती हुई बोली।

“वे त्यक्त नहीं थे! मैंने उन्हें गोद लिया, और उनके पिता शरद्वान उनके गुरु बने!”

मेरे पिता के विपरीत, जिन्होंने मुझे अपने जीवन और राजमहल से दूर कर देना ही ठीक समझा। यदि मैं अपने पिता से मिलूँगी, तो मेरी प्रतिक्रिया क्या होगी, सत्यवती विचार करने लगी। क्या मैं भी इन जुड़वां बच्चों की तरह उन्हें सरलता से क्षमा कर पाऊँगी?

“वे उनके गुरु थे?”

“शरद्वान बच्चों की अस्वीकृति से दुखी हो गए। मैंने उन्हें सुझाव दिया कि वे भी राजमहल में उनके गुरु के रूप में रहकर उन्हें शस्त्रों और युद्धकला का प्रशिक्षण दें।”

“पर, ऋषि को तो वेद और उपनिषद् की शिक्षा देनी चाहिए।”

“हाँ, वो भी, पर शरद्वान अद्वितीय थे,” शान्तनु विवरण देते हुए बोले। “वे ऋषि गौतम के पुत्र थे, और विलक्षण थे। कहते हैं, उनका जन्म धनुष-बाण के साथ हुआ था! वे बड़े होकर बहुत ही श्रेष्ठ धनुर्धर बने... जिसके कारण इंद्र भयभीत हो गए। मैंने उनके ज्ञान का लाभ उठाया; ऐसे बहुमूल्य ज्ञान को व्यर्थ कैसे जाने देता! अपने बच्चों को शिक्षित करके, वे हस्तिनापुर का ही भला कर रहे हैं।”

“इसीलिए आपने उनके पुत्र कृष्ण को राजपुरोहित नियुक्त कर दिया,” उसने चतुरता से पूछा। “और, आचार्य होते हुए, विरासत में मिले ज्ञान को वे हस्तिनापुर के राजकुमार और भावी पीढ़ी के साथ भी बांटेंगे?”

“हाँ अवश्य,” शान्तनु हामी भरते हुए बोले। “कृष्ण कोई सामान्य ऋषि नहीं है, उनकी पतली काया और अध्ययनशील नेत्रों पर मत जाओ। वे प्रशिक्षित क्षत्रिय हैं, अपने पिता से भी श्रेष्ठ; इतने श्रेष्ठ कि अकेले पूरी सैन्य-वाहिनी के साथ लड़ सकते हैं। उनकी तुलना तो स्वयं, युद्ध के देवता, भगवान कार्तिकेय से की जाती है, जिन्होंने असुरों को पराजित किया था। कृष्ण और देवव्रत की जोड़ी युद्धभूमि पर सशक्त सिद्ध होती है। पर वो देवव्रत की तुलना में कुछ नहीं हैं। कोई नहीं है!” शान्तनु गर्वपूर्वक बोले। देव को शरद्वान की आवश्यकता नहीं; उसे तो परशुराम, शुक्राचार्य और वशिष्ठ जैसे प्रख्यात विद्वानों ने प्रशिक्षित किया है। मेरा देव सर्वश्रेष्ठ है!”

सत्यवती मुस्कुराती हुई बोली, “तो अब कृष्णाचार्य हमारे बच्चों के गुरु होंगे?”

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

शान्तनु का चेहरा खिल गया और वे उसकी कलाई पकड़ते हुए बोले, “अवश्य! मैं उस दिन की व्यग्रता से प्रतीक्षा कर रहा हूँ।”

सत्यवती को भी उसी दिन की प्रतीक्षा थी। जैसे ही शान्तनु ने उसे शथ्या पर नीचे खींचा, वो विजयपूर्वक मुस्कुराई। उसे शान्तनु के रूखे होंठों का स्पर्श अपने होंठों पर अनुभव हुआ, उनके अधीर हाथ उसकी रेशमी अन्तरीय को खींच रहे थे, जैसे उन्हें कोई बहुत बड़ा कार्य पूर्ण करना था। उसे पता था कि वो क्या था। वो अब रानी बन गई थी, और उसे अपने राज्य के लिए उत्तराधिकारी को जन्म देना था।

## वारिस

अपने नवजात पुत्र को देखकर उसके अन्दर शीत लहर-सी दौड़ गई। सत्यवती को बहलिक द्वारा एक वर्ष पूर्व दी हुई चेतावनी याद आ गई।

“ ये लड़की रानी होगी, उस राजवंश की राजमाता होगी, जिसकी ये शुरुआत करने वाली है। तुम्हारे साथ-साथ, आगे से इसकी वंशावली भी होगी।”

उनके अमंगल सूचक शब्द उसके पिता की अभिलाषाओं के समान ही थे। यह शिशु कुरु सिंहासन का उत्तराधिकारी होगा, वो विजयपूर्वक मुस्कुराई। पर उसका एक और पुत्र भी था; जिसके विषय में कोई नहीं जानता था। यदि शान्तनु को पता चला तो वे क्या कहेंगे? उन्हें जानने की आवश्यकता ही क्या है? अज्ञानता ही उनके लिए परमानन्द होगा और उसके लिए वरदान। यदि आवश्यकता पड़ी तो वो उन्हें उस रहस्य के बारे में बता देगी, या ऐसे समय पर जब वो उसकी घोषणा कर सके। वो उसकी पहली सन्तान था, और सत्यवती को उसे जन्म देने पर कोई लज्जा नहीं थी। परन्तु ये सही समय नहीं था...

पराशर के साथ एक आकस्मिक भेंट में ही उसने अपना पूरा जीवन पलट दिया था। उसने अपने अतीत के दुर्गंध को भुला दिया था, और अपने सुगंध की तरह ही अपने जीवन को सुखद बना दिया था। सत्यवती को प्रेम और वासना की शक्ति का अनुभव हो गया था—वो इच्छापूर्ति के लिए साधन-मात्र थे। पहले पराशर, और अब शान्तनुः इन दोनों पुरुषों से उसे वो सब कुछ मिल गया जो वो पाना चाहती थी। कुछ लोग इसे अनैतिक भी कह सकते हैं, पर नैतिकता का आविष्कार भी पुरुषों ने अपने लाभ के लिए ही किया था। यदि पुरुष नारियों का उपयोग कर सकते हैं, तो उसका उल्टा भी तो सही हो सकता है? काम-वासना और सौन्दर्य ऐसे शस्त्र थे जिनका प्रयोग उसने विरोध और प्रतियोगिता, दोनों में किया था। उस शस्त्र का परिणाम इस समय उसके हाथों में था। और उसका पहला पुत्र भी। दोनों अपने भाग्य और भविष्य के नायक होंगे—एक राजा होगा और दूसरा ऋषि—दोनों की रगों में एक मछुआरिन माँ का लहू दौड़ रहा था।

सत्यवती को अपने पहले पुत्र, कृष्णद्वैपायन की याद आ गई। वो इस समय कहाँ होगा? अपने पिता पराशर और परदादा ऋषि वशिष्ठ के साथ भ्रमण करता हुआ वेदों

का ज्ञान प्राप्त कर रहा होगा? उसके पुत्र को महान विद्वानों का ज्ञान विरासत में प्राप्त हुआ था, और सत्यवती निश्चित जानती थी कि वो उसमें और वृद्धि करेगा।

अपने कमजोर और असुरक्षित क्षणों में वो उसे इतनी सरलता से पिता के पास भेज देने पर पछतावे से भर जाती। क्या वो भी अपने पिता से उतना ही द्वेष करेगा जितना वो स्वयं अपने पिता से करती थी? यही उसका सबसे बड़ा भय था। वो उसके साथ करीब एक सप्ताह के लिए ही था—साँवला, शान्त और दुबला-पतला बच्चा; इस गोरे पुत्र से बिलकुल विपरीत, जिसे उसने कसके अपनी छाती से लगा रखा था, इस प्रतिज्ञा के साथ, कि वो उसे अपने से किसी भी स्थिति में दूर नहीं होने देगी। सत्यवती ने अपने पुत्र को प्रेमपूर्वक निहारते हुए सोचा, वो हर तरह से राजकुमार था—जोशीला और निरंकुश; उसकी हल्की, म्लान त्वचा उसके रुष्ट क्रंदन से लाल पड़ जाती थी। उसमें अभी से हठीले होने के लक्षण दिख रहे थे; वो राजमहल, के बाहर से आने वाले शोर से जगाए जाने पर क्रोधित होकर चीख रहा था।

सत्यवती एकाएक खिजलाहट से भर गई। आज, दोबारा राजमहल के द्वार पर खड़े आक्रोशित लोगों के शोर से उसके बच्चे और उसकी निद्रा भंग हो गई थी। एक वर्ष से अधिक का समय हो गया था, फिर भी राजमहल के अन्दर और बाहर उसके लिए द्वेष उबल ही रहा था।

उसने कई बार उनका मन जीतने का प्रयत्न किया, परन्तु हर बार उसे निर्दयतापूर्वक ठुकरा दिया गया था। बाहर से आने वाले क्रुद्ध उद्घोष की आवाजें उनकी अप्रसन्नता के स्मृतिचिह्न थे। उन्होंने उसके जीवन के हर सुअवसर पर संगठित होकर अपनी अप्रसन्नता प्रकट की थी—उसके विवाह के दिन, उसके राजतिलक पर, पुत्र के जन्म पर, और अब उसके नामकरण के दिन... वे स्पष्ट रूप से उससे घृणा करते थे। उसने खिड़की से बाहर झाँका, जहाँ हवा के झोंकों के साथ तीखी घोषणाएँ भी अन्दर आ रही थीं। उसने हस्तिनापुर के लोगों में भरी घृणा का न्यून आंकलन किया था।

उसने क्रोधित होकर अपने पति से पूछा, “आप इस खुले द्वेष को कब बन्द करेंगे?”

शान्तनु जोर से खाँसते हुए, उसे अपनी अस्वस्थता याद दिलाते हुए बोले, “उनको एक वचन दिया गया था; हमने उसे पूरा नहीं किया, मत्स्यगंधा। वे अभी भी भीष्म को चाहते हैं, और उन्होंने हम दोनों को भीष्म के साथ हुए अन्याय के लिए क्षमा नहीं किया है...” वे दुखी स्वर में बोले।

उसे शान्तनु को उनके विषाद से बाहर लाना ही होगा। “आज आपके पुत्र का नामकरण समारोह है,” वो उत्साहपूर्वक बोली। “भीष्म ने स्वयं आपके और बच्चे के लिए वस्त्रों का चयन किया है; राजमहल को इतने भव्य तरीके से सजाया गया है, और

बाहर सड़कों पर गवैये कुरु-राजाओं की कीर्ति के गीत गा रहे हैं। उठिए शान्तनु : आज एक नया दिन है, एक नया आरम्भ!”

“मैं सब समझता हूँ” उन्होंने आह भरी और वापस विषादपूर्ण हो गए। “मैं दोबारा पिता बना हूँ, और आज तक मैं अच्छा पिता साबित नहीं हुआ हूँ। इतिहास में मेरे बारे में यही लिखा जाएगा!” वे बड़बड़ाए। “तुमने मुझे पुत्र दिया है, राजकुमार, वो उत्तराधिकारी जो तुम्हारे पिता चाहते थे,” वे कटुतापूर्वक बोले। “दशराज बहुत प्रसन्न होंगे।”

सत्यवती ने उन्हें कड़वी मुस्कुराहट के साथ देखा और उसका ध्यान उनकी पतली, मुरझाई काया, काले घेरों से घिरी थकी आँखों पर गया और वो इस विचार में खो गई कि शान्तनु कितनी शीघ्रता से निराशा में डूब गए थे।

“बाबा नाना बनने पर खुश हैं, और वे अपनी खुशी को नहीं छिपाते,” वो रुखाई से बोली। “इसमें खीझने वाली कौन-सी बात है?”

“मुझे वे कभी अच्छे नहीं लगे। वे बहुत अधिक हस्तक्षेप करते हैं।” शान्तनु क्रोधपूर्वक बोले।

“आपको किस बात से चिढ़ होती है?” सत्यवती ने शान्तिपूर्वक पूछा। “कि वे यहाँ महल में हमारे साथ रहते हैं, या इस बात से कि दरबार में मछुआरों के समुदाय का प्रतिनिधित्व करते हैं? आपने ही इस व्यवस्था को स्वीकार किया था, क्योंकि आप भी समझ गए कि मछुआरों के समुदाय को पृथक रखना विवेकपूर्ण नहीं होगा।”

“हाँ, तुमने वो बात मुझे समझाई,” शान्तनु ने थोड़ा शान्त होते हुए कहा। “तुमने उनका अच्छी तरह ध्यान भी रखा है—बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं और रोजगार का। तुम्हारे पिताजी ने उनके लिए घर बनवाए। तुमने जैसा कहा, मैंने उनके लिए सब कुछ किया।”

“क्योंकि उसकी आवश्यकता थी,” उसने मुस्कुराते हुए तर्क दिया। “वे भी आपकी प्रजा हैं, उन्हें अपना होने का अहसास दिलाइए, वे निष्ठापूर्वक आपकी सेवा करेंगे। मैं उन्हें अच्छी तरह जानती हूँ। उन्हें उनका सम्मान दीजिए, वे अछूत नहीं हैं, जिसके लिए उन्हें संघर्ष और लांछन सहना पड़े और उन्हें शहर के बाहरी सीमाओं पर गन्दी बस्तियों में रहने के लिए विवश होना पड़े।”

शान्तनु झुँझला गए थे। “मैंने तुम्हारी हर बात मानी, मत्स्यगंधा, पर तुमने क्या किया? मैंने तुम्हें अपने पिताजी को राजमहल में लाने से मना किया था, पर तुम नहीं मानीं। मैं तुम्हारा पति ही नहीं, तुम्हारा राजा भी हूँ, और मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे हर आदेश का पालन करो।”

“मैं आपकी पत्नी, आपकी रानी हूँ,” उसने सरलता से कहा। “मैं आपके साथ राजसिंहासन पर बैठती हूँ, आपके साथ विचार और अभिप्राय बाँटती हूँ...”

“साथ-साथ सत्ता और शक्ति भी..?” शान्तनु ने व्यंग्यपूर्वक कहा।

“शक्ति, प्रतिष्ठा और पदवी,” सत्यवती ने स्वीकार किया। “सत्ता की लालसा उससे मिलने वाले आनन्द के लिए ही की जाती है।”

“जिसका तुम पहले से ही दुरुपयोग करती आयी हो।”

वो उनके आरोप को सुनकर दंग रह गई। “इसलिए कि मैं बाबा को यहाँ ले आयी?” उसने अविश्वास से पूछा। “मैंने तो केवल पुत्री होने का कर्तव्य निभाया है। वे अस्वस्थ हैं, और उन्हें देखभाल की आवश्यकता है।”

“तुम्हारे ‘अस्वस्थ’ पिता अपनी नई नौकरी और दरबार में अच्छी तरह काम कर पा रहे हैं।”

“वे अपनी बीमारी के बावजूद काम कर रहे हैं,” उसने क्रोधपूर्वक आँखें सिकोड़ते हुए, ढोड़ी उठाते हुए कहा।

उन्होंने कठोरतापूर्वक हस्तक्षेप करते हुए कहा, “मैं एक राजा के रूप में बात कर रहा हूँ। तुमने तो लोगों को पहले से ही हमारे विरुद्ध कर दिया है, और तुम्हारे पिता का यहाँ रहना उनके पक्षपात के तर्क को और बल देता है। बाहर होने वाला हंगामा तुम्हारे विरुद्ध उनकी आवाज़ है।”

शान्तनु थककर लेट गए, “अब तुम और देव ही सब सँभालो, मैं बहुत ही निर्बल हो गया हूँ।” वे गहरी सांस लेते हुए बोले और उन्हें खाँसी का दौरा पड़ गया।

सत्यवती ने कहा, “मैं वैद्य को बुलाती हूँ,” उसे अब बाहर की आवाजों से अधिक अपने कक्ष में लेटे शान्तनु की चिन्ता हो रही थी। अब उसे स्वयं ही दोनों स्थितियों को सँभालना होगा।

शान्तनु जोर से खाँसते हुए बोले, “तुम उन लोगों की चिन्ता मत करो; वे तुम्हारी बात नहीं सुनेंगे, मैं देव से कह दूँगा, वो देख लेगा। उसे बुलवाओ।”

फिर से भीष्म/ शान्तनु उसके बिना कुछ नहीं कर सकते। सत्यवती अपने निचले होंठ को उँगली से दबाती हुई सोचने लगी। पर उसने भीष्म को बुलवा ही लिया, और उसके आने से मन-ही-मन उसे बहुत तसल्ली मिली। उसकी उपस्थिति शान्तिदायक थी, उसकी आवाज़ मृदु थी और वो ऐसे बोलता था जैसे किसी बच्चे से बात कर रहा हो। शुरुआत में उसे उसकी ये आदत अपमानजनक लगती थी, फिर उसे समझ में आया कि वो सबके साथ ऐसे ही बात करता था, अधीर कृपि के साथ भी।

“क्या पिताजी का स्वास्थ्य और बिगड़ गया है?” भीष्म ने अचल पड़े शान्तनु को देखते हुए पूछा।

“हाँ। बाहर से आने वाले शोर से हमारी नींद टूट गई। जनता राजा के लिए अपना प्रेम व्यक्त कर रही है,” वो रूखेपन से मुस्कुराती हुई बोली। और मैं अब भी उनकी दुष्ट रानी हूँ। तो अब मैं क्या करूँ?” उसने हँसते हुए पूछा। “राजतिलक के दिन मैंने उनके

कुछ प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया था। उन सबने राजा का अभिवादन तो किया, पर अपनी नई रानी का नहीं।” उसने अपने होंठ सहलाते हुए कहा।

सत्यवती होंठ सिकोड़ती हुई बोली, “मैंने उस अपमान को देखा था; मुझे समझ में नहीं आता कि मैं उनमें से ही एक हूँ, फिर भी वे मुझे स्वीकार नहीं करते!” भीष्म को उसकी आवाज़ में कठोरता नज़र आयी। उसे सत्यवती की ये बात सुनी-सी लगी, वो इस बात को अक्सर दोहराती थी। भीष्म वैसे भी आदतानुसार शान्त रहा; भीष्म सरलता से अपने मत को व्यक्त नहीं करता था।

“मैं क्या करूँ?” सत्यवती ने दोबारा पूछा। “अब एक ही तरीका रह गया है... तुम तो स्वयं उनसे बात कर चुके हो, पर सब कुछ व्यर्थ सिद्ध हुआ है। हम दोनों ने अपने-अपने तरीके से प्रयत्न किया। क्या इस बार हम दोनों मिलकर कुछ कर सकते हैं?” उसने शिष्टता से विनती करते हुए पूछा।

भीष्म थोड़ा हिचकिचाया। पिछली बार जब उसने जनता से बात की, उन्होंने उसके साथ निर्दयतापूर्वक व्यवहार किया था; कुछ महिलाओं ने तो उसे अपशब्द भी कहे थे, पर सत्यवती सब कुछ साहसपूर्वक सह गई। पर उसके पूरे प्रयास के बावजूद, कुछ भी काम नहीं आया। उसकी हर चेष्टा—लोगों में भोजन बाँटना, मन्दिरों में दान देना, स्वयं लोगों को स्वर्ण मुद्राएँ देना—हर कार्य को अविश्वास और विद्वेष से देखा गया। उन्हें उससे घृणा थी, और भीष्म को सत्यवती पर दया आ रही थी। वो उनका हृदय जीतने का हर प्रयास कर रही थी, पर उसे पराजय ही हाथ आ रही थी।

“आपकी क्या राय है?” भीष्म ने अनिच्छा से पूछा।

“हम उनसे अभी चलकर बात करते हैं?”

भीष्म ने उसके सुझाव का विरोध किया। उसे, रानी माँ और उसके नवजात राजकुमार को देखते ही, वे और भी क्रोधित हो जाएँगे, और ये उन दोनों के लिए खतरे से खाली नहीं होगा। “नहीं! ये सही नहीं होगा!”

“यही ठीक रहेगा, तुम होगे न मेरे साथ।” सत्यवती ने शीघ्रता से कहा।

भीष्म उसके विश्वास से दंग रह गया, पर वो स्वीकार करने वाला नहीं था। उसे सत्यवती से कुछ नहीं चाहिए था। वो विचारपूर्वक सिर हिलाता हुआ खड़ा रहा।

“कृपया मान लो, अपने पिताजी के लिए,” सत्यवती ने कहा।

उसने हिचकिचाते हुए कहा, “हाँ, पिताजी के लिए अवश्य करूँगा माते, परन्तु, क्या आप देख नहीं सकतीं, ये बात यहीं तक नहीं रुकेगी। यदि वे आपके साथ दुर्व्यवहार करेंगे, तो मैं उन्हें बन्दी तो नहीं बना सकता न? यदि आप यही चाहती हो तो भी? उससे तो स्थिति और भी बिगड़ जाएगी, वे और भी क्रोधित हो जाएँगे।”

“पर उन्हें तो रोकना ही होगा!” सत्यवती ने निर्णयिक रूप से कहा।

“वे तब तक नहीं रुकेंगे, जब तक आप उन्हें किसी तरह मना नहीं लेतीं,” उसने सुझाव दिया। भीष्म सत्यवती को सीधे-सीधे भावशून्य और शिथिल दृष्टि से देखता रहा। वह निश्चित थी कि भीष्म इसी कठोर दृष्टि से लोगों को नियंत्रण में रखता था, पर वो उससे भयभीत होने वाली नहीं थी। सत्यवती ने भी उसकी तरफ उसी कठोरता से देखा।

वो मुँह बनाती हुई बोली, “मैं उन्हें प्रसन्न करने के लिए अपने पिताजी को तो यहाँ से नहीं निकाल सकती!”

भीष्म उसे निष्पक्षता से देखते हुए बोला, “बिलकुल ठीक!, पर, यदि कृपा के अनुसार आपके पिताजी को घर और सेवक देने के सुझाव को आप मान जातीं, तो इस समस्या से बच सकती थीं; आप तो उन्हें राजमहल में ले आई...”

“मैं स्वयं अपने पिता की देखभाल करना चाहती थी, जैसे मैं तुम्हारे पिता की कर रही हूँ, देव!” वो चिढ़कर बोली। “यही दोनों तो मेरे लिए सबसे अमूल्य हैं, आज मैं जो कुछ भी हूँ, उन्हीं के कारण हूँ...” वो बोलते-बोलते चुप हो गई। भीष्म उसके जन्म और बचपन के बारे में कुछ नहीं जानता था।

“मैं जानता हूँ,” भीष्म ने हल्के व्यंग्य के साथ स्वीकार किया।

“जैसा लोग मुझे आरोपित करते हैं, मैंने कोई कुलपक्षपात नहीं किया है, और न ही अपने लोगों के साथ कोई विश्वासघात करूँगी,” उसने रानी वाली प्रशंसापूर्ण मुस्कुराहट के साथ कहा। “मछुआरों के समुदाय को भी अन्य लोगों की तरह सम्मान का जीवन जीने का अधिकार है, वे भी हमारी ही प्रजा हैं, देव!”

देव सिर झुकाए उनकी बात सुनता रहा। वो जानता था कि सत्यवती ने अपने लोगों के लिए बहुत कुछ किया था, पर अन्य लोगों को ये भलाई की जगह पक्षपातपूर्ण कार्य लगा।

भीष्म उसकी छिठाई, व्यवस्था के स्पष्ट विरोध, राजकीय प्रणाली की अवज्ञा, अपने समुदाय और अपने पिता की भलाई करने की दृढ़ निश्चय की प्रशंसा किए बिना नहीं रह पाया। काली अपने पिता की वो पुत्री थी जो उनकी कभी नहीं थी; अपने लोगों की नायिका थी। उसे काली कहे जाने पर गर्व था, पर राजमहल में उसे कई द्वेषपूर्ण नाम दिए गए थे जिसमें से दासेयी उसके साथ जुड़ गया था।

सत्यवती राजमहल के लोगों के साथ सुरक्षापूर्ण अहंकार के साथ व्यवहार करती थी, भीष्म के साथ भी; जो लोगों के विनोद और क्रोध, दोनों का कारण बन गया था। वो उसे किसी चापलूस मंत्री की तरह समझती थी, क्योंकि उसे अभी भी भीष्म से उसका राजसिंहासन छीनने का अपराधबोध था। वो उसे आदेश देती और प्रश्न करती, पर उससे कोई अतिरिक्त बात करना अनुचित ही लगता था। भीष्म जानता था कि वो उसकी हितैषी होने का ढोंग करती थी, वो भी केवल उसके पिता के कारणवश। वो

भीष्म की लोकप्रियता से डरती थी और भीष्म को आशंका थी कि वो ऐसा व्यवहार इसलिए करती थी, क्योंकि राजमहल में यदि कोई ऐसा व्यक्ति था जिसे सरलता से अपमानित किया जा सकता, तो वही थी।

यद्यपि, जब उसे भीष्म को किसी आधिकारिक काम से कहीं भेजना होता या उसे कोई काम समझाती, तो उसका चेहरा नरम पड़ जाता और वो उसकी आँखों में सीधे-सीधे देखकर बात करती थी। ऐसे क्षणों में भीष्म अनुमान लगाता कि वो अनिच्छा से ही याद करती होगी कि उसी ने सत्यवती को उसके इस पद तक पहुँचाया था। क्या वो अपराधबोध था या आभार? इस समय, तो उसकी आँखें काली और कठोर थीं।

“तुम मुझे विशेष पसन्द नहीं करते, है न?” उसने स्पष्ट रूप से पूछा।

“कोई भी करता है?” उसने भी अपने जाने-पहचाने धीरज के साथ पूछा।

वह जोर-जोर से हँसने लगी और उसकी आँखें सच्चे विनोद से रेखित हो गईं।

“तुम सच्चे हो, और मैं भी,” वो हँसती हुई बोली। “क्या हम एक-दूसरे की सहायता नहीं कर सकते?”

किसी क्रोधित आवाज़ से उनका वार्तालाप थम गया। उसने भीष्म की तरफ निराशापूर्वक देखा और स्थिति को अपने हाथों में लेने का निर्णय करते हुए वो कक्ष से बाहर निकलकर, संगमरमर की सीढ़ियों से होती हुई, फैले हुए उद्यान को पार करती हुई, बड़े द्वार तक पहुँची।

“द्वार खोलो,” उसने अचम्भित द्वारपालों को आदेश दिया।

पिछली बार उसने प्रदर्शनकारियों को राजमहल के अन्दर बुलाया था, पर इस बार उसने उन्हें राजमहल के बाहर मिलने का निर्णय किया, उनके इलाके में। उन्होंने उसको गालियाँ दी थीं, पर अब उसे उनके साथ इस समस्या को सदा के लिए निबटाना होगा। वे उसे जानते नहीं थे; न राजमहल के अन्दर के लोग, न बाहर के।

राजमहल के बाहर खड़ी भीड़ राजमहल के खुलते द्वार को देखकर चौंक गई। रानी का विरोध करना उनके लिए सामूहिक अप्रसन्नता व्यक्त करने का तरीका बन गया था। उनके राजकुमार ने उनसे विरोध प्रदर्शन को रोकने की बार-बार विनती की थी, उनसे तर्क किया था कि उनके साथ कोई अन्याय नहीं हुआ था। पर जनता ने उत्तर दिया था कि वे उनके लिए ही नहीं, अपने लिए भी लड़ रहे थे।

स्वयं रानी को अपने ओर आते देखकर वे दंग रह गए। लम्बी, साँवली और सुभग; उनके क़दमों में निर्णायिकता थी, और उनके चेहरे पर क्रोध या खिजलाहट के कोई लक्षण नहीं थे।

उन्होंने हाथ जोड़कर, झुकते हुए उनका अभिवादन किया। भीड़ में से कई लोग उत्तर में झुके, पर अपना विरोध प्रकट करते हुए रुक गए।

“मैं आप सबको नामकरण समारोह के लिए आमंत्रित करती हूँ,” वो विनम्रता से बोली। उसकी आवाज़ कोमल थी, परन्तु उसकी आँखें दृढ़ और स्पष्ट।

“राजकुमार ने हमें पहले ही निमंत्रण दे दिया, रानी दासेयी,” उनमें से एक ने रुखाई से कहा। “पर हम अस्वीकार करते हैं।”

“आप अपना स्नेह राजमहल के बाहर खड़े होकर चिल्लाकर प्रकट करना अधिक उचित समझते हैं?” वो हल्के से मुस्कुराती हुई बोली।

वह व्यक्ति झोंप गया। “हमारा स्नेह हमारे राजकुमार के लिए आरक्षित है।”

“राजा के लिए नहीं?” उसने पूछा। “क्या ये राजद्रोह नहीं है?” उसने धीमी आवाज़ में पूछा।

“क्या आप हमें धमकी दे रही हैं?” वो चिल्लाया।

“मैं तुम्हें बता रही हूँ कि यदि तुम हस्तिनापुर के अलावा किसी और राज्य में होते तो तुम्हें इस अपराध के लिए बन्दी बना लिया जाता,” उसने उत्तर दिया। “पर हमारे राजा ऐसा कुछ नहीं करते क्योंकि उन्हें अपनी प्रजा से स्नेह है।”

“उन्हें स्पष्ट रूप से हमसे और हमारे राजकुमार से अधिक अपनी नई रानी से प्रेम है,” वो क्रोधपूर्वक बोला। “ये उनका व्यक्तिगत निर्णय हो सकता है, पर इसका असर हम पर, जनता पर पड़ता है। हम चाहते हैं कि राजकुमार भीष्म हमारे राजा बनें। उन्होंने राजसिंहासन आपके लिए त्याग दिया!” वो गुर्राया। “हम इसके लिए राजा को कभी क्षमा नहीं कर सकते।”

सत्यवती ने उसके हठी भाव को देखते हुए निर्णय किया कि उसे थोड़ा तो झुकना पड़ेगा, पर न बहुत अधिक, न बहुत कम।

“इस तरह चिल्लाकर, मेरे विरुद्ध उद्घोष करके आपको क्या मिलेगा?” उसने विनतीपूर्वक पूछा। “मैं देख रही हूँ कि आप अपना आक्रोश भली-भाँति प्रकट कर रहे हैं, पर मैं भी आप में से ही एक हूँ, मात्र आपकी रानी नहीं।”

उस व्यक्ति ने जोर से अपना सिर हिलाते हुए कहा, “आप हमारी रानी नहीं हैं। आप हममें से एक थीं, पर आपने हमारे हित के लिए क्या किया?” वो व्यंग्यपूर्वक बोला। “केवल अपने पिता और अपने समुदाय का भला किया। आप न तो जन्म से और न ही योग्यता से हमारी रानी हैं, और अब हमें उस राजकुमार के नामकरण समारोह पर आमंत्रित करने का दुस्साहस कर रही हैं, जो हमारे राजकुमार के सिंहासन पर बैठेगा।”

वहाँ कुछ क्षणों के लिए मौन छा गया।

“यदि मैं जन्म से रानी होती तो क्या तुम मुझसे इस तरह बात करने की धृष्टता करते?” उसने हर व्यक्ति को देखते हुए कहा।

“नहीं, परन्तु, आप गुणों और योग्यता से भी हमारी रानी नहीं हैं, आप केवल विवाह के कारण रानी बन गई हैं,” उस व्यक्ति ने लापरवाह तरीके से कहा। “आपने हमारे लिए, या हस्तिनापुर के लिए किया ही क्या है, जिसके लिए हम आपको अपनी रानी मान लें? आपने तो बलपूर्वक हमारे राजा से विवाह कर लिया!”

भीष्म राजमहल की छत से स्थिति को ध्यान से देख रहा था और उसे लगा कि बात बिगड़ रही थी और अब उसे हस्तक्षेप करना चाहिए। पर उसे पता था कि इस संघर्ष को केवल टाला जा सकता था, समाप्त नहीं किया जा सकता था। उसने सत्यवती को चिन्तित होकर देखा। वो पूर्णतया रानी लग रही थी, उसके मुकुट के चमकते रत्नों से उसके पायल तक; पर उसकी कठोर आँखों की चमक उनसे अधिक तीव्र थी। वो उनका सामना करना चाहती थी; वो अपने विरोधियों से भागना नहीं चाहती थी। आज उसे इस समस्या का अन्त करना ही होगा।

“मैं मानती हूँ कि मैं राजा से विवाह के कारण रानी बनी,” उसने मर्यादापूर्वक शान्त स्वर में कहा और सब उसकी ओर देखने के लिए विवश हो गए। उसके कथन में कोई अहंकार नहीं था, बल्कि निष्कपट स्वीकृति थी। “मुझे अब तक आपकी सेवा करने का अवसर नहीं मिला है...”

भीड़ में से एक आवाज़ आयी, “आपने अपने मछुआरों की तो अच्छी सेवा की है!”

सत्यवती ने सिर हिलाते हुए कहा, “हाँ, मैंने की, क्योंकि उन्होंने मुझे उनकी सेवा करने का अवसर दिया। मैं आपसे भी सेवा का अवसर माँगती हूँ। आज, मैं आपके राजा के पुत्र की माता हूँ...”

“हमारे पास अपना राजकुमार है; हमें आपसे दूसरे राजकुमार की आवश्यकता नहीं है। हमें हमारा युवराज वापस दे दीजिए; उन्हें उनका सिंहासन दे दीजिए, जिसे आपने उनसे छीन लिया!”

उस आवाज़ के साथ अन्य कई आवाजें भी जुड़ गईं।

भीष्म जाने के लिए उठा परन्तु कृपि, जो उसके साथ छत पर खड़ी थी, ने उसका हाथ थामकर उसे रोक लिया।

“उसके लिए यही एक अवसर है, अभी नहीं तो कभी नहीं!” कृपि ने कहा। “उसी ने शुरू किया, उसी को अन्त करने दो।”

“नहीं,” भीष्म ने गम्भीरतापूर्वक कहा। “प्रतिज्ञा मैंने की थी, उसने नहीं। पिताजी ने उसका पीछा किया, उसने नहीं!”

“तुम समझते क्यों नहीं, उसी ने तुम्हें ये प्रतिज्ञा करने के लिए विवश किया? शब्द तुम्हारे थे, पर इच्छा उसकी थी।”

“और मैंने उनकी इच्छा पूरी की,” भीष्म ने शान्तिपूर्वक कहा। “वो मेरा निर्णय था।”

सत्यवती की स्पष्ट, खनखनाती आवाज़ सुनकर भीष्म रुक गया।

“राजसिंहासन मेरा नहीं है; वह तो राजा का है। मैं राजा की पत्नी हूँ, और अब उनके पुत्र की माँ,” उसने दृढ़तापूर्वक कहा। “मैं आपके राजकुमार की भी माता हूँ।”

“वो उन्हें मनाने के लिए तुम्हारा उपयोग कर रही है!” कृपि चौंककर बोली। “तुम यहीं हो, देव, पर वो तुम्हारी ओर से उनसे बात कर रही है! वो अच्छी तरह जानती है कि तुम सार्वजनिक रूप से कभी उनका विरोध नहीं करोगे। वो बहुत ही चालाक है!”

भीष्म का नाम लेते ही भीड़ थोड़ी शान्त हो गई। सत्यवती ने उनकी मनोदशा को झट से भाँप लिया और आगे बोली, “भीष्म ही मेरे पुत्र का नामकरण करेंगे, और आज से ही मैं अपने पुत्र को उनकी संरक्षण में रखूँगी।” वो झुकती हुई बोली, “मैं आप सबको वचन देती हूँ कि मेरा पुत्र भीष्म का शिष्य होगा,” वो रुकी, और सिर उठाते हुए बोली, “भीष्म इस बात का ध्यान रखेंगे कि उनकी प्रतिज्ञा राज्य की सेवा में आड़े नहीं आएंगी। उन्हें राजा से, अपने पिता से बहुत प्रेम है और उनकी प्रतिज्ञा इस बात का प्रमाण है। उसे अपने नए भाई से भी बहुत स्नेह है। ये उनकी इच्छा, उनकी अभिलाषा है कि वे राजसिंहासन पर विराजमान राजा की प्रेम और निष्ठापूर्वक सेवा करेंगे।”

भीष्म ने चकित होकर सत्यवती को देखा। वो अत्यन्त साहसी थी और भीष्म का मन उसके लिए आदर से भर गया। उसे पता था कि वो सच कह रही थी।

“पर, तुम राजा बनने वाले थे!” कृपि क्रोधपूर्वक फुसफुसाई। “ओह देव, ये तुमने क्या किया?” तुम्हारे कई पूर्वजों की तरह ये युवराज होते हुए राजसिंहासन त्यागने की बात नहीं है। यति ने अपने छोटे भाई यथाति के लिए सिंहासन त्याग दिया और संन्यास ले लिया; तुम्हारे दो ताऊओं ने भी वही किया; पर, तुमने तो सबसे भीषण प्रतिज्ञा और सबसे बड़ा बलिदान किया है: आजीवन ब्रह्मचर्य का! ऋषि-मुनि भी ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करते और विवाह कर लेते हैं। लेकिन, तुमने तो अपने लिए सबसे बड़ा दंड चुन लिया है। आजीवन ब्रह्मचर्य से किसी को मोक्ष प्राप्त नहीं हुआ है, यह तो मनुष्य जीवन का मात्र एक चरण है, आजीवन प्रतिज्ञा नहीं। इसीलिए, तुम्हारी प्रतिज्ञा इतनी भीषण है, भीष्म!”

जब भीष्म चुप रहा, कृपि का चेहरा घृणा से भर गया। “तुमने अपने पिताजी के एक मछुआरिन से मोह को आगे बढ़ाने के लिए ये सब कुछ किया! और इस लड़की का दुस्साहस कि ये लोगों को प्रसन्न करने के लिए तुम्हें अपने पुत्र का गुरु घोषित कर रही है! इसने तुम्हें नपुंसक बना दिया है, देव! तुम्हारे पास कुछ नहीं रहा, तुम्हारा स्वाभिमान भी नहीं!”

कृष्ण का चेहरा क्रोध से लाल हो गया था, पर क्रोध से अधिक उसकी विवशता उसे खाए जा रही थी।

“तुम निश्चित ही इस ओछेपन से ऊपर उठ सकती हो?” भीष्म कंधे उचकाते हुए छत से निकलने लगा। “यदि तुम्हें इतना ही कष्ट हो रहा है तो तुम उसकी अवहेलना करो, तुम्हें उससे क्रोध भी नहीं होगा। तुम्हें इस छोटी-सी बात को इतनी बड़ी आपदा बनाने की आवश्यकता भी नहीं होगी।”

कृष्ण उसे ध्यानपूर्वक देखती हुए बोली, “क्या तुम परिस्थिति को इस तरह सँभालते हो? तुम अपने आपको इस तरह ढाढ़स देते हो? मैं दासेयी को रोज पढ़ाती हूँ। वो अत्यन्त चतुर और बुद्धिमान है। पर अब मुझे उसे और पढ़ाने से भय हो रहा है; कहीं वो इस ज्ञान का उपयोग मेरे विरुद्ध ही न कर ले; जैसा उसने तुम्हारे साथ किया है, देव। उसने तुम्हें, राजा को, और हम सबको पराजित कर दिया है।”

भीष्म ने झुककर नीचे देखा—रानी और उसकी प्रजा! वो अवाक् रह गया। सत्यवती ने युद्धभूमि में जाकर बिना रक्त का एक बूँद बहाए, विजय प्राप्त कर ली थी। उसने चतुराई से अपने आपको भीष्म के साथ जोड़कर लोगों को अपनी तरफ कर लिया था।

“तुम मेरे साथ हो,” उसने कहा था। भीष्म को अब उसके कथन का तात्पर्य समझ में आया।

उसकी इच्छा हो या न हो, उसे अपने पिता के अतिरिक्त सत्यवती का भी साथ देना ही था। उसकी ढाल बनकर उसके साथ रहना होगा—उसकी रक्षा करनी होगी, लोगों के आक्रोश से, राजमहल में उसके विरोधियों से। ये सत्यवती की चेतावनी, उसका युद्धविराम, उसकी संधि और अन्तिम विजय थी।

“उसने प्रेम जताया, और जीत गई, हमारी रानी दासेयी,” कृष्ण क्रोधित होकर बोली।

“वो तो पहले ही जीत चुकी थी,” भीष्म ने शान्त स्वर में कहा। “तुमने भले ही उसे दासेयी का नाम दिया होगा, परन्तु, आज कौन किसकी सेवा कर रहा है? याद रहे, वो रानी है। अब वो जनता की भी रानी बन गई है।” भीष्म ने सत्यवती को लोगों के आगे-आगे राजमहल में प्रवेश करते देखा।

वो भीष्म की कृष्णी थी, परन्तु भीष्म और न ही किसी और का उस पर कोई स्वामित्व था।

## मत्स्य

भीष्म ने अपने छोटे भाई का नाम चित्रांगद रखा। जब वो उस बच्चे को हाथ में लिए उसके कानों में उसका नाम बोल रहा था, उसे आभास हुआ कि वो आजीवन इस नन्ही-सी जान का सेवक बना रहेगा। उसका रिक्त हृदय एक ऐसी अज्ञात भावना और स्नेह से भर गया, जो उसे आज तक कभी अनुभव नहीं हुआ था। उसने झुककर मुस्कुराते हुए, चमकती आँखों वाले शिशु को देखा—इस नन्हे से बच्चे ने उसके जीवन को नई ऊर्जा और उमंग दी थी।

भीष्म ने बच्चे के माता-पिता की ओर देखा। उसके पिता विवर्ण और थके हुए लग रहे थे। कुछ दिनों से वे अस्वस्थ थे और उन्हें खाँसी के दौरे पड़ रहे थे जो हर बीतते दिन के साथ बढ़ते जा रहे थे। रानी माँ दिव्य लग रहीं थीं, रानी, जिसने तीनों लोकों पर विजय प्राप्त की हो! आखिरकार, उन्होंने अपनी सारी अभिलाषाएँ पूरी कर ली थीं।

वो सम्मानपूर्वक उसके पिता के आसपास मंडरा रही थीं, भीष्म ने देखा की वो अचानक ही नीचे कालीन पर उनके चरणों के पास बैठ गई है। भीष्म को उनके व्यग्र हाव-भाव से लग रहा था कि वो अत्यन्त चिन्तित हैं। उसके पिता अपनी आराम-कुर्सी पर बैठे थे और वो उन्हें कुशल उपचारिका की तरह औषधि पिला रही थीं।

“क्या मैं आपके लिए जल लेकर आऊँ?” उन्होंने मुस्कुराते हुए पूछा। अपने पिता के स्नेहपूर्ण दृष्टि को देख भीष्म चिढ़ गया। “क्या आपको अब ठीक लग रहा है?” उन्होंने दक्षता से मेज पर पड़े मदिरापात्र को हटाते हुए पूछा।

“आप पढ़ते समय हमेशा मदिरापान करते हैं...” सत्यवती ने उन्हें प्रेमपूर्वक डॉटते हुए कहा। “आप जानते हैं, आपकी सफलता का रहस्य क्या है? आप अत्यन्त पढ़े-लिखे हैं। ये कौन-सी पुस्तक हैं?”

शान्तनु ने हँसते हुए उत्तर दिया। वहाँ थोड़ी देर के लिए मौन छाया रहा, और भीष्म वहाँ स्थिर खड़ा उन्हें अपने छोटे भाई के साथ खेलते हुए देखता रहा।

सत्यवती ने कहा, “मैं आपसे कुछ कहना चाहती हूँ। कहूँ? आप कदाचित मेरी बात सुनकर हँस पड़ेंगे कि मैं स्वयं अपनी प्रशंसा कर रही हूँ। आप जानते हैं कि मेरी इच्छा है कि आप बेरोजगार लोगों को हमारी अवसंरचना सेवाओं में नियुक्त करें। इससे उन्हें बहुत सहायता मिलेगी। ये सत्य है कि उनमें से अधिकांश हमारे मूल निवासी नहीं

हैं और हमेशा से समाज से बाहर ही रहे हैं।” शान्तनु कुछ कहते, उससे पहले वो आगे बोलीं, “पर अब जब वे हमारे राज्य का हिस्सा बन गए हैं—उन्हें अवश्य, हमारे नियमों के अनुसार उपयोगी और उत्पादक होना चाहिए। यदि आप राजा होते हुए उनके रक्षक हैं, मैं भी रानी होते हुए उन्हें कुछ सुविधाएँ प्रदान कर ही सकती हूँ?”

वो गरीब प्रवासी समुदाय को सशक्त कर रही थीं, जिससे दरबारी और राज्य के कई लोग अप्रसन्न थे। भीष्म मन-ही-मन सत्यवती से इस विषय में सहमत था, पर वो आश्वर्यचकित था कि जिस जटिल विषय के लिए राज्य के सबसे वरिष्ठ मंत्री राजा को नहीं मना पाए, सत्यवती ने अपने मीठे शब्दों और सुन्दर मुस्कुराहट से कर दिखाया।

वो राजा के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना आगे बोलीं, “आप शिकार पर क्यों नहीं गए? क्या आप मेरे और हमारे पुत्र के लिए रुक गए?” वो राजा की ओर देखकर प्रेमपूर्वक मुस्कुराती हुई बोली, “आप भी देव के साथ शिकार पर जाइए—आपको उसके साथ भी समय बिताना चाहिए। आप दोनों को एक साथ रहकर अच्छा लगेगा, और वैसे भी आपको ताजी हवा की आवश्यकता है!”

“हाँ,” भीष्म ने संक्षिप्त रूप से कहा, “खुश है वो मनुष्य जो न केवल जो है, उसके बारे में विचार करते हैं, अपितु, जो नहीं है उसका भी विचार करते हैं।”

“ये तो बहुत लम्बा वाक्य बोल गए तुम... मुझे कुछ समझ में नहीं आया,” वो हँसती हुई बोली। भीष्म जानता था कि वो हरेक शब्द समझ गई थी। “तुम्हारा अर्थ है कि प्रसन्न लोग यथार्थ संसार में जीते हैं, अपनी कल्पना में नहीं? हाँ, कदाचित। चलिए, हम अपने जीवन और अपने भविष्य की बात करते हैं,” वो मुँह फुलाती हुई बोली। “मैं तो हमारे जीवन के लिए योजनाएँ बनाती ही रहती हूँ, कई तरह की योजनाएँ और विचार! शान्तनु, क्या मैं आपसे एक प्रश्न कर सकती हूँ? आप अपने राजमुकुट का त्याग कब करेंगे?”

भीष्म चौंक गया, शान्तनु भी चकित थे।

“पर, अभी तो मैं ही राजा हूँ,” वे निर्बल स्वर में बोले।

“आजकल आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता है। यदि हम भीष्म को दरबार और राज्य की देखरेख करने के लिए राज-प्रतिनिधि नियुक्त कर दें तो? हाँ! जब तक चित्रांगद राजपाठ सँभालने के योग्य हो जाए तब तक!” उसने झट से अपने होंठ अपनी उँगली से दबाते हुए कहा। “इससे आपको अपने सारे कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों से मुक्ति मिल जाएगी। आपका स्वास्थ्य राजपाठ की चिन्ता और बोझ के कारण और भी बिगड़ रहा है।”

उसकी बात सुनकर शान्तनु की भौंहें चढ़ गईं, फिर वो थोड़ा सँभलते हुए, सिर हिलाते हुए बोले, “ये तो बहुत ही विवेकी और उचित सुझाव है।”

भीष्म सत्यवती की बातों से प्रभावित नहीं हुआ, “चित्रांगद तो केवल छह महीने का है; उसे इतनी जल्दी युवराज घोषित नहीं किया जा सकता...”

“पर, तुम हो न देव, उसकी और राजसिंहासन की देखभाल करने के लिए,” सत्यवती मीठे स्वर में हस्तक्षेप करती हुई बोलीं। “इसीलिए तो मैं राजा से तुम्हें राजप्रतिनिधि बनाए जाने की विनती कर रही हूँ।”

कुछ ही समय में भीष्म को, अस्वस्थ राजा और अत्यवयस्क राजकुमार की ओर से राजसिंहासन का राज-प्रतिनिधि नियुक्त कर दिया गया। उस दिन उसके पिता अत्यन्त प्रसन्न दिख रहे थे, पर समारोह में अपार संख्या में आमंत्रित लोगों को देखकर थोड़े व्याकुल भी।

“ऐसा प्रतीत होता है, भारतवर्ष के सभी राजा-महाराजा इस आडम्बर में पधारने वाले हैं!” शान्तनु खाँसते हुए बोले।

उसके पिता इससे अधिक अविस्तीर्ण नहीं हो सकते थे। आडम्बर ही तो है। इस समय हस्तिनापुर का राजमहल भारतवर्ष के सौ से अधिक राजा-महाराजाओं के अतिरिक्त, हजारों दरबारियों और कुलीन लोगों की मेजबानी कर रहा है। बस, ताऊजी को छोड़कर, भीष्म ने दुखपूर्वक विचार किया। राजा बहलिक ने अपने पुत्र सोमदत्त को, उसके लिए बहुत सारे मूल्यवान उपहारों के साथ भेजा था, पर रानी के लिए एक भी उपहार नहीं था। बहलिक उन्हें कभी क्षमा नहीं कर पाएँगे।

राजमहल रानी के समान ही दीप्तिमान था। वो अपने रत्नों और रेशमी वस्त्रों में बिलकुल राजसी लग रही थीं। वो आखिर, युवराज की माता थीं। वो शालीन स्वामिनी की भूमिका निभाती हुई अतिथियों के साथ घुलमिल रही थीं और उनकी देखभाल कर रही थीं। उनके चेहरे पर वही प्रशस्तिपूर्ण मुस्कान थी जो उन्होंने ऐसे अवसरों के लिए आरक्षित करके रखी हुई थी।

भीष्म को अपने कंधे पर किसी के हाथ का स्पर्श अनुभव हुआ। वो पीछे मुँझे तो शान्तनु राजकुमार मत्स्य और उनके पिता चेदि के राजा, उपरिचर वसु के साथ खड़े थे। भीष्म उनसे पहली बार मिल रहा था, और वो पिता और पुत्र की समानता देखकर दंग रह गया था। दोनों बहुत समान लग रहे थे—लम्बे, गोरे, भूरी आँखें, पतले चेहरे, उभरे हुए जबड़े और लम्बी, तीखी नाक...

राजा उपरिचर वसु हँसमुख और मिलनसार थे, पर उनका पुत्र उग्र लग रहा था।

“आपकी यात्रा कैसी रही?” भीष्म ने शिष्टता से पूछा।

“अत्यन्त तीव्र!” राजा वसु हँसते हुए बोले। “मेरे विमान के कारण, जो मुझे मेरे पूर्वज राजा यथाति से विरासत में मिला। उन्होंने उसे मुझे देना योग्य समझा, तुम्हारे परिवार के बजाय हम पर कृपादृष्टि की, शान्तनु!”

भीष्म उनके परिवार की कहानी जानता था। उसे ये भी जानकारी थी कि राजा वसु सदैव अपने विमान में ही यात्रा करते थे। उनकी कहानियाँ भी उन्हीं की तरह दिलचस्प थीं।

“ये तुम्हारे नए राजकुमार के जन्म के उपलक्ष्य में भव्य उत्सव है,” वसु अलंकृत राजमहल को देखते हुए बोले। “शान्तनु, तुम्हारे नए पुत्र के जन्म पर बहुत बधाई।” वे यंत्रवत ढंग से बोले।

शान्तनु ने हल्के से सिर हिलाकर अभिवादन स्वीकार किया।

“वो मछुआरिन है न?” वसु ने हँसते हुए पूछा।

भीष्म ने अपने पिताजी को झिझकते देखा। चेदिराज अनगढ़ तरीके से जिज्ञासु हो रहे थे।

“हाँ, मत्स्यगंधा मछुआरों के समुदाय से आती है,” शान्तनु ने संक्षिप्त रूप में कहा। “आपने अपने पुत्र का नाम मत्स्य क्यों रखा है? उसका उस समुदाय से कोई सम्बन्ध तो नहीं है न?” शान्तनु ने भोलेपन से पूछा।

वसु हल्के से मुस्कुराए। “तुम तो जानते हो, मत्स्य, अप्सरा अद्रिका और मेरा दिव्य पुत्र है, और मेरे, रानी गिरिका के साथ पाँच अन्य पुत्र भी हैं। जैसा अप्सराएँ अक्सर करती हैं, अद्रिका ने इसे त्याग दिया। एक मछुआरे ने इसे पाया और इसीलिए मैंने इसका नाम उसी समुदाय के पीछे रख दिया जिसने इसकी जान बचाई। मत्स्य इस बात का सम्मान करता है और मैंने इसके लिए जो राज्य बनाया, उसका भी नाम मत्स्य रखा है—और हमारा राष्ट्र-चिह्न भी मत्स्य ही है।”

भीष्म की उँगलियाँ मुट्ठी में कस गई, उसे रानी के पक्ष में बोलने की तीव्र इच्छा हुई। वो केवल अपने जन्म के कारण, इस मनुष्य की निंदा की पात्र नहीं हो सकतीं। पर, वो कुछ कहता, उससे पहले ही शान्तनु बोल पड़े।

“विचित्र बात है, आप उस मछुआरे को बहुत श्रेय देते हैं, लेकिन मैंने तो एक कदम आगे जाकर एक मछुआरिन से विवाह किया और उसे अपनी रानी के पद पर आसीन किया।”

भीष्म ने उन्हें आश्वर्य से देखा, क्योंकि उसके पिताजी अतिथियों के साथ कभी अशिष्ट व्यवहार नहीं करते थे। उसके पिता को रानी के मछुआरिन होने की कोई लज्जा नहीं थी, पर, उन्होंने कभी इतने खुलेपन से उनका पक्ष भी नहीं लिया था। “उसके पिता, दशराज, उस समुदाय के मुखिया हैं,” चेदिराज की नज़रों में अपनी रानी की प्रतिष्ठा बढ़ाने का प्रयत्न करते हुए शान्तनु आगे बोले।

चेदि के राजा का चेहरा श्वेत पड़ गया और वे सत्यवती की ओर देखते रह गए, जो अब संगमरमर की सीढ़ियों से चढ़ती हुई ऊपर मंच तक पहुँच गई थी। चेदिराज के चेहरे पर एक साथ कई भाव थे।

वो राजा सुरसेन से बात कर रही थीं, और ध्यान से उनकी बातें सुन रही थीं। वह कोई मूर्ख रानी नहीं थीं; वो न तो विवेकहीन थीं और न ही नासमझ; उन्होंने कभी व्यावहारिक समझ और विवेक की कमी नहीं दिखाई। बल्कि, वो अत्यन्त चतुर महिला सिद्ध हुई, जिनमें राजा की पत्नी होने का दब्बूपन नहीं था।

यदि संसार उन्हें कपटी समझता था, तो उन्हें उस समय पता नहीं था कि उन्होंने इस समारोह के बहाने चालाक सुरसेन के राजा से संधि कर ली थी। भीष्म ने उन्हें सुरसेन से सावधान रहने के लिए कहा था, पर उन्होंने सरलता से उसे सूचित किया था कि वो उन्हें शब्दों से ही मना लेगी, युद्ध से नहीं। उन्होंने अपनी चाल चल दी थी, और हमेशा की तरह जीत भी गई थीं। दोनों सम्मति पाकर हँस रहे थे, जब उसने शान्तनु और भीष्म को नीचे भवन में देखा।

“क्या आप रानी से मिलना चाहेंगे, राजा वसु?” भीष्म ने विनम्रता से पूछा।

सत्यवती ने तभी उनकी दिशा में देखा और उनकी आँखें मिलीं। भीष्म ने देखा कि वो उसके बगल में खड़े दोनों अतिथियों को पहचान गई थीं। भीष्म अपना आश्वर्य छिपा नहीं पाया। वो इन्हें पहचानती हैं। पर वो कभी चेदि के राजा या उनके पुत्र मत्स्य से आज तक नहीं मिली थीं; हाँ, सत्यवती जानती थीं कि इन्हें इस समारोह में आमंत्रित किया गया था। भीष्म ने देखा कि सत्यवती के चेहरे से मुस्कान गायब हो गई; उनकी आँखें अचानक संवेदना से भर गई थीं।

जब सत्यवती ने अपने पिता को पहली बार देखा तो वो सुन्न रह गई। उन्होंने इस भेंट की कल्पना हजारों बार की थी। चेदि के प्रख्यात राजा वसु को मिलने पर उनकी प्रतिक्रिया क्या होगी? उस मनुष्य से मिलकर, जिसने उन्हें अपने जीवन से कचरे की तरह बाहर फेंक दिया था? उसे अपने प्रश्न का उत्तर भी वहीं मिल गया। पिता और पुत्र को देखते ही वो समझ गई कि उन्होंने उसे अपनी पुत्री के रूप में क्यों स्वीकार नहीं किया था। राजकुमार मत्स्य उसका जुड़वां भाई था, लेकिन उसके जैसा बिलकुल नहीं था। जहाँ उसकी त्वचा काली थी, बाल और आँखें गहरे काले थे, मत्स्य का रंग फीका था, आँखें हल्की भूरी थीं, वो उसके पिता के जैसे ही सुन्दर था। वो स्पष्ट रूप से अपनी माँ के जैसी थी, ऐसी स्मृति जो चेदिराज याद नहीं करना कहते थे। क्या वो मात्र प्राकृतिक अपभ्रंश थी और सम्मानित गौर-वर्ण राजसी चेदि परिवार के लिए अयोग्य?

क्या वो उनसे मिलना चाहती थीं? वो उनसे मुँह मोड़कर जा भी सकती थी, जैसा उन्होंने उसके साथ वर्षों पहले किया था। क्या वो भी उन्हें लज्जा से तड़पते देखना चाहती थी?

सत्यवती ने देखा कि राजा का चेहरा पहले से ही लज्जा से लाल हो गया था। क्या वो लज्जा थी, अटपटापन था या आत्मदमन था? वो समझ गई की वे उसे पहचान गए थे; पर उनका सामना करने का साहस नहीं कर पा रहे थे।

अनजाने में ही वो उनकी ओर बढ़ने लगीं। वो निर्णय ले चुकी थीं।

उनका भाई अपनी युवा पत्नी रेक्तवती से बातें कर रहा था, पर खुले आश्र्वय से सत्यवती को अपनी ओर आते देख रहा था। कदाचित उसे अपने पिता के छल के बारे में कुछ पता नहीं था और उसे अपनी बहन के विषय में नहीं बताया गया था। सत्यवती ने उन्हें छोटी-सी मुस्कान दी जो न मित्रतापूर्ण थी और न ही प्रतिकूल; मुस्कान ऐसी थी जैसे वो किसी अज्ञात अतिथि का स्वागत कर रही हों।

राजा वसु निर्लिप्त होने का ढोंग करते हुए खड़े थे, जैसे कि जो कुछ भी होने या कहा जाने वाला था, उससे वे बिलकुल बेपरवाह थे, पर उनकी आँखें चौड़ी हो गई थीं। भीष्म ने उनके भाव को झट से पकड़ लिया और देखा कि वे अचानक शान्त हो गए थे। भीष्म को सत्यवती के कदमों के साथ उनकी बढ़ती बेचैनी महसूस हो रही थी...।

सत्यवती के पास अभी भी समय था। उनकी धड़कनें तेज हो गई थीं और हाथ पसीने से चिपचिपे हो रहे थे। उन्हें अचानक अपने भाई और पिता से मिलने की इच्छा नहीं हो रही थी। वो एक तीव्र और स्वाभाविक निर्णय था। वो उनका सामना नहीं कर सकती थीं। भवन में उपस्थित अन्य लोगों की तरह ही वे भी धनवान और शक्तिशाली थे—और अब ऐसे लोगों में उसकी बिलकुल दिलचस्पी नहीं थी। वो भी उन्हीं के जैसी ही थी : धनवान, सुन्दर और शक्तिशाली।

सत्यवती ने अपने पिता के लिए अपनी वर्षों पुरानी घृणा को स्मरण किया। उन्होंने उस भावना को दोबारा अनुभव करने का भरसक प्रयास किया, लेकिन विफल रहीं। उनके पिता के झुर्री-भरे चेहरे ने उनकी घृणा के अंगारों को बुझा दिया, और इस समय वो केवल उदासीन थीं। उनके दमकते सोने के मुकुट ने उन्हें शक्ति, प्रतिष्ठा और दुख के अस्थाई और क्षणिक स्वरूप को दर्शा दिया था। वो सुरसेन के राजा से वार्तालाप करती रहीं, जो उनके साथ अब संगमरमर की सीढ़ियों से उतर रहे थे। सत्यवती ने जानबूझकर अपना चेहरा चेदिराज से दूर कर लिया। वो इनसे नहीं मिलना चाहतीं, और चेदि के राजा भी उनसे नहीं मिलना चाहते, भीष्म ने चेदिराज के विवर्ण चेहरे को देखकर विचार किया।

शान्तनु ने ये सब कुछ देखा भी नहीं था; क्योंकि वे राजकुमार मत्स्य और उसकी पत्नी से बात कर रहे थे। सत्यवती उनके बगल से—दूसरी तरफ देखती हुई, उदासीन आँखों और राजसी अहंकार के साथ गुजर गई।

“यदि संधि काम नहीं आती, सेना अवश्य काम आएगी,” सुरसेन के राजा जोर से हँसते हुए बोल रहे थे।

अचानक सत्यवती सारे आडम्बर और भोग-विलास से दूर भाग जाना चाहती थीं। अभी भी बहुत सारे लोग समारोह में आ रहे थे—हर महिला हीरे-जड़ित गहने और रेशमी वस्त्रों में लदी हुई थी। उनमें से कुछ उन्हें उत्सुकतापूर्वक देख रही थीं और कुछ

घृणा और दुर्भावना भरी दृष्टि से, उसी तरह जैसे धनवान लोग दरिद्रों को हमेशा से देखते आए हैं। अन्य लोग अपनी उत्सुकता को सन्तुष्ट करने के लिए उन्हें घूरते रहते और दोबारा अपनी सामूहिक अचैतन्य में खो जाते। उस पूरे समारोह में एक विचित्र-सी साधारणता छा गई थी और सब कुछ अत्यन्त नीरस हो गया था। हर कोई अपने आपको दूसरे से श्रेष्ठ सिद्ध करने में लगा हुआ था; सब एक ही खेल, खेल रहे थे; सब एक दूसरे के जैसे ही दिख रहे थे। अचानक उस विशाल भवन में सत्यवती को घुटन-सी होने लगी। वो सुरसेन के राजा से क्षमा माँगती हुई, अपने पुत्र को देखने का बहाना करती हुई वहाँ से बाहर निकलने लगीं।

उन्होंने एक क्षण के लिए रुककर पीछे मुड़कर देखा, युवा संतरी तनकर सजे हुए भव्य पालने में सोते हुए राजकुमार के पास खड़े थे। वो अलंकृत भवन से होती हुई निकटतम निकास के पास गई। वो अपने आपको सँभालने के लिए थोड़ी देर अकेले रहना चाहती थी। वो अपने शान्तिपूर्ण कक्ष में जाकर बैठ जाना चाहती थीं, किन्तु वहाँ भी सैनिक खड़े होंगे और उन्हें इस विशाल राजमहल में कहीं भी एकांत अनुभव नहीं होगा।

आखिरकार सत्यवती को एक शान्त कुंज मिला, जहाँ बैठकर उन्होंने चैन की सांस ली। वो आत्म-घृणा से भर गई थीं: उन्होंने अवसर मिलने पर भी अपने दोषी का सामना क्यों नहीं किया? क्या ये कायरता थी या विलम्ब? या कोई निर्बलता जिसे वो स्वीकारना नहीं चाहती थीं? या कोई घाव जिसे उन्होंने बढ़ने दिया? क्या वो कभी ठीक होगा?

उनके मन में एक ही विचार था; वो उस व्यक्ति को नहीं देख सकती थीं, जिससे घृणा करती हुई वो बड़ी हुई थीं। उनके पेट में मरोड़-सी होने लगी। वो उनके राजमहल में, उनके घर, उनके आश्रय में उपस्थित था। जो घृणा उन्हें उस भवन में उसे देखकर नहीं हुई, अब उन्हें तीव्रता से घेरने लगी थी। वो भागकर अपनी सारी दुर्भाग्यपूर्ण स्मृतियों के साथ उसे अपने जीवन से बाहर निकाल देना चाहती थी। वो उसे अभिशाप देना चाहती थी, उसे जी भरकर अपशब्द कहना चाहती थीं।

“हाँ, मैं क्रोधित हूँ: क्रोधित!” सत्यवती दोहराती रहीं और उनकी आँखों में आँसू भर आए। वो अपना सिर पकड़कर मन-ही-मन चिल्लाई, “मुझे उससे घृणा है! और कितनी घृणा करूँ?”

सत्यवती फूट-फूटकर रोने लगीं और आँसुओं की धारा बह निकली। उनके अन्दर का क्रोध, उनका जीवन क्या हो सकता था, और वास्तव में क्या था, उनके कष्ट, उनकी पीड़ा, इन सब विचारों के साथ मिलकर आँसुओं के साथ बह रहा था। उन्हें यहाँ तक पहुँचने के लिए जो कुछ करना पड़ा, वो सब कुछ सोचकर वो जोर से रो पड़ीं।

क्या यही वो स्मृतियाँ थीं जो उन्हें अपने पिता से विरासत में प्राप्त होंगी? घृणा, क्रोध और आक्रामकता... क्या ये अब उनका अभिन्न अंश बन गए थे? क्या इसलिए उन्हें अपने आसपास की दुनिया और उसके लोगों से घृणा होती थी? जहाँ तक उनका प्रश्न था, उसके पिता तो दानव थे। उन्हें उस दुर्बल वृद्ध से कोई भय नहीं था। असल में उन्हें सत्यवती के क्रोध का अनुभव करना चाहिए था, परन्तु वो उनका सामना क्यों नहीं कर पा रही थीं?

सत्यवती उस विचार से कांप गई, और उस शान्त बरामदे की आड़ में उन्होंने गहरी सांस ली। उन्हें पता ही नहीं चला कि वो वहाँ कितनी देर तक थीं; स्थिर और मौन; जहाँ उनके अन्दर वही अविस्मरणीय भावनाएँ उथल-पुथल मचा रहीं थीं—घृणा, क्रोध, पीड़ा और अपमान!

बरामदे के एक कोने में भीष्म खड़ा था; वो वहाँ कुछ समय पहले ही आया था। उसकी आशंका तीव्र होती जा रही थी। ये वो सत्यवती नहीं थीं जिसे वो जानता था, हमेशा आश्वस्त और निर्मम, जिन्हें किसी के लिए, और न ही अपने लिए कोई दया-भाव या सहानुभूति थी। उनके ढीले कंधे, द्वुका हुआ सिर, खम्भे से टिका हुआ उनका दुर्बल शरीर किसी अनजान और विचित्र आत्म-समर्पण को दर्शा रहा था? लेकिन किससे? वो उनके मौन और उनकी क्लांत सांसों को सुनता हुआ खड़ा रहा।

वो अचानक मुड़ी, जैसे उन्होंने भीष्म की उपस्थिति को महसूस कर लिया हो। उनका चेहरा पसीने और आँसुओं से भीगा हुआ था। भीष्म उनके चेहरे और आँखों में स्पष्ट झलकती पीड़ा देखकर लड़खड़ा गया। उसने सत्यवती को आज तक कभी रोते हुए नहीं देखा था; सत्य तो ये था कि उसने किसी को भी आज तक इस तरह निराशापूर्वक रोते नहीं देखा था। उसे सत्यवती की दशा को देखकर अन्तिम सांसें गिन रही हिरणी की याद आ गई।

वह अपने आँसू रोकने के लिए आँखें झापकाने लग गई। भीष्म ने उनकी गहरी, काली आँखों में आशंका नहीं बल्कि लज्जा देखी, जैसे कि वो भूल गई थी कि वह कहाँ थीं, और कौन थीं। उसने सत्यवती को अवांछनीय और असुरक्षित स्थिति में देख लिया था। वो शीघ्रता से अपने आपको सँभालती हुई अपनी विशेष मुस्कुराहट के साथ सीधी खड़ी हुई। फिर भी वो अपना नियमित आत्मसंयम और धैर्य नहीं जुटा पाई। सत्यवती अभी भी आहत हिरणी जैसी ही लग रही थी, बड़ी-बड़ी त्रस्त आँखों से उसे देखती हुई।

भीष्म अब उनके निकट खड़ा था, और उसे लगा कि यद्यपि वो सीधी खड़ी थीं, छोटी और दुर्बल लग रही थी, जैसे ऐसे किसी बात से घबराई हुई, जिसका वह सामना नहीं करना चाहती हों।

इसका सम्बन्ध चेदि के राजा से अवश्य था, किन्तु क्या? उस मनुष्य में ऐसी कौन-सी बात थी जिसने सत्यवती को इतना त्रस्त कर दिया था? राजा वसु भी उतने ही

पीड़ित लग रहे थे। पर राजकुमार मत्स्य नहीं; उसे इस तनाव के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। भीष्म विचार करता रहा और अचानक एक झटके में उसे सब कुछ स्पष्ट हो गया।

दोनों कुछ समय तक निस्तब्ध खड़े रहे, वो उससे नज़रें छिपाती रहीं। उन्हें अन्दर से तोड़ने का यही एक अवसर था, पर असाधारण बात ये थी कि भीष्म भी उनकी पीड़ा में छूब रहा था। उनकी पीड़ा ने उन्हें खोखला कर दिया था—निशस्त्र योद्धा की तरह असुरक्षित।

भीष्म की उपस्थिति, इतने समीप और स्नेही; उन्हें डरावना भी लग रहा था। उन्होंने अपनी उँगलियाँ मरोड़ना रोक दिया।

“राजा वसु?” भीष्म ने अचानक पूछा, पर उसकी आवाज़ रौबदार नहीं थी; वो तो इतनी कोमल थी कि सत्यवती को लगा जैसे उसका हृदय फट जाएगा और वो दोबारा हजारों आँसुओं में बह जाएँगी।

सत्यवती का चेहरा अचानक रक्तहीन हो गया और सहसा उसमें रंग वापस भी आ गया। भीष्म ने कैसे अनुमान लगाया होगा? वो घबराकर विचार करने लगी। उसे तो मेरे विषय में कोई जानकारी नहीं है; मैंने तो आज तक ये बातें किसी से नहीं कहीं हैं; फिर भी वो जानता है... कैसे? सबसे अच्छा हथियार तो खंडन ही होगा, किन्तु उसकी स्थिर, आँखों को देखकर वो अन्दर से चूर-चूर हो गई। उनकी आवाज़ उनके कंठ में ही रह गई। उनके उत्तर का कोई अर्थ नहीं था : वो सत्य जानता था। उनके सत्य को।

सत्यवती ने विरोध करने के लिए अपना मुँह खोला, पर कोई आवाज़ नहीं आयी; उनके शब्द रोके हुए आँसुओं में दफन हो गए थे। भीष्म ने उनकी आँखों में पीड़ा और भय की झलक भड़कती देखी। वो भयभीत थीं कि उसे सत्य का पता चल गया था। वो उन्हें आश्वस्त करना चाहता था कि भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं थी, पर, वो कुछ कहता, उससे पहले ही वो जोर से सिर हिलाती हुई कांपती आवाज़ में बोलीं, “मत..., नहीं...!” वो अपने आँसुओं को रोकने का भरसक प्रयत्न कर रही थीं, सिसकियों को दबाने का प्रयास कर रही थीं।

**क्या मत करना :** शब्दों से कुरेदना, या उसके रहस्य को पिताजी से कहना? भीष्म उन्हें इस स्थिति में देख नहीं पा रहा था। उनकी सच्चाई ने उन्हें अनावृत और असुरक्षित कर दिया था। ये स्त्री, जो उसे हर तरह से पराजित कर, उसे नीचा दिखाना चाहती थी; आज उनका अहंकार और क्रोध कहीं खो गया था। अब भीष्म में इतनी शक्ति थी कि वो जब चाहे उसे परास्त कर सकता था, पासा पलट सकता था और उन्हें निराशा की गहराइयों में उसी तरह डुबा सकता था, जैसा उन्होंने किया था। उसे सन्देह था कि वो दुखी कम और क्रोधित अधिक थीं; त्यक्त पुत्री के क्रोध से भरी। उनकी एक ही आशा

थी कि उन्हें अपनाया जाए, मान्यता दी जाए, पर सब कुछ अभिलाषा और दृढ़-निश्चय की कथा में परिवर्तित हो गया।

उनकी सिसकियों के बीच, भीष्म को सत्यवती का असली रूप समझ में आ गया —वो ऐसी बच्ची थी जो राजकुमारी बन सकती थी, पर त्यक्त कर दी गई और भुला दी गई। अब उसे स्पष्ट हो गया कि सत्यवती की तीव्र अभिलाषा और महत्वाकांक्षा का स्रोत क्या था। उनकी निष्ठुरता, उनकी उत्तरजीविता की लड़ाई का एकमात्र शस्त्र था। विजय के लिए कोई भी उपाय घृणायोग्य नहीं, कोई माध्यम निंदनीय नहीं। वो शान्तनु की, उसकी या हस्तिनापुर की ऋणी क्यों रहें, समाज के लिए उत्तरदायी क्यों रहें और उनके नियमों का अनुसरण क्यों करें? भीष्म को अब दशराज का व्यवहार भी स्पष्टता से समझ में आ गया; वो तो केवल इस बात का ध्यान रख रहे थे कि कहीं इतिहास दोहराया न जाए।

भीष्म को उन्हें छूने से डर लग रहा था, शब्दों और भावनाओं से सांत्वना देने से भी। उसे पता था कि दिलासा के शब्दों को वो विद्वेष की दृष्टि से ही देखेंगी। उनके सत्य को जानने के कारण वो अब उससे घृणा करती थीं।

दोनों ने कुछ क्षणों के लिए एक दूसरे को देखा, और भीष्म ने अपनी दृष्टि फेर ली। वो समझ गया था कि उसे क्या करना है; उसके पास एक ही विकल्प था। करुणा, सहानुभूति और विवेकहीन असहायता ने उसके शब्द छीन लिए थे। वो अपने होंठ सिकोड़ते हुए, सिर झुकाते हुए मुड़ा, और शान्तिपूर्वक उन्हें अभिव्यक्ति का अवकाश देता हुआ वहाँ से चला गया।

वो मुड़कर, छलकती आँखों से भीष्म को जाते देखती रहीं। उन्हें अपने हृदय की धड़कनें जोरों से सुनाई दे रहीं थीं। वो तो चला गया था, लेकिन उसकी अनकही बातें उनके पास ही मंडरा रही थीं। अब वो कैसे भूल सकती थीं कि भीष्म उनकी सच्चाई जान गया था? नए सिरे से आँसू उनकी आँखों से बह निकले और उनकी साड़ी को स्मृतियों से मलिन करने लगे।

मनोव्यथा के कारण उनके अन्दर कुछ टूट-सा गया था। उन्हें लगा जैसे घृणा, क्रोध, प्रतिशोध और अपमान की कोख से उनका पुनर्जन्म हुआ था। उन्हें अपनी टूटी-फूटी झोपड़ी, वृद्ध बाबा, पड़ोसियों, और मित्रों की याद आयी। उन्हें ये भी याद आया कि उन्होंने अनजाने ही वर्षों पहले अपनी कमियों पर विजय पा ली थी। अब वो एक ही बात जानती थीं—राजा वसु को देखने से पहले, रानी की पदवी का कोई अर्थ था : उन्हें अब वो निरर्थक लगने लगा था।

आँसुओं के साथ उसकी घृणा और दुख भी सूख गए। अब वो अपने जीवन की हर सम्भावना का स्वागत करने के लिए तत्पर थीं। वो मुक्त थीं : अपने क्रोध और कड़वाहट को त्यागने के लिए और साथ-साथ प्रसन्न रहने के लिए। जीवन मूर्खतापूर्ण

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

और निष्ठुर था और वो उससे अवश्य लड़ेंगी। उन्हें अब अपना राजमुकुट कुछ हल्का लगने लगा था।

Novels English & Hindi

## मृत्यु

उन दोनों के बीच फिर से विवाद छिड़ गया था। सत्यवती को लगता था कि शान्तनु में शक्ति बहुत कम थी, और वे उसे उनके साथ लड़ने के लिए ही बचाए रखते थे।

“तुमने राजमुकुट, राज्य और देव के अधिकार छीन लिए... तुम्हारे अब दो पुत्र हैं, तुम्हारे पिता राजदरबार में मंत्री हैं...” शान्तनु कह रहे थे। “फिर भी तुम असुरक्षित हो। या कहीं ये तुम्हारा लोभ तो नहीं?” वे बड़बड़ा रहे थे। ये बहुत गम्भीर आरोप था, परन्तु, अब सत्यवती को आदत-सी पड़ गई थी। ये अपने अपराध-बोध को कम करने का उनका तरीका था।

“यदि आप वही कहना चाहते हैं तो, मैं देव को लेकर असुरक्षित नहीं हूँ,” वो शान्तिपूर्वक बोलीं। “वो मेरे पुत्रों से अपनी सन्तान की तरह स्नेह करता है; वो उनके पिता समान है, और उसने उनके पालन-पोषण और शिक्षा-दीक्षा का पूरा दायित्व ले लिया है।”

“ये उसका राज्य था। उसके अपने पुत्र होने चाहिए थे; न कि अपने सौतेले भाइयों की देखभाल करता रहे!” शान्तनु दुखी होकर बोले। वे अपनी शय्या पर बेचैन होकर करवटें बदल रहे थे। छह महीने पहले, अपने दूसरे पुत्र के जन्म के समय से ही वे बीमारी से ग्रस्त थे। “दोनों अभी बहुत छोटे हैं मत्स्यगंधा! जैसा तुम चाहती हो, चित्रांगद को युवराज नहीं घोषित किया जा सकता। उसे सही आयु का होना होगा; वो तो अभी मात्र पाँच वर्ष का है!” शान्तनु खाँसते हुए क्रोधपूर्वक बोले। मैं छोटे-से बच्चे को युवराज कैसे बना दूँ जब सबसे योग्य, मेरा भीष्म, राजसिंहासन पर है!”

वो उनके पसीने से गीले माथे को पोंछती हुई बोलीं, “देव तो हमेशा रहेगा। उसने तो राजसिंहासन और हस्तिनापुर के राजा के साथ निष्ठा का वचन दिया है,” सत्यवती सहजता से अपने भ्रान्तिग्रस्त पति को यथार्थ की याद दिलाती हुई बोली।

“देव ही राजा है, और कोई नहीं,” वे हठ करते हुए बड़बड़ाए। “लोग किसी और को स्वीकार नहीं करेंगे।”

“लोगों ने मुझे और हमारे पुत्रों को स्वीकार कर लिया है...”

शान्तनु उपहासपूर्वक फुफकारते हुए बोले, “देव जितना तो कभी नहीं!”

सत्यवती ने अपने नन्हे पुत्र को छाती से लगाया, मानो अपने आपको आश्वस्त कर रही हो कि अब उसके पास दो पुत्र—उसके दो उत्तराधिकारी थे।

“मैं उसे राजा बनाना चाहता हूँ।” शान्तनु ने आह भरते हुए स्वीकार किया। “पर, मैं चाहूँ, फिर भी... तुम सहमति नहीं दोगी, और भीष्म भी नहीं मानेगा...” वे हताश होकर शान्त हो गए।

“वो अपनी प्रतिज्ञा कभी नहीं तोड़ेगा, कदापि नहीं,” सत्यवती विश्वासपूर्वक बोलीं।

शान्तनु उसे कठोरता से देखते हुए बोले, “तुम उसे अच्छी तरह से जान गई हो न?” उनकी आँखें रोष से चमकने लगीं।

सत्यवती की धड़कनें रुक गईं। शान्तनु क्या जानते थे?

“तुम भली-भाँति जानती हो कि भीष्म तुम्हारे या तुम्हारे पुत्रों का विरोध कभी नहीं करेगा,” वे बोले, और उनकी सांसें लौट आईं। “वो अत्यन्त निष्ठावान है; सबसे बुरी बात ये है कि वो तुम्हें और तुम्हारी चालाकी को केवल इसलिए सह लेगा क्योंकि तुम मेरी पत्नी हो और वो दोनों मेरे पुत्र, उसके भाई हैं।” वे क्रोध से उबलते हुए बोले। “हस्तिनापुर की प्रजा को, और मुझे उस प्रतिज्ञा का दुष्परिणाम भुगतना होगा जिसे तुमने उसे लेने के लिए बाध्य किया!” वे उस पर आरोप लगाते हुए दुखी स्वर में बोले।

“मैंने उसे कुछ भी करने के लिए विवश नहीं किया। उसने प्रतिज्ञा स्वेच्छा से की, शान्तनु, आपके लिए।” सत्यवती ने उन्हें टोकते हुए कहा।

शान्तनु अत्यन्त उत्तेजित हो गए। “उसकी उदारता मेरे लिए बोझ बन गई है; ये क्रूरता है। मैं उसकी निर्दयता सह लूँगा... ओह मेरे देव! ये मैंने क्या कर दिया!” वे खुलकर जोरों से रोने लगे।

सत्यवती अपने पति को रोते हुए देखती रही; उनके झुर्री-भरे चेहरे की निराशा देखकर उसका हृदय बैठा जा रहा था। वे अपने-आपको बहुत अधिक पीड़ा दे रहे थे; वे अपने पुत्र की दुर्दशा के लिए स्वयं को कभी क्षमा नहीं कर पाएँगे। और न ही उसे। वे अपने दुख और अपराध के लिए उसे ही दोषी मानते थे; अब सत्यवती उनके लिए असह्य हो गई थी; प्रेम, कड़वाहट में बदल गया था।

“आप बार-बार उसी बात को क्यों दोहराते रहते हैं?” सत्यवती ने निवेदन करते हुए पूछा। अपने-आप पर इतना कठोर मत बनिएँ; आपका स्वास्थ्य और बिगड़ जाएगा। आप अपने-आपको मार रहे हैं।”

शान्तनु ने उसका हाथ झटकते हुए कहा। “इस तरह जीने से तो मर जाना अच्छा है—तुम्हारे साथ जीने से! काश मैं तुमसे नहीं मिला होता!”

“यदि आप अपने अपराधबोध के साथ नहीं जी सकते तो, मुझे उसका दोष मत दीजिए,” वो दुखी होकर बोलीं।

“क्या तुम्हें, कभी, क्षणभर के लिए भी पछतावा नहीं होता?” वे चिल्लाए। “तुम्हें इसका दंड भुगतना ही होगा; तुम्हें अपने सारे पापों का हिसाब देना होगा!” उन्होंने घृणापूर्वक आँखें बन्द कर लीं।

शान्तनु ने अपने उत्तेजित मन में उसे देखा; वो वीभत्स थी। उन्होंने आँखें खोलीं तो वे विरक्ति से घिरी हुई थीं। उन्होंने उसके शरीर पर दृष्टि दौड़ाई—युवा, लचीली और बलपूर्ण—उन्होंने विचार किया। मैं एक महिला से मिला और उसने मुझमें वासना की अग्नि जला दी। मैं उसके अतिरिक्त कुछ सोच ही नहीं पाया; न मेरी गंगा, न मेरे पुत्र, न मेरे राज्य और न मेरे सिंहासन के विषय में। मुझे लगा, इसके जैसा संसार और कोई नहीं। फिर पता नहीं क्या हुआ... और सब कुछ समाप्त हो गया। समाप्त! वो उनके लिए पी हुई मदिरा की प्याली जितना ही अर्थ रखती थी। कितनी तुच्छ? वो स्वयं कितने तुच्छ थे...?

“एक पथभ्रष्ट नैतिकतावादी मुझे मेरे पापों के विषय में बता रहे हैं?” सत्यवती दुखपूर्वक हँसती हुई, खड़ी होती हुई बोली। आप पुरुष कितने स्वार्थी होते हो, घृणास्पद हैं! मैंने आपके बारे में बहुत कहानियाँ सुनी हैं, मेरे प्रिय पतिदेव। और सभी प्रशंसनीय नहीं हैं। यदि मैं विवाह के लिए हठ नहीं करती, तो आपकी वेश्या होती, पत्नी नहीं और रानी तो कदापि नहीं!” वो तिरस्कारपूर्वक बोलीं। “मैं नहीं जानती आप इस तरह श्रेष्ठ और सज्जन होने का ढोंग कैसे कर सकते हैं, जब आपने ही सब कुछ आरम्भ किया और उसका अन्त भी,” वो अपने पति के विवरण चेहरे और विद्वेष से चमकती आँखों को देखते हुए रुकी। “आप बिलकुल सत्य कह रहे हैं, शान्तनु,” वो उनका मुँह पोंछने के लिए झुकती हुई बोलीं। “आपको इस तरह दुखी देखकर मुझे भी बहुत दुख होता है,” उन्होंने घृणापूर्वक आगे कहा। “याद रहे, आप ही ने मेरा पीछा किया था, मेरी शर्तों के बावजूद मुझसे विवाह करना चाहा। मैंने आपको कभी धोखा नहीं दिया, शान्तनु; आपने अपने-आपको, अपने पुत्र और अपनी प्रजा को मूर्ख बनाया!” सत्यवती उदास मुस्कुराहट के साथ बोलीं। “आपने मुझे रानी बनाया, और अपने पुत्र को अपदस्थ किया। वो आप ही थे जिन्होंने सारे निर्णय किए। ये आपकी इच्छा थी; मेरा निर्णय कभी नहीं।”

शान्तनु उसके भावहीन तर्क से अचम्भित रह गए। वो सही कह रही थी। उन्होंने स्वयं को, अपने पुत्र और हस्तिनापुर की नियति को नष्ट कर दिया था। उन्हें सब कुछ उतना ही निंदनीय लग रहा था, जितनी उन्हें सत्यवती से घृणा हो रही थी। वे इतनी निर्मम औरत से कैसे प्रेम कर बैठे? वो अत्यन्त आकर्षक महिला थी, किन्तु गंगा जैसी नहीं। वो गंगा के बिलकुल विपरीत थी; साँवली, सुन्दर, बड़ी-बड़ी आकर्षक आँखें और ऐसा सुभग शरीर जिससे वे अपने-आपको दूर नहीं कर पाते थे। इस समय, दो पुत्रों के जन्म के बाद भी, उसके वक्ष भरे-पूरे थे, उसकी कमर पतली थी, नितम्ब चौड़े थे और

उसके पैर लम्बे और पतले थे, जिनसे सम्भोग के समय वो उन्हें लपेट लेती थी। उन्होंने अपने जबड़े कस लिए, हर विचार के साथ लालसा की तरंग उनके कण-कण में दौड़ जाती। वो उससे एक ही समय में लालायित और घृणित कैसे हो सकते थे? वे उस पर मर-मिटे थे और अपना सब कुछ दाँव पर लगा दिया था। अब वे निश्चित थे कि उसने उनसे कभी प्रेम किया ही नहीं था।

उनके भाई के क्रोधपूर्ण शब्दों के अतिरिक्त, उनके सुहागरात से ही उन्हें सचेत हो जाना चाहिए था। उस रात कोई उत्कंठा या प्रेम नहीं था, उसने अपने-आपको उन्हें सौंप दिया था, और उन्हें लगा कि समय के साथ वे उसे उत्तेजित कर सकते थे, पर वे विफल रहे। फिर उन्हें ज्ञात हुआ कि उसका एकमात्र लक्ष्य था—सत्ता और अधिकार पाना, रानी बनना। वे उसके प्रेमजाल में ऐसे फँसे थे कि उन्होंने उसकी हर इच्छा पूरी की। मैंने उसे मेरे पुत्र के अधिकार का हरण करने दिया, उनके अन्दर से आवाज़ आयी। वे अपने-आपको कभी क्षमा नहीं कर पाएँगे और इस अपराध-बोध से कभी मुक्त नहीं हो पाएँगे। उन्हें लगता था जैसे वे किसी परिचित वितल की धार पर चल रहे हों, वो अथाह जिसके अन्दर वे कुछ महीनों से झाँक रहे थे। वितल चौड़ी और गहरी होती जा रही थी, जैसे उनकी प्रतीक्षा कर रही हो। पता नहीं कितने दिन और वे उसके घातक खिंचाव से बच पाएँगे?

उन्होंने सत्यवती से सच्चा प्रेम किया था, उसे खुश रखने का हर सम्भव प्रयास किया था। वो भी निष्ठापूर्वक उनकी सेवा करती थी, पर उन्हें कभी वो पूरी तरह उनकी नहीं लगी। वो सब कुछ दक्षतापूर्वक करती, उनके साथ सम्भोग भी करती, उनकी बाँहों में और बिस्तर पर कर्तव्यनिष्ठा से आ जाती। पर वे उसकी आत्मा तक नहीं पहुँच पाए थे। न उसके कठोर हृदय तक।

“तुम कितनी चतुराई से अपनी दुष्टता को मेरी कमजोरियों से और मेरी योग्यता से ढक देती हो,” वे कांपते स्वर में बोले।

“तुमने मुझे धोखा दिया, देव को मूर्ख बनाया, हम दोनों को विश्वास दिलाया कि तुम मुझसे प्रेम करती हो। देव ने मेरे लिए त्याग किया!” वे क्रोधपूर्वक चिल्लाए।

सत्यवती ने सिर हिलाते हुए पूछा, “तो आपने उसके लिए क्या किया?”

शान्तनु झोंप गए। “मैंने उसे दुख के अतिरिक्त कुछ नहीं दिया,” वे भावनाहीन स्वर में बोले। “पर तुमने किसी को मूर्ख नहीं बनाया है मत्स्यगंधा। लोग अब भी तुमसे घृणा करते हैं, वे तुम्हारी चाल समझ गए हैं। वे मुझे निर्बल राजा कह सकते हैं, पर तुम्हें तो कपटी रानी ही कहते हैं। तुम्हारे दिखावे और छल से तुमने मेरा लाभ उठाया, मत्स्यगंधा। तुम ये अच्छी तरह जानती हो और पूरा संसार भी!”

“आप ही मेरा विश्व हैं, शान्तनु,” सत्यवती कड़वाहट से बोलीं। “और हमारे संसार की रचना तो हम स्वयं ही करते हैं। मैंने अपने संसार की रचना की है, शान्तनु, आपके

साथ, इस राजमहल में, इस नगर और इस राज्य में, अपनी गरीबी और लाचारी से दूर, जहाँ मेरा जन्म हुआ था।”

“मेरे और मेरे विश्वासी पुत्र के माध्यम से!” वे चिल्लाएं, और खाँसी के दौरे से थककर गिर पड़े। सत्यवती ने उन्हें कोमलता से लिटाया, परन्तु उन्होंने क्रोधपूर्वक उसका हाथ झटक दिया।

“तुम अपने आपको मत्स्यगंधा कहती होगी, प्रिय, पर तुम्हारी दुर्गंधि तुम्हारा पीछा कभी नहीं छोड़ेगी।” वे चीखे। “तुम्हारे अतीत की दुर्गंधि, तुम्हारी चालाकी, किसी-न-किसी दिन तुम्हारा दम घोंट देगी। तुमसे दुर्गंधि आती है, दासेयी,” वे निंदापूर्वक बोले। “और मुझे डर है कि तुम्हारी दुर्गंधि मेरे परिवार, मेरे हस्तिनापुर पर न फैल जाए।” थककर, पराजित होकर, उन्होंने नियति के सामने घुटने टेक दिए। ये स्त्री, और वो स्त्री, जिसे वे कभी भुला नहीं पाए, जिसने उन्हें दिशाहीन कर दिया था... गंगा।

उन्होंने याद किया... वे गंगा से नदी के तट पर ही मिले थे, वैसे ही जैसे मत्स्यगंधा से मिले थे। कहीं ये दोनों ही जलपरियाँ तो नहीं थीं? एक को वे गंगा किनारे मिले थे, तो दूसरी से यमुना के तट पर; एक प्रभूत और उदारचरित, तो दूसरी काली और सूखी। दोनों उनके लिए रहस्यपूर्ण ही थीं। कौन थीं दोनों? उन्हें तो दोनों देवी-समान, दोषरहित लगी थीं। गंगा तो देवी ही थी, पर मत्स्यगंधा नहीं। वो तो केवल एक सुगंधपूर्ण मछुआरिन थी, जिसने उन्हें फँसा लिया था। या वो उसके लिए उनकी वासना थी? शान्तनु आत्मघृणा से भर गए।

वे अपना क्रोध और आक्रोश सत्यवती पर निकाल रहे थे, पर उन्होंने स्वयं अपने राज्य और अपने पुत्र को इस परिस्थिति में लाकर खड़ा कर दिया था। बहलिक के शब्द जोरों से उनके व्यथित मन में गूँज रहे थे। देव को इस धरती पर शापित जीवन जीने के लिए वसु के श्राप की आवश्यकता नहीं थी; उसके पिता ही उसके लिए सबसे बड़े अभिशाप थे। वे स्वयं अपने पुत्र के सबसे बड़े शत्रु थे। शान्तनु का जीर्ण शरीर सिसकियों से कांपने लगा और भविष्य में आने वाली निराशा के भय से उनकी आँखों से अश्रुधारा बह निकली।

वे कांपते हुए, टूटी आवाज़ में बोले, “मैं अभी भी राजा हूँ; मैं तुम्हें यहाँ से निकाल सकता हूँ... राजमहल से नहीं तो, इस कक्ष से अवश्य निकाल सकता हूँ। मैं तुम्हें देखना तक नहीं चाहता!”

“हम रोज ऐसी ही बातें करते रहते हैं। सत्य तो ये है कि आपने गलती की, पर स्वीकार नहीं करना चाहते,” सत्यवती बोलीं। “आप अपनी मूर्खता, आपके अपराध-बोध के लिए मुझे दोष देते हैं। आपने मुझे ऊँचे पद पर बिठाया, पर अब आपको लगता है कि मैं अत्यन्त साधारण महिला हूँ, जो आपके दरबार, राजमहल और आपके कक्ष में रहने के योग्य नहीं!” वो उपहासपूर्वक होंठ सिकोड़ती हुई बोली। “मैं आपके लिए उन

सब चीजों का प्रतीक हूँ जो घृणास्पद हैं; ऐसे संसार की जिसमें आप कभी रहते थे, पर अब आपको उसकी तुच्छता और शून्यता घिनौनी लगती है। उसे पहचानिए और उसके साथ न्याय कीजिए; मुझसे क्रोध मत कीजिए, अपने आपसे कीजिए, क्योंकि ये आपकी गलती है, मेरी नहीं।”

“काश मैं तुमसे नहीं मिलता!” वे विषैलेपन से बोले।

“सचमुच? आप मुझे पाना चाहते थे, आपने मुझे पाया भी, पर आपको मुझसे वो नहीं मिला जो आप चाहते थे, है न?” सत्यवती दया के साथ बोली। “आपके लिए, अब बस आँसू, चीखना-चिल्लाना और रोना शेष रह गया है। आप दयनीय हैं और मुझे भी दयनीय बना रहे हैं।”

शान्तनु अपना सिर तकिये पर टिकाते हुए बोले, “काश, मैं तुम्हें छोड़कर अपना सब कुछ वापस पा सकता—मेरा पुत्र, मेरा राज्य, और हाँ, मेरा सुख!” वे दुर्बल स्वर में रोते हुए बोले। सत्यवती हल्के से मुस्कुराते हुए बोली, “हाँ, बस, यही कि पहले अपने पुत्र को अपदस्थ करके और फिर अपनी पत्नी और दो नन्हे बच्चों का परित्याग करके आपकी छवि खास सुधरने वाली नहीं है,” वो व्यंग्यपूर्वक बोली। “आपने कभी सुना है कि किसी साहसी और सच्चरित्र राजा ने ऐसा नीच दुष्कर्म किया हो?” सत्यवती उनके मुँह से औषधि का पात्र लगाते हुए बोली, पर उन्होंने मुँह नहीं खोला।

“कृपया औषधि पी लीजिए,” उसने विनती करते हुए कहा। “अपने-आपसे इतनी घृणा मत कीजिए। मुझसे घृणा करने के लिए तो जीवित रहिए।”

“मैं जानता हूँ तुम चाहती हो कि मैं मर जाऊँ! क्योंकि मैंने तुम्हारा काम कर दिया है—अब तुम रानी हो और मैंने तुम्हें दो उत्तराधिकारी भी दिए हैं। अब मैं तुम्हारे लिए किसी उद्देश्य का नहीं!” शान्तनु ने चिल्लाने का प्रयास किया, पर केवल फुसफुसाहट ही निकली।

“मेरा बस चले तो मैं रानी ही रहूँ, राजमाता नहीं।” सत्यवती रूखेपन से बोली।

“मैं मर रहा हूँ,” शान्तनु आँखें मूँदते हुए बोले। जब भी वो गहरी खाई उन्हें पुकारती, वे अपने पुत्र को ऊपर खड़े होकर उनका अवरोध करता देखते। “मैं मरना चाहता हूँ, पर तुम्हारी क्षमा के बिना नहीं, मेरे पुत्र। मुझ पर दया करो पुत्र!” वे अपने कांपते हाथों में चेहरा छिपाते हुए बोले।

“उसने आपको क्षमा कर दिया है, शान्तनु; आप स्वयं को क्षमा कीजिए।” सत्यवती दुखी स्वर में बोली। “क्या आप ऐसा कर सकते हैं?” वो उन्हें कम्बल ओढ़ती हुए बोली।

शान्तनु ने कोई उत्तर नहीं दिया, उन्होंने अपनी सांस रोक ली, और अचानक रक्तहीन से हो गए। उनकी आँखें बन्द हुईं। सत्यवती उनके विवर्ण चेहरे को चिन्तापूर्वक

देखती रही। वे दोबारा अशान्त निद्रा में डूब गए थे। उस जड़ी-बूटी के बीज निद्राकारी थे और औषधि का असर हो गया था।

सत्यवती को इतना क्रोध आ रहा था कि वो ठीक से सोच भी नहीं पा रही थी। उन्हें शान्तनु की भारी सांसों की आवाज़ सुनकर बहुत घबराहट और कड़वाहट हो रही थी। वो उन पर बरसाने के लिए अपकारक, कटु और विषैले अपशब्द ढूँढ़ रही थी, पर साथ-साथ उन्हें पता था कि कुछ भी उनकी गहरी निद्रा को भेद नहीं सकता था। क्या उन्हें सत्यवती के निंदनीय शब्दों की परवाह भी थी या नहीं? उनके सबसे बड़े शत्रु ने भी ऐसी दयनीय अवस्था की कल्पना नहीं की होगी। वो स्वयं अपनी सबसे बड़ी शत्रु थी; और स्वयं अपने लिए युद्धभूमि की रचना कर ली थी।

मन को शान्त करने के लिए गहरी सांस लेती हुई, सत्यवती अपने पुत्र को दूध पिलाने लगीं। उनका शिशु क्षीण और पतला था, जन्म से ही अस्वस्थ। उसके विपरीत चित्रांगद पाँच वर्ष की आयु के लिए लम्बा-चौड़ा था; वो नीचे की छत पर भीष्म के साथ गदा युद्ध का अभ्यास कर रहा था। भीष्म ने उसका प्रशिक्षण शीघ्र ही आरम्भ कर दिया था; सत्यवती इस बात को लेकर थोड़ी संशयी हो रही थी। पर, कृपाचार्य ने उन्हें आश्वस्त किया था कि उनका पुत्र सबसे श्रेष्ठ गुरु के हाथों में था। उन्हें भी देव पर पूरा भरोसा था... वो उसे कभी भीष्म के रूप में नहीं देख सकती थीं।

सत्यवती ऊपर से उन्हें देख रही थीं। देव ने अंगवस्त्र नहीं पहना था और उसकी छाती खुली थी। नन्हे बालक को छोटा-सा गदा देते हुए उसका कठोर, शीत मुखौटा उतर गया था और सत्यवती को उसका नया चेहरा दिखा—हँसता हुआ और स्नेही। उसके सुन्दर, तराशे हुए चेहरे पर कोमलता थी और उसके बालों की एक लट उसकी आँखों पर गिर रही थी। वो उसके पुत्र को ध्यान से निर्देश दे रहा था और सत्यवती का छोटा-सा पुत्र आवेशपूर्वक लड़ रहा था। इसमें कोई शंका नहीं थी कि देव को बालक से बहुत प्रेम था। देव उसके लिए पिता समान है; जैसे मैं उसकी माता समान हूँ, उनके अन्दर से चुभती हुई आवाज़ आयी। वो देव और अपने दोनों पुत्रों की माता थीं, और इस बात की स्मृति से ही उनके हृदय में पीड़ा की लहर-सी दौड़ गई।

उस स्मृति से सत्यवती झटके से सचेत हो गई। उनका मुँह सूखा जा रहा था, हाथ पसीने से गीले हो रहे थे; उनकी बंधी हुई मुट्ठी में उनके नाखून चुभ रहे थे। उन्होंने देव से आँखें फेर लीं, पर वो उसके कोमल, चिन्तित और आश्वर्यचकित चेहरे को नहीं भुला पाई जब उसे उनके जन्म के सत्य का पता चला। उस समय, देव की आँखों में विचित्र-सी मृदुता और असामान्य चिन्ता थी। उनमें सत्यवती के लिए आरक्षित कठोरता के लक्षण भी नहीं थे। देव ने उन्हें ढांढ़स दिलाने का प्रयास भी किया था, उसके सुन्दर होंठ हिल रहे थे लेकिन उनमें से एक शब्द भी नहीं निकला, उसके तरल नेत्र उसके हाथों की तरह ही असहाय थे जो उन्हें सांत्वना देने के लिए आगे बढ़े थे। वो रुका और साथ ही

सत्यवती की धड़कनें भी थम गईं। सत्यवती का चेहरा लाल हो गया और वो उस क्षण की गर्महट को अभी भी अनुभव कर रही थीं। उनका मन एक अद्भुत आश्वासन, अपनेपन की भावना और संयुक्तता से भर गया जो उन दोनों को किसी अगाध भावनाओं के मंथन में बाँधे हुए था।

उनकी आँखें नम हो गईं और दोनों आकृतियाँ बोझल हो गईं, फिर भी वो उनके बारे में विचार करती रहीं। उन्हें अपने हाथों में सोते शिशु का हल्का भार अनुभव हुआ। देव ने दूसरे पुत्र का नाम वीर्य रखा था—कदाचित विचित्रवीर्य, सत्यवती अपने पुत्र की स्थायी अस्वस्थता की चिन्ता करती हुई सोच रही थी। उन्होंने आह भरते हुए शिशु को पालने में सुला दिया। क्या उन्हें अपने वंश को प्रबल करने के लिए एक और सन्तान को जन्म देना होगा? वो उस विचार से, शान्तनु के साथ बिताए हर रात की याद से सिहर गई। वो देव के विषय में सोचने लगीं...

सत्यवती ने अपने पति की ओर दृष्टि डाली। वे गहरी निद्रा में अचल पड़े थे। कुछ तो गड़बड़ थी, वो त्योरियाँ चढ़ाती हुई सोच रही थीं। उनकी त्वचा और अधिक फीकी दिख रही थी, उनके गालों पर गहरे गड्ढे पड़े गए थे, उनके जबड़े ढीले हो गए थे और विकृत रूप से लटक रहे थे। सत्यवती की सांस उनके कंठ में फँस गई, और उनके अन्दर भय की फड़फड़ाहट जाग उठी। उन्होंने शान्तनु के माथे को छूकर देखा। वो एकदम ठंडे पड़े गए थे। उन्होंने नाड़ी की जाँच की, परन्तु उन्हें कुछ भी महसूस नहीं हुआ। वे मर चुके हैं! उनके मन से निशब्द चीख निकली।

वो कुछ देर तक उन्हें देखती रहीं और उनके साथ बिताए समय को याद करती रहीं। जिस क्षण से उन्होंने उन्हें यमुना के तट पर देखा था, उनके साथ बिताया समय अल्प था, पर साथ-साथ प्रभावी भी। वे उसके रक्षक बनकर आए थे, उसे गरीबी और तुच्छता से निकाला और उसे वो जीवन प्रदान किया जिसकी वो हमेशा से कल्पना करती थीं—उनकी पत्नी, उनकी रानी के रूप में, उनके वारिसों की माता के रूप में। उनकी मृत्यु हो गई थी... राजा स्वर्गवासी हो गए थे।

## पाँचाल

भीष्म गंगा के स्थिर जल को देखता खड़ा रहा, वो अपने पिता से पहली बार वहीं मिला था। उसके पिता की मृत्यु हो चुकी थी, वो अब भी हस्तिनापुर में क्यों था? उसे अब उस नगर में रहने की बिलकुल इच्छा नहीं थी। अब उससे भीष्म का क्या सम्बन्ध रह गया था।

वो धीरे से गंगा नदी, उसकी माँ की ओर बढ़ा और एक बड़े से चट्टान पर जा बैठा। वो बिलकुल अकेला हो गया था और आने वाले लम्बे जीवन के बारे में सोचने लगा। वो इस राज्य का क्या करेगा? वो तो उसका था ही नहीं। उसे तो लम्बे समय तक बस दासता ही करनी होगी। वो वहाँ वापस नहीं जा सकता, उसे आत्मसम्मान के साथ जीना था।

वो बिना राजमुकुट का राजकुमार था, उसके पास कुछ नहीं बचा था—न घर, न राज्य, और न उसके पिता। वो अत्यधिक शोक और दुख में झूबना नहीं चाहता था, पर आज उसे लग रहा था जैसे वो अनाथ हो गया था, और उसके परिवार और अपनेपन के आवरण को किसी ने छिन्न-भिन्न कर दिया था। उसके पास उसकी कठोर प्रतिज्ञा के अलावा कुछ नहीं था; और पिता का दिया हुआ इच्छा-मृत्यु का वरदान। वो चाहे तो उस वरदान का प्रयोग वहीं, उसी क्षण कर सकता था और अपनी माँ की बाँहों में, उनकी उष्ण, स्नेहमयी जल में—उनके पास वापस जा सकता था।

उसकी इसी कायरता ने उसे अपने-आपसे क्रोधित कर दिया था। सत्यवती का उदासीन चेहरा उसकी आँखों के सामने उसकी कायरता के लिए उसका उपहास करता हुआ तैर गया। उसकी निशब्द हँसी और उसके दोनों पुत्रों की किलकारियाँ, उसे श्रद्धा से देखते वो नन्हे चेहरे आँखों के सामने आ गए।

भीष्म ने पिता के चिता की बुझती ज्वाला से मुँह तो फेर लिया, पर वास्तविकता की अस्थि से नहीं। उसके पास भागने के लिए कोई जगह ही नहीं थी, उसे तो हस्तिनापुर में ही रहना होगा, उस राजमहल में, आज्ञाकारिता और दायित्व के बंधनों में बंधकर। सत्यवती को उसकी विशेष आवश्यकता भी नहीं थी, उसने तो अपने पति की मृत्यु को निर्लिप्त भाव से स्वीकार लिया था। न कोई आँसू, न कोई नाटकीय व्यवहार, केवल मौन स्वीकृति! कोई भी परिस्थिति उसे हिला नहीं सकती थी, अपने पति की

मृत्यु भी नहीं। भीष्म जानता था कि वो दोनों छोटे राजकुमारों को किसी और के पास नहीं छोड़ सकता था...

मैं हस्तिनापुर को निराश नहीं कर सकता, उसके अन्दर से आवाज़ आयी। मैं उस विधवा और उसके दो बच्चों को इस अवस्था में नहीं छोड़ सकता। मैं अपने पिता को भी निराश नहीं कर सकता। यदि मैंने इस समय हस्तिनापुर से मुँह मोड़ लिया तो वे मुझे कभी क्षमा नहीं करेंगे, मुझे वापस जाना ही होगा। वो अपने हाथ सिर पर रखकर कराहने लगा। हस्तिनापुर के लोग मुझ पर विश्वास करते हैं। वो मेरा विश्वास करती हैं। यदि मैं भाग गया तो चरित्रवान नहीं रहूँगा। उसने अपने भारी कंधे उचकाए, अपने रथ पर सवार हुआ और राजमहल की ओर निकल पड़ा।

राजा के चिता की अग्नि अभी पूरी तरह बुझी भी नहीं थी कि हस्तिनापुर के दरबार में अनपेक्षित अग्निकांड भड़क उठा। भीष्म ने अपेक्षा नहीं की थी राजदरबार के अधिकारी राजसिंहासन स्वीकार करने के लिए उस पर दबाव डालेंगे।

“इसका तो प्रश्न ही खड़ा नहीं होता?” भीष्म बड़े संयम के साथ बोला। “मेरी नियुक्ति राज्याधिकारी के रूप में हुई है, और मैं वही रहूँगा,” उसने संक्षिप्त में रुखाई से कहा। उसकी आवाज़ में चेतावनी थी कि वो इस विषय में और कोई विवाद या तर्क नहीं सुनना चाहता।

“युवराज अभी बहुत छोटे हैं, और आपके रहते हम और किसी को राजा के रूप में सोच भी कैसे सकते हैं।” कृपा ने तर्क किया। “तुम्हारा प्रण कोई बहाना नहीं हो सकता। तुम्हारे ताऊजी ठीक ही कहते थे। तुम्हें पहले सिंहासन के विषय में सोचना चाहिए, परिवार या अपने पिता के बारे में नहीं। इस समय राजा की मृत्यु के पश्चात राज्य असुरक्षित है, तुम जानते ही हो।”

“और मैं उसकी सुरक्षा करने के लिए यहीं हूँ, मुझे उसके लिए राजगद्वी पर बैठने की आवश्यकता नहीं है,” भीष्म ने झट से उत्तर दिया।

उसने अपने मित्र की आवाज़ की बेचैनी पढ़ ली। “तुम मेरे भाई समान हो, कृपा; अब मैं जो भी करूँ, अत्यन्त महत्वपूर्ण होगा,” भीष्म ने अपनी असहमति को हल्का करते हुए कहा। “यहाँ एक युवा विधवा और दो छोटे बच्चे हैं; उनमें से एक युवराज है। उनकी सुरक्षा करना मेरा कर्तव्य है। यदि मैंने ऐसा नहीं किया तो सदा के लिए विश्वासघाती कहलाऊँगा। पूरा संसार हमें देख रहा है, विशेषकर मुझे।”

“तुम तो सदैव इसी बात की चिन्ता करते हो कि संसार तुम्हारे बारे में क्या सोचता है,” कृपि चिढ़कर बोली। “तुम उत्तम राजकुमार थे, सर्वश्रेष्ठ पुत्र; अब तुम किस रूप में शासन करोगे? सर्वोत्तम राज्याधिकारी और सर्वश्रेष्ठ भाई बनकर?”

भीष्म दयापूर्वक हँसा, उसकी आँखें थकी हुई थीं। “यहीं संसार की रीति है, इसे राजनीति कह सकती हो। परन्तु, मैं इसे विवेक कहता हूँ। मैं किसी विधवा और उसके

पुत्रों के विरुद्ध कैसे जा सकता हूँ? तुम जो सुझाव दे रहे हो, कृपा, वो राज-द्रोह है... राज्यविप्लव है, मरणोपरांत पिता की अवज्ञा है।”

उसकी आवाज़ में ऐसा कुछ था जिससे कृष्ण ने भीष्म को दोबारा देखा। उन सबने भीष्म को अपने पिता की मृत्यु पर शोक करने का भी समय नहीं दिया था।

“मेरे पिता कड़वाहट के साथ मरे,” भीष्म ने आह भरी। “अब उनकी आत्मा को शान्ति मिले; उन्होंने अपने परिवार की सुरक्षा के लिए मुझ पर विश्वास किया और मैं वो विश्वास कभी नहीं तोड़ सकता, कृपा।”

“तुम्हारे राजा बनने तक ताऊजी हस्तिनापुर से नहीं जाएँगे,” कृपा ने भीष्म से कहा।

“फिर उन्हें हस्तिनापुर छोड़कर जाने की आवश्यकता ही नहीं है।” भीष्म उदासी से बोला।

“स्वीकार है।” बीच में एक आवाज़ आयी।

भीष्म ने पीछे मुड़कर देखा तो पहाड़-सा विशाल व्यक्ति भारी पदों के पीछे बैठा हुआ था। उसके ताऊजी की आयु बढ़ती जा रही थी, पर वे अभी भी बिलकुल स्वस्थ थे और उनके शरीर पर चर्बी का नामोनिशान नहीं था। उनके पतले श्वेत बाल उन्हें विलक्षण रूप दे रहे थे; पर उनका चेहरा अभी भी बहुत बड़ा, कठोर और निष्ठुर था। वे अपने आसन पर तनकर बैठे अपने भांजे को घूर रहे थे। उनको हस्तिनापुर आए हुए छह वर्ष हो गए थे। उन्होंने हस्तिनापुर में कभी वापस न आने का अपना वचन निभाया था, पर उनके भाई की मृत्यु के कारण वे अपना वचन तोड़ने पर विवश हो गए थे। वे सूर्य से तपी त्वचा में थोड़े मुरझाए से लग रहे थे, उनका चेहरा दुख से पीड़ित था, पर स्फूर्तिले चाल-चलन के पीछे छिपा हुआ था। भीष्म, सब कुछ समझता था।

“अन्त्येष्टि समाप्त हो गई है और सभी उपस्थित राजा आज वापस जा रहे हैं,” कृपा ने रुखेपन से कहा। “भीष्म, मुझे लगता है तुम्हें उन पर ध्यान देना चाहिए। पाँचाल नरेश तुमसे मिलने के लिए अधीर हो रहे हैं।”

भीष्म ने कंधे उचकाते हुए कहा, “राजा उग्रायुध पौरव को केवल युद्ध चाहिए, और कुछ नहीं। वे कुरु राज्य पर आक्रमण करना चाहते हैं। जब से उनके राजा सुदास ने हमारे राजा समर्वर्ण को पराजित किया, हमारे सम्बन्ध पाँचालों से अच्छे नहीं रहे हैं। वो तो राजा कुरु ने हमारी भूमि उनसे वापस ली और पाँचालों से हमारी प्रतिष्ठा वापस पायी।”

“पर उग्रायुध स्वयं अनाधिकार-ग्राही है,” बहलिक ने अपने भांजे से कहा। “मुझे पता चला है वो तुमसे अतिशीघ्र मिलना चाहते हैं। नहीं, असल में उन्हें रानी से मिलना है,” वे त्योरी चढ़ाते हुए बोले। “उनका दावा है कि उनके पास तुम्हारे लिए कोई प्रस्ताव है।”

“रानी से?” भीष्म ने चौंकते हुए पूछा। “वे अन्तिम संस्कार के लिए आए थे और अब उन्हें प्रस्थान करना चाहिए। मुझे न उनसे कुछ कहना है, न सुनना है।”

“उस मनुष्य से सावधान रहना पुत्र,” बहलिक ने चेतावनीपूर्वक कहा। “वो महत्वाकांक्षी और कूर है, पुरवों की दूसरी वंशावली-द्विमिधों से आता है। उसने पहले ही उत्तर पाँचाल के नरेश का वध कर दिया है, पर उनका युवा युवराज, पृष्ठ दक्षिण पाँचाल की राजधानी, काम्पिल्य भाग गया। क्रोधित होकर उग्रायुध ने दक्षिण पाँचाल पर आक्रमण कर दिया और जनमेजय दुष्टबुद्धि की हत्या कर दी, जो एक कूर शासक था। पृष्ठ अभी भी लापता है और उग्रायुध उसे ढूँढ़ रहा है। अब वो हम कुरुओं की तरफ मुड़ा है। इसीलिए तुम उससे अवश्य मिलो और देखो कि वो क्या कहना चाहता है।”

भीष्म गम्भीरता से सिर हिलाता हुआ बोला, “ठीक है ताऊजी, पर ये राजा युद्ध चाहता है। इसके साथ वार्तालाप से कोई लाभ नहीं। हम इस समय शोक में हैं और वो हमें कमजोर समझ रहा है। सेना को तैयार रखिये,” उसने घोषणा की। “मैं उससे आमने-सामने मिलकर स्थिति को सँभाल लूँगा। इससे सम्भवतः कम-से-कम सांसें तो बच जाएँगी और रक्त भी नहीं बहेगा।”

“तुम्हारी यही तो हमेशा से नीति रही है,” बहलिक ने टिप्पणी करते हुए कहा। “थोड़ा पुरातन, पर व्यावहारिक।”

“आप सुनकर चकित रह जाएँगे कि अधिकांश पुरुष खुले मुठ-भेड़ से बचना चाहते हैं, वे चाहते हैं कि उनकी सेना उनकी लड़ाई लड़े।” भीष्म मुस्कुराता हुआ बोला। “उन्हें अन्दर बुलाइए, देखते हैं उस धूर्त को क्या कहना है। वो निश्चित रूप से अपने नाम के अनुकूल व्यवहार करता है।”

“उग्रायुध उसका उपनाम है,” कृपा खीसे निपोरता हुआ बोला। “वो युद्ध का भूखा कुत्ता है।”

आधे घंटे बाद, उग्रायुध उस सभा-कक्ष में अहंकारपूर्वक प्रविष्ट हुआ। भीष्म उसे देखते ही थोड़ा अचम्पित रह गया। उग्रायुध नाटा-सा, दुबला-पतला व्यक्ति था, उसका रंग काला और आँखें तीक्ष्ण और कुटिल थीं; उसके व्यक्तित्व में उग्रता झलकती थी। उसके चेहरे पर कई धावों के निशान थे और उसके हाव-भाव निर्भीक थे। उसके लम्बे बाल, गर्दन के पीछे ढीली गाँठ में बंधे थे; भीष्म ने देखा कि उसके एक कान में लोलकी नहीं थी।

“वो धीरे से नतमस्तक होते हुए, धृष्टापूर्वक बोला, “राजा कहाँ हैं? माँ के साथ पालने में सो रहे हैं क्या।”

भीष्म ने मन-ही-मन सोचा, ये तो अत्यन्त नीच है।

“मैं राज्याधिकारी हूँ, उनकी तरफ से आपसे बात कर रहा हूँ। बताइए, आप कहना क्या चाहते हैं?”

“आपके पिता की मृत्यु पर मेरी सहानुभूति स्वीकार करें,” उग्रायुध शीघ्रता से बोले। “समय से पूर्व चल बसे; उस मछुआरिन से विवाह के पश्चात अल्प समय में। पर जल्दी ही उनके दो पुत्र हो गए।”

कृष्ण हक्की-बक्की रह गई। उनका कटाक्ष अत्यन्त मूर्खतापूर्ण था, और भीष्म समझ गया कि वो उसे उकसाना चाहता था। “मैं रानी से मिलकर उनसे अपना शोक व्यक्त करना चाहता हूँ,” उग्रायुध ने कहा।

भीष्म ने केवल हल्के से अपना सिर हिलाया और कहा, “वे विश्राम कर रही हैं।”

“ये तो हमारा अपमान है,” उग्रायुध ने कहा। “मुझे उनसे कोई महत्वपूर्ण बात कहनी है।”

“मैं समझता हूँ, आप मुझसे बात कर सकते हैं, कृष्ण आपका सन्देश रानी तक पहुँचा देंगी।”

“मैं उनसे व्यक्तिगत रूप से बात करना चाहता हूँ,” उग्रायुध ने तर्क किया।

“नहीं! आप ऐसा नहीं कर सकते,” भीष्म ने कड़ा उत्तर दिया। “आप शिष्टाचार अच्छी तरह जानते हैं, राजन!”

“वे रानी हो सकती हैं, भीष्म, पर वे शोक सन्तप्त विधवा भी हैं। उन्हें हर अतिथि से मिलना चाहिए, और मैं भी आपका अतिथि हूँ।” उसने भीष्म को कोमलता से स्मरण कराया। भीष्म थोड़ा हिचकिचाया, परन्तु उग्रायुध निरर्थक विवाद के लिए तैयार लग रहा था। भीष्म ने आँखों से कृष्ण को इशारा किया कि वो सत्यवती को बुला लाए, और उसे शान्तिपूर्वक जाते देखा। भीष्म को थोड़ी-सी व्यग्रता होने लगी। इस व्यक्ति पर बिलकुल भी विश्वास नहीं करना चाहिए।

“आपका सन्देश पहुँचा दिया गया है,” उसने कहा। “यदि राजमाता चाहें तो आपसे अवश्य मिलेंगी।”

“ये तो सरासर असभ्यता है,” उग्रायुध ने रूखेपन से कहा।

भीष्म उसे गम्भीरता से देखता हुआ बोला, “तब तक, कृपया आप मुझे अपने प्रस्ताव के विषय में बताइए।”

“मेरे पास तो विवाह का प्रस्ताव है...”

भीष्म अपना आश्वर्य नहीं छिपा सका।

“तुम्हारी माता के लिए,” उग्रायुध हर शब्द अपमानपूर्वक खींचता हुआ बोला। “निस्सन्देह, आपकी रानी के बदले में मैं कुरुओं को अपार धनराशि से क्षतिपूर्ति करूँगा। मुझे उनसे इसी विषय में बात करनी थी,” वो भद्री-सी हँसी के साथ बोला।

“क्या तुम ऐसा व्यक्तिगत सन्देश उन्हें पहुँचाने के योग्य हो, गंगापुत्र?” उसने

तिरस्कारपूर्वक कहा। “तुम अपने-आपको राज्याधिकारी कहते हो, पर तुम किसी नौकर से अधिक कुछ नहीं हो!”

भीष्म ने अपने रोष पर नियंत्रण पाने का बहुत प्रयत्न किया, उसके पंजे मुट्ठी में बंध गए।

“तुमने हमारे राजमहल में आकर, हमारी विधवा रानी से विवाह का प्रस्ताव रखने का दुस्साहस किया,” भीष्म ने बड़ी कठिनाई से अपनी आवाज़ को नियंत्रित करते हुए कहा। “उग्रायुध, ये अत्यन्त निराशाजनक है कि तुममें न तो शिष्टाचार है, न शालीनता। तुम तो राजा हो ही नहीं, तुम तो बस चोर हो, जो दूसरों के वस्तु चुराता है।”

उग्रायुध का चेहरा क्रोध से लाल हो गया परन्तु उसकी आँखें निर्भीक थीं।

“भीष्म, समस्या क्या है? मैं तो नम्रतापूर्वक रानी सत्यवती का हाथ माँग रहा हूँ। मैं तो स्वयं उनसे पूछने वाला था, पर तुमने अनुमति नहीं दी। तुम उन्हें ही उत्तर देने का अवसर क्यों नहीं देते? निश्चित ही, यदि वे तुम्हारे पिता की तरह वृद्ध से विवाह कर सकती हैं, मैं किसी प्रकार अयोग्य हो सकता हूँ?” वो उपहास करता हुआ बोला। “मैं युवा हूँ, धनवान और शक्तिशाली हूँ—वो सब कुछ जो वो चाहती हैं।”

भीष्म अपनी मुट्ठी कसते हुए, उस धूर्त के मुँह पर प्रहार करने से बड़ी कठिनाई से अपने आपको रोकता रहा।

“आपका प्रस्ताव ठुकरा दिया गया है, आप यहाँ से जा सकते हैं।” उसने शान्त स्वर में दांत भींचते हुए कहा।

“तुम उनकी ओर से उत्तर देने वाले होते कौन हो भीष्म? क्या तुम उनके सेवक और दलाल भी हो?”

सभा-भवन में उपस्थित सभी लोग अचम्भित रह गए, उनकी सांसें रुक गईं। भीष्म ने ताऊजी को एक कदम आगे आते देखा। वो तुरन्त उनके सामने आ खड़ा हुआ। यदि यह मनुष्य लड़ना चाहता है, तो मुझसे लड़ेगा, बहलिक से नहीं। भीष्म ने गम्भीरता से निश्चय किया। अचानक सभा में हल्की-सी कोमल सुगंध फैल गई, जिसे भीष्म ने तुरन्त भाँप लिया। वो आ गई थीं।

“तुम्हारा कोई दोष नहीं, बालक,” उग्रायुध धृष्टापूर्वक आगे बोला, “मैंने सुना है कि वो इतनी सम्मोहक हैं कि कोई भी उससे दूर नहीं रह सकता। उसे किस नाम से पुकारते हैं? हाँ! मत्स्यगंधा से योजनगंधा! आहा! उस औरत की सुगंध! किसी भी पुरुष के होश उड़ा दे!” वो मुँह दबाकर दुष्टता से हँसने लगा। “क्या उसकी सुगंध ने तुम्हें भी प्रभावित किया, भीष्म? क्या उसने तुम्हें देवव्रत से भीष्म और वापस भीष्म से देवव्रत बना दिया? लानत है आजीवन ब्रह्मचर्य परा!” उग्रायुध दुर्भावनापूर्वक ठहाके मारने लगा, जिसकी आवाज़ उस स्तब्ध सभा भवन में गूँज उठी। भीष्म स्थिर खड़ा रहा। उसके चेहरे की मांसपेशियाँ उसकी श्वेत त्वचा के नीचे तन गईं। उसके होंठ कसे हुए थे और

उसके हाथ तलवार पर कसे जा रहे थे। अब स्पष्ट हो गया था कि वो राजा उसे वार करने के लिए जानबूझकर उकसा रहा था।

उग्रायुध एक क्षण के लिए रुक गया; वो चकित था कि अब तक कुरु राजकुमार ने उसे ललकारा नहीं था। वो भीष्म के सुन्दर चेहरे से उसके रहस्यपूर्ण मुखौटे को उतारने के लिए तत्पर था। “तुम समझते हो कि मैं मूर्ख हूँ, या तुम लोगों को धोखा दे रहे हो, भीष्म?” उग्रायुध चतुराई से आगे बोला। भीष्म अब भी स्थिर खड़ा रहा, उसकी धड़कनें तीव्र हो गई थीं, और उसके मेरुदंड में रक्त की शीत लहर-सी दौड़ गई। उसने उस नाटे से तुच्छ व्यक्ति को देखा।

“एक तुम हो और वो असहाय, अकेली सुन्दर विधवा...!” उग्रायुध तिरस्कारपूर्वक भीष्म को घूरता हुआ बोला। भीष्म की आँखें क्रोध से धधक रहीं थीं। उसके होंठ कांपने लगे और उसने अपने शब्दों को रोक लिया। उसने गहरी सांस ली और शान्त स्वर में बोला, “अपनी भाषा पर नियंत्रण रखिए, राजन!”

“तुम अपनी करतूतों पर ध्यान रखो, राजकुमार। सम्पूर्ण विश्व तुम्हें देख रहा है और तुम दोनों की बातें कर रहा है,” उग्रायुध ने कपटपूर्वक कहा। “स्वाभाविक है; मैं समझ सकता हूँ। तुम दोनों युवा हो, आकर्षक हो... भीष्म, एक बार तो साहस करो!” उग्रायुध ने व्यंग्य किया। उसके हाव-भाव क्रूर हो गए थे। “मेरी तरह! मैं उसे पाना चाहता हूँ, मैं उससे विवाह करना चाहता हूँ और मुझे इस बात को मानने में कोई लज्जा नहीं है। तुम्हारी तरह नहीं, पुरुष बनो, और उसे हासिल करो!”

उसके शब्द रक्त के प्रवाह के साथ रुके। उग्रायुध पीड़ा से चीख उठा, उसके हाथ सहजता से अपने मुँह की ओर उठे और वो अपने उष्ण रक्त के स्वाद को अनुभव करके भयभीत हो गया। उसकी आँखें चौंधिया गईं। उसने कुछ कहने के लिए मुँह खोला, पर कराहने के अतिरिक्त कुछ नहीं आया। उसने दोबारा प्रयत्न किया, तो कर्कश आवाज़ के साथ उसके मुँह से रक्त बह निकला। उसने झुककर अपने हाथों को देखा तो उसकी कटी हुई जीभ उसके हाथ में थी। भीष्म ने उसकी जीभ काट दी थी!

उग्रायुध को चक्कर आने लगे; उसे लगा वो पीड़ा और अपमान से मूर्छित हो जाएगा। उसे भीष्म पर चिल्लाने की इच्छा हुई, पर अपने अशोभनीय कराहने के अतिरिक्त उसे कुछ सुनाई नहीं दिया।

“अब से तुम अपने कलुषित मुँह से किसी के लिए अपशब्द नहीं कह पाओगे!” भीष्म ने जोर से कहा। वो कांप रहा था, उसका हृदय जोरों से धड़क रहा था और उसके माथे की नसें फड़क रही थीं। उसने घृणापूर्वक मुँह फेर लिया।

देव! उसके पीछे से सत्यवती की चेतावनीपूर्ण आवाज़ आयी और एक हल्की-सी सरसराहट का अनुभव हुआ। भीष्म तेजी से पलटा, उसके हाथ में उसकी रक्त-रंजित तलवार अभी भी थी। उग्रायुध के हाथ में उसका विख्यात चक्र था। लड़खड़ाता हुआ,

मुँह से बहते रक्त के साथ, उसने चक्र को भीष्म की ओर फेंका। भीष्म सही समय पर झुक गया और चक्र पीछे के स्तम्भ से जा टकराया। भीष्म ने अपनी तलवार को हँसिये की तरह अपने सिर के ऊपर उठाया और सीधे उग्रायुध की छाती में भोंक दिया। राजा लड़खड़ाते हुए, रक्तरंजित हाथों से तलवार को पकड़े हुए, जोर से संगमरमर के फर्श पर ढेर हो गया। सभा में भयानक शान्ति छा गई, वहाँ केवल मरते हुए उग्रायुध की अन्तिम सांसों की आवाज़ गूँज रही थी। भीष्म धीरे से नीचे, रक्त से लथपथ, औंधे मुँह पड़े उग्रायुध के पास जाकर उसके विकृत चेहरे को देखते हुए बोला, “तुम एक दयनीय मौत मर रहे हो।”

भीष्म निर्लिप्त भाव से उसकी अन्तिम सांस के निकलने तक उसे देखता रहा और बोला, “कोई भी किसी कुरु का अपमान नहीं कर सकता, विशेषकर कुरु-महिला का।”

उग्रायुध एक बार जोर से हाँफा, पाँव झटके और उसका शरीर स्थिर हो गया।

भीष्म को हलचल का अनुभव हुआ। वहाँ राजसी विधवा, सत्यवती खड़ी थीं। वो अपने श्वेत रेशमी वस्त्रों में विवर्ण लग रही थी और उनका चेहरा मुरझाया हुआ था; पर उनकी आँखें उनके कठोर हीरे के गहनों की तरह ही दमक रही थीं।

“इस गन्दे नाले के कीड़े को लगा कि मैं इससे विवाह कर लूँगी?” वो घृणापूर्वक होंठ सिकोड़ती हुई गरजीं।

“रानी दासेयी!” कृपि उनकी अभद्र भाषा को सुनकर भौचक्की रह गई। “हाँ, रानियाँ अपशब्द नहीं कहतीं,” वो बड़बड़ाई। “मेरा वास्तविक अभिप्राय अत्यन्त निजी है और व्यक्त नहीं किया जा सकता। मैं क्षमा माँगती हूँ। पर मुझे इस नीच की मृत्यु पर कोई दुख नहीं है।”

बहलिक उसे सचेत अंगीकार के साथ देखते रहे। “उसे लगा कि वो अपने दिव्य चक्र के कारण अपराजेय है, कदाचित उसके चक्र की शक्ति नष्ट हो गई, क्योंकि वो किसी और की पत्नी से लालायित हो रहा था।” उन्होंने सावधानीपूर्वक भीष्म और सत्यवती की ओर देखते हुए कहा।

सत्यवती का चेहरा दमकने लगा। “चक्र की शक्ति खो गई क्योंकि उसने भीष्म को ललकारा।”

बहलिक ने गम्भीरता से हामी भरी। “उग्रायुध ने कुरु राज्य पर कब्जा करने के लिए तुमसे विवाह करना चाहा। प्रेम जताना युद्ध से सरल है।”

“स्त्रियाँ युद्ध से सरल होती हैं,” वो उपहासपूर्वक बोलीं। “पुरुष तो यही मानते हैं।”

“उग्रायुध जैसे पुरुष,” भीष्म ने उसे सुधारते हुए कहा और पीछे मुड़कर सीधा सत्यवती की ओर देखा। “मैंने कृपि को विशेष रूप से आपको यहाँ आने से मना करने के लिए ही भेजा था।”

कृष्ण क्रोधित होकर बोली, “ये मेरी बात सुनती कहाँ हैं? ये किसी की आज्ञा का पालन कहाँ करती हैं?”

“मैं रानी हूँ। मैं आज्ञा का पालन नहीं करती, आज्ञा देती हूँ!” सत्यवती कठोर स्वर में बोलीं।

वो भीष्म को देखती हुई बोली, “मैं यहाँ इसलिए आयी क्योंकि तुमने मना किया था! मैं माँग करती हूँ कि मुझे सब कुछ बताया जाए!” उनकी आवाज़ तेज़ होती गई, उसकी आँखें धधक रही थीं और उसका चेहरा तमतमा रहा था। सभा भवन में तनाव बढ़ गया। इशारा पाकर, कृष्ण अपनी अनिच्छुक बहन को लेकर वहाँ से जाने लगा, बहलिक भी हिचकिचाते हुए उनके पीछे चले गए। अन्य मंत्री और अधिकारी भी चुपचाप उनके पीछे भवन से बाहर चले गए।

“आगे, कभी मुझसे ऐसे स्वर में बात मत करना!” वो क्रोधित होकर, कांपती आवाज़ में बोलीं।

“हाँ, माते,” भीष्म ने उपहासपूर्वक कहा, जिससे उनका क्रोध और बढ़ गया। “मुझे तो लगता है कि आपको इस हत्याकांड को देखकर बहुत आनन्द आया होगा। आपको बुरा तो नहीं लगा कि आप आरम्भ से इसे नहीं देख पायीं?” वो कोमल आवाज़ में बोला।

“जब उसने तुम्हें सेवक कहा, मैं उस समय से यहाँ थी!” उन्होंने प्रत्युत्तर दिया। “वो स्पष्ट रूप से लड़ाई मौल लेने के लिए ही आया था। उसके लांछन, उसकी घिनौनी वक्रोक्तियाँ...” वो अचानक उद्धिग्न हो गई और उनका चेहरा तमतमा गया। वो एकाएक बैठ गई, और अपने असमंजस को छिपाने के लिए सिर झुका लिया। “क्या लोग अब मेरे बारे में ऐसी बातें कर रहे हैं? उन्होंने धीमी आवाज़ में पूछा। उग्रायुध की क्रूर बातें उनके मन में चीत्कार कर रही थीं। वो मान-हानि से झोंप गई और उनकी धड़कनें तीव्र हो गईं।

सत्यवती के झुके हुए सिर और मरोड़ती उँगलियों को देखकर भीष्म की कठोर आँखें कुछ क्षणों के लिए नर्म हो गईं। “आप कोई सामान्य विधवा नहीं हैं, आप कुरुवंश की रानी हैं जो विधवा हो गई हैं,” उसने कोमल आवाज़ में बोलना शुरू किया। “विवाहार्थियों की कोई कमी नहीं होगी। आप उन्हें जब तक चाहें आकृष्ट और आशापूर्ण रख सकती हैं,” उसने चिढ़ाते हुए कहा। “उससे हमें हमारे विरोधियों को अनुकूल रखने में सहायता मिलेगी! आप सदैव महत्वाकांक्षी राजाओं से घिरी रहेंगी—काम्बोजों, कसायों, सृन्जयों...” वो सांस लेने के लिए रुका और आँखें भींचता हुआ बोला, “कैकेय, पांड्य...”

“बस करो!” वो हाथ ऊपर करती हुई खिलखिलाती हुई बोलीं, “मैं उनसे ना तो विवाह करना चाहती हूँ, न युद्ध!”

भीष्म भी तनावमुक्त होकर हँसा और थोड़ी देर तक उन दोनों की हँसी भवन में गूंजती रही।

“नहीं, परन्तु ये छोटे-छोटे राज्य इतने शक्तिशाली कैसे हो रहे हैं?” सत्यवती की हँसी रुक गई थी और उनकी भौंहें तन गई थीं।

“आपका तात्पर्य है, राजा भरत के साम्राज्य की धारणा के बिलकुल विपरीत,” भीष्म ने कंधे उचकाते हुए कहा। “वे किसी पर ‘स्वामित्व’ करना या एक समग्र राष्ट्र पर शासन नहीं करना चाहते थे, जहाँ सब उनके सामने झुक जाएँ या उनके आधिपत्य को स्वीकार कर लें। उनका विचार था कि राष्ट्र को एक-रूप साम्राज्य होना चाहिए जो अनेकता और विविधता पर आधारित हो, जहाँ हर राज्य का अपना स्वतंत्र शासक हो। इसके अतिरिक्त ऋषि भी थे...”

“ऋषि? क्यों, क्या वे भी योद्धा बन गए थे?” सत्यवती ने चौंककर पूछा।

“नहीं, उनके पास दो अन्य शस्त्र थे—ज्ञान और विवेक। उन्होंने अपने कर्मों और शब्दों से राष्ट्र को संगठित किया। उन्होंने हर राज्य में भ्रमण किया और ज्ञान, विवेक और आध्यात्म का पाठ पढ़ाते हुए, राज्यों की सीमाएँ पार कीं; उन्हें किसी ने नहीं रोका और हर राजा ने उनका स्वागत ही किया।”

एक क्षण के लिए सत्यवती को पराशर की याद आ गई जो अपने आपको भ्रमणकारी गुरु कहते थे। उनका पुत्र, कृष्ण द्वैपायन, भी अपने पिता के साथ वही कर रहा होगा...

सत्यवती ने पलकें झपकाते हुए धीरे से कहा, “तो ऋषि और राजा, समाज के सबसे शक्तिशाली वर्ग, अपने-अपने तरीके से राष्ट्र का एकीकरण कर रहे थे।” उसे याद आया कि पराशर के पाँव भी युद्ध में ही आहत हुए थे। “किन्तु ऋषि भी युद्ध रोक नहीं सकते।”

“युद्ध से कुछ भी सिद्ध नहीं होता, बस राजा का अहंकार और लोभ सन्तुष्ट होता है।” भीष्म ने कहा। “केवल एक मनुष्य सारा सन्तुलन बिगड़ सकता है।”

“और इस समय वो कौन है?” सत्यवती ने प्रबोधन करते हुए कहा।

“कोई नहीं, या फिर सभी। सभी युद्ध के लिए तैयार हैं, पर खलबली मचने के लिए एक छोटा-सा कदम ही पर्याप्त है। जैसे उग्रायुध। शान्ति बनाए रखने के लिए उसका वध आवश्यक था।”

इसका अर्थ है कि यहाँ, इस भवन में उसका वध करके तुमने युद्ध टाल दिया?” सत्यवती ने विचारमग्न होकर, अपनी उँगली से निचले होंठ को दबाते हुए पूछा। “व्या कोई भी तुम्हें चुनौती नहीं देगा?”

भीष्म सिर हिलाते हुए, हल्के से मुस्कुराते हुए बोला, “मुझे नहीं लगता। वो मुझसे कहीं अधिक घृणित था। पर मैं इस संवेदनशील सन्तुलन को बनाकर रख सकता हूँ।”

सत्यवती ने पूछा, “हमें किससे सबसे अधिक सावधान रहना चाहिए?” भीष्म ने गम्भीर होते हुए कहा, “इस समय सबसे शक्तिशाली तो चेदि के राजा वसु ही हैं।” वो रुका और सत्यवती को झिझकते देखा। “वो अपने-आपको सम्राट कहते हैं और अपने पुत्रों के माध्यम से अपना साम्राज्य बढ़ा रहे हैं। मत्स्य तो पहले से ही अपने नए राज्य का शासक है। उनका और रानी गिरिका का सबसे ज्येष्ठ पुत्र, वृहद्रथ मग्ध का राजा है। उनके अन्य पुत्र—प्रत्याग्रह, कुसम्व और मवेल्ला—सभी अलग-अलग राज्यों के संचालक हैं। पर, ये हमारे लिए खतरा नहीं हैं क्योंकि... मेरे पिता और वे मित्र थे।” भीष्म ने व्यंग्यपूर्वक कहा।

“राजनीति में मित्र नहीं होते; केवल सहयोगी होते हैं,” सत्यवती ने प्रत्युत्तर दिया। “राजा वसु कुरुओं पर आक्रमण क्यों नहीं करेंगे?”

“क्योंकि आप उनकी पुत्री हैं, और अब आप कुरुओं की रानी हैं,” भीष्म ने स्पष्टता से कहा।

सत्यवती के पैरों तले जमीन खिसक गई; वो भीष्म के शब्दों को सुनकर हिल गई। भीष्म ने पहली बार उनके रहस्य को व्यक्त किया था। वो अन्दर से कांप रही थीं, पर उन्होंने अपनी आवाज़ को स्थिर रखा।

“अस्वीकृत,” सत्यवती ने धीमी आवाज़ में कहा।

“फिर भी उनकी पुत्री। वे कुरु राज्य पर हाथ नहीं लगाएँगे, ये इस बात का प्रमाण है।” भीष्म ने भावहीन तरीके से कहा। “विवाह और सन्तान राजनीतिक और आर्थिक सम्बन्ध बनाने के लिए पर्याप्त हैं। हमें उनकी चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। वे...”

“और उनका परिवार?” सत्यवती ने फुर्ती से कहा।

“हाँ, भीष्म ने सिर हिलाते हुए कहा। “राजा वसु ने अपने सभी पुत्रों को भी यही आदेश दिया है।”

“मेरे भाई! अचानक आधे से अधिक राज-परिवार मेरे सम्बन्धी बन गए हैं,” सत्यवती आत्म-निंदा से हँसती हुई बोलीं। वो थोड़ा रुककर आगे बोलीं, “ऐसा नहीं था कि मुझे शान्तनु को अपने जन्म और माता-पिता की सच्चाई बताने में कोई भय और लज्जा थी...” वो भीष्म की आँखों में निष्ठापूर्वक देखते हुए बोलीं, “मुझे उनकी प्रतिक्रिया पर सन्देह था। राजा वसु उनके मित्र थे और मैं उनके व्यक्तिगत या राजनीतिक सम्बन्ध नहीं बिगड़ना चाहती थी।”

भीष्म ने विचारपूर्वक सिर हिलाते हुए, उनकी राजनीतिक सूझ-बूझ से प्रभावित होते हुए कहा, “सुरसेन के राजा से आपकी व्यावसायिक संधि अत्यन्त सफल रही। आप दोनों, अपने शत्रु—काशी के राजा—को खाद्यान्न प्रतिबंध के द्वारा निचोड़ने का निश्चय करने के लिए सहमत हो गए,” भीष्म ने विषय बदलते हुए कहा। “अब उग्रायुध

की मृत्यु के बाद, उत्तर और दक्षिण पाँचाल भी हमारे सहयोगी बन जाएँगे। हम पृष्ठत को पाँचाल में पुनर्स्थापित कर देंगे; मुझे अपने गुप्तचरों से जानकारी मिली है कि वो भारद्वाज के आश्रम में छिपा हुआ है। अब उत्तर में गांधार और कम्बोज ही बचे हैं, जिनको ताऊजी ने सँभाल लिया है, क्योंकि वे उनके मित्र राष्ट्र हैं। और हाँ, सिंधु को भी। और पूर्व में कोसल और अंगदेश...”

“दोनों मगध नरेश वृहद्रथ के अधीन हैं, जो मेरे सौतेले भाई हैं। मैं तो काशी को कुचलना चाहती हूँ।” सत्यवती आवेशपूर्वक बोली। “इसीलिए मैंने सुरसेन के राजा से उनकी स्वीकृति माँगी। पहले तो वे चकित रह गए, पर शीघ्र ही उन्हें मेरा विचार अच्छा लगा और वे उसी दिन संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए सहमत हो गए। हमने काशी को इस तरह फँसाया।”

“काशी हमारा शत्रु है और सदैव रहेगा...” भीष्म ने हिचकिचाते हुए कहा।

सत्यवती ने हामी भरते हुए सिर हिलाया। काशी नरेश ने भीष्म को उनकी पुत्री के साथ विवाह का प्रस्ताव ठुकराने के लिए अभी तक क्षमा नहीं किया था। “हम विदेह को दोबारा वार्ता के लिए आमंत्रित कर सकते हैं। उन्हें निमंत्रण भेजो। उन्हें पता चलना चाहिए कि हमारे गुप्तचरों को जानकारी मिली है कि काशी उनके विरुद्ध भविष्य में आक्रमण करने के लिए शस्त्र संचित कर रही है,” उन्होंने रूखेपन से सूचित किया।

भीष्म ने स्पष्ट प्रशंसा से अपनी भौंहें उठाई।

“विदेह हमारे नए मित्र बन जाएँगे और हम काशी को अपनी मुट्ठी में कर पाएँगे,” सत्यवती ने कंधे उचकाते हुए कहा।

भीष्म उनकी योजना सुनकर निश्चिन्त होता जा रहा था, और अपनी सफलता को लेकर और अधिक आश्वस्त।

“परन्तु, अब आप स्वयं थोड़ी असुरक्षित हो गई हैं,” भीष्म ने चेतावनीपूर्वक कहा। “अब कई अन्य शक्तिशाली राजा-महाराजा आपको आकर्षित करने की चेष्टा करेंगे; वे आपसे अधिक राजमुकुट से आकृष्ट होंगे,” उसने स्पष्टतापूर्वक कहा। “जैसा ताऊजी ने कहा, ये एक रक्तहीन राज्यविप्लव है—शत्रु को सिंहासन मिल जाएगा और रानी भी।”

“मैं कभी पुनर्विवाह नहीं करूँगी,” सत्यवती ने सुस्पष्ट किया। “मैं जानती हूँ, पुनर्विवाह हानिकारक हो सकता है। मुझे पति तो प्राप्त होगा, पर मैं हस्तिनापुर हार जाऊँगी।” उन्होंने रूखेपन से कहा। “ये सोचना बहुत सरल है कि रानी को युद्ध में लड़ने और राजनीतिक निर्णय लेने के लिए पति की आवश्यकता होगी—और वो स्वयं कोई भी निर्णय लेने के योग्य नहीं है।”

“ऐसी सोच के स्थान पर मैं आपकी सेवा करूँगा, माते,” भीष्म ने धीरे से उपहासपूर्वक फुसफुसाते हुए कहा। क्या वो उस पर हँस रहा था, या हमेशा की तरह

व्यंग्य कस रहा था? सत्यवती दिखावटी उदासीनता के साथ बोलीं, “रानी से तो एक ही अपेक्षा रखी जाती है—बस अपने राजवंश को आगे बढ़ाने के लिए पुत्र को जन्म दे।”

भीष्म ने गम्भीर मुद्रा में कहा, “पर वारिसों की हत्या भी की गई है! हमने आज एक युद्ध टाला है, परन्तु, इस समय हमारे राज्य के चारों ओर भूखे राजा घूम रहे हैं। ये तो मात्र आरम्भ है। हमारे जैसा हरेक शक्तिशाली राजपरिवार अपनी सेना की सहायता से दूसरे राज्यों को हथियाने, अपने ही राज्य और पूरे विश्व को आतंकित करने में लगा हुआ है। कोई भी बलवान राजा अपनी सेना भेजकर युद्ध आरम्भ कर सकता है। उग्रायुध ने आज आपके माध्यम से वही करने का प्रयत्न किया, और आगे भी ऐसा ही चलने वाला है। समय के साथ स्थिति और भी बिगड़ने वाली है और एक दिन हम सब किसी विशाल युद्धभूमि पर एक दूसरे का वध कर रहे होंगे...”

“क्या युद्ध टाला नहीं जा सकता?” सत्यवती ने धीरे से स्तम्भित होकर पूछा। “युद्ध वीरतापूर्ण कैसे हो सकता है; हम उसे इतनी श्रेष्ठता और महिमा क्यों प्रदान करते हैं, जबकि वो अपने पीछे रक्त, संहार और दुख के पदचिह्न छोड़ जाता है?” सत्यवती ने विचार करते हुए पूछा। “युद्ध से तो विधवाएँ ही रह जाती हैं, वीरगति को प्राप्त योद्धा नहीं। एक पूरी पीढ़ी और समाज को अन्तहीन भय, मार-काट सहना पड़ता है; मात्र सैनिकों को नहीं, बल्कि, स्त्रियों, बच्चों, बूढ़ों और युवकों, विद्वानों और राजनीतिज्ञों, विचारकों और श्रमिकों को भी। रह जाता है तो रोते-बिलखते बच्चे और माताएँ, और पंगु योद्धाओं से भरा उजड़ा हुआ राज्य!”

सत्यवती को हमेशा से ही हिंसा से घृणा थी, और युद्ध तो उसकी जघन्य प्रामाणिकता थी। उग्रायुध की मृत्यु उसकी धृष्टता के कारण हो गई। उसने भीष्म को निर्दयतापूर्वक एक व्यक्ति को, बिना किसी ग्लानि या अंकुश के, मारते देखा। युद्ध और हिंसा, युद्ध और स्त्री; उनके मन में इनके बीच की रेखाएँ धूमिल होती जा रही थीं, और वो पुनर्विवाह न करने पर और भी दृढ़ और सुनिश्चित हो गई। उन्हें अब ऐसा न करने के लिए वैध और स्थाई कारण मिल गए थे। पुनर्विवाह का विचार ही उनके लिए हास्यास्पद था और उन्हें कभी उसका विचार भी नहीं आया था। उन्हें तो राजमुकुट और राजसिंहासन को अपने पुत्रों के लिए सुरक्षित रखना था। वो अपना सब कुछ, अपनी शक्ति और राज्य किसी पुरुष, किसी राजा के लिए नहीं खो सकती थीं।

उनका सबसे बड़ा भय था कि कहीं राजसिंहासन उनके हाथों से न निकल जाए। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि वो अपनी स्वतंत्रता, रानी के रूप में अपना आधिपत्य कभी नहीं खोएँगी। वो किसी पुरुष, विवाह-सम्बन्ध या मातृत्व को अपनी शक्ति को नष्ट करने नहीं देंगी। राजसिंहासन पर रहकर उन्हें अपनी प्राथमिकताओं का चातुर्य से चयन करना होगा। वो कोई भी समझौता नहीं करने वाली थीं।

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

“मेरा विवाह हस्तिनापुर के साथ हुआ है। मुझे किसी राजा की आवश्यकता नहीं। मैं ही उसकी रानी बनूँगी,” उन्होंने धीरे से उस व्यक्ति से कहा जो आजीवन उनकी और हस्तिनापुर की रक्षा करेगा। उन्हें किसी राजा की आवश्यकता नहीं थी। उनके साथ भीष्म था।

## राज्याधिकारी

भीष्म भावुक और उपहास्य प्रतीत होने के भय से हिचकिचा जाते थे। जब भी उन्हें कोई स्नेहपूर्ण और कोमल बात कहनी होती, उन्हें समझ में नहीं आता था कि कैसे व्यक्त करें। इसी भय और अभ्यास की कमी ने उन्हें इतने वर्षों से अपनी भावनाओं और विचारों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने से वंचित रखा था।

उनके होंठों से अनायास ही आह निकल गई। सत्यवती के लिए उनकी भावनाएँ कभी सामान्य थीं ही नहीं। उन्होंने उनके अनेक रंग देखे थे—कपटपूर्ण और निराश, स्नेहपर्याएँ और कटु, दुखी और अहंकारी—पर जब भी वो अपने पुत्रों के साथ होतीं, भीष्म जानते थे कि वही उनके लिए सबसे सन्तोषजनक क्षण होते। वो जिस प्रकार अपने बच्चों से शर्त-रहित प्रेम करतीं, उनमें यौवन, ताजगी और आनन्द छलकता था।

भीष्म के साथ भी ऐसा ही था। उनके पिता की मृत्यु को पाँच वर्ष हो गए थे, परिस्थितियाँ बदल गई थीं। अब उन्हें भावुक दिखने का कोई भय नहीं था और उन्होंने अपने-आपको सम्पूर्णतया उन दो बच्चों की वात्सल्यपूर्ण और श्रद्धापूर्ण स्नेह पर समर्पित कर दिया था। समय के साथ एक सामान्य और सरल जीवन की उनकी लालसा तीव्र होती जा रही थी, पर दोनों नन्हे राजकुमारों के कारण वो मन्द हो जाती, क्योंकि उनकी सारी इच्छाएँ उनके साथ पूरी हो जातीं। उन्हें दोनों बच्चों से अत्यन्त प्रेम था; वे उनकी काली आँखों, रेशमी घुँघराले बालों, अपने गले में बंधे कोमल गुलाबी हाथों के साथ आराम से जी सकते थे।

वे चौंककर उठे। उन्हें ध्यान आया कि सारे काम समाप्त करके वे बच्चों के पास वापस जाने के लिए आतुर थे। पूर्वाह्न का समय था और वे दरबार के कामकाज की सूची तैयार कर रहे थे, पर बीच-बीच में खिड़की से बाहर सत्यवती को अपने पुत्रों के साथ बातें करते हुए देखने से नहीं रोक पा रहे थे। उन्हें ध्यान आया कि समय के साथ सत्यवती की अधीरता कम हो गई थी, वो सहनशीलता से दोनों राजकुमारों की देखभाल करतीं—गोरे और बाल-प्रौढ़ चित्रांगद और साँवले और दुर्बल छह वर्षीय वीर्य की। वो स्वयं अपने हाथों से उन्हें भोजन खिलातीं, और कभी इस काम को सेविकाओं पर नहीं छोड़तीं। वो उन्हें स्वयं नहलातीं, सुलातीं और रात भर उन पर नज़र रखतीं। वो पूरी तरह अपने पुत्रों को समर्पित थीं।

संसार भी अब उनके साथ उदार हो गया था। ये कदाचित उनके व्यक्तिगत चेष्टाओं के कारण था, न कि इसलिए कि वो दिवंगत राजा की विधवा थीं। लोग उन्हें उस अपमानजनक नाम दासेयी से नहीं, बल्कि रानी सत्यवती के नाम से स्वीकारने लगे थे। ऐसा नहीं था कि वो नाम उनके पिता दशराज की मृत्यु के साथ ही लुप्त हो गया था, पर इसलिए कि वो आज दासेयी से अधिक रानी सत्यवती थीं। वो कुरुवंश की रानी, युवराजों की माँ और जनता की हितैषी थीं। ये कार्य सरल नहीं था; जनता और दरबारियों के विरोध, संशय और आरोपों के बावजूद उन्होंने सबका मन जीत लिया था। पर उनके आकर्षण के पीछे छिपी निष्ठुर कार्यकुशलता ही थी जिसने राजमहल और राज्य में चमत्कार कर दिया था।

वो कभी डिलाई और आलस्य सहन नहीं करती थीं, और उन्होंने हस्तिनापुर के राजमहल को भारतवर्ष का सर्वश्रेष्ठ राजमहल बना दिया था। उनका संकल्प था कि वो सदैव सर्वश्रेष्ठ बना रहे। उन्होंने राजमहल के संचालन को विश्वस्त विशेषज्ञों के हाथों सौंप दिया था, परन्तु, वे उनका निरीक्षण करतीं, उन्हें सुझाव देतीं और उनकी कमियाँ सुधारती थीं। हर दिन सवेरे, वो अपने कक्ष से निकलकर राजमहल के हरेक कक्ष और भवन का निरीक्षण करतीं और निरन्तर कमियाँ और त्रुटियाँ सुधारतीं। वो राजकीय स्नानगृह से आरम्भ करतीं, वहाँ की परिचारिकाओं के साथ कुछ मीठी बातें करतीं; फिर तलघर में जाकर मदिरा और खाद्यपदार्थों का जाँच करतीं, जिसके पश्चात वो राजमहल के तीनों पाकशालाओं में जातीं, और रसोई में जाकर महाराज से उस दिन के भोजन के विषय में चर्चा करतीं। राजमहल के सभी कर्मचारी उनसे अत्यन्त स्नेह करते थे।

इसके बाद वो दरबार में जाकर दरबारियों और मंत्रियों के साथ अपनी सहज भाषा और स्वाभाविक मुद्रा में विचार-विमर्श करतीं जिससे सभी अत्यन्त प्रभावित होते। अपने पिता की मृत्यु के बाद से वो पूरी निष्ठा से दरबार के कामकाज का ध्यान रखती थीं। इस बात का निर्णय उन्होंने उग्रायुध के साथ घटी घटना के बाद ही लिए लिया था; वो कभी राजनीतिक मोहरा नहीं बनेंगी।

अन्त में, सारे राजकीय काम निपटाकर, राजकुमारों के कार्य सँभालकर वो भीष्म के साथ दरबार के कार्य के विषय में चर्चा करतीं। भीष्म ने अचम्भित होकर स्वीकार किया कि उन्हें स्वयं सत्यवती के सुझावों की अपेक्षा रहती थी। वो उनकी तीक्ष्ण बुद्धि और उनकी प्रतिभा से विस्मित थे, पर भीष्म ने उनसे इस बात का उल्लेख कभी नहीं किया। दोनों कभी-कभी देर रात तक काम करते, तब भी वो अत्यन्त ऊर्जा, उत्साह और उत्सुकता के साथ-साथ तर्कतापूर्वक विचार करतीं।

भीष्म कस्तूरी के हल्के से सुगंध से ही समझ गए थे कि सत्यवती कक्ष में आ चुकी थीं।

“आज की स्थिति क्या है?” उन्होंने अपने होंठों पर उँगली फेरते हुए पूछा। पहली बार भीष्म ने उनकी कई नई बातों पर गौर किया; उनकी मोतियों की माला, उनके अंगवस्त्र को पहनने की पद्धति, जिस प्रकार उनकी श्वेत साड़ी उनकी त्वचा का पुराव करती थी, या जिस प्रकार उनकी शान्त, प्रज्ञ आँखें उकसाने पर प्रज्ज्वलित हो जाती थीं। गुप्तचरों द्वारा लाई गई जानकारी और खबरों को पढ़कर उनकी आँखें खुली कि खुली रह गईं।

“इनमें से हर कोई हस्तिनापुर पर आक्रमण करना चाहता है,” सत्यवती मुँह ऐंठते हुए बोलीं। “वे ऐसी इच्छा रखते होंगे, पर तुम्हारी वीरता और युद्धकौशल की गौरव-गाथाएँ सुनकर वो ऐसा करने का साहस नहीं करेंगे, देव! तुम कहते हो कि तुम्हें युद्ध से घृणा है!”

“मैं उकसाए जाने पर ही आक्रमण करता हूँ,” भीष्म ने संक्षिप्त रूप में कहा।

“केवल प्रतिरक्षा, आक्रमण कभी नहीं,” वो हँसते हुए बोलीं। हम विजयी होते हैं, देव, फिर भी विजयी होते हैं।”

“उस ‘हम’ शब्द में एक विचित्र घनिष्ठता का भाव था; सम्बद्धता और स्वीकृति का, एक दूसरे पर सौहार्द और विश्वास का। दोनों सारे काम एक साथ मिलकर करते; उनके बीच सखापन था, आपसी स्नेह और सहचर्य था जिसका दोनों खंडन नहीं करते थे।

“हाँ, मुझे तुमसे एक और व्यक्ति, द्रोण, के बारे में चर्चा करनी है,” वो अपनी भौंहें चढ़ाती हुई बोलीं। “ये कौन है और पिछले एक सप्ताह से हमारे राजमहल में क्या कर रहा है?” भीष्म को उनकी स्पष्टता की आदत पड़ गई थी। कुछ लोगों को उनकी शैली दम्भपूर्ण लगती थी, और कुछ लोगों को अहंकारपूर्ण भी। पर भीष्म को कभी उनका ढंग असह्य नहीं लगा, क्योंकि बहुधा उनका ऐसा कोई तात्पर्य नहीं होता; वो मात्र स्पष्टवादी थीं और उनके पास व्यर्थ समय नहीं था।

“द्रोण ऋषि भारद्वाज और अप्सरा घृताची के पुत्र हैं...”

“प्रेम और क्षणिक वासना की एक और कहानी? उन्होंने क्या किया? घृताची को पुत्र के साथ त्याग दिया?” सत्यवती ने सावधानीपूर्वक पूछा।

“सत्य तो ये है कि घृताची ने ऋषि को छोड़ दिया, पुत्र के साथ।”

जैसे मैंने व्यास को पराशर के साथ छोड़ा था। इस विचार से ही सत्यवती उत्तेजित हो गई और उनका चेहरा लाल हो गया। भीष्म ने उनके बदलते हावभाव को भाँप लिया। ये अवश्य कुछ छिपा रही हैं। पर वे सत्यवती से कुछ पूछने वाले नहीं थे। उन्हें लगता है कि वो मुझसे एक और रहस्य छिपा लेंगी, लेकिन मैं निश्चित हूँ कि सही समय आने पर वो स्वयं मुझे बताएँगी।

भीष्म आगे बोले, “असल में, उनका नाम भी उनके जन्म के कारण ही पड़ा। उनके नाम की तरह ही ये एक अत्यन्त नाटकीय और रोचक कथा है। ऐसा कहते हैं कि ऋषि भारद्वाज ने नदी में स्नान करने आयी घृताची की झलक देख ली और वे नित्यकर्म करना भूल गए और...” भीष्म कहते-कहते रुके, उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि विवेकशीलता से कैसे कहा जाए।

सत्यवती हँसते हुए बोली, “अब ये मत कहना कि उनका वीर्यपात हो गया और उन्होंने वीर्य को... पत्तों के द्रोण में रखा... जिससे उनका नाम द्रोण पड़ा!” उनकी स्पष्टता सुनकर भीष्म भी हँस पड़े। उन्होंने हामी भरते हुए सिर हिलाया और सत्यवती के विचारमग्न चेहरे को देखकर वे सोच में पड़ गए।

“ये तो बिलकुल मेरी कहानी के समान है!” वो उपहासपूर्वक बोलीं। भीष्म के साथ उन्हें कोई हिचकिचाहट नहीं होती थी और वो कोई भी बात उनसे बिना किसी लज्जा, पीड़ा, क्रोध या आक्रामकता के साथ व्यक्त कर सकती थीं।

“वही कहानी, पर दूसरी अप्सरा...” उन्होंने कठोरतापूर्वक कहा।

“उनकी कहानी भी कुछ ऐसी है,” भीष्म कंधे उचकाते हुए बोले। “द्रोण अपने पिता के साथ रहे, जिन्होंने उन्हें युद्ध कौशल, शस्त्रज्ञान और विशेषकर धनुर्विद्या की शिक्षा दी।

“ये अत्यन्त असामान्य बात है,” वो आगे बोलीं। “युद्धकला का ज्ञान रखने वाले ऋषि! कृपा के पिता ऋषि शरद्वान की तरह।”

“द्रोण को अत्यन्त प्रतिभावान माना जाता है, वो परशुराम के शिष्य है...”

“तुम्हारी तरह, जिसका अर्थ है, कि वो भी अद्वितीय होंगे,” वो बेझिझक बोली।

भीष्म ने चौंककर भौंहें उठाई। “प्रशंसा?” वे धीरे से बड़बड़ाए। “नहीं, वे केवल परशुराम के ही शिष्य नहीं थे। जब द्रोण को पता चला कि परशुराम अपनी सारी सम्पत्ति ब्राह्मणों में वितरित कर रहे हैं, तो द्रोण उनके पास पहुँचे, पर उन्हें देर हो गई। परशुराम के पास केवल उनके शस्त्र ही शेष रह गए थे और उन्होंने अपने सभी शस्त्र द्रोण को भेंट कर दिए, और साथ-साथ उनका प्रयोग करने का ज्ञान भी दे दिया। इस अद्भुत ज्ञान और शस्त्रों के कारण द्रोण को ‘आचार्य’ की उपाधि प्राप्त हुई।”

“क्या वे हमारे दरबार में चित्रांगद और वीर्य के प्रशिक्षण के लिए आए हैं?” उन्होंने आश्वर्य से पूछा। “उन्हें तो कृपाचार्य प्रशिक्षण दे रहे हैं...”

“नहीं, द्रोणाचार्य हस्तिनापुर में शिक्षण के लिए नहीं, बल्कि कृपि से विवाह करने आए हैं।” भीष्म ने संक्षेप में कहा।

सत्यवती चकित रह गई। भीष्म के गम्भीर भाव को देखकर वो समझ गई कि निर्णय हो चुका है।

“और तुम मान गए? तुम्हें लगता है, वो कृपि के लिए सुयोग्य वर हैं?”

“हाँ,” भीष्म ने लम्बी सांस लेते हुए कहा। “वो तो कृपा से भी चतुर माने जाते हैं, यही विशेष है।”

“पर, क्या वो कृपि जितने चतुर हैं?” “ये अधिक महत्वपूर्ण बात है।”

“वो उन्हें चाहती है,” भीष्म ने कंधे उचकाते हुए कहा।

“हाँ! ये सबसे महत्वपूर्ण बात है,” सत्यवती ने स्वीकार किया। “मुझे तो आश्र्वय हो रहा है कि कृपि ने इस व्यक्ति के लिए हाँ कर दी। उसने अभी तक कितने ही प्रस्ताव ठुकरा दिए हैं,” उन्होंने हिचकिचाते हुए कहा; वो भीष्म को कचोटना नहीं चाहती थीं। भीष्म वैसे ही कृपि को लेकर बहुत ही रक्षात्मक थे, हालांकि कृपि को किसी के रक्षण की आवश्यकता नहीं थी। वो अपनी सुरक्षा स्वयं भली-भाँति कर सकती थी।

“ये दोनों कहाँ मिले?”

“ऋषि भारद्वाज के आश्रम में।”

सत्यवती चौंक गई। “इतने वर्ष पहले? तब तो कृपि छोटी-सी बच्ची थी।”

“कृपि आगे भी शिक्षिका के रूप में उनके आश्रम में जाती रही, और उनमें घनिष्ठता बढ़ गई, जिस तरह उसकी पहचान राजकुमार द्रुपद से भी हुई। तीनों बहुत अच्छे मित्र माने जाते हैं।”

सत्यवती ने तुरन्त परिस्थिति का अवलोकन कर लिया और बोलीं, “द्रुपद पाँचाल के राजकुमार और राजा पृष्ठ के पुत्र हैं न? जब तुमने उग्रायुध पौरव का वध किया, तो द्रुपद के पिता को उनका सिंहासन वापस प्राप्त हुआ। इस तरह वे हमारे ऋणी हैं,” सत्यवती ने विद्रोही स्वर में कहा। “और अब इन तीनों की मित्रता हमारे लिए लाभदायक सिद्ध होगी।”

भीष्म ने हामी भरी और कहा, “हाँ, पाँचाल अब शान्तिपूर्ण पड़ोसी बन गया है।”

“ये भी विचित्र बात है—एक ऋषि और राजकुमार की मित्रता,” सत्यवती ने टिप्पणी की। “इससे अच्छी राजनीति तो बनती है, और मेरे विचार से द्रोण शीघ्र ही पाँचालों के राजऋषि बन ही जाएँगे?”

“मुझे सन्देह है,” भीष्म ने सिर हिलाते हुए कहा। “द्रोण के पिता, ऋषि भारद्वाज, राजा दिवोदास के काल से ही काशी के राजपुरोहित हैं। परन्तु राजा पृष्ठ और ऋषि भारद्वाज मित्र थे। मैंने तो ये भी सुना था कि उग्रायुध से बचने के लिए उन्होंने भारद्वाज के आश्रम में आश्रय लिया था। दोनों के पिता भी मित्र थे और इस कारण से द्रुपद द्रोण के साथ खेलने के लिए ऋषि भारद्वाज के आश्रम में जाते थे।”

“इसका अर्थ है, इस समय द्रोण के पास किसी राजपरिवार का प्रश्रय नहीं है?”

सत्यवती ने चतुरता से प्रश्न किया।

“पर आप इतने प्रश्न क्यों कर रही हैं?” भीष्म ने संशय के साथ पूछा।

“राजाओं और उनके ऋषियों के सम्बन्धों की जानकारी प्राप्त करने के लिए!”  
उन्होंने धीरे से कहा।

“नहीं... आप ये पता लगाने का प्रयत्न कर रही हैं कि वो सचमुच कृपि के योग्य हैं या नहीं,” भीष्म ने परिचित मुस्कुराहट के साथ कहा। “पर, द्रोण कुछ भी करे, कहीं भी जाए, कृपि ने उनसे विवाह करने का निश्चय कर लिया है,” उन्होंने आह भरते हुए अपनी चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा। उन्हें इस निर्णय से बहुत दुख हुआ था—इसलिए नहीं कि द्रोण योग्य वर नहीं थे, बल्कि इसलिए कि भीष्म कृपि को बहुत चाहते थे।

“उसे ऐसा करना भी चाहिए; कृपि की आयु भी विवाह योग्य है। उसकी आयु की लड़कियों के तो बच्चे भी हो गए हैं,” भीष्म ने हल्के से हँसते हुए कहा।

“पर, उसके लिए तुम्हारी बहुत आकांक्षाएँ थीं, है न?” सत्यवती ने चतुराई से अनुमान लगाते हुए कहा।

“हाँ, वो अत्यन्त बुद्धिमान है, और विदुषी बनने के लिए नियत भी,” भीष्म ने कहा। “मेरा अनुमान था कि वो अपनी शिक्षा पूर्ण करके अपना स्वयं का आश्रम खोलेगी, विशेषकर महिलाओं के लिए, जैसा गार्गी ने किया था। मुझे भय है कि विवाह मेरे इस स्वप्न को भंग कर देगा।”

“ये, उसके लिए, तुम्हारा स्वप्न है, उसका नहीं,” सत्यवती ने धीरे से स्पष्ट किया। “वो विवाह करना चाहती है। ये उसकी इच्छा है।”

“हम्म,” भीष्म हताश स्वर में बड़बड़ाए।

“वो तो ये सब विवाह के पश्चात भी कर सकती है,” उन्होंने सन्देहात्मक तरीके से कहा।

द्रोण को एक झलक देखते ही सत्यवती की सारी आशंकाएँ और पुष्ट हो गईं।

“ये तो... ये तो बहुत गरीब हैं!” सत्यवती युवा ऋषि के रूप-रंग को देखकर धीरे से फुसफुसाई।

भीष्म ने अपनी भौंहें उठाते हुए कहा, “ये ऋषि हैं, राजा नहीं! उसे तो छाल के ही वस्त्र पहनने होते हैं, रेशम के नहीं।” भीष्म की आवाज़ में छिपी हँसी को वो नहीं भाँप पायी। भीष्म उन पर हँस रहे थे, और समझ नहीं पा रहे थे कि आखिर सत्यवती की चिन्ता क्या थी।

सत्यवती ने अधीरता से अपने होंठ भींच लिए और अपने सामने खड़े युवक को ध्यानपूर्वक देखती रहीं। वो विषाक्त, दुबला-पतला, औसत लम्बाई का था, कदाचित कृपि जितना ही लम्बा। वो बहुत कम बोलता था और उसकी दृष्टि बहुत ही पैनी थी और क्रोध से चमक रही थी।

“कृपि, शुभकामनाएँ और बधाई, तुमने मुझे बताया ही नहीं कि तुम अपने लिए वर चुन चुकी हो!” सत्यवती ने कृपि को चिढ़ाते हुए कहा, जब वो उस दिन शाम को

उनके कक्ष में आयी। “इतना बड़ा रहस्य!”

कृष्ण के चेहरे पर हल्की से मुस्कान फैल गई और वो लज्जित हो गई। “मैं द्रोण की शिक्षा पूर्ण होने की प्रतीक्षा कर रही थी।”

सत्यवती ने चौंककर पूछा, “वो अभी तक पढ़ रहे हैं? अब जब उनका विवाह होने वाला है, क्या वे बसना नहीं चाहते?”

“मुझे कोई आपत्ति नहीं है,” कृष्ण ने संक्षिप्त रूप में उत्तर दिया। “मैं वैसे ही बहुत प्रतीक्षा कर चुकी हूँ।”

“पर, क्या वे जीवन यापन के लिए कोई काम नहीं करना चाहते?” सत्यवती ने आश्वर्यचकित होकर पूछा।

“वे अपना आश्रम प्रारम्भ करने वाले हैं जहाँ वे स्वयं पढ़ाने वाले हैं।” कृष्ण ने आक्रोषपूर्वक कहा।

सत्यवती ने कृष्ण को चिन्ताभरी दृष्टि से देखा और विचार करने लगी कि क्या उन्हें अपनी आशंकाएँ ऐसी व्यक्ति के सामने व्यक्त करनी चाहिए जो उसके शब्दों को सही तरीके से स्वीकार नहीं करेगी। फिर भी उन्होंने अपने मन की बात व्यक्त कर डाली।

“क्या तुम उसकी तरह जी पाओगी?” सत्यवती ने पूछा। “द्रोण गरीब है, कृष्ण, और तुमने अपना सारा जीवन इस राजमहल में व्यतीत किया है...”

“पर राजकुमारी की तरह नहीं,” कृष्ण चिढ़कर बोली।

सत्यवती ने कृष्ण की धृष्टता को अनदेखा कर दिया। “तुम्हें हमारे दरबार में विख्यात विदुषी के रूप में सम्मान मिला, राजकीय पंडिता के रूप में तुम्हारा आदर किया गया।” उन्होंने कोमल स्वर में कृष्ण को स्मरण कराते हुए कहा। “द्रोण बुद्धिमान और प्रशिक्षित ऋषि हो सकते हैं, लेकिन वे दरिद्र हैं। मैं उन पर प्रश्नचिह्न नहीं उठा रही, परन्तु, क्या तुम उनके साथ दरिद्रता भरा जीवन व्यतीत करना चाहोगी?” सत्यवती ने स्पष्ट रूप से पूछा।

कृष्ण सत्यवती के बोलने की पद्धति से अधिक उनके शब्दों से कुछ थी। “मैं धन-सम्पत्ति के लिए विवाह नहीं कर रही हूँ,” वो त्योरी छढ़ाते हुए बोली, “... न ही प्रतिष्ठा या ख्याति के लिए, परन्तु प्रेम के लिए। मुझे रानी नहीं, केवल पत्नी बनना है,” उसने उपहासपूर्वक कहा। “मैं आपसे इस बात को समझने की अपेक्षा भी नहीं करती, क्योंकि, सच कहूँ तो, आपने प्रेम के लिए तो विवाह नहीं किया, है न?”

“हम इस समय तुम्हारे विषय में बात कर रहे हैं, मेरी नहीं, कृष्ण,” सत्यवती ने उसे शान्त करने की चेष्टा में कहा। “मैं सचमुच चिन्तित हूँ और तुम्हारे निर्णय का अनादर नहीं कर रही हूँ। यदि मैंने शिष्टाचार की सीमाएँ लाँघ दी हैं, तो क्षमा चाहती हूँ। मैं तुम्हारी सहेली की तरह बात कर रही हूँ, रानी के रूप में नहीं।”

सत्यवती ने कृपि को घृणापूर्वक मुस्कुराते हुए देखा। “रानी दासेयी, आप मेरी मित्र कभी नहीं थीं। संसार के लिए आप भले ही रानी सत्यवती बन गई होंगी, आप मेरे लिए सदैव रानी दासेयी ही रहेंगी। मुझे तो आपको प्रशिक्षित करने और यहाँ के तौर-तरीके सिखाने के लिए नियुक्त किया गया था। मैं बस वही थी। हम कभी सहेलियाँ नहीं बनीं।” कृपि ने कठोर स्पष्टवादिता से कहा।

“पर मैं तुम्हें अपना मानती हूँ, और तुम्हें सचेत करना मेरा कर्तव्य है,” सत्यवती ने कहा। “किसी गरीब मनुष्य से विवाह करना सरल नहीं होता। मैं जानती हूँ कि गरीबी क्या होती है, कृपि।”

“क्या इसी कारणवश आपने राजा शान्तनु से विवाह किया?” कृपि ने व्यंग्यपूर्वक पूछा।

“ये मेरे विषय में क्यों हो गया, प्रिय?” सत्यवती ने मुस्कुराते हुए पूछा। “मैंने तो अपनी ज़िन्दगी जी ली; तुम्हारा जीवन अब आरम्भ होने वाला है। यदि तुम दरिद्रता में जीना चाहती हो, तो ऐसा ही सही। मैं फिर भी कहूँगी कि अपने हृदय की बात सुनना सदा सुख नहीं देता।”

“हाँ! आपने तो अपना जीवन भीष्म को वंचित करके जी लिया!” कृपि ने कटुतापूर्वक कहा।

सत्यवती उसकी आँखों में चमकते स्पष्ट आक्रोष को देखकर घबरा गई। कृपि सदैव उनसे शत्रुतापूर्ण व्यवहार ही करती थी, पर उन्हें उसकी घृणा की गहराई का अनुमान नहीं था। पहली बार, सत्यवती को सही शब्द नहीं मिल रहे थे और वो अटक रही थीं। उन्होंने बात बढ़ाने के बजाय शान्त रहने का निश्चय किया।

कृपि उनके मौन से और क्रोधित हो गई। ये वही है जिसने उसके भाई का जीवन नष्ट किया था; भीष्म ने इसे इतनी सरलता से कैसे क्षमा कर दिया? कृपि से भीष्म और सत्यवती की बढ़ती मित्रता छिपी नहीं थी, और इसके लिए वो उन दोनों से बहुत अप्रसन्न थी। नवीकृत क्रोध के साथ कृपि ने उस औरत के सारे करतूतों को याद किया; उसने भीष्म के जीवन को तहस-नहस कर दिया था, फिर भी वो उसके साथ था। कृपि के अन्दर परिचित-सी आवेश की ज्वाला भड़क उठी। कृपि ने ध्यानपूर्वक सत्यवती के साँवले, अहंकारपूर्ण, मुस्कुराते चेहरे को देखा...

“आपको लगता है, आप सब कुछ पा गई, है न दासेयी?” कृपि की आवाज़ विद्वेषपूर्ण हो गई और सत्यवती उसे चकित होकर देखती रह गई। “राजा के बोझ के बिना राजमुकुट, हस्तिनापुर राज्य, प्रजा का सम्मान, उनका प्रेम, आपकी मुट्ठी में देव, आपके दो पुत्र—हस्तिनापुर के युवराज... सब कुछ... पर कब तक प्रिय?” कृपि ने सत्यवती के लाल होते चेहरे को सन्तोषपूर्वक देखते हुए कहा। “मैं तो यहाँ से जा रही हूँ, पर आपका भला कभी नहीं चाहूँगी, दासेयी। आप मुझे कभी मोहित नहीं कर पायीं,

कभी नहीं!” वो घृणापूर्वक बोली। “अपने भाग्य को और अधिक न आजमाइए, कहीं आपके विरुद्ध ही न हो जाए। संसार विचित्र तरीके से हमें उत्तर देता है!”

आह भरते हुए सत्यवती ने उसके सारे आरोपों का खंडन करने का निश्चय किया।

“मानती हूँ कि हम मित्र नहीं हैं,” सत्यवती ने कहा। “पर, कदाचित इसलिए हमारे लिए एक दूसरे से स्पष्टता से बात करना सरल है। तुम विश्वास नहीं करोगी लेकिन मुझे तुम्हारी बहुत चिन्ता रहती है। मैं तुम्हारी बहुत परवाह करती हूँ, क्योंकि तुम देव की अत्यन्त प्रिय हो,” और थोड़ा रुककर आगे बोली। “जैसी तुम शान्तनु के लिए भी थी।”

“आप तो शान्तनु का उच्चारण किसी अनुबोध की तरह करती हैं,” कृपि ने कड़े स्वर में कहा। “सत्य तो ये है कि आप आजकल उनके बारे में बात ही नहीं करतीं। अरे, आप उनकी विवाहिता पत्नी थीं!”

सत्यवती ने कृपि को विचित्र भाव से देखते हुए कहा, “कृपि, तुम ये मत समझो कि मुझे उस गलती का मूल्य नहीं भुगतना पड़ा।” कृपि उनकी स्पष्टता सुनकर चौंक गई। “सत्यवती आगे बोलीं, “स्त्री को जीना होता है, और ये इतना सरल नहीं है। स्त्री गलती कर सकती है, गलत व्यक्ति से विवाह कर सकती है; ऐसे वस्तु की खोज में जो कभी था ही नहीं—सुरक्षा हो या कुछ और,” उन्होंने कंधे उचकाते हुए कहा।

“क्या आप अपने विषय में बात कर रही हैं, या मुझे परामर्श दे रही हैं?” कृपि ने उपहास करते हुए पूछा। “पर आपने तो विवाह करने के लिए प्रेम नहीं किया?”

“इतनी निंदक होने की आवश्यकता नहीं है, तुम अभी बहुत छोटी हो, कृपि। तुम्हें सोचकर आश्वर्य होगा कि कितनी ही लड़कियाँ अच्छा घर और सिर के ऊपर छत पाने के लिए विवाह करती हैं। विशेषकर ऐसी लड़कियाँ जिनके हाथ अनचाहे कपटियों को दूर करते थक गए हों, जो दरिद्रता से लड़ती हैं, और जिन्हें संकरी और अंधेरी गलियों में बलपूर्वक टटोलते आशावादी पुरुषों से बचाव करते हुए चलना पड़ता है। तुम नहीं समझोगी, कृपि।”

“आपके पास तो घर था, फिर भी आपने देव के घर में हस्तक्षेप किया!” कृपि ने भी तर्क करते हुए कहा। “मैं तो मुझे जो मिला, उसी से सन्तुष्ट हो गई। मुझे लगा कि वो मेरे पास जो घर था उससे अच्छा ही होगा।”

“आप बहुत चतुर हैं, दासेयी। कठोर और बुद्धिमान भी। मेरा मानना है कि जब आपने राजा शान्तनु से विवाह किया, तो आप समझती थीं कि आपको ऐश्वर्य और सम्मान, दोनों प्राप्त हो जाएगा... और आप सही थीं।” कृपि ने घृणापूर्वक कहा। “आप चालाक और निर्मम स्त्री हैं जिसने राजा शान्तनु को अपने जाल में फँसाया, और अब देव को अपनी मुट्ठी में बाँधा हुआ है। आप उसे देव कहकर क्यों पुकारती हैं, जब आप ही ने उसे भीष्म बनाया? आपका उस पर क्या अधिकार है? आप उसकी माता, विवाह के कारण, छल करके बनी हैं।”

“मुझे उसे उस नाम से पुकारने का साहस नहीं है, जिस नाम से विश्व उसे जानता है और इतनी श्रद्धा के साथ उसका नाम लेता है। हाँ, उसे ये नाम मेरे कारण मिला, और वो नाम उसकी उपहासपूर्ण स्मृति है। मैं जानती हूँ कि मैंने जो देव के साथ किया, उसके लिए तुम मुझसे घृणा करती हो, पर मत भूलो कि मैं भी अपने-आपको क्षमा नहीं कर पायी हूँ।” सत्यवती एक क्षण के लिए रुकीं और आगे बोलीं। “मैं एक क्षण के लिए भी नहीं भूल पाती कि मैं उससे ऋण में मिले अधिकार और उसके राजसिंहासन का उपयोग कर रही हूँ। मैं नहीं जानती थी कि मैं स्वयं से इतनी घृणा कर सकती हूँ—पर मैं करती हूँ। जब भी मैं उसे देखती हूँ...” कहते हुए उनकी आवाज़ कांप गई। “मैं ये बात उससे या किसी और से नहीं कर सकती; और जितनी भी क्षमा-याचना कर लूँ अपर्याप्त ही रहेगी,” अपने अपराधबोध के बोझ को हल्का करने की चेष्टा करते हुए वह धीमे स्वर में बड़बड़ाई।

कृष्ण धक् रह गई और कुछ नहीं बोल पायी। उसे एक क्षण के लिए अपनी आँखों और कानों पर विश्वास नहीं हुआ, और उसे उस स्त्री के उद्देश्य पर शंका होने लगी। क्या वो उसे बहलाने के लिए ये सब कुछ कह रही थी? सत्यवती को लेकर उसका अविश्वास फिर से अपना सिर उठाने लगा। पर, जैसे-जैसे उसने जो देखा और सुना, उसे आत्मसात करने लगी, उसकी आश्वर्यचकित आँखों के सामने ऐसी स्त्री खड़ी थी जिसके चेहरे से अहंकार का मुखौटा गिर चुका था। कितने लोग इस तरह शब्दों को व्यक्त करने का साहस कर सकते थे? सत्यवती ने दस से अधिक वर्षों के अपने परदे खोल दिए थे।

कृष्ण को झटका-सा लग गया। उसे वो सब कुछ याद आ गया जिसे उसने देखा तो था, पर अनदेखा करने का निश्चय कर लिया था। उसने देव को अपने कक्ष में आते देख, उसके कदमों की आहट सुनकर या उसकी आवाज़ सुनकर सत्यवती के चेहरे पर छाने वाली खुशी की चमक को याद किया। या उन क्षणों को, जब दरबार में जाने से पहले कृष्ण ने भीष्म को धैर्यपूर्वक सत्यवती के कक्ष के द्वार पर उसकी प्रतीक्षा करते देखा था। या जब भीष्म सत्यवती को अपने पुत्रों की देखभाल करते हुए देखता रहता था। या उस क्षण को जब वो सभाग्रह की सीढ़ियों पर शिष्टाचार से सत्यवती को उसकी दुशाला देता, उसे सही तरीके से उसके कंधे पर रख देता, जब वो आँखें नीची किए, उसके कंधों का सहारा लिए खड़ी होती...।

कृष्ण अपने-आपको एक प्रश्न करने से नहीं रोक पायी—क्या उन दोनों के बीच की निकटता ही सत्यवती के लिए उसकी घृणा का कारण थी? उसे अचानक ज्ञात हुआ कि इस प्रश्न का उत्तर ‘हाँ’ था।

कृष्ण अक्सर सोचती कि क्या कभी देव को प्रेम करने की, विवाह करने की, अपनी सन्तान की इच्छा होती होगी? वो उसकी सबसे प्रिय थी, जिससे वो हृदय खोलकर सब कुछ कह सकता था, फिर भी कृष्ण को उससे ये प्रश्न करने का साहस

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

कभी नहीं हुआ। क्या वो रात को जागते हुए कभी ये सोचता होगा कि उसके पास क्या हो सकता था और उसने जो कुछ हमेशा के लिए खो दिया? क्या वो ये सब कुछ संजोकर उन्हें कोमलता से अपने स्वप्नों में दुलारकर, उन्हें नियति से माँगता होगा? कृष्ण ने बहुत बार इस बारे में विचार किया था।

कृष्ण जानती थी कि भीष्म कभी भी प्रेम की आशा करने या उसके बारे में सोचने का साहस नहीं करेगा। अपने ही निशब्द तरीके से वो सत्यवती को अपने लिए उतना ही महत्वपूर्ण समझता था, जितना वो स्वयं उनके लिए था।

सत्यवती और भीष्म ये भली-भाँति समझ गए थे कि उनके जैसे विध्वस्त लोगों के लिए आनन्द और सुख केवल उनके स्वप्नों में ही सम्भव था और आरक्षित भी।

Novels English

## वेदना

“आप अपने पुत्रों के साथ बहुत ही उदारचित्त हैं,” भीष्म ने झुँझलाहट के साथ सत्यवती पर आरोप लगाते हुए कहा। अभी-अभी चित्रांगद ने प्रचंड हठ किया था जिसे सत्यवती ने मौनपूर्वक झेल लिया था। वो तो भीष्म की कठोर आवाज़ ने राजकुमार को नियंत्रित किया था।

“तुम अब बच्चे नहीं रहे, राजकुमार। तुम शीघ्र ही राजा बनने वाले हो,” भीष्म ने अपने सामने खड़े युवक को मृदुलता से चेतावनी देते हुए कहा। सत्यवती जानती थीं कि भीष्म की रूखी आवाज़ उनकी गर्जना से कहीं अधिक भयावह थी, इसीलिए उन्होंने हस्तक्षेप नहीं किया। देव ही इस बालक को सँभाल सकता था। “और यदि तुमने अपने क्रोध और स्वभाव पर लगाम नहीं लगाया, राजकुमार, तो मुझे अभी भी इतना अधिकार है कि मैं तुम्हें राजसिंहासन पर न बैठने दूँ।”

चित्रांगद ने अपनी माँ को आक्रामक दृष्टि से देखा, पर तुरन्त ही अपनी आँखें झुका लीं। “सबसे पहले शिष्ट होना सीखो, फिर दयालु, सहायक और विनम्र। क्या मुझे अब ये सब भी सिखाना होगा?”

चित्रांगद श्रेष्ठ योद्धा था, और उसने अपने भाई की तुलना में अत्यन्त शीघ्रता से युद्धकला सीख ली थी। पर वो बहुत ही क्रोधी और चिड़चिड़े स्वभाव का था और उसने अभी तक प्रशासन और व्यवहार-कुशलता नहीं सीखी थी। भीष्म निश्चित रूप से जानते थे कि ये क्रोध उसके लिए और अन्य लोगों के लिए हानिकारक सिद्ध होगा। बहुत कम ऐसे क्रोधी लोग थे जो समझ पाए थे कि क्रोध उनके विवेक को खोखला कर देता है। आक्रोश सदा पराश्रयी होता है और अपने मालिक पर ही आक्रमण करके उसे नष्ट कर देता है। राजकुमार की माँ अपने दुलार से उसे बढ़ावा दे रही थी। भीष्म ने कई बार उन्हें सचेत किया था पर उन्होंने उसे पारिवारिक स्वभाव कहकर टाल दिया था। वो स्वयं भी तो क्रोधी स्वभाव की थीं।

भीष्म ने चित्रांगद को श्रेष्ठ राजा बनाने का यथासम्भव प्रयास किया। चित्रांगद ने उनके साथ कई युद्ध लड़े थे और प्रतिभाशाली योद्धा था। उसने हस्तिनापुर के विकास में और युद्धभूमि पर शत्रुओं पर विजय पाने में भीष्म की सहायता की थी। पर चित्रांगद, अभी भी अपने बड़े भाई पर निर्भर था। जब तक युवराज सक्षम उत्तराधिकारी के रूप

में, कृपालु राजा की तरह कुशलतापूर्वक निर्णय लेने के योग्य नहीं हो जाता, सत्ता की असली डोर भीष्म के पास ही रहने वाली थी। भीष्म ने निर्णय किया था कि उसके पश्चात वे हस्तिनापुर को सुरक्षित हाथों में सौंपकर चले जाएँगे।

परन्तु, सत्यवती ने अलग ही योजना बनाई थी।

“मुझे तुमसे चित्रांगद के विवाह के विषय में चर्चा करनी थी,” उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा।

“नहीं, भीष्म बलपूर्वक बोले। “वो अभी मात्र सोलह वर्ष का है; अभी बहुत छोटा है।”

“वो राजा बनने योग्य हो गया है, तो पत्नी क्यों नहीं ला सकता?” सत्यवती ने उत्तेजित होते हुए पूछा।

“आप उससे केवल उत्तराधिकारी चाहती हैं,” भीष्म ने आह भरते हुए कहा।

“इसे मेरी कोई अविवेकी हठ समझकर मत टालो। ये अत्यन्त महत्वपूर्ण है।”

भीष्म को उनकी चिन्ता स्पष्ट दिख रही थी।

“क्या बात है?” उन्होंने धीरे से, गम्भीरतापूर्वक पूछा।

“वीर्य के विपरीत, चित्रांगद युवा और बलवान है,” सत्यवती ने अनिश्चित रूप से कहना आरम्भ किया। “वीर्य तो अधिकांश समय इतना अस्वस्थ रहता है कि उसका नाम विचित्रवीर्य पड़ गया है। मुझे नहीं लगता कि वो कभी सन्तान को जन्म दे पाएगा; और इसी कारणवश मैं चित्रांगद का विवाह करवाना चाहती हूँ। यदि हम अभी से ढूँढ़ना आरम्भ करें तो वर्ष के अन्त तक उसका विवाह सम्पन्न हो सकता है।”

“और आप अगले वर्ष दादी बन सकती हैं!” भीष्म ने टिप्पणी की।

पर वे उनका तात्पर्य समझ गए थे और अनिच्छापूर्वक उनसे सहमत हुए—कुरुवंश चित्रांगद की वंशावली से अधिक सशक्त होगा, अस्वस्थ और दुर्बल वीर्य से नहीं। उन्होंने धीरे से सिर हिलाते हुए स्वीकार किया। “आप कदाचित सही कह रही हैं, मैं एक सप्ताह के अन्दर आपके लिए योग्य राजकुमारियों की सूची तैयार करता हूँ।”

“राजनीतिक सन्दर्भ में भी योग्य,” सत्यवती ने भीष्म को कठोर दृष्टि से देखते हुए कहा। “मुझे केवल सुन्दर चेहरा नहीं चाहिए, मैं चाहती हूँ कि उसमें इतना राजनैतिक प्रभाव हो कि वो कुरु-राज्य को संगठित करके इसे सबसे प्रबल राज्य बना दे।”

परन्तु, तीन दिनों के बाद ही एक गंधर्व से द्वन्द्व-युद्ध करते समय चित्रांगद की मृत्यु हो गई। भीष्म उस समय हस्तिनापुर में नहीं थे, और जैसे ही उन्हें इसकी जानकारी मिली, वे हस्तिनापुर के लिए निकल पड़े। वे इससे पहले कभी इतने विचलित नहीं हुए थे; तब भी नहीं, जब उनकी माँ उन्हें छोड़कर चली गई थी, या जब उनके पिताजी की मृत्यु हुई थी। वे युद्ध, हिंसा, मृत्यु और निराशा के आदी थे, पर उन्होंने कभी नहीं सोचा था कि उन्हें अपने प्रिय पुत्र की मृत्यु का साक्षी बनना पड़ेगा। भीष्म ने अपने आँसू

रोकने का भरसक प्रयत्न किया। उनके विलाप करते मन में उस सुन्दर युवक की छवि उभर आयी : लम्बा, सुडौल, गोरा, तराशा हुआ चेहरा, उसके लम्बे घने बाल और उसकी सहज मुस्कुराहट।

उनके अन्दर आक्रोश की लहर-सी दौड़ गई। वे अपने-आपको सांत्वना नहीं दे पा रहे थे। सत्यवती की अपने पुत्र की मृत्यु पर क्या प्रतिक्रिया रही होगी? इस विचार मात्र से वे भय और चिन्ता से घिर गए। वे जानते थे कि वो टूट गई होंगी।

भीष्म को अपनी यात्रा का भास ही नहीं हुआ। पूरे रास्ते वे मौन थे और जब वे राजमहल में पहुँचे तो वहाँ भी अंधकार और उदासी छाई हुई थी। वे भागते हुए सत्यवती के कक्ष में गए। उन्हें एक झलक देखते ही भीष्म जान गए कि वो टूट चुकी थीं। वे चिन्तापूर्वक उनके पास गए।

सत्यवती उनके निकट आने तक स्थिर खड़ी रहीं, उनका चेहरा विवर्ण था और आँखें प्रार्थनापूर्ण। फिर अचानक उन्होंने जोर से भीष्म के गाल पर थप्पड़ मारा; भीष्म लड़खड़ा गए, भीष्म के गाल पर उँगलियों के निशान उभर आए थे।

“जब मुझे तुम्हारी सबसे अधिक आवश्यकता थी, तुम कहाँ रह गए?” उनकी आवाज़ रुआँसी हो गई और वो फूट-फूटकर रो पड़ीं। भीष्म को उनके थप्पड़ से कोई आश्वर्य नहीं हुआ। यदि वे हस्तिनापुर में होते तो राजा को बचा लेते, अपने भाई को निरर्थक मृत्यु से बचा लेते। भीष्म अपने-आपसे यही दोहराते रह गए।

वे एक सप्ताह पहले ही हस्तिनापुर से राज्य की सीमा पर अशान्त चौकी पर गए हुए थे। राज्याधिकारी होते हुए राजा के स्थान पर उनका जाना ही अधिक उचित था, और वे कुछ ही दिनों में वापस आने वाले थे। पर एक गंधर्व ने उपयुक्त अवसर देखकर राजा को चुनौती दी। किसलिए? भीष्म ने सोचा। नाम के लिए? चित्रांगद इतना महान और सफल योद्धा माना जाता था कि गंधर्वों के राजा चित्रांगद ने उसे कुरुक्षेत्र में द्वंद्व करने की चुनौती दी और कहा कि एक ही नाम के दो राजा एक ही समय पर जीवित नहीं रह सकते। इस तरह दोनों उस विवेकहीन द्वंद्व में कूद पड़े, जो दो दिन चला, और अन्त में हस्तिनापुर के राजा की युद्धभूमि में मृत्यु हो गई।

सत्यवती धीरे से रो रही थीं। “जब गंधर्व ने चुनौती दी, तो चित्रांगद थोड़ा सावधान था, पर इसलिए मान गया क्योंकि वो दानव, राज्य को नष्ट करने की धमकी दे रहा था,” सत्यवती ने वर्णन किया। “एक सच्चे कुरु राजा की तरह—तुम्हारा निष्ठ शिष्य चित्रांगद कोई निरर्थक संहार नहीं चाहता था और उसने गंधर्व से स्वयं द्वंद्व करने का निश्चय किया। चित्रांगद आश्वस्त था कि वो उस गंधर्व को पराजित कर देगा, लेकिन गंधर्व ने छल करके उसे मार डाला!” कहते हुए सत्यवती का गला भर आया और उनकी आवाज़ तेज हो गई। “उसने मेरे पुत्र को मार डाला, देव! उसने मेरा सब कुछ छीन लिया —मेरा पुत्र, मेरी आशाएँ, और मेरे सारे सपने!”

वो फूट-फूटकर रोने लगीं और उन्हें इस तरह टूटते देख, उनकी आँखों की पीड़ा देखकर भीष्म का हृदय भर आया। चित्रांगद उनकी एकमात्र कमजोरी था। उन्होंने शान्तनु की मृत्यु पर एक भी आँसू नहीं बहाए थे, अपने पिता की मृत्यु पर भी नहीं। वो अन्तिम बार तब रोई थीं जब राजा वसु हस्तिनापुर आए थे, पर वो आँसू क्रोध और अपमान के थे। ये तो विशुद्ध पीड़ा थी।

“ये मेरा दंड है, देव,” वो बड़बड़ाई और अपना सिर हाथों में लेकर बार-बार हिलाती रहीं। “मैंने तुम्हारे साथ जो किया, उसके लिए ये मेरा दंड है! मेरे पुत्र को मेरे पापों की सजा भुगतनी पड़ी!”

“शान्त हो जाइए!” भीष्म ने स्तम्भित होकर कहा। सत्यवती ने आँसुओं से चमकते चेहरे से, काली, निरुत्साह आँखों से भीष्म को देखा। उनकी वो दृष्टि भीष्म की आत्मा को जलाकर राख कर रही थी। वे कुछ समय तक अपने आँसुओं पर नियंत्रण पाने के प्रयास में बैठे रहे। सत्यवती के सो जाने तक उनके हाथ कोमलता से थपथपाते रहे। वे उठे और उनके आँसुओं से भीगे चेहरे को एकटक देखते रहे, और फिर कक्ष से बाहर निकल गए।

सत्यवती को इस तरह तड़पते देखना उनके लिए बड़ी यंत्रणा थी। जब वो कई रातों तक रूखी और रिक्त नेत्रों से द्वार की तरफ इस आशा में देखती बैठी रहतीं कि चित्रांगद अचानक चलता हुआ आ जाएगा, या जब वो उसके शस्त्रों और कवच को देखकर सिहर जातीं, भीष्म भी उनके साथ दुखी हो जाते।

ये वो सत्यवती नहीं थी जिसे भीष्म पहचानते थे।

सत्यवती के बाल खुले हुए और हमेशा की तरह जूँड़े में बंधे नहीं थे। वो कई दिनों तक एक ही पोशाक पहने रहती थीं। उनका चेहरा मुरझाया हुआ और श्वेत पड़ गया था। भीष्म को एकाएक ध्यान आया कि अब वो अपनी आयु की दिखने लगी थीं। वो करीब उन्हीं के आयु की थीं, पर अपने जोश और ऊर्जा के कारण उनसे छोटी लगती थीं। उनके बालों में सफेदी की झलक भी नहीं थी, पर उनके दुख ने उनकी आयु बढ़ा दी थी। वो दिन-रात अपने कक्ष में पड़ी रहतीं और अशुभ घटनाओं की आशा करतीं, अपने-आपको और अपने अतीत को कोसती हुई लेटी ही रहतीं।

भीष्म को उनके लिए चिन्ता और भय होने लगा था। क्या वो अपने पुत्र को खोने की पीड़ा से उबर पाएँगी और सामान्य जीवन में वापस आ पाएँगी? वीर्य की उपस्थिति भी सहायक सिद्ध नहीं हो रही थी। ये उनके स्वभाव के बिलकुल विपरीत था।

अब भीष्म को ही इस घाव को भरना होगा; किन्तु कैसे?

हर दिन भीष्म उन्हें शोक से बाहर निकालने के नए-नए प्रयास करते। वे उनसे बात करते, अपने परिवार की कहानियाँ सुनाते, उनसे प्रतिक्रिया निकालने की कोशिश करते, पर उनका हर प्रयास विफल ही रहता।

उनका व्यवहार अनियमित होता जा रहा था ये सब देखकर भीष्म हतप्रभ रह जाते। कभी वे अच्छे वस्त्र पहनने से इंकार करतीं, तो कभी अपने लिए कीमती रेशमी वस्त्र मंगवातीं। कभी-कभी, दर्पण के सामने से गुजरते हुए वे रुककर अपने बाल संवारती, और कभी-कभी वो इधर-उधर देखे बिना की चलती जातीं। कभी पूरा भोज खातीं, और कभी एक कोर भी नहीं खातीं।

उस दुखद घटना को हुए पाँच महीने बीत गए थे, पर सत्यवती को समय का होश ही नहीं था।

जब उन्हें वीर्य की अस्वस्थता, उसके ज्वर और खाँसी के बारे में जानकारी दी गई तो उन्होंने बस इतना ही कहा—“ऐसा ही सही, इसकी भी मृत्यु हो जाएगी, वो क्षयग्रस्त है।”

पाँच महीने पूर्व तक सत्यवती ही भीष्म की सबसे विश्वसनीय पहलू थीं। वे उनका विश्वास करना सीख गए थे, उनकी योग्यता, उनके प्रयोजन और उनके उद्देश्य को समझने लगे थे। पर उनकी स्थिति देखकर उन्हें डर लगने लगा कि वे उन्हें भी खो देने वाले हैं। उससे भी अधिक—उन्हें सत्यवती की कमी महसूस हो रही थी। वे उनकी तीव्र और तीक्ष्ण बुद्धि से प्रभावित तो थे ही, उन्हें उनकी उपस्थिति, उनके परामर्श और उनकी मित्रता की आवश्यकता थी।

एक दिन वे सत्यवती के साथ बैठे थे और वो रो रही थीं।

“क्या मैं वैद्य को दोबारा बुलाऊँ?” भीष्म ने कोमलतापूर्वक पूछा।

“कोई आवश्यकता नहीं; बस सिर में पीड़ा हो रही है।” उन्होंने आँसूभरी आँखों से भीष्म को देखते हुए कहा।

भीष्म ने उन्हें कुछ फल खाने के लिए दिए। सत्यवती ने तकियों के सहारे अपने बिस्तर पर बैठकर अनिच्छा से फल खाए। वो बारी-बारी से ग्लानिपूर्वक कभी अपनी सेविका को देखतीं और कभी भीष्म को। जब उन्होंने सारे फल खा लिए, उनमें थोड़ी ऊर्जा आयी और वो थोड़ी जीवन्त दिखाई दीं।

“तुम थोड़े कमज़ोर लग रहे हो, देव,” वो उन्हें चिन्ताभरी दृष्टि से देखते हुए धीरे से बोलीं। भीष्म उनकी वात्सल्य-भरी दृष्टि को नहीं देख पाए। वे तो इस बात से खुश थे कि सत्यवती ने कुछ तो खाया था और लम्बे समय बाद एक वाक्य पूरा बोली थीं।

सत्यवती ने एकाएक पूछा, “अब वीर्य कैसा है?” वो अचानक सीधी होकर बैठ गई।

“पहले से अच्छा है, वैद्य निरन्तर उसके साथ हैं,” भीष्म ने कहा।

“उन्हें होना भी चाहिए,” सत्यवती उँगलियों से अपने निचले होंठ को सहलाती हुई सहजता से बोलीं। “उन्हें ही इस राज्य के उत्तराधिकारी को वापस स्वस्थ करना है। देव, हम नए राजा के रूप में उसका प्रशिक्षण कब आरम्भ कर रहे हैं?”

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

तभी अचानक भीष्म को आभास हुआ कि वो ठीक हो गई थीं।

## स्वयंवर

“काशी के राजा अपनी तीन राजकुमारियों का स्वयंवर कर रहे हैं,” सत्यवती ने कहा।

भीष्म उनकी आवाज़ के भाव को समझ गए।

“उन्होंने हस्तिनापुर को आमंत्रण-पत्र नहीं भेजा है,” उन्होंने कठोर स्वर में कहा।

भीष्म ने धैर्यपूर्वक अपनी कलम नीचे रखते हुए कहा, “आप कारण जानती हैं।”

वो उत्तेजित होकर फुफकारती हुई खुलकर बोली, “क्योंकि तुम उनकी बहन से विवाह नहीं कर पाए।”

उन्होंने भीष्म को अपने जबड़े कसते देखा। “मैंने उनसे निमंत्रण की अपेक्षा भी नहीं की थी।”

सत्यवती ने चमकती आँखों के साथ कहा, “मैं अतिथि बनकर नहीं जाना चाहती; वीर्य को विवाहार्थी के रूप में आमंत्रित किया जाना चाहिए।”

भीष्म ने अपनी भौंहें उठाते हुए आलोचनात्मक ढंग से कहा, “वीर्य तो अभी सोलह वर्ष का भी नहीं हुआ है।”

“तुमने चित्रांगद के लिए भी यहीं तर्क दिया था। मुझे तुम्हारी बात नहीं माननी चाहिए थी।” वो निर्णयिकतापूर्वक सिर हिलाती हुई बोलीं। “यदि उस समय उसका विवाह हो गया होता तो मृत्यु से पहले उसकी सन्तान हो सकती थी।”

“उत्तराधिकारी,” भीष्म ने गम्भीरतापूर्वक कहा। उन्हें शंका हुई कि कहीं पुत्र की मृत्यु ने उन्हें निर्दयी तो नहीं बना दिया था। क्या वो चित्रांगद से उत्तराधिकारी न मिल पाने का खेद व्यक्त कर रही थीं, या अपने पुत्र की मृत्यु का शोक मना रही थीं? कदाचित उनके आरभिक जीवन की कठिनाइयों के कारण, या उनके सहज स्वभाव के कारण, भीष्म समझ गए थे कि वो निर्मम थीं, विशेषकर अपने अधिकार को सिद्ध करने को लेकर। वो स्वभाव से ही भावहीन थीं, ऐसी व्यक्ति जो अपने दुख को अलग रखकर निष्पक्षता से भविष्य की योजना बना सकती थी।

भीष्म को चित्रांगद की मृत्यु के तुरन्त बाद की एक घटना याद आ गई। एक स्थानिक मन्दिर के पुजारी ने अपनी पुत्री की मृत्यु के कारण नित्य पूजा रोक दी थी। जब सत्यवती को इस विषय में शिकायतें मिलीं, तो वो स्वयं पुजारी की कुटिया तक गई

और दुख प्रकट करने के साथ-साथ उन्हें परामर्श भी दे दिया। पुजारी ने शोकसन्तप्त राजमाता से अविभूत होकर उसी दिन मन्दिर के द्वार खोल दिए।

रानी को भावुक से अधिक विवेकपूर्ण होना चाहिए। पर, क्या उनकी निरंकुश वेदना ने उनकी संवेदना की शक्ति को कुचल दिया था? वो आयु में बड़ी दिखने लगी थीं, उनकी आँखें कठोर हो गई थीं और मुस्कुराना तो वे भूल ही गई थीं।

“मैंने उसके लिए बहुत शोक कर लिया,” उन्होंने जैसे भीष्म के मन की बात पढ़ ली थी। “हम अपने राजसिंहासन के लिए उत्तराधिकारी प्राप्त करने के उत्तरदायित्व से भाग नहीं सकते। हमने चित्रांगद के साथ समय से कार्यवाही नहीं की, और मैं वही गलती वीर्य के साथ नहीं दोहरा सकती। वीर्य सही आयु का है और राजा भी; और राजा को रानी, या रानियों की आवश्यकता होती है।” सत्यवती ने बलपूर्वक कहा। चित्रांगद की मृत्यु के तुरन्त बाद ही भीष्म ने वीर्य को अगले राजा के रूप में प्रशिक्षित करने का बीड़ा उठा लिया था। इससे भीष्म की पीड़ा भी कम हो गई थी। वीर्य बुद्धिमान था और अस्वस्थ और दुर्बल होते हुए भी उसने राज-पाठ शीघ्रता से सीख लिया था। वो अत्यन्त मधुर स्वभाव का था और कई भाषाएँ बोल सकता था। भीष्म के कठोर देखरेख में वो शस्त्रों और युद्धकला में पारंगत होने के अलावा श्रेष्ठ कूटनीतिज्ञ भी सिद्ध हुआ।

दो महीने पहले, उसे नया राजा घोषित किया गया था, पर राज्य की बागड़ोर सत्यवती और भीष्म मिलकर सँभाल रहे थे।

“तीनों में से कोई भी राजकुमारी वीर्य से विवाह नहीं करेगी,” भीष्म ने रूखेपन से कहा। “ये स्वयंवर है और राजकुमारियों को अपनी इच्छानुसार वर चुनने का अधिकार होता है।”

“स्वयंवर, जिसमें हमें आमंत्रित नहीं किया गया है,” उन्होंने कहा। “और इस अपमान के लिए काशी को भारी कीमत चुकानी पड़ेगी।”

“ये मात्र हृदय का विषय नहीं, राज्य का भी विषय है,” भीष्म ने सचेत करते हुए कहा। “आप काशी के साथ युद्ध केवल इसलिए नहीं कर सकतीं कि राजकुमारियों के पिता ने आपके पुत्र को आमंत्रित नहीं किया।”

तुम इस बात को तुच्छ और व्यक्तिगत बना रहे हो, देव,” सत्यवती ने शान्तिपूर्वक कहा। “पर ये हमारा स्पष्ट अपमान है, उन्होंने हमारे अतिरिक्त राष्ट्र के सभी राज्यों को आमंत्रित किया है। क्या ये हस्तिनापुर और कुरुवंश का अपमान नहीं है?”

“हाँ, पर ये व्यक्तिगत ही है,” भीष्म ने भावहीनता से स्वीकार किया। “मैंने, सब कुछ तय होने के बाद उनकी बहन से विवाह न करके उनका अपमान किया है।” भीष्म अपना चेहरा और अपनी आँखें स्थिर और भावशून्य रखने के लिए संघर्ष कर रहे थे, उनके द्वारा एक अभागी लड़की और उसके परिवार पर पर ढायी गई असीम पीड़ा को

याद करके उनके अन्दर एक तूफान-सा उमड़ आया। “मैं उनका अपराधी हूँ, मैं दोषी हूँ।”

सत्यवती ने अपने निचले होंठ दांतों से दबा लिए। भीष्म अपने अतीत के बारे में कभी चर्चा नहीं करते थे और उनके विवाह का विषय तो निषिद्ध था; फिर भी सत्यवती को आज ये बात उठानी पड़ी।

“राजकुमारी का क्या हुआ?” उन्होंने उत्सुकतापूर्वक प्रश्न किया।

भीष्म ने अपने कंधे उचकाए और फिर एकाएक खिन्न होते हुए बोले, “कुछ समय बाद उसका विवाह विदर्भ के राजा के साथ हो गया।”

“चलो, सब कुछ ठीक हो गया। फिर भी उसके पिता तुमसे दुर्भाव क्यों कर रहे हैं?”

“आहत सम्मान के कारण,” भीष्म ने उनकी बात सुधारते हुए कहा। “यदि उन्होंने हमें निमंत्रण नहीं भेजा है, तो ये उनका व्यक्तिगत निर्णय है, उनका अधिकार है।”

उनके चेहरे के भाव कठोर और गम्भीर हो गए, मानो वे इस चर्चा को समाप्त करना चाहते हों। सत्यवती को लगा की वातावरण तनावपूर्ण हो रहा था, और उन्होंने भीष्म की बात काटते हुए कहा, “पर इस बार, ये तुम्हारे बारे में नहीं है, वीर्य के बारे में है। वीर्य योग्य विवाहार्थी है...”

“नहीं, वो योग्य नहीं है,” भीष्म बलपूर्वक बोले। “न राजा के रूप में, न ही पति के रूप में! वो क्षयग्रस्त है और उसने मदिरापान करना भी आरम्भ कर दिया है, हमें उसे नियंत्रित करना होगा।”

सत्यवती स्तब्ध रह गई और फिर क्रोधपूर्वक बोलीं, “ये तुम क्या कह रहे हो? उसे तो तुमने स्वयं प्रशिक्षित किया है!”

“इसका अर्थ ये तो नहीं कि वो योग्य राजा है,” भीष्म ने संक्षेप में कहा। “मेरी आशंका के बावजूद आपने उसे राजसिंहासन पर बैठने के लिए बाध्य किया। मैं उसके स्वास्थ्य की बात कर रहा हूँ। आपको समझना चाहिए था, वो अस्वस्थ लड़का है। आपने इतने वर्षों तक उसकी इतनी अच्छी तरह देखभाल की,” भीष्म कोमलता से बोले। “सच कहूँ तो उसकी अस्वस्थता उसे राजसिंहासन पर बैठने की आज्ञा नहीं देती। मैंने तो आपसे पहले ही कहा था, कृपा ने भी...”

“अस्वस्थता किसी को राजसिंहासन पर बैठने के अपने अधिकार से वंचित कैसे कर सकती है?” उन्होंने प्रश्न किया।

भीष्म उत्तेजित होते हुए, आह भरते हुए बोले, “ऐसा पहले भी हुआ है। चाचा देवपि को, श्रेष्ठ राजकुमार होते हुए भी राजसिंहासन पर बैठने का अवसर नहीं दिया गया क्योंकि उन्हें कुष्ठरोग था...”

“मेरा बेटा अस्वस्थ है, व्याधिग्रस्त नहीं!” सत्यवती आक्रोष से चिल्लाई! “और यदि होता भी, कोई भी, देव तुम भी, मुझे वीर्य को राजा बनाने से नहीं रोक सकते थे, क्योंकि ये उसका अधिकार है, वो राजा शान्तनु का पुत्र है!”

वो तो देव भी है, उसके मन में यह सत्य उपहासपूर्वक घूमने लगा। वही तो न्यायपूर्ण उत्तराधिकारी था, उसके पुत्र नहीं।

भीष्म शान्त हो गए और उन्होंने अपने-आपको प्रत्युत्तर देने से रोक लिया। वो जानती थीं कि वो क्या उत्तर देते—वही जो उनके मस्तिष्क में निरन्तर गूँजता रहता।

सत्यवती ने अवज्ञापूर्वक अपनी ठुङ्गी उठाई, “मैं वीर्य को सेना के साथ तीनों राजकुमारियों को उठाकर लाने के लिए भेज दूँगी, और यहाँ, हस्तिनापुर में उनका विवाह करवाऊँगी,” उन्होंने हाथ उठाते हुए विवाद को वहीं समाप्त करते हुए कहा।

भीष्म ने अपनी गहरी आँखों से उन्हें घूरकर देखा, और बदले में उन्होंने भी भीष्म पर अपनी शिथिल और अवैयक्तिक दृष्टि डाली।

“वीर्य युद्ध या आक्रमण करने के लायक स्वस्थ नहीं है,” भीष्म ने लम्बे मौन के बाद कहा, “जैसे चित्रांगद गंधर्व से अकेले लड़ने के लिए पूरी तरह तैयार नहीं था,” उन्होंने जानबूझकर सत्यवती के चेहरे से उतरते रंग को देखते हुए कहा। “वीर्य को जाने की आवश्यकता नहीं है; मैं उसकी जगह काशी चला जाऊँगा।”

वो भीष्म के शब्दों का तात्पर्य जानती थी—कि उसके पुत्र भीष्म के बिना असहाय थे, हस्तिनापुर उसके बिना असुरक्षित था और भीष्म ही रक्षक था और विनाशक भी।

“तुम तीनों राजकुमारियों को ले आओगे?”

“हाँ!” भीष्म ने भावशून्यता से कहा, पर उनके माथे की नस फड़क रही थी। “मैं बिना निमंत्रण के जाऊँगा, और उन्हें उनके स्वयंवर से अनिमंत्रित ही ले आऊँगा—इससे शुरोचित बात क्या हो सकती है!” उन्होंने बड़ी कठिनाई से पर धीरे से कहा।

सत्यवती ने सिर हिलाते हुए सहमति जताई।

भीष्म आगे बोले, “क्या आपको अच्छा लगता? ये तो जबरदस्ती है!” उन्होंने घृणापूर्वक कहा।

सत्यवती बोलीं, “ये तो विवाह की स्वीकृत विधि है, देव।”

“इसीलिए उसे राक्षस विवाह कहा जाता है,” भीष्म बोले। “आप अपनी विक्षिप्त महत्वाकांक्षा पूरी करने के लिए अपने अल्प-आयु पुत्र के अलावा तीन निर्दोष और अबोध लड़कियों का भी उपयोग कर रही हैं। यदि आप वीर्य के लिए वधू चाहती हैं, तो निश्चित रूप से और भी लड़कियाँ हैं। हम किसी भी राजकुमारी को औपचारिक प्रस्ताव भेज सकते हैं—जो उसे या आपको पसन्द हो।”

“इस समय, काशी की राजकुमारियों से कोई भी अन्य अधिक योग्य नहीं है,” सत्यवती ने बलपूर्वक कहा। “इसके अतिरिक्त, मुझे काशी चाहिए। हमने उन्हें नियंत्रित करने के सभी हथकंडे अपनाए। हस्तिनापुर में उन तीनों राजकुमारियों का विवाह करके, काशी पूरी तरह से हमारी हो जाएगी। यदि तीनों अलग-अलग राजकुमारों से विवाह करती हैं तो हम उनके साथ आजीवन भिड़ते रहेंगे। ये तो जैसा तुमने कहा, राजनीति है देव, तुम्हें तो पता होना चाहिए। हम वधुएँ ही नहीं, सम्बन्ध ढूँढ़ रहे हैं।”

“आप अत्यन्त निष्ठुर हैं।” भीष्म खेदपूर्वक बोले।

सत्यवती ने अपने कंधे उचकाए, उनका चेहरा कठोर था और आँखें ठंडी और उदासीन थीं। भीष्म जानते थे कि उनमें रानी को आहत करने की क्षमता नहीं थी। उनके बीते जीवन ने उन्हें उपेक्षा और अपमान के विरुद्ध सशक्त कर दिया था।

“क्या तुम्हें लगता है कि मैं तुम्हारी या और लोगों की मेरे बारे में अभिप्राय की परवाह करती हूँ? ये मत भूलो कि मैं कौन हूँ,” उन्होंने भीष्म को सचेत करते हुए कहा। “मैं तुम्हारी रानी हूँ, राज्याधिकारी! मैं तुम्हें आदेश देती हूँ और तुम उसका पालन करोगे!” उन्होंने अहंकारपूर्वक कहा।

“हाँ, मैं जानता हूँ, आप कौन हैं माते,” उन्होंने कहा। “मैं तो माता को सम्बोधित कर रहा था... रानी को नहीं, बल्कि एक नारी को मनाने का प्रयत्न कर रहा था। मैं दोबारा पूछता हूँ, यदि आपको किसी से विवाह करने पर विवश किया जाता तो क्या आपको अच्छा लगता?” उन्होंने धैर्यपूर्वक प्रश्न किया।

सत्यवती के मन की गहराइयों से यादें उमड़ पड़ीं—पराशर के साथ नाव में बैठी; शान्तनु से सम्भोग करती वो। उन्होंने गहरी सांस ली। दोनों अनुभव उन्हें अच्छे नहीं लगे थे लेकिन वे सहमति से हुए थे। वो सारी घटनाएँ किसी लक्ष्य के लिए थीं, आमोद के लिए नहीं।

“आप जो विचार कर रहीं हैं, वो भयावह है,” भीष्म गम्भीरतापूर्वक आगे बोले, “ये अपराध है! अपहरण है, उनकी सम्मति के बिना उन्हें उठा लेना है।”

“फिर उन्हें पाने के लिए द्वंद्व आयोजित किया जाए।” सत्यवती ने लापरवाही से कहा। “वैसे भी राजसी परिवारों में भी आठ प्रकार की विवाह-प्रथाएँ प्रचलित हैं, उनमें से एक वीरशुल्का प्रथा भी है, जिसमें विवाहार्थी अपनी श्रेष्ठता और वीरता को प्रमाणित करने के लिए अन्य विवाहार्थियों को पराजित करके वधु को उठाकर ले जाता है। देव, तुम तो उन सबको सरलता से पराजित करके राजकुमारियों को जीत सकते हो, अपहरण करके नहीं।”

सत्यवती ने भीष्म की हिचकिचाहट पढ़ते हुए पूछा, “कहीं तुम काशी नरेश का सामना करने से डर तो नहीं रहे हो?”

“आप अपने उद्देश्य को मेरी प्रवृत्ति से उचित ठहराने का प्रयत्न ना करें।” भीष्म ने शान्त स्वर में कहा।

क्या उसने अपनी सीमाएँ लाँघ दी थीं? वो भीष्म को कठोर कदम उठाने के लिए उकसा रही थीं, उनके हठ को हिलाना चाहती थी। अन्ततः वो सफल हो ही गई। भीष्म तिरस्कारपूर्वक बोलते गए, “मैंने वीर्य के प्राण बचाने के लिए, राज्यधिकारी होते हुए मेरे कर्तव्य निभाने के लिए ये प्रस्ताव रखा, मेरे आत्म-सम्मान को गिरवी नहीं। काशी में प्रवेश करते ही वीर्य की हत्या हो जाएगी। अच्छा यही होगा कि मैं राजकुमारियों को ले आऊँ।”



~

भीष्म इससे पहले कभी काशी नहीं गए थे। शहर गंगा के शान्त तट पर स्थित था। अपने घोड़े से उतरकर भीष्म ने सिर झुकाकर नदी को प्रणाम किया।

“मैं आपसे आशीर्वाद नहीं चाहता माँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि जो मैं करने जा रहा हूँ, वो अक्षम्य है,” भीष्म ने व्यथित हृदय से कहा। नदी का जल स्थिर था, उससे कोई भी उत्तर नहीं मिला। भीष्म लम्बे समय तक वहीं पर स्थिर खड़े सूर्य के प्रकाश से दमकती नदी के जल को देखते रहे।

“यदि तुम्हारा हृदय इतना ही पीड़ित है तो तुम ऐसा क्यों कर रहे हो?” उन्हें लगा जैसे पवन उनके कानों में ये बात फुसफुसाकर कह रहा हो। उन्हें लगा जैसे उनकी माँ उनसे बात कर रही हों।

उन्होंने आँखें बन्द करके, अपना सिर झुका लिया।

“हस्तिनापुर के लिए,” उन्होंने रुखे स्वर में कहा। “मैंने अपना सर्वस्व उसे समर्पित कर दिया था, आज मैं अपना विवेक, और अन्तरात्मा भी उसे सौंपता हूँ।”

“तुम्हें ऐसा करने की आवश्यकता नहीं है, पुत्र,” माँ ने कोमलता से कहा। “मेरे पास आ जाओ पुत्र। इस जल में प्रवेश कर लो और अपनी यंत्रणा का अन्त करो।”

भीष्म ने अपना सिर झटकते हुए दयनीय स्वर में पूछा, “क्या आप मुझे जीवन त्यागने के लिए कह रही हैं? मेरे जीवन-लक्ष्य का क्या होगा?”

“मैं तुम्हें अपराध और पाप से रोक रही हूँ,” गंगा ने शान्तिपूर्वक कहा। “तुम्हारे पिता ने किसी विशेष कारण से ही तुम्हें इच्छामृत्यु का वरदान दिया था—जब तुम्हें लगे कि धरती पर तुम्हारा कार्य समाप्त हो गया है और मृत्यु ही अगला कदम है। तुम्हारा उद्देश्य पूरा हो गया है पुत्र। तुमने अभी तक अपने-आपको भयंकर पीड़ा दी है, और अब कुरुवंश के लिए अपनी निष्ठा के बोझ में दबकर तुम अनजाने में अन्य लोगों के

साथ अन्याय कर सकते हो। तुमने अपने पिता, अपने राज्य, अपनी प्रतिज्ञा के लिए सब कुछ किया। पर अब और नहीं।” गंगा ने कहा।

“मैं राजमुकुट की सुरक्षा किए बिना नहीं रह सकता। वीर्य के बाद कौन है?” भीष्म बड़बड़ाए, लेकिन वे स्वयं अपने तर्क से सन्तुष्ट नहीं थे। “उसका कोई उत्तराधिकारी नहीं है। मुझे उसके लिए योग्य वधू का चयन करना है।”

“क्या अपहरण ही इसका विकल्प है?”

“राजकुमारियाँ कदाचित मान जाएँगी। नहीं तो मैं उन्हें जीत लूँगा,” उन्होंने आग्रहपूर्वक तर्क दिया, पर वे जानते थे वे अपने-आपको खोखला आश्वासन दे रहे थे।

“कदाचित,” गंगा ने धीरे से कहा; भीष्म जान गए कि वो जा चुकी थीं। जब वे काशी के राजमहल में प्रविष्ट हुए, तब भी गंगा की चेतावनी भीष्म के कानों में गूँज रही थी। राजा सेनाबिंदु भीष्म को राजसभा में उद्देश्यपूर्ण क़दमों से आते देख कांप गए। वहाँ उपस्थित अन्य राजकुमार और विवाहार्थी भी स्तब्ध रह गए। तीनों राजकुमारियाँ भी चकित रह गईं। राजा के हृदय में क्रोध की ज्वाला भड़क उठी। उन्होंने सीधे खड़े होकर, आक्रोशपूर्वक पूछा, “तुम यहाँ क्या कर रहे हो, भीष्म? तुम कब से स्वयंवरों में जाने लगे?” उन्होंने उपहासपूर्वक प्रश्न किया। “विशेषकर उनमें जहाँ तुम्हें आमंत्रित नहीं किया गया हो!”

भीष्म कोई उत्तर देते, उससे पहले ही दरबार में घबराहट भरी फुसफुसाहट आरम्भ हो गई। दोनों अपनी शत्रुता के कारण के बारे में सोचते हुए एक-दूसरे को घूरते रहे।

“क्या इन तीन राजकुमारियों की सुन्दरता ने तुम्हें अपने ब्रह्मचर्य की प्रसिद्ध प्रतिज्ञा को तोड़ने पर विवश कर दिया?” एक व्यंग्यपूर्ण आवाज भवन में गूँज गई।

भीष्म ने मुड़कर देखा तो युवा राजकुमार शल्व खड़ा था। वो भी अपने पिता के समान ही अहंकारी था, भीष्म ने वर्षों पहले चित्रांगद के साथ हुई घटना को याद करते हुए सोचा।

पूरी सभा में असभ्य हँसी के ठहाके गूँज उठे।

“राजकुमार भीष्म, आपको नहीं लगता, आपकी आयु विवाह के लिए कुछ अधिक हो गई है?” एक विवाहार्थी ने व्यंग्यपूर्वक कहा।

दूसरे ने हँसते हुए कहा, “आयु बढ़ रही है इसीलिए तो ये विवाह करना चाहते हैं।”

“जैसा पिता, वैसा पुत्र,” कई लोग एक साथ बोल पड़े।

भीष्म ने उनकी ओर कठोर दृष्टि डाली, जिससे उनका असभ्य परिहास रुक गया।

“यदि मैं बूढ़ा हूँ, क्या आप में से कोई मुझसे लड़ने का साहस करेगा, यहीं, अभी?” भीष्म ने स्पष्ट उपहास के साथ घोषणा की। भवन में स्तब्धता छा गई। वे राजा के सामने नतमस्तक होते हुए बोले, “राजा भरत के समय से ही काशी के हस्तिनापुर से

विवाह-सम्बन्ध रहे हैं। उन्होंने काशी नरेश राजा सर्वसेन की पुत्री सुनन्दा से विवाह किया। हाल ही में हमारे भाई, मगध के राजा बृहद्रथ ने आपके भाई की जुड़वां पुत्रियों से विवाह किया...”

“और तुम, जब युवराज थे, भीष्म, मेरी बहन से विवाह करने वाले थे,” सेनाबिंदु ने याद दिलाते हुए कहा। “मैं कुछ भी भूला नहीं हूँ।”

भीष्म शान्त रहे, उनका चेहरा स्थिर था। वे सिर हिलाकर हामी भरते हुए बोले, “बहुत देर हो चुकी है, फिर भी मैं क्षमा माँगता हूँ, हृदय की गहराई से...”

“अरे नीच, तुम्हारे पास तो हृदय ही नहीं है!” राजा चिल्लाए, “तुमने तो मेरी बहन का हृदय तोड़ दिया!”

राजा के द्वेषपूर्ण ऊँखों को देखकर भीष्म ने अपनी मुट्ठी कस ली। फिर उन्होंने हाथ जोड़कर, सिर झुकाते हुए कहा, “मैं आपसे तीनों राजकुमारियों का हाथ माँगने आया हूँ...”

उन्हें किसी एक राजकुमारी की डर से हाँफने की आवाज़ आयी।

“अपने लिए नहीं, अपितु हस्तिनापुर के राजा, मेरे भाई, वीर्य के लिए,” भीष्म ने संक्षिप्त रूप से कहा।

सेनाबिंदु खुलकर हँस पड़े। “वीर्य? तुम्हारा अर्थ है, विचित्रवीर्य? संसार उसे इसी नाम से जानता है; एक अस्वस्थ बालक जिसे उसकी अति-महत्वाकांक्षी माता ने राजा बना दिया!” वे कटुतापूर्वक बोले। “वो स्त्री जिसके लिए तुमने मेरी बहन को छोड़ दिया, भीष्म! और तुम्हारा ये साहस कि तुम मेरी पुत्रियों का हाथ माँगने आ गए?” वे गरजे। “काशी में प्रतिनिधित्व से विवाह मान्य नहीं है, और काशी कुरुओं को मान्यता नहीं देता। तुम्हारे भाई ने तुम्हें यहाँ उसका प्रतिनिधित्व करने की अनुमति दी होगी, किन्तु मैं नहीं मानता! मेरी पुत्रियाँ वर से स्वयं मिलकर निर्णय करना चाहेंगी। तुम उनकी ओर से निर्णय नहीं ले सकते, जैसा तुम अपने कठपुतली-समान भाई के लिए कर रहे हो!” वे तिरस्कारपूर्वक बोले। “वो मात्र तुम्हारा खिलौना है, दुर्बल और कायरा! वैसे भी, मैं अपनी पुत्रियों का विवाह अपने शत्रु से क्यों करूँ?” वे आक्रोश से ज्वलन्त नेत्रों से बोले।

भीष्म के भावशून्य नेत्रों में हल्की-सी फड़फड़ाहट हुई। वे जानते थे कि पश्चातापी शब्द कदाचित उनकी आत्मग्लानि को शान्त कर सकते हैं, लेकिन राजा के क्रोध को शान्त नहीं कर पाएँगे।

उन्होंने एक कदम आगे बढ़ाते हुए कहा, “मैं यहाँ क्षमायाचना और आपके आशीर्वाद के लिए आया हूँ।” फिर विनम्रतापूर्वक आगे बोले, “मुझे लड़ाई या युद्ध में कोई दिलचस्पी नहीं है। मैं केवल राजकुमारियों का हाथ माँगने आया हूँ।”

थोड़ी-सी हलचल हुई और भीष्म ने देखा कि एक राजकुमारी थोड़ी-सी अधीर हो रही थी।

भीष्म राजकुमारियों की ओर मुड़कर झुकते हुए बोले, “मैं आपसे भी वही विनती करता हूँ। मैं आप तीनों को अपने भाई, राजा वीर्य की वधू के रूप में हस्तिनापुर ले जाना चाहता हूँ।”

उन्होंने देखा कि उस अधीर राजकुमारी ने कुछ कहने के लिए मुँह खोला लेकिन शल्व के हस्तक्षेप के कारण वो रुक गई।

“ये स्वयंवर है भीष्म, जिसमें चयन करने का अधिकार प्राप्त होता है, कोई प्रतियोगिता नहीं, जहाँ राजकुमारियाँ पुरस्कार के रूप में जीती जाती हैं,” शल्व ने चिढ़कर कहा।

“मैं दोबारा कहता हूँ, मुझे लड़ाई नहीं चाहिए। ये मेरी विनती है,” भीष्म धीमे स्वर में बोले।

“हम तुम्हारी विनती में छिपी धमकी को भली-भाँति जानते हैं,” शल्व ने टिप्पणी की। “आप ऐसे ही तो युद्ध जीतते हैं, है न? पर आप इस तरह स्त्री और पत्नी को नहीं जीत सकते, भीष्म! आप सेना के साथ आकर राजा को धमकाकर उनको आत्मसमर्पण करने के लिए विवश करते हैं। राजा बर्बरता से भयभीत होकर घुटने टेक देते हैं! परन्तु, इस बार नहीं, भीष्म। मैं आपको चुनौती देने के लिए तैयार हूँ। आप बिना लड़ाई के राजकुमारियों को नहीं ले जा सकते!”

भीष्म को उस युवक की ढिटाई से थोड़ी चिढ़ हुई। वे किसी भी तरह के विरोध या संघर्ष को टालना चाहते थे, पर शल्व अपने पिता की तरह ही लड़ाकू था, जिसने भीष्म को वर्षों पहले द्वंद्व के लिए ललकारा था। अब पुत्र इतिहास को दोहरा रहा था। भीष्म ने गहरी सांस ली; शल्व ने अब कोई विकल्प छोड़ा ही नहीं था।

पूरे दरबार में जयध्वनि गूँज उठी, सब द्वंद्व देखने के लिए आतुर थे, रक्तपात की प्रतीक्षा कर रहे थे।

भीष्म ने धीरे से सिर हिलाया और अपने तलवार की मूठ को कसते हुए सभाग्रह के बीच में जाकर खड़े हो गए। शल्व भी अपनी नंगी तलवार के साथ वहाँ आ गया। दोनों ने राजा सेनाबिंदु को नमस्कार किया। वे विवर्ण हो गए थे और अपने पास खड़ी लम्बी राजकुमारी जितने ही चिन्तित लग रहे थे। अन्य दो राजकुमारियाँ थोड़ी उत्तेजित लग रही थीं, और अपने सामने हो रही घटना से उत्साहित।

द्वंद्व आरम्भ हुआ और तलवार के हर प्रहार से भीष्म को लगा कि पिता ने पुत्र को अच्छी तरह प्रशिक्षित किया था। शल्व अपने पिता द्वारा की गई गलतियों को नहीं दोहरा रहा था, जिन्हें भीष्म ने वर्षों पहले परास्त किया था।

शल्व अड़ा रहा पर शीघ्र ही थकने लगा और भीष्म उस पर हावी होने लगे, फिर भी उसने हार नहीं मानी। उसके चेहरे पर आशाहीन रोष छाया हुआ था और वो भीष्म की ओर बार-बार लपका, परन्तु हर बार, भीष्म ने उसके हर प्रहार को तोड़ दिया। तलवार के हर आक्रमण से शल्व का अहंकार आहत हो रहा था। क्रोध से लाल होकर, शल्व ने दोबारा आक्रमण किया। उसके हाथों से रक्त बह रहा था, परन्तु भीष्म जानते थे कि उसके चोट बहुत ही सतही थे और प्राणघाती नहीं। उनका उद्देश्य उस युवक को मारने का नहीं था और वे स्वयंवर को युद्धभूमि नहीं बनाना चाहते थे। अन्य राजा शल्व को प्रोत्साहित करते हुए चिल्ला रहे थे; सेनाबिंदु का चेहरा उत्तेजना से चमक रहा था। राजकुमारियों के पिता और राजा के रूप में वे द्वंद्व को रोक सकते थे, लेकिन वे ऐसा करना नहीं चाहते थे। वे भीष्म को मृत देखना चाहते थे। पर वे बढ़ती आशंका के साथ देख रहे थे कि द्वंद्व उनकी इच्छा के अनुस्रूप नहीं जा रहा था।

भीष्म समझ गए थे कि यदि उन्होंने निर्णयिक प्रहार नहीं किया तो द्वंद्व घिनौना और रक्तपातपूर्ण हो जाएगा। शल्व क्रोध से उन्मत्त हुआ जा रहा था। स्थिति भीष्म के पक्ष में थी। जैसे ही शल्व आगे बढ़ा, भीष्म सामने की ओर झापटे और उन्होंने अपनी तलवार से शल्व की छाती के थोड़े ऊपर वार किया। शल्व अपने ही रक्त के फैलते तालाब में ढेर हो गया। भीष्म को किसी लड़की की चीख सुनाई पड़ी, पर वहाँ मचे कोलाहल के बीच उन्हें पता नहीं चला कि आवाज़ कहाँ से आयी। अन्य राजा तुरन्त हिचकिचाते हुए, भयभीत होकर पीछे हट गए।

“और कोई है?” भीष्म ने प्रश्न किया। कोई भी सामने नहीं आया, और सेनाबिंदु की तरफ एक अन्तिमदृष्टि के साथ ही भीष्म तीनों राजकुमारियों को हाथों से पकड़कर खींचते हुए उन्हें सभाभवन से बाहर ले जाने लगे। उन्हें अचानक अपने दाएँ हाथ पर खिंचाव का अनुभव हुआ। वे झट से पीछे मुड़े; वही राजकुमारी थी जो अधीर हो रही थी।

“नहीं! कृपा करके नहीं! मैं...” वो घबराती हुई, डरती हुई, अस्पष्ट रूप से बोली।

उन्हें उसकी बातें समझ में नहीं आई, और उन्हें पीछे से क्रोधपूर्ण कदमों की आहट सुनाई दी। सेनाबिंदु ने अन्य राजाओं को भीष्म का पीछा करने का आदेश दिया।

“उन्हें बचके निकलने मत देना!” राजा गरजे।

भीष्म अपने रथ तक पहुँचे, राजकुमारियों को उसके अन्दर धकेला, और अपने सारथी मंजुनाथ को रथ चलाने का आदेश दिया। उन्होंने अपनी तलवार फेंक दी और अपना धनुष बाण उठा लिया। कई राजा उन पर आवेशपूर्वक तीर चलाते हुए उनका पीछा कर रहे थे। किन्तु भीष्म एक-एक करके सबको अपने बाण से घायल करके उन्हें पीछे छोड़ रहे थे। धीरे-धीरे भीड़ पीछे रह गई और वे हस्तिनापुर की ओर तेजी से बढ़

गए। काशी से बाहर आते ही उन्होंने चैन की सांस ली और अचानक उन्हें भयभीत राजकुमारियों का ध्यान आया।

“मैं आपसे क्षमा माँगता हूँ,” वे अपने हाथों और छाती से रक्त पोंछते हुए धीरे से बोले। “मैं आपका अपमान करना या आपको चोट पहुँचाना नहीं चाहता था।” उनमें से दो राजकुमारियों ने भयभीत आँखों के साथ मौनपूर्वक सिर हिलाया। भीष्म को इस बात के लिए बहुत खेद हो रहा था कि उन राजकुमारियों को अपने विवाह के दिन इतनी हिंसा देखनी पड़ी। ये तो ऐसा दिन होता है जो हर लड़की चाहती है कि सुन्दर और श्रेष्ठ हो, सुन्दर सपने जैसा हो। वे थक गए थे, और उनके कोई भी शब्द राजकुमारियों को आश्वस्त नहीं कर सकते थे। उनकी बातों से वे कदाचित और डर जाएँगी, इसीलिए उन्होंने चुप रहना ही ठीक समझा। फिर भी वे बार-बार मुड़कर देखते कि कहीं कोई उनका पीछा तो नहीं कर रहा है। उन्होंने देखा कि वो लम्बी राजकुमारी व्यग्रतापूर्वक अपने चारों ओर देख रही थी; उसका चेहरा मुरझाया हुआ था और आँखें विद्रोहपूर्ण थीं। उन्हें ध्यान आया कि वो उनके कमर से लटकती तलवार को बार-बार देख रही थी। उन्होंने धीरे से अपना सिर हिलाया।

उसकी आँखें रोषपूर्ण थीं, लेकिन उनकी गहराइयों में पीड़ा की झलक थी। उसने आँखों से आँसू पोंछते हुए क्रोधपूर्वक कहा, “आपने मेरे स्वयंवर को युद्धभूमि बना दिया!” वो टूटती आवाज़ में चीखी। आपने उन्हें मार डाला, हत्यारे, मुझे आपसे घृणा है!” वो विषैलेपन से, कांपती होंठों से बोली। “मैं हस्तिनापुर नहीं जाना चाहती।”

भीष्म उसे मौनपूर्वक देखते रहे। किसी कारणवश उन्हें अपनी जीत खोखली लगने लगी। वे युद्ध जीत गए थे, राजकुमारियों को ले आए थे, किन्तु... कदाचित शल्व का कठोर संकल्प था। न कोई रिरियाना, न धमकी, केवल ऐंठा हुआ मुँह, हल्की आवाज़, और क्रोधित राजकुमारी की निर्मम आँखें।

भीष्म ने उस राजकुमारी को ध्यानपूर्वक देखा : वो स्पष्ट रूप से क्रोधित थी; उसका अंडाकार चेहरा लाल हो गया था, आँखों से आग की लपटें निकल रहीं थीं, और उसके लाल होंठ विद्रोही की तरह से मुड़े हुए थे।

“शल्व मरा नहीं है,” भीष्म ने गम्भीरतापूर्वक आश्वासन देते हुए कहा। “मैंने उसे रोकने के लिए चोट पहुँचाई है। गहरा घाव है; वो अचेत है, मृत नहीं।”

राजकुमारी उन्हें अविश्वासपूर्वक देखती रही। “वो... जीवित हैं?” वो कांपती आवाज़ में बोली, उसका चेहरा खुशी से भर गया।

“जीवित होना चाहिए,” वे रूखेपन से बोले। “मैं नहीं चाहता कि उसकी मृत्यु हो।”

वो राजकुमारी को चौंककर देखते रहे और उनके हृदय की व्यग्रता बढ़ने लगी। राजकुमारी ने उन्हें कृतज्ञतापूर्वक देखा और उसके चेहरे पर मुस्कुराहट फैल गई।

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

उन्होंने विनम्रता से पूछा, “आपका नाम क्या है, राजकुमारी?”  
“अम्बा।”

## तीन बहनें

जिस समय भीष्म तीनों राजकुमारियों के साथ उनके कक्ष में प्रविष्ट हुए, सत्यवती के चेहरे पर असाधारण मुस्कुराहट छा गई। भीष्म ने फिर से असम्भव कार्य कर दिखाया था। मेरे पुत्र के लिए तीन राजकुमारियाँ उनका हृदय प्रसन्नता से गाने लगा। बहुत समय बाद वो सचमुच खुश थीं। किन्तु उन्हें लगा कि भीष्म उनकी खुशी में हिस्सा नहीं ले रहे थे; उनकी भौंहें तर्नीं हुई थीं।

“काशी की राजकुमारियाँ, माते,” वे सँभलते हुए बोले।

“तीनों राजकुमारियों ने सिर झुकाकर, हाथ जोड़ते हुए नमन किया, और हरेक राजकुमारी ने सामने आकर अपना परिचय दिया।

“मैं अम्बा हूँ।” उनमें से सबसे लम्बी राजकुमारी ने कहा, और उसका आत्मविश्वास सत्यवती से छिपा नहीं रहा।

तीनों गोरी और लम्बी थीं, और लगभग एक जैसी दिख रही थीं। किन्तु अम्बा में जो जोश था, वो अन्य दोनों में नहीं दिख रहा था। उसकी आँखें चमक रहीं थीं और वो उबलने ही वाली थी। किसलिए? सत्यवती सोच में पड़ गई।

“अम्बिका,” दूसरी राजकुमारी ने स्थिरतापूर्वक कहा। वो थोड़ी म्लान-सी थी और उसका सौन्दर्य कदाचित उसके कीमती वस्त्रों और आभूषणों के कारण था। उसकी कमर चौड़ी थी, पर वो वैसे दुबली थी, इतनी कि उसके कंधे की हड्डियाँ स्पष्ट रूप से दिख रही थीं। उसकी आँखें बड़ी, गहरी और सुबोध थीं। उसकी दृष्टि तीव्र थी और ऐसा लगता था जैसे वो कुछ ढूँढ़ रही थी।

“मेरा नाम अम्बालिका है,” तीसरी ने डरते हुए कहा। वो आकर्षक थी और उसकी हँसी घबराहट से भरी हुई थी। वो नीरस और बेरंग तरीके से सुन्दर थी। उसकी बड़ी, भूरी आँखें थीं, सुडौल नाक और आकर्षक होंठ थे, उसका चेहरा हृदयाकार था और सौम्य था।

तीनों के नाम भी मिलते-जुलते हैं, सत्यवती ने विनोदपूर्वक सोचा।

“आप सबका अपने नए घर हस्तिनापुर में स्वागत है,” उन्होंने शालीनतापूर्वक, स्नेहपूर्ण स्वर में कहा। उन्हें आशा थी कि वे राजकुमारियों का स्वागत अच्छी तरीके से

कर रही थीं, उस स्वागत से बेहतर जो उन्हें स्वयं वर्षे पहले मिला था। “काशी की राजकुमारियों, आप हस्तिनापुर की भावी रानियाँ हैं...”

उनकी बात एक अधीर गतिविधि से रुक गई। वो अम्बा थी जो रानी का ध्यान आकर्षित करने के लिए कुलबुला रही थी। “रानी माँ... मैं आपसे बात करना चाहती हूँ” अम्बा सामने आती हुई बोली। उसकी आवाज़ में ऐसी तीव्रता थी जैसे उसने किसी तरह अपनी बात कहने का साहस जुटा लिया था।

“हाँ, क्या बात है, प्रिय?” सत्यवती ने कोमल स्वर में कहा।

“काश ये प्रश्न मुझसे पूछा गया होता और मैं तभी ये बात कह देती, जो मैं अभी आपसे कहने वाली हूँ” अम्बा ने साहसपूर्वक भीष्म की ओर देखते हुए कहा। वो थोड़ी और भारी स्वर में बोली, “मैं हस्तिनापुर की रानी नहीं बन सकती, न ही मैं राजा वीर्य से विवाह कर सकती हूँ,” उसने धीमी और स्थिर आवाज़ में घोषणा की।

कक्ष में स्तब्धता छा गई। सत्यवती को ध्यान आया कि अन्य दो बहनें अम्बा की घोषणा से चकित नहीं लग रही थीं। उन्होंने भीष्म को प्रश्नपूर्वक देखा। वे थोड़े अचम्भित हुए पर स्थिर खड़े रहे। अम्बा ने घबराहट से भरी दृष्टि भीष्म पर डाली। सत्यवती को लगा कि उनकी ख्याति उनके नाम जितनी ही प्रख्यात थी। लोग उनके सामने कांप जाते थे, और ये तो युवा राजकुमारी थी। वो भीष्म से अभित्रस्त दिख रही थी, पर इतना नहीं कि अपनी बात न कह सके।

“हिचकिचाओ मत, लड़की, अपनी बात कहो,” सत्यवती ने उसे प्रोत्साहित करते हुए कहा। “मैं तुम्हें भरोसा दिलाती हूँ कि तुम स्पष्टता से अपनी बात कह सकती हो; बिना किसी भय के।”

अम्बा ने सत्यवती की आँखों में सीधे-सीधे देखा और कृतज्ञता से सिर हिलाती हुई बोली।

“मैं आपके पुत्र से विवाह नहीं कर सकती क्योंकि मैं किसी अन्य पुरुष से प्रेम करती हूँ,” उसने स्वीकार किया। “मैं राजा शत्र्व से प्रेम करती हूँ।”

सत्यवती उसकी बात सुनकर स्तब्ध रह गई, और सम्भ्रमित आँखों से भीष्म को देखने लगीं। वो भी अचम्भित लग रहे थे। अम्बा शीघ्रता से आगे बोली, “मैं अपने स्वयंवर में उन्हें वरमाला पहनाने ही वाली थी कि इन्होंने हमारा रास्ता रोक लिया...” उसने भीष्म को दोबारा शत्रुतापूर्ण दृष्टि से देखते हुए कहा। सत्यवती उस लड़की की धृष्टा से थोड़ी झुँझला गई।

उन्होंने रुखाई से कहा, “भीष्म मेरे कहने पर काशी गए थे। तो, तुम मेरे पुत्र से विवाह नहीं करना चाहती, क्योंकि तुम किसी और से प्रेम करती हो?”

लड़की ने मौनपूर्वक सिर हिलाया।

ये बात शीघ्र ही किसी संकट में बदल सकती थी, फिर भी सत्यवती ने हामी भरते हुए कहा। “जैसा तुम चाहो, मैं तुम्हें विवश नहीं करूँगी। हस्तिनापुर को अनिच्छुक रानी नहीं चाहिए।” उन्होंने अन्य दो राजकुमारियों की ओर देखते हुए औपचारिक रूप से पूछा, “क्या तुम दोनों हस्तिनापुर के राजा से विवाह करने के लिए सहमत हो?”

दोनों ने उत्साहपूर्वक सिर हिलाया, मानो अपनी बहन के निर्णय की क्षतिपूर्ति करना चाहती हों।

सत्यवती के मन में अचानक ही एक विचार आया। “तुमने ये बात भीष्म से पहले क्यों नहीं कही? उन्होंने तीक्ष्ण आवाज़ में पूछा। “वो तो अत्यन्त शौर्यवान हैं, और तुम्हें तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध यहाँ कभी नहीं लेकर आते।”

अम्बा उन्हें अचम्भे के साथ देखते हुए बोली, “सब कुछ इतनी तीव्रता से हुआ कि... वो अटकती हुई, दोषारोपण करती हुई आगे बोली, “हमसे तो पूछा ही नहीं गया था! वहाँ कोई मेरी बात सुनने वाला था ही नहीं।”

“मुझे पता होता तो मैं आपको यहाँ लाता ही नहीं। आपने विरोध करके मुझे रोका क्यों नहीं, राजकुमारी?” भीष्म ने हस्तक्षेप करते हुए पूछा।

“क्या मुझे एक शब्द भी कहने का अवसर या समय दिया गया?” अम्बा ने क्रोधपूर्वक पूछा। “आप शल्व से द्वंद्व कर रहे थे...” वो लाचार आवाज़ में बोली और पहली बार पूरी तरह असहाय प्रतीत हो रही थी। अपने साहस के बावजूद वो भी अपनी बहनों की तरह ही असुरक्षित थी।

“तुम अपने पिता के कारण चुप रही, है न?” सत्यवती ने चतुरता से अनुमान लगाया। “तुम नहीं चाहती थी कि जब तक तुम शल्व को वरमाला न पहना दो, तुम्हारे पिता को पता न चले, है न?”

अम्बा ने लज्जित होकर सिर हिलाया। “हाँ, मैं पूरे दरबार के समक्ष इस सत्य को नहीं बता सकती थी।” उसने स्वीकार करते हुए कहा।

“इतनी बड़ी मिथ्याबोध होने से बच जाते,” सत्यवती ने कहा।

भीष्म ने लम्बी सांस ली। क्या उन्हें हस्तिनापुर लाने से पहले राजकुमारियों की सम्मति और अनुमति नहीं लेनी चाहिए थी? मुझे शल्व ने चुनौती दी, और परिणामी द्वंद्व में सब कुछ भुला दिया गया... उन्होंने याद किया। वे मन-ही-मन अपने-आपको कोस रहे थे और इस विचार में पड़ गए कि इस हानि की क्षतिपूर्ति कैसे करेंगे जो उन्होंने काशी की सबसे ज्येष्ठ राजकुमारी को पहुँचाई थी।

“कोई भी शब्द मेरी हार्दिक क्षमा याचना के लिए पर्याप्त नहीं होंगे,” उन्होंने राजकुमारी के सामने झुकते हुए धीरे से कहा। अम्बा अचम्भित रह गई। “यदि मुझे पता होता, मैं वो नहीं करता, जो मैंने किया,” वे धीरे से सिर हिलाते हुए बोले। अब अम्बा से पूछताछ करने का कोई अर्थ नहीं था। उन्हें राजा सेनाबिंदु, और शल्व से वाद-विवाद

करने के बजाय अम्बा और उनकी बहनों पर ध्यान देना चाहिए था। काश, उन्होंने उनकी अनुमति ले ली होती...

अपने-आपसे क्रोधित होकर उन्होंने आवश्यकता से अधिक रुखाई से कहा, “इस विषय पर और चर्चा करना व्यर्थ है। मैं आपको पूरे सम्मान के साथ, भव्यता से, नववधू की तरह शल्व के पास ले जाऊँगा। ये मेरा कर्तव्य है; और अपनी गलती सुधारने का अवसर।”

सत्यवती स्पष्ट करना चाहती थीं कि ये भीष्म की नहीं, उनकी गलती थी। यदि वो हठ न करतीं, तो वे आँख मूँदकर उनकी आज्ञा का पालन नहीं करते। वे अचानक हुए घटनाक्रम से क्षुब्ध थी, पर उन्होंने अपने भाव स्पष्ट नहीं किए। उन्हें इस बात की थोड़ी व्यग्रता अवश्य हुई कि सब कुछ उनकी योजना के अनुरूप नहीं घटा था। अब उन्हें ही सब कुछ अपने नियंत्रण में लेना होगा; वो इस समस्या को अपने ऊपर हावी होने नहीं देने वाली थीं, फिर भी उनके हृदय में भय की गँठ करने लगी थी।

उन्होंने दोबारा अम्बा की ओर देखा; वो भीष्म के शब्दों को सुनकर अत्यन्त आनन्दित लग रही थी और अपने प्रियतम की धरती पर जाने के लिए आतुर। पर, एक शंका सत्यवती के मन में बलपूर्वक घर कर रही थी : क्या शल्व अपनी प्रियतमा को अपनाएगा? और यदि नहीं, तो क्या होगा?

“रुको!” वे तीव्रता से राजकुमारी और अपने अशान्त विचारों को रोकने का प्रयास करती हुई बोलीं। “ये कल जा सकती है। आज उसे आराम कर लेने दो। उसे अपनी बहनों के विवाह में भी तो उपस्थित रहना है।” अम्बा ने विरोध करने के लिए मुँह खोला, पर भीष्म ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, “नहीं, वैसे ही बहुत देर हो गई है, और इन्हें अतिशीघ्र वापस जाना होगा। यदि मुझे पता होता तो मैं इन्हें यहाँ लाता ही नहीं, और न ही शल्व को चोट पहुँचाता।” वे चिन्तित स्वर में बोले। वे शल्व की प्रतिक्रिया को लेकर सुनिश्चित नहीं थे। उन्होंने उसके शरीर से अधिक उसके अहंकार को आहत किया था। कदाचित, अम्बा को देखकर राजा का अहंकार किंचित शान्त हो जाए। इस लड़की का अतिशीघ्र अपने पिता या प्रेमी के पास जाना आवश्यक था। भीष्म निश्चित रूप से जानते थे कि उसके पिता ऐसी पुत्री को स्वीकार नहीं करेंगे जिसका उसके स्वयंवर से अपहरण हुआ हो। अब सब कुछ भीष्म के हाथों में था।

सत्यवती अपनी सांसें रोकती हुई, सिर हिलाती हुई विचारपूर्वक खड़ी थीं। अम्बा भीष्म को प्रकाशमय नेत्रों से देख रही थी। इसे तो भीष्म से प्रेम हो गया है और ये उसे अपने संरक्षक के रूप में देखती है। ये समझती है कि भीष्म इतना महान और उदार है कि वो उसे अपने रथ पर उसके प्रियतम के पास भेज रहा है, ताकि वो उससे विवाह कर सके। अरे पगली, वो तो अपना अपराधबोध कम करने के लिए ऐसा कर रहा है, तुम्हें बचाने के लिए नहीं...!

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

वो अपने होंठ दबाती हुई बलपूर्वक मुस्कुराई। “हाँ, मैं तुम्हें आशीर्वाद देती हूँ, तुम सदा अपनी बहनों की तरह ही सुखी रहो।” भीष्म की ओर मुड़ते हुए उनकी मुस्कुराहट और चौड़ी हो गई। सत्यवती ने उनकी ओर अव्यक्त रूप से सिर हिलाया। “सारी तैयारियाँ सम्पन्न हो चुकी हैं। वीर्य के विवाह का शुभ मुहूर्त कल प्रातःकाल के लिए तय हुआ है।”

जैसे ही भीष्म ने राजकुमारियों से विदा ली, उनका ध्यान राजमहल में चारों ओर ज्योतिर्मय दीपों और सुसज्जित फूलों की सुगंध पर गया। सारी तैयारियाँ सर्वश्रेष्ठ रूप से की गई थीं, सत्यवती ने हर कार्य को ध्यानपूर्वक करवाया था। राजकुमारियों के माता-पिता की अनुपस्थिति के बावजूद सत्यवती निश्चित रूप से भव्य विवाह समारोह करने वाली थीं, भीष्म ने जोर से सिर हिलाते हुए सोचा।

वे अपनी गहरी आँखों से अम्बा के रथ को दूर जाता देखते हुए खड़े रहे।

वे इसी आशा से खड़े रहे कि सब कुछ शान्तिपूर्वक निबट जाए।

## अस्वीकृति

जब वीर्य के विवाह की विधियाँ चल रहीं थीं, भीष्म के कान सूबा से लौटते अपने रथ पर केंद्रित थे। वे अम्बा को अपने मस्तिष्क और अन्तरात्मा से निकाल नहीं पा रहे थे। वे उसे और उसकी बहनों को उनकी इच्छा के विरुद्ध लेकर आए थे। ये अक्षम्य अपराध था जिसके लिए वे स्वयं को कभी क्षमा नहीं कर पाएँगे। उनकी आँखें दूर क्षितिज की ओर लगीं थीं और वे अपने रथ को देखने के लिए आतुर थे। जब तक वे अपने सारथी से सारी बातें नहीं सुन लेते, अम्बा का भविष्य सुरक्षित नहीं होगा।

वे सभा के बाहर चरमराते पहियों की आवाज़ से चौकन्ने हो गए। भीष्म, मंजुनाथ के आश्वासन भरे शब्द सुनने के लिए आतुर हो बाहर की ओर भागे, पर वहाँ के दृश्य को देखकर यकायक रुक गए। मंजुनाथ अकेला नहीं था, अम्बा भी उसके साथ थी। ये अम्बा, उस अम्बा से बहुत अलग थी जो राजमहल से गई थी। स्पष्ट था कि वो रो रही थी; उसकी आँखें निष्प्रभ थीं और होंठ श्वेत और कांप रहे थे। वो मंजुनाथ की सहायता से रथ से उतरी।

मंजुनाथ ने चिन्तित स्वर में कहा, “ये तो लगभग होश में ही नहीं हैं। जब से राजकुमार शल्व ने मुझे इन्हें यहाँ वापस लाने के आदेश दिए, तब से ये एक शब्द भी नहीं बोलीं, केवल फूट-फूटकर रोती जा रही हैं...” मंजुनाथ की आवाज़ धीरे-धीरे मन्द होती गई। “इनको सँभाल लीजिए, श्रीमान, ये मूर्छित होने वाली हैं।”

इसका अर्थ है उसने इन्हें अस्वीकार कर दिया है, धूर्त। भीष्म मन-ही-मन को सत्ते हुए बोले। “हाँ, राजवैद्य को अतिशीघ्र बुलवाया जाए,” उन्होंने आदेश दिया।

अम्बा खोखली और पीड़ित आँखों से भीष्म को देखती हुई बोली। “वो मुझे अपनाना नहीं चाहते... अब मैं क्या करूँ?” अपने चेहरे को हाथों में छिपाकर वो रो पड़ी।

भीष्म को अपने पीछे कोई आहट सुनाई दी। सत्यवती सीढ़ियों के ऊपर संगमरमर की ड्यूड़ी पर खड़ी थीं।

“वो सदमे में है,” उन्होंने संक्षिप्त रूप से कहा। “उसे ऊपर ले आओ।”

भीष्म ने राजकुमारी को अपने हाथों में उठाया और सीढ़ियों से चढ़ते हुए एक कक्ष तक गए। अम्बा कांप रही थी और उसने अपना चेहरा भीष्म के कंधे पर टिका

लिया था जो उसके बालों से छिपा हुआ था। भीष्म ने उसे कोमलतापूर्वक शय्या पर लिटाया तब तक सत्यवती ने तकिये सीधे करके उसकी पीठ टिका दी। सत्यवती शीतल नीबू-पानी का पात्र उसके मुँह के पास ले जाती हुई सहानुभूति के साथ बोली, “पीलो इसे, तुम्हें थोड़ी शक्ति की आवश्यकता है।”

“किसलिए?” राजकुमारी बहते आँसुओं के साथ धीरे से बोली, “मैं मरना चाहती हूँ।”

“कभी ऐसा मत कहना!” सत्यवती उसे डांटती हुई बोलीं। “किसी मनुष्य के लिए अपना जीवन गँवा देना निरर्थक है। तुम्हारा जीवन, शल्व के लिए बहाए हुए तुम्हारे आँसुओं से कहीं अधिक मूल्यवान है।”

अम्बा अपने कंधे सीधे करती हुए बोली, “मैं उन्हें दोष नहीं देती, ये तो मेरी मूर्खता थी कि मैंने अपेक्षा की कि वे मुझे अपना लेंगे...”

“फिर गलत,” सत्यवती ने कठोरता से कहा। “उसे दोष दो, अपने-आपको नहीं, पुत्री। तुम्हारा दोष तो ये था कि तुमने उससे प्रेम किया। उसने तुमसे उतना भी प्रेम नहीं किया,” उन्होंने तिरस्कारपूर्वक कहा। “उसे अपने स्वाभिमान और अपनी प्रतिष्ठा से अधिक लगाव है।”

अम्बा उन्हें नासमझी से देखती रही। “वो टूट गए हैं,” वो शल्व का बचाव करते हुए बोली। “परास्त और अपमानित...”

“और तुम?” सत्यवती ने गम्भीरतापूर्वक पूछा। “क्या उसने तुम्हें नहीं तोड़ा है? वो कहता है कि वो तुमसे प्रेम करता है, और तुमसे विवाह करने वाला था। तुम्हें भगाकर ले जाया गया; तुम भागी नहीं थी। वो अब तुमसे विवाह क्यों नहीं कर सकता? क्या उसके अहंकार और स्वाभिमान को ठेस पहुँचेगी? अपनी प्रेमिका को इस तरह अस्वीकार करते हुए क्या उसकी अन्तरात्मा को चोट नहीं पहुँचती? तुमने उससे विश्वासघात नहीं किया: उसने तुम्हारे प्रेम और तुम्हारे विश्वास को तोड़ा है। उसने पराजय के सामने तुम्हें त्याग दिया। वो कायर है अम्बा, तुम्हारे प्रेम के योग्य नहीं।”

अम्बा सिसकियों के बीच सिर हिलाती हुई भीष्म पर आरोप लगाती हुई बोली, “अरे, आप मेरे स्वयंवर में आए ही क्यों थे?” आपको तो आमंत्रित भी नहीं किया गया था। आप आक्रांता हैं जिसने आकर हमारा अपहरण किया। आपने ऐसा क्यों किया? आपने शल्व को भी सार्वजनिक रूप से पराजित किया। वो कभी न तो स्वयं को; न आपको और न मुझे क्षमा कर पाएँगे। आपको आपके कुकर्म के लिए कौन क्षमा करेगा? आपने मेरा जीवन नष्ट कर दिया!”

प्रेम केवल अंधा ही नहीं, बधिर भी होता है, अपने दुर्बल प्रेमी का बचाव करती अम्बा के शब्दों को सुनते हुए सत्यवती सोच रही थी।

“मैं मानती हूँ कि तुम देव से क्रोधित हो, किन्तु उसने ऐसा अज्ञानता के कारण नहीं किया; वो मेरे आदेश का पालन कर रहा था,” सत्यवती ने बलपूर्वक हस्तक्षेप किया। “तुम्हारे प्रियतम ने जो किया, वो अपने स्वार्थ के लिए, अपने अहं के लिए किया। उसे तुमसे अधिक अपने आपसे प्रेम है! फिर तुम उससे क्रोधित क्यों नहीं हो?”

अम्बा का चेहरा अचानक ही मुरझा गया। “मैं उनसे क्रोध क्यों करूँ?” वो असहाय रूप से, सिर तकिये पर टिकाती हुई बोली। “मैं उन्हें मुझसे प्रेम करने के लिए विवश नहीं कर सकती; न ही मुझसे विवाह करने के लिए दबाव डाल सकती हूँ। ये शल्व वो नहीं, जो पहले थे; वो नहीं जैसा मैंने सोचा था...” उसके होंठ कांपने लगे। “मैं... मैं... मैं उनसे घृणा करती हूँ!” उसने बलपूर्वक कहा, उसकी आवाज़ नीची और उदासीन थी। “उन्होंने मेरे साथ जो किया उसके लिए मैं उनसे घृणा करती हूँ; उनके अस्तित्व से घृणा करती हूँ, वो जो हैं, उसके लिए घृणा करती हूँ। उन्हें न पहचान पाने के लिए मैं अपने-आपसे सबसे अधिक घृणा करती हूँ”

“अपने-आपको दोष मत दो,” भीष्म कोमल स्वर में बोले।

सत्यवती ने देखा कि भीष्म का चेहरा करुण था, उनकी आँखें दयापूर्ण थीं और उनके बालों की लट आकर्षक ढंग से उनके माथे पर गिर रही थी।

“तुम ठीक कह रही हो; मैं ही इस समस्या के लिए दोषी हूँ,” वे ग्लानिपूर्वक बोले। “तुम्हारी अनुमति के बिना मुझे तुम्हें यहाँ नहीं लाना चाहिए था। तुम्हें शल्व के पास अकेले नहीं भेजना चाहिए था। मुझे भी तुम्हारे साथ उसके पास...”

“नहीं, तुमने तो वो किया, जो और कोई नहीं कर सकता; तुमने सम्मानपूर्वक उसे वापस भेजा! यदि तुम उसके साथ जाते तो बात और बिगड़ जाती,” सत्यवती ने तीव्रता से खंडन करते हुए कहा। “तुम्हें अपनी खोई हुई दुल्हन के साथ देखकर वो और भी क्रोधित हो जाता!”

भीष्म के चेहरे पर वो हठी भाव आ गए जिनसे सत्यवती बहुत डरती थी। “इस बार मैं स्वयं जाकर उससे क्षमा याचना करूँगा। मेरी गलती के लिए अम्बा क्यों कष्ट भुगते?”

सत्यवती अधीरता से सिर हिलती हुई बोली, “देव, वो तुम्हारी बात नहीं मानेगा। उसने अभी-अभी इसे अस्वीकार किया है, वो तुम्हारी बात क्यों मानेगा? वो तुमसे घृणा करता है; उसे लगता है कि तुमने हर तरह से उसे विध्वस्त किया है।”

“इसीलिए,” भीष्म शान्त स्वर में बोले। “इसीलिए मैं उससे विनती करूँगा कि वो अम्बा से विवाह कर ले। वो मुझसे घृणा करता है, और मैं उसकी घृणा का सामना करूँगा, अम्बा नहीं। वो उसे इस तरह त्यक्त नहीं कर सकता, मेरी गलती के लिए दंडित नहीं कर सकता।”

इन शब्दों के साथ भीष्म अपने रथ की ओर भागे और सौबा के लिए निकल पड़े।

~

“मेरे राजमहल में आने का तुमने साहस कैसे किया?” शल्व अपने आसन से लड़खड़ाते हुए खड़े होने का प्रयास करते हुए बोला। उसकी छाती पर अभी भी द्वंद्व के घाव और दाग थे। “अब तुम और क्या चाहते हो?”

उसके घाव तो भर रहे हैं, पर उसका धायल धमंड नहीं, भीष्म ने सोचा। “तुम्हारी क्षमा,” वे सहजता से बोले। “और अपनी प्रेमिका के लिए थोड़ी-सी दया।”

शल्व बनावटी विस्मय के साथ जोर से हँसने लगा। “सच? तुमने मेरे साथ जो किया, उसके बाद मैं संसार को मुँह दिखाने योग्य नहीं रहा। क्या तुम समझ सकते हो? मेरा सब कुछ खो गया—मेरा सम्मान, मेरा प्रेम,” वो दांत भींचते हुए फुसफुसाया। उसका चेहरा क्रोध से तमतमा रहा था। “मुझे तुमसे अधिक अपने-आपसे घृणा है!”

“तुम वीर हो शल्व; जिस औरत से तुम प्रेम करते हो, तुम उसके लिए अन्त तक लड़े,” भीष्म बोले। “जब वो तुम्हारे पास वापस आयी तो तुमने उससे विवाह क्यों नहीं किया? द्वंद्व तो गलती थी। मुझे नहीं पता था कि वो तुमसे प्रेम करती है। यदि पता होता तो मैं उसे कदापि नहीं ले जाता। मैं स्वयं उसे तुम्हारे पास लेकर आता, जैसा अभी कर रहा हूँ। कृपया अम्बा को स्वीकार कर लो,” वे हाथ जोड़कर विनम्रतापूर्वक विनती करते हुए बोले।

उनकी बातों से राजा और भी क्रोधित हो गए। “तुम होते कौन हो इसे वापस लाने वाले?” वो गरजे। “तुम तो लुटेरे हो, राक्षस हो जिसने ऐसी वस्तु को हथिया लिया जो उसकी थी ही नहीं! अब किसी दयालु सनक के कारण तुमने उसे वापस करने का निर्णय कर लिया!”

“ये दयालुता नहीं है, मेरी गलती थी जिसके लिए राजकुमारी को दंड भुगतना पड़ रहा है। शल्व, मैं तुमसे विनती करता हूँ।” वे याचना करते हुए बोले। “मैं अपने भाई वीर्य के लिए काशी की राजकुमारियों को ले गया। मुझे उस समय पता नहीं था कि राजकुमारी अम्बा तुमसे प्रेम करती है। जिस क्षण उसने मुझे ये बात बताई, मैंने उसे तुम्हारे पास वापस भेज दिया। ये पापरहित है। इसे हमारी निरर्थक लड़ाई में मोहरा क्यों बना रहे हो? वो तुमसे प्रेम करती है; कृपया उससे विवाह कर लो।”

शल्व ने भीष्म को कठोरतापूर्वक देखते हुए कहा, “मैं भी उससे प्रेम करता था, उसके लिए लड़ा। पर मैं उसे हार गया... तुमसे। इसीलिए, अब ये तुम्हारी हुई, है न?”

भीष्म ने शान्त स्वर में कहा, “ये कोई पुरस्कार नहीं है जिसे हारा या जीता जा सके, यहाँ से वहाँ पटका जा सके।”

“ऐसा नहीं है? तुम्हीं ने तो उसे पुरस्कार बनाया था! तुम उसके स्वयंवर में क्यों आए थे?” शल्व ने उपहासपूर्वक पूछा। “उसे जीतने के लिए, उसका अपहरण करने के

लिए, अन्य विवाहार्थियों को पराजित करने के लिए—है न? वो मुझे वरमाला पहनाने ही वाली थी कि तुम बिना अनुमति के दरबार में आ गए। तुम किसी असभ्य मनुष्य के अतिरिक्त कुछ नहीं हो, भीष्म, एक दबंग हो जो अपनी शक्ति और बल से दूसरों को डराता-धमकाता है। मैं तुमसे उसके लिए लड़ा, और पराजित हो गया। मैं एक परास्त मनुष्य हूँ, भीष्म; मुझ पर आरोप मत लगाओ।”

भीष्म ने उस निराश व्यक्ति के चेहरे की दयनीयता देखते हुए सत्यवती के शब्द दोहराए, “क्या तुम्हारा अहंकार तुम्हारे प्रेम से अधिक महत्वपूर्ण है?”

शल्व विवरण हो गया। “मैं एक प्रतिष्ठित व्यक्ति हूँ, भीष्म। मेरा आत्मसम्मान और मेरी प्रतिष्ठा अम्बा के प्रेम से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। वही मेरे पतन का कारण है। मैं उसे न्यायपूर्ण ढंद में हार गया, और जो मैं हार गया, उसे वापस स्वीकार नहीं कर सकता। तुम्हें क्या लगता है, मैं ऐसा मनुष्य हूँ?”

“अम्बा को नहीं अपनाया तो निश्चित रूप से सम्माननीय नहीं।” भीष्म ने कहा। “तुम अपने विषय में चिन्ता करते हो; पर अम्बा का क्या होगा? तुमने उसे त्याग दिया! क्या तुमने सोचा है कि उसका क्या होगा?”

“हाँ, और मुझे तुमसे अधिक अपने आपसे घृणा होती है!” शल्व ने भड़कते हुए कहा। “तुमने हमें, हमारे प्रेम और हमारे भविष्य को तहस-नहस कर दिया! अब इतने सच्चे क्यों बन रहे हो? ये तो बिना निमंत्रण के बलपूर्वक स्वयंवर में घुसने से पहले सोचना चाहिए था।” शल्व ने कटुतापूर्वक कहा। “तुम उसे अपने भाई के लिए लेने आए थे न? तो तुम्हारा भाई इससे विवाह क्यों नहीं कर लेता?”

“क्योंकि वो तुमसे प्रेम करती है, मूर्ख!”

भीष्म ने देखा कि शल्व के जबड़े तन गए थे और वे निश्चित हो गए कि वे जितनी भी विनती कर लें, शल्व मानने वाला नहीं था। वे हताश होकर वापस जाने के लिए मुड़े। जब वे सभा के मध्य तक पहुँच गए, तो उन्होंने शल्व की आवाज़ सुनी। “भीष्म, यदि तुम्हें अम्बा की इतनी ही चिन्ता है तो तुम ही उससे विवाह क्यों नहीं कर लेते?”

उस ऊँचे गुम्बदों वाले भवन में वो आवाज़ उनका उपहास कर रही थी, और हस्तिनापुर पहुँचने तक उनके मन में रह-रहकर अदृहास करती, कपटपूर्वक गूँज रही थी। उन्होंने घोड़ों को लगाम लगाकर रथ रोका और गहरी सांस ली। वे अपनी प्रतिज्ञा नहीं तोड़ सकते थे; अम्बा से विवाह नहीं कर सकते थे। पर करना चाहि ए, एक आवाज़ ने उन्हें धिक्कारा। अम्बा पर ये आपदा उन्हीं के कारण आयी थी। नहीं कभी नहीं!

क्या वीर्य अम्बा से विवाह करने के लिए तैयार होगा? भीष्म शल्व के दूसरे सुझाव पर विचार करते हुए और भी चिन्तित हो गए। अब और कोई विकल्प था ही नहीं। हस्तिनापुर के राजमहल में प्रवेश करते ही भीष्म वीर्य से मिलने गए। “तुम्हें उससे क्यों

मिलना है?” सत्यवती ने पूछा। “वो अपनी पत्नियों के साथ है। उसका अभी-अभी विवाह हुआ है, देव; उसे रहने दो!”

भीष्म उत्तेजित होकर मुड़े। “यदि अत्यावश्यक नहीं होता, तो मैं कभी अवरोध न करता है न?” दोनों वीर्य के कक्ष तक पहुँच गए थे और भीष्म बिना किसी सूचना के अन्दर चले गए।

“वीर्य!” उन्होंने आवाज़ दी। “वो राजा है, देव!” सत्यवती बड़बड़ाई। “शिष्टाचार का तो ध्यान रखो!”

“उनसे कहो कि अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय है,” भीष्म ने रूखेपन से उत्तर दिया।

जब वीर्य अपने कक्ष से बाहर आया तो उसकी छाती अनावृत थी और बाल बिखरे हुए थे।

“क्या बात है?” उसने चिन्तित स्वर में हल्के से झुकते हुए पूछा। “कोई समस्या है क्या? आप इस समय, यहाँ क्यों आए हैं भैया?”

तभी भीष्म को ध्यान आया कि अभी तक सूर्योदय नहीं हुआ था। भीष्म ने संक्षेप में वीर्य को सारी परिस्थिति समझाई। उसने धैर्यपूर्वक भीष्म की बात सुनी और फिर पूछा, “अब क्या करना है?”

“मैं चाहता हूँ कि तुम अम्बा से विवाह कर लो।” भीष्म बोले।

“नहीं!” वीर्य ने झट से कहा।

भीष्म के चेहरे के भाव देखकर उसने अपनी आवाज़ धीमी करते हुए कहा, “मैं उससे विवाह नहीं कर सकता भैया, वो किसी और से प्रेम करती है।”

“पर उसे तो यहाँ तुम्हारे लिए लाया गया था!” भीष्म ने तर्क दिया। तुम्हें, उसकी बहनों की तरह, इसका भी तो वर बनना ही था।”

“तुम उसे लाए थे, मैं नहीं!” वीर्य ने कठोरतापूर्वक कहा।

“वीर्य!” सत्यवती ने उसे डांटते हुए कहा।

“मैं सच कह रहा हूँ!” वीर्य चिढ़कर बोला। “आप दोनों ने मिलकर ये निर्णय लिया था। ये आप पर निर्भर था, मुझ पर नहीं। यदि वो मानती, तो मैं उससे खुशी से विवाह कर लेता। पर उसने मेरे स्थान पर शल्व को चुना,” वो थोड़ा रूठते हुए बोला।

“ये उस लड़की के भविष्य और सम्मान का प्रश्न है, अहंकार और प्रतिष्ठा का नहीं, वीर्य,” भीष्म ने धीमी और हताश स्वर में कहा।

थोड़ा शान्त होकर वीर्य ने अपनी अस्वीकृति सुधारने का प्रयास करते हुए कहा, “नहीं भैया, ये सही नहीं है!”

“परन्तु, शल्व ने उससे विवाह करने से मना कर दिया है, और अब वो कहाँ जाएगी! कृपया, उससे विवाह कर लो। कम-से-कम हमारे परिवार के सम्मान के लिए।”

भीष्म विनतीपूर्वक बोले। “मेरे लिए।”

सत्यवती भीष्म के विनयपूर्ण भाव देखकर हैरान रह गई। क्या उस लड़की ने इस पर बहुत गहरा असर किया है?

वीर्य चुपचाप हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर बोला। “कृपया मुझसे विनती मत कीजिए... आप मेरे बड़े भाई हैं, पिता समान। मैंने आज तक आपकी हर आज्ञा का पालन किया है, पर इस बार नहीं। मुझे अस्वीकार करना ही होगा। वो मेरी है ही नहीं, कि मैं उससे विवाह कर लूँ” उसने और बलपूर्वक अपनी बात दोहराई। “मैं जानता हूँ कि आप मेरे लिए अम्बा को लाए... पर वो तो शल्व को अपना पति मानती है! इस स्थिति में मैं उससे विवाह कैसे कर सकता हूँ? ये सही नहीं है!”

भीष्म अपने भाई से विनती और आग्रह करते रहे, गिड़गिड़ते रहे जिसे देखकर सत्यवती चिढ़ गई।

“बस करो, देव! ये तुम्हें शोभा नहीं देता!” उसने अचानक कहा। “हम अब इस विषय में कुछ नहीं कर सकते!” वो क्रोधित होकर वीर्य की ओर मुड़ते हुए बोलीं। “तुम प्रतिष्ठित पुरुष होते हुए उसके सम्मान को बचाने के लिए तो अम्बा से विवाह कर ही सकते हो न, वीर्य? ये प्रेम के बारे में नहीं है। सब कुछ गलतियों और गलतफहमियों का फेर है, और अब केवल तुम ही स्थिति को सुधार सकते हो, वीर्य। यदि तुममें भीष्म की विनती स्वीकारने की शालीनता नहीं है, तो मैं, तुम्हारी माँ, तुम्हें आदेश देती हूँ कि तुम उससे विवाह करो!”

“नहीं! आप ऐसा नहीं कर सकतीं, माँ!” वीर्य चिल्लाया। “मैं राजा हूँ और अपनी दुल्हन का चयन स्वयं करूँगा। मैं अम्बा से विवाह नहीं करूँगा क्योंकि वो किसी और से प्रेम करती है!”

“उसके पास जाने के लिए कोई जगह नहीं है!” भीष्म भावपूर्वक बोले।

सत्यवती निराश होकर हाथ फैलाती हुई बोली। “उसे उसके पिता के पास छोड़ आओ...”

“आप जानती हैं कि शल्व की तरह वे भी उसे स्वीकार नहीं करेंगे!” अपने मुट्ठी को दूसरी हथेली पर मारते हुए भीष्म गरजे।

“प्रयत्न करके तो देखो,” सत्यवती समझाते हुए बोलीं। “यदि वे नहीं माने तो...”

“वो उसे स्वीकार नहीं करेंगे; मैं उन्हें अच्छी तरह जानता हूँ। हमें उसे यहीं रखना होगा!”

“यहाँ?” सत्यवती अविश्वासपूर्वक बोली।

“किस तरह?” वो जोर से तर्क करते हुए बोली। “देव, तुम अविवेकी हो रहे हो।”

“तो हम क्या करें?” भीष्म ने हताश स्वर में पूछा, उनकी आँखें त्रस्त थीं और उन्हें देखकर सत्यवती का हृदय पीड़ित हो गया। “अम्बा कहाँ जाएगी?”

“क्या आप मेरे बारे में बात कर रही हैं?”

जब सब लोग पीछे मुड़े, तो अम्बा को देखकर उन्हें अचम्भे से अधिक लज्जा का अनुभव हुआ। न जाने कब से वो वहाँ खड़ी उनकी बातें सुन रही थी। अम्बा शान्त लग रही थी, उसकी आँखें भावशून्य थीं। उसने सब कुछ सुन लिया था—दोनों की अस्वीकृतियाँ—सब कुछ! कोई भी युवती और कितना सहन कर पाएगी!

“शल्व मुझे नहीं अपनाना चाहते, और न ही राजा,” अम्बा अनमने भाव से, वीर्य को नमन करती हुई बोली। “बधाई हो, जीजाजी!”

वीर्य झोंप गया, और उसका चेहरा लाल हो गया। अम्बा उसे अनदेखा करते हुए भीष्म की ओर मुड़ी।

उन्होंने उसे दुखपूर्वक देखा। “मैंने शल्व से बहुत विनती की, पर वो नहीं माना...” वे लज्जित होकर धीरे से बोले।

“मैं जानती हूँ,” उसने कहा। उसने गहरी सांस लेते हुए अपेक्षापूर्वक भीष्म को देखा; उसके चेहरे पर उसकी पीड़ा की झलक भी नहीं थी, पर उसके चेहरे का भाव सुखद भी नहीं था। ऐसा लग रहा था जैसे पिछले कुछ क्षणों में ही उसकी आयु बढ़ गई हो।

“अब तो एक ही विकल्प रह गया है; आपको मुझे विवाह करना होगा!”

## प्रतीक्षा

भीष्म द्वारा अम्बा की अस्वीकृति के शब्द राजमहल में पिछले छह वर्षों से निरन्तर गूँज रहे थे, फिर भी वो उनकी प्रतीक्षा करती रही...

सत्यवती खिड़की के पास आह भरती हुई खड़ी थीं। अम्बा की प्रभावशाली आकृति को उद्देश्यपूर्ण कदमों से भीष्म के महल की ओर जाते देख रही थी। ये अम्बा का दैनिक नियम बन गया था, आदत और एकमात्र लक्ष्य। वो भीष्म का फिर से सामना करने जा रही थी। वो एक बार और उनसे विनती करेगी, उन्हें अभिशाप देगी, निंदा करेगी और उनसे विवाह के लिए प्रार्थना करेगी। वे हर बार की तरह उसे अस्वीकार करेंगे और उससे विनती करेंगे कि इस असम्भव कार्य के अतिरिक्त वो उनसे कुछ भी माँग ले। उन्होंने अम्बा को ये भी सुझाव दिया था कि वे उसे शल्व के पास ले जाएँगे, जिसे सुनकर वो और भी क्रोधित हो गई।

“मैं आपको चाहती हूँ, न उसे और न किसी और को!” वो हताश होकर चिल्लाई।

उनकी प्रतिज्ञा उनके तरह ही भीषण थी। अब वे शब्द और कर्म, दोनों रूप में भीष्म बन गए थे। क्या उनकी प्रतिज्ञा ने उन्हें क्रूर और निष्ठुर दैत्य बना दिया था? अपनी प्रतिज्ञा का अंधवत पालन करते हुए, क्या उन्हें उस युवती की आँखों की पीड़ा नहीं दिख रही थी? क्या वे अपने-आपको प्रतिबद्धता से बचा रहे थे या उससे भाग रहे थे?

पर, सत्यवती जानती थी कि ऐसी कोई बात नहीं थी। वो अम्बा जितने ही सन्तप्त थे। अम्बा का हरेक शब्द उन्हें गहराई से भेद रहा था, उन्हें खोखला कर, ग्लानि और दुख में डुबा रहा था। जब भी वे उसे अस्वीकार करते, वो निराशा और कलंक से भर जाती, पर, भीष्म अभी भी श्रद्धेय थे, घृणित नहीं। भीष्म को दुखी देखकर सत्यवती भी दुखी हो जातीं, क्योंकि देव ने आजीवन ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा उन्हीं के कारण ली थी।

“वो तुमसे प्रेम करती है, तुम देख नहीं सकते?” एक दिन सत्यवती ने भीष्म से कहा। भीष्म का चेहरा तन गया, पर उनके जबड़े की एक स्नायु फड़क रही थी। उन्होंने झट से मुँह फेरते हुए कहा, “मैं उसका आग्रह पूरा नहीं कर सकता।” सत्यवती उनकी सीधी और चौड़ी पीठ को देखती रही जो अटलता और दृढ़निश्चय का परिचय दे रही थी। उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि वे निराश होएँ या निश्चिन्त। मन-ही-मन वो नहीं चाहती थी कि अम्बा देव से विवाह करे। सत्यवती को उन दोनों को साथ बात करते,

हँसते या तर्क करते देखना अच्छा नहीं लगता था। वो तो अब उस अभागी लड़की को राजमहल में देखना ही नहीं चाहती थीं...

एक स्मृति एकाएक उनके मन को झुलसाती हुई निकली : अम्बा, भीष्म के महल के एक कुँज में टहलते समय अचानक लड़खड़ाकर गिरने लगी, और भीष्म ने सहजता से उसे कमर से पकड़कर सँभाल लिया। लड़की की आँखें आनन्द से चौड़ी हो गई और तभी उसका एक हाथ उनकी चौड़ी छाती पर और दूसरा हाथ उनके गले में था। उसका सिर ढीला होकर नीचे की ओर झुक गया था और उसके गुलाबी होंठ अधरखुले थे।

“कदाचित मेरे ज्वर का असर है,” उसने धीमी आवाज में कहा था। उसका सिर अब पीछे की ओर झुका हुआ था, और वो उन्हें आगे की ओर खींचती हुई, आँखें मटकाती हुई मुस्कुरा रही थी। अचानक वो उनकी छाती से चिपक गई और उसके मुँह से आह निकल गई। “मुझे स्वस्थ कर दीजिए, मैं प्रेम में बावली होती जा रही हूँ...”

भीष्म ने लगभग उसे फेंक ही दिया था, वो उसे कंधे से पकड़कर झकझोरते हुए बोले, “नहीं अम्बा, मैं तुम्हारा कभी नहीं हो सकता!” उनकी आँखें पीड़ित और ज्वलन्त थीं। सत्यवती धीरे से छिपती हुई वहाँ से निकल गई थी। क्या ये लड़की सम्मोहित थी या हताश?

भीष्म से इस समय बात करते हुए उन्होंने अपने बिखरे विचारों को समेटने का प्रयास करते हुए कहा, “अम्बा तुमसे प्रेम करती है, पर तुम उससे विवाह नहीं करोगे। इससे बुरी बात और क्या हो सकती है?”

सत्यवती ने भीष्म से अलग तरीके से बात करने का प्रयास किया। “मुझे उसकी चिन्ता हो रही है, देव। वो तो तुमसे हुए इस विक्षिप्त प्रेम और घृणा में पागल होती जा रही है!” उन्होंने धीरे से कहना आरम्भ किया। भीष्म की आँखें पीड़ा से भरी हुई थीं। “छह वर्षों से हस्तिनापुर में निरन्तर तुम्हारी अस्वीकृति ने उसे नष्ट कर दिया है। तुम देख रहे हो न? उसकी दोनों बहनें कितनी खुश हैं। वो तुमसे प्रेम भी करती है, पर साथ ही साथ घृणा भी। वो तुम्हें उसकी दुर्गति के लिए उत्तरदायी मानती है। यदि तुम बीच में नहीं आते, तो वो भी अपनी बहनों की तरह खुश रहती। लोगों की बातें भी अब कड़वी और भद्दी होती जा रही हैं और ये उसके लिए, तुम्हारे लिए और हम सबके लिए अच्छी बात नहीं है।

“पर वो जा ही कहाँ सकती है?” भीष्म ने निराश स्वर में पूछा।

“इसका अर्थ ये तो नहीं कि तुम उसे यहाँ सड़ने दो—तुम्हें देखते हुए, तुमसे प्रेम करते हुए, और रोज तुम्हारी प्रतीक्षा करते हुए?” सत्यवती ने उत्तेजित होकर अधीर उँगलियों से अपने होंठ थपथपाते हुए कहा। उनका बस चले तो वो अम्बा को अपने राजमहल और राज्य से बाहर कर दें, पर भीष्म इसकी अनुमति कभी नहीं देंगे।

भीष्म हतोत्साहित होते हुए बोले, “मैं क्या करूँ? मैं न उसे छोड़ सकता हूँ, न अपना सकता हूँ।”

सत्यवती उनकी आवाज़ की यंत्रणा सुनकर घबरा गई। “देव, तुम्हें उसे जाने देना ही होगा—तुम्हारी और उसकी भलाई के लिए।” सत्यवती ने मृदुता से कहा। “जिस दिन से अम्बा यहाँ आयी है, मैंने उसकी आँखों में वो भाव देखे हैं। तुमने उसके प्रेमी को न्यायपूर्वक द्वंद्व में पराजित किया; तुमने उसे कमजोर साबित कर दिया, विवाह करने के लिए अयोग्य सिद्ध कर दिया। तुम उसके नए, शूरवीर रक्षक बन गए थे, और अब वो हर वस्तु के लिए तुम पर निर्भर है, देव!” भीष्म का चेहरा अचल हो गया और उनके जबड़े कस गए।

सत्यवती ने थोड़ा रुककर प्रबोधक ढंग से आगे बोलना आरम्भ किया। “इसीलिए मैं नहीं चाहती कि वो यहाँ रहे। तुम उससे विवाह करोगे नहीं, और वो तुमसे इस बात की आशा करना नहीं छोड़ेगी। तुम दोनों पर ये घोर अत्याचार है। वो तुम्हें देखती है, तुमसे बातें करती है, और एक तुम्हीं हो जिसके साथ वो हँस-बोल लेती है।”

भीष्म उन्हें विचित्र ढंग से देखते हुए बोले, “वो हमारी अतिथि है और जब तक चाहें यहाँ रह सकती हैं। इससे अधिक मैं उनके लिए, इस समय और कुछ नहीं कर सकता।” वे भावशून्य ढंग से बोले।

“अब और नहीं! लोग उसे वीर्य की उपस्त्री कहने लगे हैं, देव; कुछ तो दया करो!”

“आप जानती हैं, मैं उससे विवाह नहीं कर सकता!” भीष्म टूटती आवाज़ में आक्रोशपूर्वक बोले। “नहीं...” वे भरी आवाज़ में बोले। “मैं उसे नहीं बचा सकता!”

“फिर उसे जाने दो!” सत्यवती जोर से चिल्लाई।

“मैं उससे विवाह नहीं कर सकता, आप जानती हैं!” भीष्म टूटती आवाज़ में भड़कते हुए बोले, “नहीं... मैं उसे नहीं बचा सकता!”

“फिर उसे मुक्त कर दो, उसे जाने दो!” सत्यवती भी चिल्लाकर बोली।

ऐसा लग रहा था जैसे वो अम्बा से बात कर रहे थे। सत्यवती के अन्दर ईर्ष्या की असामान्य लहर-सी दौड़ गई, जो उन्हें तीव्रता से जला रही थी। सत्यवती ने भीष्म को आज तक किसी के साथ बाँटा नहीं था। जब से वो हस्तिनापुर आई, तब से वो उनके साथ ही थे। उनके बीच कोई भी या कुछ भी नहीं आ पाया था—न उनका प्रण, उनकी ग्लानि, शान्तनु, कृपि, उनके पुत्र, राजसिंहासन और न ही हस्तिनापुर—सिवाय इस लड़की के, कुछ भी नहीं। अम्बा ने धीरे-धीरे उन दोनों के बीच दूरियाँ पैदा कर दी थीं। सत्यवती को लगा कि भीष्म उससे दूर होते जा रहे थे, वे अम्बा की अधिक चिन्ता करते, और शान्तिपूर्वक, उदास और अपराधी नेत्रों से अम्बा को देखते रहते। उन पर अम्बा की कोई अद्भुत शक्ति थी। क्या भीष्म को अम्बा से प्रेम हो गया था? या अम्बा उनकी बढ़ती चिन्ता और ग्लानि को प्रेम समझ बैठी थी? उन्हें दोबारा चीरती हुई ईर्ष्या

का अनुभव हुआ। क्या वो अम्बा से प्रेम करते हैं? उनमें भीष्म से यह प्रश्न करने का साहस नहीं था। वो इस प्रश्न से और भी चिढ़ जाएँगे; ये प्रश्न उन्हें कलंकित का देगा और उनकी प्रतिज्ञा पर अटल रहने की क्षमता को भी अपवित्र कर देगा।

सत्यवती ने गहरी सांस ली। भीष्म कदाचित ही क्रोधित होते थे, या कभी-कभी ही उसे प्रकट करते थे। इस तरह से क्रोध का दौरा पड़ना उनके लिए असामान्य बात थी; वे कदाचित अन्दर से टूटते जा रहे थे।

“मैं जानती हूँ की तुम कभी उससे विवाह नहीं कर पाओगे, तो उसे जाने दो,” सत्यवती ने विनती करते हुए कहा। “मैंने उसे भी समझाने का भरसक प्रयत्न किया, पर वो मुझसे इस बात के लिए घृणा करने लगी है!” उन्होंने कहा। “वो सही है। तुम्हें मेरे कारण ही वो प्रतिज्ञा करनी पड़ी। इस बात के लिए वो मुझसे द्वेष करती है!”

भीष्म खिड़की से बाहर, दूर क्षितिज पर झिलमिलाती गंगा को देखते खड़े रहे। इसमें कोई आश्वर्य नहीं कि अम्बा को इनसे प्रेम हो गया है, सत्यवती विचार करती भीष्म को देखती रहीं। लम्बे, गोरे, तराशे हुए, धूप से तप्त सुन्दर चेहरे पर गिरती धूँधराली लट वाले, युद्ध में विजयी, विवेकी और साहसी, विनम्र और दयाशील, अपने बन्दियों से भी दया करने वाले—पर इतने दयालु नहीं कि अपनी प्रतिज्ञा तोड़कर इस लड़की से विवाह कर लें...

वो अचानक भयभीत हो गई। उनकी सबसे बड़ी शंकाएँ वापस आने लगी थीं। वो निश्चित थीं की भीष्म अम्बा से विवाह नहीं करेंगे, पर, कभी-कभी अम्बा की दृढ़ता को देखकर वो सोच में पड़ जातीं कि कहीं भीष्म टूट न जाएँ। अम्बा की उपस्थिति का हर एक दिन, सत्यवती की शंका को तीव्र कर रहा था और उनकी अन्तरात्मा और आत्मविश्वास को खोखला कर रहा था। अम्बा, भीष्म की पत्नी, नहीं! ऐसा कभी नहीं हो सकता! सत्यवती घबराती हुई सोचने लगीं। मुझे किसी तरह इस लड़की को यहाँ से दूर करना ही होगा।

उनके विचार किसी कोलाहल के कारण टूट गए। उन्हें पता था, अम्बा फिर से उपद्रव मचा रही होगी। प्रतिदिन उसकी स्थिति बिगड़ती जा रही थी और लोग उसकी और उसकी बहनों का परिहास करने लगे थे, पर अम्बा इन सबसे निश्चिन्त थी।

उसकी बहनें अम्बा की पीड़ा को समझती थीं, परन्तु अम्बिका और अम्बालिका, वीर्य के साथ अपने संसार में मग्न थीं। छह वर्ष हो गए थे और दोनों को सन्तान नहीं हुए थे। कहीं ये वीर्य के कारण तो नहीं था? वो तो आरम्भ से ही अस्वस्थ रहता था और कुछ दिनों से उसकी खाँसी बिगड़ गई थी; जिसे देखकर उसे शान्तनु की याद आ गई थी। सत्यवती को अन्दर ही अन्दर घबराहट होने लगी थी। उसकी विलासमय जीवन-शैली, मदिरा और स्त्रियों से अति-लगाव के मामले में वीर्य कई अर्थों में शान्तनु जैसा ही था; पर उसने विवेकतापूर्वक अपने-आपको अपनी दो सुन्दर पत्नियों तक ही सीमित रखा

था। पर, गतकाल में सत्यवती को, अम्बा की नहीं, बल्कि इन तीनों की अधिक चिन्ता हो रही थी।

कान्तिहीन चेहरे के साथ अम्बालिका सत्यवती के कक्ष में भागती हुई आयी। “माँ, अम्बा ने फिर से...” वो घबराती हुई बोली। धड़कते हृदय के साथ सत्यवती अम्बालिका के पीछे भागीं। वहाँ के दृश्य को देख सत्यवती को तनिक भी आश्वर्य नहीं हुआ। भीष्म खिड़की के पास खड़े अम्बा के आवेशपूर्ण शब्दों को सुन रहे थे। अम्बा की आवाज़ भारी थी, आँखों से आँसू बह रहे थे, बाल बिखरे हुए थे और माथे से पसीना बह रहा था। फिर भी वो विचित्र और कठोर भाव से सुन्दर लग रही थी। पर, उसकी सुन्दरता क्रोध और भ्रष्ट विचारों के कारण कुंठित हो गई थी। जैसे ही वो दोनों कक्ष में प्रविष्ट हुई, अम्बा के शब्दों की बौछार थम गई।

उसके चेहरे के भाव ऐसे थे, जिन्हें सत्यवती कभी किसी स्त्री के चेहरे पर दोबारा नहीं देखना चाहती थीं। पीड़ा, क्रोध, हताशा और कटु ईर्ष्या ने अम्बा के चेहरे को निराशा से भर दिया था। अम्बा अपनी बहन को क्रोधपूर्ण दृष्टि से देखती रही। “तुम इन्हें यहाँ क्यों लेकर आयी हो?” वो सत्यवती की ओर देखती हुई चिल्लाई। “इन सबके पीछे आपका ही हाथ है; आप ही मेरे सर्वनाश का कारण हैं!” वो धधकती आँखों के साथ बोली। “आपने इन्हें मुझे अपने पुत्र के लिए यहाँ लाने के लिए कहा, है न? आप रानी होने का दावा करती हैं, पर आप अभी भी वही मछुआरिन हैं जो अपने जाल में फँसी मछली को राजा के लिए बचा कर रखती हैं। क्या मैं आपके लिए वही थी?” वो अपनी बहन की आतंकित हाँफ को अनसुना करती हुई निंदापूर्वक बोली।

“अम्बा, कृपा करके होश में आओ!” अम्बिका विनतीपूर्वक बोली। “या तो तुम ये राजमहल, जो तुम्हारा एकमात्र घर है, उसे छोड़कर चली जाओ, अथवा सभ्य व्यवहार करो!” उसके शब्दों का अम्बा पर तीखा प्रहार हुआ और एक क्षण के लिए अम्बा आहत हो गई और उसकी आँखें आश्वर्य से खुली की खुली रह गईं।

अपने-आपको सँभालती हुई वो आक्रोशपूर्वक बोली, “मेरी प्यारी बहनें, अपने वैवाहिक जीवन में इतनी खुश हैं और सदैव अपने प्रिय पति की बाँहों में कैद रहती हैं। तुम अपने आपको भाग्यशाली समझती हो?” उसने अचानक अम्बिका की कलाई इतनी जोर से पकड़ी कि उसके नाखून अम्बिका की त्वचा में धूँसने लगे। “तुमने अपना क्या हाल बना रखा है? तुम तो अपने नशे में धुत्त पति की तरह ही पतित हो गई हो। तुम उसके हर हठ, हर सनक का पालन करती हो। वो अपने-आपको राजा कहते हैं, पर उनका सबसे प्रिय कक्ष तो उनका शयन कक्ष है, राजदरबार नहीं, जहाँ वे बन्द द्वार के पीछे तुम्हारी बाँहों में पड़े रहते हैं। या, कहीं वे तुमसे अधिक हमारी आकर्षक अम्बालिका को तो नहीं चाहते?” उसकी हँसी भद्दी खीस में बदल गई। “उन्होंने तुम

दोनों को अपनी दासी, और वेश्या बना लिया है!” वो क्रूरतापूर्वक बोली। “मैं तो भाग्यशाली हूँ कि ऐसे भ्रष्ट जीवन से बच गई!”

सत्यवती के अन्दर भय की लहर-सी दौड़ गई। अम्बा अपने पागलपन में सत्य बोल गई थी। विवाह ने वीर्य को कामुक व्यसनता में डुबा दिया था और वो अपनी दोनों रानियों के साथ विलासिता में बह गया था। अम्बा अपनी बहन की बाँह जकड़े हुए अभी भी सत्यवती से बात कर रही थी। “क्या इसीलिए आपने अपने पथभ्रष्ट पुत्र के स्थान पर अजेय भीष्म को स्वयंवर में भेजा?” अम्बा क्रोधित आँखों के साथ भीष्म की ओर देखती हुई बोली, “आप अपनी घृणास्पद प्रतिज्ञा, जो आपने इस कपटी औरत के लिए की, उसके लिए मुझे अस्वीकार कर रहे हैं? इन्होंने आपको वैसे ही धोखा दिया, जैसे आपने मेरे साथ किया!”

सत्यवती अचानक अम्बा के क्रोध और दुर्व्यवहार से विलग हो गई। पिछले छह वर्ष अम्बा के लिए बहुत ही कष्टप्रद थे और उसे पूरी तरह तोड़ चुके थे। उसकी सुन्दरता इस अन्तराल में निराशापूर्ण कटुता से भर गई थी। शल्व और वीर्य की अस्वीकृति से वो त्रस्त तो थी ही, भीष्म की अस्वीकृति ने उसे विक्षिप्त कर दिया था।

सत्यवती को वो समय याद आ आया, जब पहली बार अम्बा हस्तिनापुर आयी थी; सुन्दर, गोरी, भूरी और स्नेही नेत्रों वाली, क्रोधित, भयभीत और साथ-साथ साहसी लड़की जिसे आशा थी कि उसके साथ सब कुछ ठीक हो जाएगा। अब वो कदाचित ही मुस्कुराती, वो भी भीष्म को देखकर। बीते कुछ महीनों में वो बिखर रही थी, उसका धैर्य टूट रहा था और उसकी निराशा घृणा में बदलने लगी थी। उसे उन सबसे घृणा थी, पर सबसे अधिक घृणा उस मनुष्य से थी जिससे वो समान रूप से प्रेम और द्वेष करती थी। अम्बा को भीष्म के रूप में ऐसा शिकार मिल गया था जिस पर उसका पूरा द्वेष केंद्रित था। वो उन्हें हर परिस्थिति के लिए दोषी मानती; उसकी टूटी आशा, उसके खोए प्रेम, और उसके अंधकारमय भविष्य के लिए।

भीष्म के मौन से वो और अधिक क्रोधित हो जाती, और उसका उन्मत्त मस्तिष्क समझ नहीं पाता कि भीष्म के मौन में ही उनकी ग्लानि छिपी थी। अम्बा भीष्म की ओर झुकती हुई, पीड़ित और क्रुद्ध आँखों से, प्रेम और आक्रोश से भरी आवाज़ के साथ बोली, “जैसा सारा संसार कहता है, आप महान हैं भीष्म। आपने मेरे स्वयंवर को युद्धभूमि बना दिया, मेरे प्रेमी को अपमानित और पराजित किया और मेरी इच्छा के विपरीत मुझे उठाकर ले आए। आपने ही किया भीष्म! केवल आपने! आपने तीन युवतियों का अपहरण किया पर आप एक से भी विवाह नहीं कर सकते? आप कहते हैं कि आप अपनी ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा से बद्ध हैं। फिर तो आपको यहाँ, राजमहल में नहीं, राजदरबार में नहीं, किसी जंगल में बैठकर तपस्या करनी चाहिए। आप यहाँ क्या कर रहे हैं? राजनीति, शासन, स्वघोषित रानी और उनकी सन्तान में क्यों उलझे हुए हैं?”

अम्बा ने भीष्म का हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचते हुए कहा, “आप कहते हैं कि आपने भरसक प्रयास किया, पर वो पर्याप्त नहीं है। मुझे और चाहिए। मुझे आप चाहिए!” वो टूटती सांसों के साथ, आँसुओं से गीले चेहरे और नम आँखों के साथ बोली। “आपने मेरे प्रेमी को मुझे त्यागने पर विवश कर दिया। आपने मुझे दिखा दिया कि वो कितना तुच्छ मनुष्य था; आपने उसके लिए मेरे प्रेम को घृणा में परिवर्तित कर दिया। आप यहाँ मुझे ऐसे भाई के लिए लाए, जिसने मुझे अस्वीकार कर दिया। ये सब आपने किया, भीष्म! मैं बिलकुल अकेली रह गई भीष्म। आपने मुझ पर दया की पर मेरी दुर्दशा से अछूते रहे। आप किस तरह के मनुष्य हैं? आपने मुझे आपसे प्रेम करने पर विवश कर दिया! मैंने आपसे प्रेम की भीख माँगी...!” उसने टूटती आवाज में कहा। “मैं चीखी, चिल्लाई, न्यायालय में अपना पक्ष रखा, संसार के सामने मूर्ख बनकर रह गई—कौन-सी औरत ऐसा कहेगी; ऐसा करेगी? पर आपको तो अपनी प्रतिज्ञा के अतिरिक्त सब कुछ निरर्थक लगता है! क्या वो मेरे जीवन, जिसे आपने तहस-नहस कर दिया, और मेरे प्रेम, जिसे आपने ठुकराया, उनसे अधिक महत्वपूर्ण है?” अम्बा ने दावा करते हुए कहा।

भीष्म खोखली आँखों से उसे देखते हुए स्थिर खड़े रहे।

अम्बा उन्हें झकझोरती हुई, बिलखती हुई बोली, “ये कैसी महानता है? आपकी निष्ठा किसके साथ है? आपका न्याय कहाँ है? क्या जीवन आदर्श से अधिक महत्वपूर्ण नहीं? क्या आप युद्धभूमि में किसी सैनिक को इसीलिए मरने देंगे क्योंकि आप उसे उठाने में अक्षम हैं? मैं भी घायल सैनिक ही हूँ, भीष्म, आपकी शिकार... आप ऋणी हैं, भीष्म, मेरा जीवन, मेरा भविष्य, मेरी खुशी... जिसे आपने कुचल दिया!”

अम्बा कांपती हुई, भीष्म के सामने खड़ी रही; उसका चेहरा पीड़ित था, पर उसमें विषादपूर्ण आशा की झलक भी थी। सत्यवती भीष्म को झकझोरकर उससे सफाई माँगना चाहती थीं, परन्तु, भीष्म के पास उत्तर में केवल निशब्द मौन ही था। उनका चेहरा व्यथित था और उस पर पीड़ा और अपराधबोध की लकीरें झलक रही थीं।

सत्यवती अब उस घुटन भरे कक्ष में एक क्षण भी नहीं रहना चाहती थीं। वो वहाँ से निकलने के लिए बढ़ी। तभी अम्बा की दृष्टि उन पर पड़ी और वो उपहासपूर्वक, कटुतापूर्ण मुस्कुराहट के साथ बोली, “मत जाइए, माते। क्या आप अपने कर्मों का फल नहीं देखना चाहेंगी?”

वो धीरे से भीष्म से दूर जाती हुई बोली, “मेरी माँग है कि मेरा विवाह भीष्म से हो। हमारा विवाह ही उनके लिए प्रायश्चित होगा, उस अपराध के लिए, जो इन्होंने मेरे साथ किया है। ये प्रतिज्ञा के नाम पर बच नहीं सकते। इनकी प्रतिज्ञा से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं, इनके उत्तरदायित्व से है। इनका दायित्व उस प्रतिज्ञा के प्रति नहीं, बल्कि मेरे प्रति

होना चाहिए। वो उनकी प्रतिक्रिया के लिए एक क्षण रुकी, किन्तु भीष्म आँखें झुकाए सिर हिलाते खड़े रहे।

“हो सके तो मुझे क्षमा करो अम्बा,” वे अन्ततः धीरे से, भारी आवाज़ में बोले। “कृपया मुझे क्षमा कर दो, मैं तुम्हारा अपराधी हूँ। मैं अपनी प्रतिज्ञा के विरुद्ध नहीं जा सकता, और ऐसा करके मैं और भी जघन्य और अक्षम्य अपराध कर रहा हूँ। मैं तुमसे विवाह नहीं कर सकता और अपने आपको क्षमा भी नहीं कर सकता।”

“मैं क्षमा नहीं करना चाहती, न्याय चाहती हूँ।” अम्बा क्रोधपूर्वक मुट्ठी बाँधे चिल्लाई, जैसे वो अपने-आपको उन्हें मारने से रोकना चाहती हो।

“तुम न्याय नहीं चाहती अम्बा। भीष्म ने तुम्हें हर प्रकार से न्याय देने का प्रयत्न किया है।” सत्यवती ने कठोर स्वर में कहा।

“मेरे लिए, न्याय का अर्थ प्रतिशोध है! मैं इतने वर्षों के अपमान और यंत्रणा का प्रतिशोध चाहती हूँ। सब कुछ इन्होंने ही आरम्भ किया है, यही अन्त भी करेंगे!” वो क्रोधित आँखों के साथ आक्रोशपूर्वक बोली।

“प्रतिशोध तुम्हें नष्ट कर देगा, अम्बा। तुम्हें उससे क्या लाभ होगा?” सत्यवती ने विनतीपूर्वक कहा।

“मेरा सब कुछ नष्ट हो गया है...”

“इनका भी! भीष्म ने मेरे कारण सब कुछ खो दिया!” सत्यवती कांपती हुई चिल्लाई। “जब मेरे पति की मृत्यु हुई, ये मुझे और मेरे पुत्रों को बर्बाद कर सकते थे... मुझसे प्रतिशोध ले सकते थे, परन्तु, मैं यहाँ तुम्हारे सामने खड़ी हूँ, और वो भी। ये तुम्हारे अपराधी नहीं हैं! ये भले मनुष्य हैं, अम्बा। इनकी ओर देखो। इनके पास अपनी प्रतिज्ञा के अतिरिक्त बचा ही क्या है? ये तो अपने ही पिंजरे में कैद हैं, अपनी प्रतिज्ञा की बेड़ियों में बंधे हैं। अपने आसपास देखो, तुम अकेली पीड़ित नहीं हो। तुम न्याय माँग रही हो, पर जीवन न्यायपूर्ण नहीं होता; संसार न्यायपूर्ण नहीं है,” सत्यवती बोली। “हम स्त्रियाँ हैं, अम्बा; हम न्याय के माध्यम से उत्तर माँगती हैं, जो हमें नहीं मिलता। हम फिर भी जीती हैं। अम्बा, जियो, पर घृणा के साथ नहीं,” सत्यवती भावपूर्वक बोली। “ये तुम्हारी पीड़ा बोल रही है; तुम्हें घृणा करने के लिए किसी की आवश्यकता थी, और तुमने भीष्म को चुना। ये घृणा तुम्हें नष्ट कर देगी, अम्बा; ये भीष्म का कुछ नहीं बिगाड़ सकती, क्योंकि उनके पास खोने के लिए कुछ है ही नहीं, और न ही पाने के लिए...”

“मैं राष्ट्र के हरेक राजा से विनती करूँगी कि मेरे लिए लड़ें। कोई तो होगा जो इस अपकृत स्त्री की सहायता करेगा!” अम्बा दांत भींचती हुई बोली।

“तुम्हारी सहायता करने वाला कोई नहीं है, अम्बा,” सत्यवती ने चेतावनीपूर्वक कहा। “कोई भी राजा भीष्म का विरोध नहीं करेगा, क्योंकि सब उससे भयभीत हैं। और तुम बार-बार अपकृत स्त्री क्यों बोलती रहती हो?” सत्यवती ने क्रोधपूर्वक पूछा।

“हाँ, तुम्हारे साथ बहुत अन्याय हुआ है, लेकिन इसका अर्थ ये तो नहीं कि तुम्हें दूसरों के साथ अन्याय करने का अधिकार मिल गया है? तुम अपना विवेक खो चुकी हो! क्या घृणा लड़ने से सरल है? क्या तुम शल्व से, तुम्हें अस्वीकार करके किसी और से विवाह करने के लिए घृणा करती हो? क्या तुम अपने पिता से घृणा करती हो क्योंकि उन्होंने तुम्हें वापस नहीं लिया? क्या तुम्हें वीर्य से घृणा है क्योंकि उसने तुम्हें इसलिए स्वीकार नहीं किया क्योंकि तुम किसी और से प्रेम करती हो?” सत्यवती ने दुखी आवाज़ में कहा। “फिर तुम भीष्म से घृणा क्यों करती हो? उसने तो सब कुछ मेरे कहने पर किया!”

“मुझे आप दोनों से द्वेष है,” अम्बा भावशून्यता से बोली। “आप लोगों को बहकाकर कठपुतलियों की तरह उनका उपयोग करते हैं।”

“मुझे क्षमा कर दो,” सत्यवती ने हाथ जोड़ते हुए कहा। “भीष्म तुम्हारे स्वयंवर में किसी प्रकार के हस्तक्षेप के विरुद्ध थे, मैंने ही उन्हें विवश किया।” सत्यवती ने स्वीकार करते हुए कहा। वे अपने घुटनों पर बैठ गई और धीरे से बोली, “मैंने अपराध किया है, अम्बा, इन्होंने नहीं।”

सब लोग अचम्भित रह गए। उन्होंने रानी को इस प्रकार अभिमानरहित, असहाय और निर्बल नहीं देखा था। भीष्म ने उनकी ओर कदम बढ़ाया। हस्तिनापुर की रानी सत्यवती, जो कभी किसी पुरुष के सामने नहीं झुकती थीं, अपनी गलतियाँ और दुष्कर्म स्वीकार नहीं करती थीं; आज असहाय होकर घुटने टेक रही थीं। भीष्म समझ गए थे कि वो अम्बा से उनकी ओर से क्षमा और कृपा, दोनों माँग रही थी। भीष्म अपने प्रतिवाद में कुछ भी नहीं बोल पाए।

अम्बा थोड़ी सँभल तो गई लेकिन और भी ज्यादा क्रोधित थी। “उनकी रक्षा मत कीजिए, राजमाता, आप भी उतनी ही दोषी हैं, पर उन्होंने ही मुझे पुरस्कार के समान जीता था; अपने प्रिय भाई के लिए! इसीलिए, उनका मेरी ओर दायित्व है। केवल उनका!” वो बड़बड़ाई।

“अम्बा, मैं तुम्हें अपने विषय में और कुछ बताती हूँ। मैं भी घृणा में जीती थी। हर मनुष्य और हर वस्तु के साथ घृणा करती हुई। मैं एक राजा की अवैध सन्तान थी,” उन्होंने बोलना आरम्भ किया, और अचानक पूरे कक्ष में स्तब्धता छा गई। भीष्म उनकी ओर बढ़े लेकिन उन्होंने हाथ आगे करके उन्हें रोक दिया। वो इस बावली लड़की को समझाने के लिए कुछ भी करने के लिए तैयार थीं।

“मैं तो अवांछित राजकुमारी के रूप में जन्मी, जिसे साधारण मछुआरिन का जीवन ही मिला। मैंने एक प्रबुद्ध ऋषि को मुझे मोहजाल में फँसाने का अवसर दिया, क्योंकि उससे मुझे लाभ होने वाला था। उनके द्वारा मुझे एक पुत्र की प्राप्ति हुई, जिसे मैं अपने पास नहीं रख पायी...”

अम्बिका के मुँह से अचानक आह निकल गई और उसके पीछे खड़े भीष्म विवर्ण हो गए। सत्यवती दृढ़तापूर्वक बोलती गई।

“... क्योंकि मुझे जीवित रहना था... पर मैं इस दयनीय संसार में मात्र जीवित नहीं रहना चाहती थी, मुझे उस पर शासन करना था... मैं शक्ति, बल, प्रतिष्ठा और सम्मान पाना चाहती थी,” वो धीमे स्वर में अम्बा की आँखों में देखती हुई बोली। “उसके लिए मुझे राजमुकुट और राज्य की आवश्यकता थी। तभी मेरी भेंट शान्तनु से हुई और मैंने उनसे विवाह कर लिया, पर राजमहल में अपनी और अपनी सन्तान की सुरक्षा निश्चित करने के बाद। मैंने युवराज को अपदस्थ करके अपनी जगह बनाई,” वो लम्बी सांस छोड़ती हुई बोली। “अम्बा, तुम न्याय और प्रतिशोध की बात करती हो। क्या मैंने भीष्म के साथ न्याय किया? क्या मेरे राजा पिता ने मेरे साथ न्याय किया? क्या मैंने अपने पहले पुत्र के साथ न्याय किया? मेरे पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं, अम्बा, पर, मैं समझ गई हूँ कि घृणा या प्रतिशोध इनका उत्तर नहीं हैं।”

कक्ष में निस्तब्धता छा गई। उनके शब्द सत्य-प्रकटन ही नहीं, एक रानी के अपराध-स्वीकरण भी थे। अम्बा की दबी हुई हँसी से शान्ति भंग हो गई। “पर मैं सत्यवती नहीं हूँ, राजमाता। आपको सब कुछ मिला, मैं तो सब कुछ हार गई! मेरा आत्मसम्मान भी,” अम्बा कठोरता से बोली। “मैंने उन पर अपना प्रेम बिखेरा, पर उन्होंने स्वीकार नहीं किया; इसलिए, मेरे पास केवल घृणा ही शेष है।”

“क्योंकि इससे तुम्हें पुष्टिकरण मिलता है?” सत्यवती ने निर्मम आँखों से अम्बा को देखते हुए कहा। वो उठकर खड़ी हुई, और ऐसी आवाज़ में आगे बोलीं मानो अब वो और निरर्थक बातें नहीं सुनेंगी। “तुम्हारी तरह, मैं भी अपने पिता द्वारा त्यक्त की गई और बहुत लम्बे समय तक उनसे घृणा करती रही। परन्तु जब मुझे उनका सामना करने का अवसर मिला, मुझे एक अन्य सत्य का ज्ञान हुआ—कि वे मेरे लिए कोई महत्व नहीं रखते हैं। मैं अपनी घृणा उन पर व्यर्थ नहीं करने वाली थी; मैं कोई प्रतिशोध नहीं चाहती थी। मैं, मैं हूँ, उनके साथ या उनके बिना। मैं शोषित नहीं होऊँगी; पर, अम्बा, तुम... पीड़ित रहना चाहती हो। तुम्हें अपने कटुता के साथ जीना अच्छा लगता है। अपने लिए, अन्याय से लड़ाई न्याय के साथ करो। अपने ऊपर दया करो, क्या प्रतिशोध के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं? तुम राजकुमारी हो...”

“मैं राजकुमारी थी... अब भिखारिन बनकर रह गई हूँ... आपकी दया से...!” अम्बा ने प्रत्युत्तर दिया।

सत्यवती ना मैं सिर हिलाती हुई बोलीं, “तुम अब भी राजकुमारी हो। क्या भीष्म से असम्भव विवाह के अतिरिक्त तुम्हारे पास कोई अन्य विकल्प नहीं? क्या भीष्म और शल्व के अतिरिक्त और कोई नहीं है?” सत्यवती ने दुखी होकर पूछा। “क्या तुम्हारे

संसार का आरम्भ और अन्त भीष्म पर ही होता है? क्या यही तुम्हारे लिए एकमात्र बचाव है?”

“आप तो श्रेष्ठ वक्ता हैं, रानी माँ,” अम्बा टेढ़ी हँसी के साथ बोली। “आपने रानी बनने के लिए वृद्ध मनुष्य से विवाह किया! इस बात का ध्यान रखा कि भीष्म कभी विवाह न कर सकें, मेरी जैसी असहाय लड़की से भी नहीं। मैं जानती हूँ कि आपको यहाँ मेरी उपस्थिति अच्छी नहीं लगती; आप नहीं चाहतीं कि मैं उस मनुष्य से विवाह करूँ जिस पर आपका स्वत्व है, जो आपकी सम्पत्ति है, जो...”

“चुप हो जाओ!” भीष्म दहाड़े। “अम्बा, कृपया, और कुछ नहीं...”

“क्या कुछ नहीं? अब आप बोलने लगे, उनके पक्ष में!” अम्बा सत्यवती की ओर मुड़ती हुई बोली, “जिस तरह आप विवाह के माध्यम से राजसिंहासन चाहती थीं, मैं विवाह के माध्यम से भीष्म को पाना चाहती हूँ। राजमुकुट के लिए आपने भीष्म का सर्वनाश कर किया। अपने प्रतिशोध के लिए मैं उन्हें मिटा देना चाहती हूँ।”

सत्यवती का चेहरा श्वेत पड़ गया।

अम्बा भीष्म की आँखों में देखती हुई बोली, “आप दयालु हैं, भीष्म, पर पत्थर की तरह कठोर।” उसकी आवाज़ धीमी पड़ने लगी और वो भीष्म के निकट आकर अपना चेहरा उनके चेहरे के पास लाती हुई धीरे से बोली, “और इसके लिए मुझे आपसे प्रेम से कहीं अधिक घृणा है, भीष्म!” उसके कंठ से सिसकी निकल गई। “आपने मेरे प्रेम को कभी महत्व नहीं दिया, परन्तु आपको मेरी घृणा की कीमत चुकानी होगी। आप मेरे होंगे; ये आपकी प्रतिज्ञा और मेरे प्रतिशोध का परीक्षण है। आपने मुझे मेरे स्वयंवर-सभा से बाहर निकलने पर विवश किया; मैं भी आपको इसी राजमहल से बाहर जाने पर विवश कर दूँगी, जहाँ खड़े होकर आप मुझसे लड़ रहे हैं। मैं आपको चुनौती देती हूँ: मैं आपकी मृत्यु का कारण बनूँगी।” वो विष उगलती हुई चिल्लाई।

गहरी सांस लेती हुई अम्बा ने एक अन्तिम दृष्टि भीष्म पर डाली जिसने उनके ध्वस्त अन्तरात्मा को भेद दिया। उसकी आँखों में धधकते अंगारे, घृणा और प्रतिशोध की अग्नि से सत्यवती कांप गई। अम्बा भीष्म को देखकर भयानक मुस्कुराहट के साथ तीव्रता से कक्ष से, और राजमहल से बाहर निकल गई। और कदाचित हमारे जीवन से, सत्यवती अम्बा को जाते देख सोचती रही। उसकी विक्षिप्त दृष्टि ने सत्यवती की आत्मा को छलनी कर दिया था और उसके श्राप की गूँज अभी भी उन्हें सुनाई दे रही थी। उनका हृदय अज्ञात भय से भर गया—ये लड़की भीष्म के लिए अभिशाप सिद्ध होगी। उन सबके लिए अभिशाप।

## प्रतिहिंसा

भीष्म अम्बा को कभी भूल नहीं पाए। गुप्तचरों से मिले समाचार सुनकर सत्यवती समझ गई कि अम्बा भी यही चाहती थी। अम्बा सबसे पहले सहायता माँगने के लिए अपने नानाजी, राजा होत्रवाहन के पास गई। उसकी माँ, रानी स्वरगाटिधीनी कई बार अम्बा को समझाने और अपना हठ छोड़ने के लिए मनाने हस्तिनापुर आई, पर अन्य सभी की तरह वो भी विफल रहीं। अम्बा के नानाजी ने भी उसे मनाने का भरपूर प्रयास किया, पर राजकुमारी अडिग रही। वो चाहती थी की नानाजी उसके लिए भीष्म को चुनौती दें, परन्तु उन्होंने हिचकिचाते हुए मना कर दिया। अब तो अम्बा के जीवन का एक ही लक्ष्य रह गया था—भीष्म को समाप्त करना। अपने शक्तिशाली नानाजी से सहायता न मिलने पर अम्बा समझ गई कि कोई भी सगे-सम्बन्धी या मित्र उसकी सहायता नहीं करेंगे; उसे किसी अन्य शक्तिशाली राजा की आवश्यकता होगी। उसके बाद वो पूरे भारतवर्ष में ऐसे राजा की खोज में निकल पड़ी जो उसकी ओर से भीष्म के विरुद्ध लड़ सके, उन्हें चुनौती दे सके। पर कोई सामने नहीं आया, किसी ने साहस नहीं किया। मनुष्यों से हारकर अम्बा ने देवों का सहारा लिया, विशेषकर युद्धों के भगवान कार्तिकेय से।

ये लड़की भी अत्यन्त हठी है... पर मेरे पास चिन्ता के लिए और भी महत्वपूर्ण विषय हैं... ऐसा सोचते हुए सत्यवती अपने पुत्र के कक्ष में प्रविष्ट हुई। वहाँ पहुँचते ही, उन्हें मंदिर की दुर्गाध आयी। ये देखकर उनका हृदय बैठ गया कि वीर्य अब दिन के समय भी मंदिरापान करने लगा था। वो उससे बात करना चाहती थीं, पर क्या वो उनकी बात समझने की स्थिति में भी होगा या नहीं! मैं उस पर उत्तराधिकारी को जन्म देने के लिए कैसे दबाव डालूँ वो हताश होकर विचार करने लगीं। उन्होंने इस विषय में अपनी दोनों बहुओं से बात की थी, पर दोनों ने लाचार होकर उनकी बात टाल दी। उनके पुत्र ने तो उनकी बात हँसी में उड़ा दी। जैसा वो इस समय भी कर रहा था।

“यदि मैं नहीं कर सकता, तो हम किसी बच्चे को गोद भी तो ले सकते हैं!” वो मदोन्मत्त होकर ठहाके लगाता हुआ बोला। “हमारे परिवार में ऐसा पहले भी तो हुआ है!”

“जब महाराजा भरत ने ऐसा किया, उनके पुत्र अयोग्य थे,” सत्यवती कठोरतापूर्वक बोलीं। “क्या तुम चाहते हो कि मैं भी वही करूँ?”

“क्या आप मुझे चेतावनी दे रही हैं, माँ?” वीर्य दुर्बलतापूर्वक हँसता हुआ बोला।

“तुम अयोग्य हो, राजदरबार में उपस्थित होना तो दूर, तुम तो वहाँ तक अपने पैरों से चलकर पहुँचने की स्थिति में भी नहीं हो!” सत्यवती क्रोधपूर्वक बोलीं।

“हाँ,” वीर्य खुलकर उनकी बात स्वीकार करता हुआ बोला। “परन्तु, क्या आप मुझे और राजसिंहासन को त्यागकर उसे किसी और को सौंपने के लिए तैयार हैं? क्या आपमें इतना नैतिक साहस है?” उसने दुर्भावनापूर्वक मुस्कुराते हुए पूछा। “नहीं माँ, आप ऐसा कभी नहीं कर सकतीं। आपके लिए राजमुकुट अत्यन्त बहुमूल्य है!” वो तिरस्कारपूर्वक अपनी हँसी रोकता हुआ बोला।

सत्यवती स्तब्ध रह गई। उनके पास न तो शब्द थे, और न ही उन्हें क्रोध आया; वो बस निराश थीं। अपनी मुट्ठी कसकर वो असहाय होकर मन-ही-मन चिल्लाई, “क्या ये वही उत्तराधिकारी हैं जिसे मैंने भीष्म का स्थान लेने के लिए जन्म दिया?

“आपने दुराग्रहपूर्वक मेरे सौतेले भाई से उसका राजसिंहासन छीन लिया, क्या आपमें इतनी शक्ति है कि उसे या किसी और को उस पर बैठा दें?” वो कांपते हाथों से मदिरा का धूँट पीते हुए बोला। मदोन्मत्त होने के बावजूद वो विवेकपूर्वक बात कर रहा था। उसने एक धूँट में आधा चषक खाली करके, होंठ पोंछते हुए कहा, “आप जितना समझती हैं, उतनी कठोर नहीं हैं, माँ।” उसने दूसरा चषक उठाकर उसे पूरी तरह खाली करते हुए कहा। “आप केवल लेना जानती हैं, देना नहीं। आप मुझसे उत्तराधिकारी के अतिरिक्त चाहती ही क्या हैं! आपके लिए मेरा और कोई प्रयोजन भी तो नहीं है। आप इतने वर्षों से ऐसे लोगों के साथ जी चुकी हैं, जो आपसे डरते हैं। उस क्षण की प्रतीक्षा कीजिए माँ, जब नियति आपको कोई भयानक झटका दे दे...”

“मुझे मेरे हिस्से के झटके मिल चुके हैं, और वीर्य, तुम भी उनमें से एक हो!” सत्यवती भावशून्यता से बोलीं। “तुम्हारी बला से, भीष्म तो लगभग हस्तिनापुर का राजा है ही।”

“हाँ! केवल दायित्व से, अधिकार से नहीं। वो तो आपने उससे छीन ही लिया है!”

उसके आरोप को अनसुना करती हुई वो आगे बोलीं, “भीष्म ही पूरा राज्य सँभाल रहे हैं, तुम नहीं। लोग उनको ही चाहते हैं और उनका ही सम्मान करते हैं, तुम्हारा नहीं।” वो क्रूरतापूर्वक उसे उकसाने के लिए बोलीं।

“आप किसे चाहती हैं, माँ?” उनके पुत्र ने मूर्खतापूर्ण हँसी के साथ मदिरा का पात्र उठाया और उसे पीते ही पूरी तरह कांप गया। अचानक उसकी आँखें स्थिर और कपटपूर्ण हो गईं, वह थोड़ा सँभाल गया और उसे वास्तविकता की अनुभूति हुई।

“ना मैं, ना भीष्म, ना मेरे पिताजी, आपके इस राजसिंहासन के अतिरिक्त कुछ नहीं!” वीर्य ने हिंसात्मक ढंग से चिल्लाते हुए थोड़ी और मदिरा लेकर उसे एक झटके में पीते हुए बलपूर्वक कहा। “मुझे इस बात का अत्यन्त आनन्द और सन्तोष है कि मैं आपको वो देने में असमर्थ हूँ, जो आप मुझसे चाहती हैं—उत्तराधिकारी!” सत्यवती उसकी क्रूरता देखकर दंग रह गई। “अब आप क्या करेंगी, माँ?” वो मदोन्मत्त होकर बावलेपन से हँसने लगा और अचानक उसके ठहाके खाँसी में बदल गए। उसके कांपते और अस्थिर हाथ से मदिरा का पात्र शय्या पर लुढ़क गया।

“मैंने वो कर दिखाया, जो महान भीष्म भी नहीं कर पाया! मैंने आपको पराजित कर दिया, माँ!” वो खाँसी के बीच सिसकता हुआ बोला, “मैं... मैं आपको कभी पौत्र नहीं दे सकता!”

“शान्त हो जाओ, पुत्र!” सत्यवती भागकर उसके पास जाती हुई बोलीं। “बस, अब पीना बन्द करो, इससे तुम कभी स्वस्थ नहीं हो पाओगे! ठीक हो जाओ, मैं तुमसे बस यही चाहती हूँ!” वो धीरे से, अपने आँसू निगलती हुई, हाथों से उसके माथे से बालों की लट को पीछे हटाती हुई बोलीं। वीर्य ने दबी हुई सांस ली और कांपती हुई आह भरी। उसका चेहरा विवर्ण हो गया था और उसके होंठ कांप रहे थे। क्या यही उनका सुन्दर पुत्र था, जिसने अपने-आपको मदिरापान, अस्वस्थता और विलासिता में डूबाकर व्यर्थ कर दिया था? सत्यवती को भीष्म से हुई अपनी बहस याद आ गई, जब उन्होंने उन्हें अपने पुत्र को अत्यधिक लाड़-प्यार करने के लिए फटकारा था और उन्हें ही वीर्य की निरुत्साह ऐयाशी के लिए उत्तरदायी ठहराया था।

“मुझे क्षमा कर दीजिए, माँ!” वीर्य निराशापूर्वक आँसू बहाता हुआ बोला।

“नहीं, पुत्र, नहीं; मुझे तुम बहुत प्रिय हो!” वो रोती हुई बोली।

“मैं गलत था; आपने अपने तरीके से उस एक मनुष्य से अवश्य स्नेह किया...” वीर्य अस्पष्ट आवाज़ में धीरे से बोला। “आप चित्रांगद को बेहद चाहती थीं, और उसकी मृत्यु से आप भी थोड़ी बिखर गई। आप मुझे भी चाहती हैं, चित्रांगद जितना तो नहीं, पर अपने पुत्रों के लिए आरक्षित अंधा प्रेम तो करती ही हैं। आप भीष्म को भी चाहती हैं,” वो भावशून्यता से बोला। “मैंने देखा है, अनुभव किया है और बहुत ही विचित्र है। आपने उसे नष्ट कर दिया, माँ, जिसके कारण आप अपने-आपसे घृणा करती हैं। आप उसके बिना जी भी नहीं सकतीं। वो तो सबको बहुत चाहते हैं, निस्वार्थ और अटलता से। हमने उनके साथ जो किया, उससे मुझे घृणा है...” उसकी आवाज़ टूटने लगी और उसकी आँखें बन्द होने लगीं। “मैं आपकी तरह गृहित सत्ता कदापि नहीं भोग सकता। कदाचित आपके कुकर्म और पापों का हिसाब देने का समय आ गया...” वो बड़बड़ता हुआ तकिये पर लुढ़क गया।

उसकी बातें सुन सत्यवती की आत्मा झुलस कर रह गई। वो उसकी ओर देखती हुई सामने की ओर हाथ फैलाए, घुटनों पर बैठ गई। वो असमंजस में थी कि क्या उसने सचमुच नियति पर विजय पायी थी? उन्हें हमेशा इस बात का गर्व था कि उन्होंने सारी बाधाओं के बावजूद अपना भाग्य स्वयं लिखा था। उन्होंने अकेले अपने जीवन को मनचाहा स्वरूप दिया था और अपने सुख और दुख के लिए स्वयं उत्तरदायी थीं।

सत्यवती को अचानक कक्ष में किसी की उपस्थिति का भास हुआ। कक्ष में अम्बालिका खड़ी थी, गोरी और दुर्बल; उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में चिन्ता स्पष्ट झलक रही थी और वो बारी-बारी से अपने अचेत पति और नीचे बैठी सास को देख रही थी। अम्बिका, भी शान्तिपूर्वक कक्ष में आ गई थी और उसने आगे बढ़कर वीर्य को सीधी तरह शय्या पर लिटाया और उसे रेशम की चादर ओढ़ाया।

सत्यवती वहाँ से जाने के लिए उठीं।

“मुझे अम्बा के बारे में कुछ कहना है, माँ,” अम्बालिका ने झट से कहा।

सत्यवती के मुँह से थकी हुई आह निकल गई। वो अपनी बहू से उसकी बहन के विषय में नाटकीय कहानियाँ सुनने के लिए रुक गई। “भगवान कार्तिकेय ने उसे सदाबहार फूलों की माला दी है। जो भी उस माला को पहनेगा, वो भीष्म को समाप्त कर पाएगा,” अम्बालिका एक ही सांस में बोली। वो अक्सर अपने आत्मसंशय को छिपाने के लिए बहुत बोलती और चहचहाती रहती।

“जब वो प्रतिशोध के लिए तपस्या कर रही थी, तो वे उसे आशीर्वाद कैसे दे सकते थे?” सत्यवती ने कठोरता से पूछा। “तपस्या तो प्रायश्चित्त के लिए होती है, चिन्तन होता है।”

“कदाचित उसे ये समझाने के लिए, कि भगवान का आशीर्वाद भी उसकी सहायता नहीं कर सकता,” अम्बिका ने धीरे से कहा। “वो पूरे राष्ट्र में भ्रमण करते हुए, हर राजा के पास गई, पर किसी ने भी उसकी याचना नहीं सुनी। वो तो पाँचाल नरेश द्रुपद के पास भी गई।”

“वो उसकी सहायता कभी नहीं करेंगे; वो तो कृषि के पति, द्रोणाचार्य के घनिष्ठ मित्र हैं, और कृषि तो हमारे परिवार की सदस्य है,” सत्यवती ने विश्वास के साथ कहा। “और वैसे भी पाँचाल हमारा मित्र देश है।”

अम्बालिका चिन्तित लग रही थी। “हमारे गुप्तचरों के समाचार के अनुसार राजा द्रुपद की अस्वीकृति से निराश होकर अम्बा वो माला उनके महल के मुख्य द्वार पर छोड़कर दोबारा वन में भटकने के लिए निकल पड़ी... वो माला अभी भी वहीं अछूती लटक रही है।”

“अम्बा हमेशा से ही हठी लड़की थी और यहाँ उसे उसके बराबर का कोई मिल गया,” अम्बिका कड़वाहट के साथ बोली। कुछ वर्षों पहले वो सुन्दर दिखती थी; पर

अब उसका चेहरा कठोर हो गया था और उसके होंठ नीचे की ओर झुकने लगे थे।

सत्यवती चकित रह गई। “ये द्वेष किसलिए? क्या तुम्हें भी तुम्हारी दीदी की बीमारी लग गई है?”

“हम सब पीड़ित तो हैं न माँ?” अम्बिका ने आक्रामक स्वर में कहा। “बस हमारी बहन से थोड़े से बेहतर।”

अम्बालिका ने धीरे से हस्तक्षेप करते हुए कहा, “मैं तो खुश हूँ।”

“तुम तो खुश होगी ही,” उसकी बहन ने तिरस्कारपूर्वक कहा। “वीर्य तुमसे बेहद प्रेम करते हैं! मुझे किस बात की खुशी होनी चाहिए? मदोन्मत्त और पथभ्रष्ट राजा की पत्नी होने पर?” उसकी हँसी अप्रिय थी। “वो तुम्हें इसलिए चाहते हैं क्योंकि तुम मधुर और साहसरीन हो, और तुम उन्हें लाड़ करके बिगाड़ती हो! यदि उन्हें समय पर रोका गया होता, तो कदाचित वे इतने भ्रष्ट नहीं होते, और हमारा जीवन इस तरह व्यर्थ नहीं होता! परन्तु, हमें इस बात से सन्तोष करना होगा कि हम रानियाँ हैं,” अम्बिका ने उपहासपूर्वक मुस्कुराते हुए कहा। “कमतर रानियाँ!” उसने सत्यवती की ओर तीखी दृष्टि डालते हुए जोड़ा।

“हर रानी राजमुकुट पहनती है, पर उसके हिस्से के संघर्ष, स्वीकृति और समझौते के साथ,” सत्यवती ने प्रत्युत्तर में कहा।

“हाँ, हमने सुना है!” अम्बिका उपहास करते हुए बोली। “माँ, आपके लिए तो हर वस्तु व्यापार है, नियम एवं शर्तों के साथ! परन्तु, बहुधा आप ही सारे नियम निश्चित करती हैं और हमें उनका पालन करना पड़ता है—इस राजमहल के सभी सदस्यों को! कब तक माँ, और कितने समय तक?” उसकी आवाज़ टूटने लगी और वो अपने हाथ से मुँह बन्द करके सिसकी रोकने का प्रयास करने लगी।

सत्यवती अम्बालिका की ओर देखते हुए कठोर स्वर में बोली, “अम्बालिका, तुम सबसे छोटी होते हुए भी सबसे अधिक समझदार लगती हो। इस पर ध्यान दो और इसके सिर में थोड़ा विवेक भरने का प्रयत्न करो। इसे समझाओ कि अपनी बड़ी बहन की परिस्थिति देखते हुए तुम दोनों कितनी भाग्यशाली हो—वो वन में प्रतिशोध की अग्नि लिए, सब कुछ गँवाकर दर-दर भटक रही है।”

“इस महल में हमारे पास एक प्रमत्त और नपुंसक पति के अतिरिक्त है ही क्या! ऊपर से सन्तान भी नहीं।” अम्बिका धीरे से बड़बड़ाई जिससे सत्यवती उसकी बात न सुन सकें। पर उन्होंने उसकी बात सुन ली थी और उनका पुराना भय दोबारा प्रकट हो गया था। हस्तिनापुर का उत्तराधिकारी कहाँ था? सत्यवती अपने धड़कते हृदय पर नियंत्रण नहीं कर पा रही थी और वीर्य की खाँसी की आवाज़ सुनकर उनका मन अज्ञात भय से भर गया।

उनका भय शीघ्र ही सत्य होनेवाला था।

“क्या तुम युद्ध पर जाने वाले हो?” भीष्म को अपना धनुष और बाण उठाते हुए देख सत्यवती ने चकित होकर पूछा। तलवार और कटार उनकी कमर पर लटकी हुई थीं। उन्होंने सत्यवती के प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया और केवल सिर हिलाया। उनकी स्थिर आँखों में उनके भाव स्पष्ट दिख रहे थे।

“ये तो अनपेक्षित हैं! किस से?” सत्यवती अडिग रहीं।

“ऋषि परशुराम,” वे संक्षेप में बोले।

सत्यवती आतंकित रह गई। परशुराम! वो मनुष्य जिन्होंने अपने पिता की हत्या के प्रतिशोध में राजकीय सैनिकों के वंश नष्ट कर दिए। उन्हें कोई भी पराजित नहीं कर सकता था, देवता भी नहीं, फिर भीष्म क्यों? वो अपने ही गुरु का सामना क्यों कर रहा था? सत्यवती बेतहाशा सोच रही थीं।

“क्यों?” उन्होंने धीरे से पूछा।

भीष्म ने उन्हें शान्तिपूर्वक देखते हुए कहा, “वे अम्बा के लिए लड़ रहे हैं।”

सत्यवती की आँखों में भय स्पष्ट झलक रहा था। ये घृणित लड़की; ये हम सबकी, उसकी मृत्यु का कारण...

“तुम अपने गुरु से तो नहीं लड़ोगे न? तुम कभी नहीं...” सत्यवती अपने भय पर नियंत्रण पाने का प्रयास करते हुए बोलीं।

भीष्म शान्त खड़े रहे, पर उनका मौन बहुत कुछ कह रहा था।

“तुम जानते हो कि तुम कभी उनसे नहीं जीत सकते, फिर भी उनसे लड़ने की योजना बना रहे हो!” उन्होंने कांपते स्वर में भीष्म पर आरोप लगाया। “तुम युद्ध की नहीं, अपनी मृत्यु की योजना बना रहे हो; है न, देव?” उन्होंने धड़कते हृदय के साथ पूछा। सत्यवती ने उनके रहस्यपूर्ण चेहरे की ओर देखा। दोनों एक दूसरे को घूरते रहे, उनके बीच भयंकर निशब्दता थी, अव्यक्त आतंक था। भीष्म अपने धनुष को कसते हुए चुपचाप खड़े रहे।

“है न देव?” सत्यवती ने दांत भींचते हुए पूछा। “तुम अपने गुरु से लड़कर अपनी मृत्यु माँगने जा रहे हो, अपनी इच्छा-मृत्यु। उन्हें पराजित करने की अपेक्षा तुम स्वयं मर जाओगे, है न?” वो बड़बड़ाती हुई आगे बढ़ीं और भीष्म के हाथों को जोर से जकड़ लिया। उन्हें दयनीय दृष्टि से देखती रहीं।

“मुझे उनसे लड़ना ही होगा। ये खुली चुनौती है,” भीष्म उन्हें सीधे-सीधे देखते हुए बोले।

“फिर जाओ; मैं तुम्हें नहीं रोकूँगी,” वो धीमी आवाज में बोलीं। “तुम उनसे लड़ना, देव, वीर योद्धा के समान लड़ना। ना शिष्य के रूप में, ना गौण के रूप में, ना कायर के रूप में जो पराजय की जगह मृत्यु चाहता हो। तुम आत्मसमर्पण नहीं करोगे; तुम्हें मेरे पास लौटकर आना होगा! तुम अपनी उस प्रतिष्ठा के लिए लड़ोगे, जिसे उस लड़की ने

कलंकित किया है, उसके आरोपों के अपयश के लिए लड़ोगे। तुम नायक बनकर लौटोगे!” सत्यवती उग्रतापूर्वक बोलीं। “तुम नहीं मरोगे देव, कदापि नहीं! तुम लड़ोगे, जीतोगे और मेरे पास वापस आओगे! मेरे लिए!” वो भीष्म के हाथ को कसती हुई बोलीं।

उनके शब्द भीष्म के हृदय में सदा के लिए चिह्नित होने वाले थे।

उनकी आँखों में उग्र चमक थी। “मुझे वचन दो!”

एक भयंकर आवाज़ ने हस्तक्षेप किया।

“बाहर आओ, भीष्म!” ऋषि परशुराम राजमहल के मुख्य द्वार पर खड़े होकर गरज रहे थे। सत्यवती ने राजमहल की छौड़ी खिड़की से बाहर झाँका।

“अपने शस्त्र लेकर आओ!” वे हाथों में बाण हिलाते हुए चिल्लाएं। “हम लड़ेंगे!”

और वे सचमुच लड़े। घंटे बीतने लगे, दिन बीतते गए। दो महिलाएँ उन्हें लड़ते देख रही थीं—अम्बा और सत्यवती—सांस रोककर, हृदय में अग्नि लिए। उनका युद्ध पन्द्रह दिनों तक चला, घोर और भीषण। परशुराम जो भी चाल चलते, भीष्म उसका उत्तर देते। शिष्य गुरु को ललकार रहा था और गुरु भी पीछे नहीं हटने वाले थे...

वो जीतेगा, जीतेगा, जीतेगा... सत्यवती मन-ही-मन जपती रही, वो मेरे पास लौटकर आएगा।

उन्होंने अम्बा की तरफ घृणापूर्वक देखा, इतनी घृणा के साथ, जितनी उन्होंने अपने पिता से भी नहीं की। सत्यवती को गर्व था कि वो कभी नीच, या निकृष्ट नहीं थी, न लोगों के साथ, न भावनाओं में; पर मात्र अम्बा के साथ ऐसा नहीं था। यदि अम्बा भीष्म से घृणा करती थी, सत्यवती अम्बा से उससे कहीं अधिक...

सत्यवती घायल जानवर की तरह थी। वो पीड़ित थी; वो हिल नहीं सकती थी, न एकाग्र थी... उनका ध्यान केवल अपने गुरु से युद्ध करते भीष्म पर केंद्रित था। उसके साथ क्या हो रहा होगा? क्या वो विजयी होगा? क्या वो मर रहा था? वो खिड़की पर स्तब्ध होकर खड़ी रही, भयभीत होकर उस भीषण द्वंद्व को रोकने की ललक के साथ...

आज संग्राम का तेर्इसवां दिन था, दोनों में से कोई भी जीत नहीं रहा था, और दोनों अपने युद्ध में खोए हुए थे। भीष्म को अपने लहू की उष्णता का अनुभव हो रहा था, उनके घावों से रक्त बह रहा था और उनके शरीर से ऊर्जा निकलती जा रही थी। सत्यवती के शब्द निरन्तर उनके मस्तिष्क में गूँज रहे थे। वो नहीं मर सकते थे, वो नहीं मरेंगे। उन्होंने आँखें झापकाई; उनकी आँखों में आँसू नहीं, रक्त था जो उनके घावों से बह रहा था, और उनकी दृष्टि में अवरोध बन रहा था। उन्हें अपने विशालकाय गुरु स्पष्टता से दिख भी नहीं रहे थे। वो गुरु, जिन्हें मारना था, या जिनके हाथों उन्हें मरना था। जिसका निर्णय इसी क्षण करना था। उन्होंने परशुराम को अपना विख्यात परशु

उठाकर उन पर वार करने के लिए तैयार देखा। अब उनके पास और कोई विकल्प नहीं था।

भीष्म ने अपनी आँखें मूँद लीं, मृत्यु के सामने समर्पण की शान्ति उन्हें संकेत दे रही थी, उन्हें वशीभूत कर रही थी। गहरे लाल धुँध के बीच उन्हें अम्बा का विजयी, घृणा से भरा चेहरा दिखाई दिया। उन्होंने अपने गुरु की दुख से भरी आँखें भी दिखीं। उन्होंने मुड़कर राजमहल की तरफ देखा, वे जानते थे कि वो उन्हें देख रही होंगी। “तुम नायक बनकर मेरे पास लौटोगे!”

हरेक शब्द उन्हें तीर की तरह भेद रहा था और भीष्म उन भयंकर शब्दों को बड़बड़ाते हुए धीरे से उठे। ब्रह्मास्त्र—सम्पूर्ण सर्वनाश का शस्त्र।

परशुराम आश्वर्य-चकित होकर गरजे। भीष्म उस शस्त्र का उपयोग नहीं करेगा, उसे नहीं करना चाहिए! उन्होंने दृष्टि उठाई, तो देखा कि सभी देवी-देवता उनके युद्ध को रोकने के लिए उतर आए थे। अब ये लड़ाई नहीं चल सकती, क्योंकि इससे पूरे ब्रह्मांड का सर्वनाश हो सकता था। परशुराम भी उत्तर में अपना ब्रह्मास्त्र निकालने ही वाले थे कि अचानक रुक गए। उन्हें पता था कि वे पराजित हो गए थे।

“इस शस्त्र को उपयोग करने से तो अपने शिष्य से पराजित हो जाना अच्छा होगा,” उन्होंने भीष्म के आगे शीष झुकाते हुए अपनी पराजय स्वीकार की। भीष्म भी गुरु के सामने नमन करते हुए बोले, “मुझे आपको पराजित करने की कोई इच्छा नहीं है गुरुदेव। मैं तो आपकी आँखों में, खोई हुई मेरी प्रतिष्ठा दोबारा देखना चाहता हूँ।”

परशुराम आह भरते हुए बोले। “तुमने अपनी प्रतिष्ठा कभी खोई ही नहीं थी, पुत्र। मुझे तो इस लड़की के लिए साहसी बनना पड़ा और तुम्हारे जैसे न्यायसंगत मनुष्य से युद्ध करना पड़ा। मैं ही अपराधी हूँ, तुम नहीं।”

सत्यवती को लगा जैसे उनका हृदय फट जाएगा। उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि उनके हृदय में आनन्द अधिक था या राहत। उनकी आँखों से उन्मादपूर्ण आँसू बह निकले। तभी उन्हें एक तीखी चीख सुनाई दी।

उनके सामने विवरण, निराश और विक्षिप्त अम्बा खड़ी थी, उसकी चीख हताशा और घृणा से भरी थी।

“मैं भिखारिन नहीं हूँ, मुझे आपकी दया नहीं चाहिए!” वो भारी आवाज़ में चिल्लाई। उसका चेहरा अचानक सूख गया और उसकी आँखें धँस गईं। “संसार जो भी माने, या आपके गुरु कुछ भी कहें, आप मेरे अपराधी हैं, भीष्म! आपको इसकी कीमत चुकानी पड़ेगी; आज नहीं तो किसी और दिन ही सही!” अम्बा ने तिरस्कारपूर्वक घोषणा की।

अम्बा हार गई थी; वो जीवन और प्रेम दोनों में पराजित हो गई थी, घृणा और प्रतिशोध की लड़ाई में परास्त! वो निस्तब्ध सत्यवती के सामने निराश, आशाहीन और

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

ध्वस्त अम्बा खड़ी थी। भीष्म के शब्दों ने उसे पुनर्जीवित कर दिया। “यदि मेरी मृत्यु तुम्हें तुम्हारे प्रतिशोध से और मुझे मेरे अपराधबोध से मुक्त कर सकती है, तो कृपया मुझे मार डालो, यहाँ, अभी, इसी समय।” भीष्म अपने घुटनों पर बैठते हुए, अपनी कटार रक्तरंजित हथेली पर रखकर उसके सामने बढ़ाते हुए विनतीपूर्वक बोले। “मैं तुम्हारे लिए स्वेच्छापूर्वक मरने के लिए तैयार हूँ, अम्बा।”

अम्बा, कांपते हाथों के साथ, प्रचंड आँखों से भीष्म के चेहरे को देखती हुई एक कदम पीछे हट गई। सत्यवती की सांसें थम गईं, उनके होंठ प्रार्थना में हिलने लगे और हाथ उनके धड़कते हृदय पर थे। नहीं है भगवान, अम्बा भीष्म को नहीं मार सकती! ये सत्यवती के जीवन के सबसे लम्बे क्षण थे।

अम्बा होंठ सिकोड़ती हुई क्रोधपूर्वक बोली, “यदि आपको मारना इतना सरल होता, तो मैं अब तक ऐसा कर चुकी होती!” वो दांत भींचती हुई प्राणघाती मुद्रा में बोली, “पर मुझे मेरा जीवन वापस चाहिए, भीष्म, और यदि आपसे उसे लेने में कोई मेरी सहायता नहीं कर सकता तो मेरा मर जाना ही अच्छा है! मैं अपनी मृत्यु में भी प्रतिशोध पाऊँगी, भीष्म। मैं आपके लिए बार-बार वापस आऊँगी!”

Hindi

## मृत्यु

सत्यवती को कभी नहीं लगा था कि वो इतनी निर्मम हो सकती थीं, और उन्हें किसी की मृत्यु पर इतनी खुशी होगी। पर सत्यवती को स्वीकार करना पड़ा कि अम्बा की आत्महत्या का समाचार सुनकर उन्हें अत्यन्त आश्वासन और शान्ति का अनुभव हुआ। उनके विचार तुरन्त भीष्म की ओर मुड़े। उन पर अम्बा की मृत्यु का क्या असर हुआ होगा?

दो वर्ष पूर्व, राजमहल के द्वार के सामने घटी भयंकर घटना के बाद, अम्बा भीष्म से प्रतिशोध की चेष्टा में दोबारा निकल पड़ी। अन्तिम युक्ति के रूप में न्याय पाने के लिए उसने भगवान शिव की आराधना आरम्भ कर दी। शिवजी उसकी भक्ति से प्रभावित तो हुए, पर उसकी प्रार्थना अस्वीकार करते हुए बोले, “मैं प्रतिशोध में किसी की हत्या करने में तुम्हारी सहायता नहीं कर सकता। पर बदला चुकाने के लिए तुम्हारा पुनर्जन्म होगा।”

वो असहाय लड़की, अपने क्रोध और प्रतिशोध की अग्नि में उन्मत्त होकर मरने के लिए तैयार थी; और सोचे-समझे बिना उसने एक दिन स्वरचित चिता में कूदकर आत्मदाह कर लिया। लोकवाद और अफवाह फैलने में देर नहीं लगी और चारों ओर ये समाचार फैल गया कि अम्बा का पुनर्जन्म राजा द्रुपद के परिवार में होगा, क्योंकि उसके द्वारा फेंकी गई पुष्पमाला अभी भी पाँचाल के द्वार पर लटकी थी, उस मनुष्य की प्रतीक्षा में, जिसके हाथों में भीष्म की मृत्यु लिखी थी।

सत्यवती ने इन लोकवादों को मानने से इंकार कर दिया। ऐसी मिथ्याएँ राजपरिवारों में जन्म लेती ही रहती थीं। वैसे भी, द्रुपद उनका विरोध कभी नहीं करेगा। वो हस्तिनापुर का निष्ठ था और द्रोणाचार्य का मित्र भी।

अम्बिका और अम्बालिका अपनी बहन की मृत्यु के समाचार से अत्यन्त दुखी थीं, पर अम्बिका की सत्यवती के लिए बढ़ती शत्रुता चिन्ता का विषय थी। वो सत्यवती को अम्बा की मृत्यु के लिए उत्तरदायी मानती थी।

जब सत्यवती उनके कक्ष में प्रविष्ट हुई, दोनों रो रही थीं, और अम्बिका अपनी छोटी बहन को सांत्वना देने का प्रयास कर रही थी।

“यदि उस दिन अम्बा का विवाह शल्व के साथ हो जाता तो उसका जीवन बिलकुल अलग होता,” अम्बालिका धीमे स्वर में बोली।

“अम्बा मर गई और हमारे जैसे दुर्भाग्यपूर्ण जीवन से बच गई,” अम्बिका ने क्रोधपूर्वक उत्तर दिया।

सत्यवती हैरान होकर द्वार पर ही रुक गई।

“यदि तुम दोनों अपनी बहन के लिए शोक मना चुकी हो, तो जाकर अपने अस्वस्थ पति का ध्यान रखोगी?” सत्यवती कठोर स्वर में बोली। “जैसा रानियों से अपेक्षित है?”

अम्बालिका तुरन्त कक्ष से बाहर निकल गई और उसके पीछे उसकी बहन भी सत्यवती को कटुतापूर्वक घूरती हुई गई निकल गई। “हम जन्म से राजकुमारियाँ हैं, और रानी के संस्कारों के साथ पली-बढ़ीं हैं।” उसके कहने का अर्थ था—आपकी तरह नहीं।

सत्यवती पर उसकी बातों का तनिक भी असर नहीं हुआ। यदि अभिप्राय सम्भवतः ज्ञान और तथ्यों पर आधारित होते हैं, धारणाएँ प्रायः भावनाओं पर आधारित होती हैं। उन्हें तो केवल वीर्य की चिन्ता थी, उसके बिंदुते स्वास्थ्य की और इस भयंकर सत्य की, कि हस्तिनापुर का कोई उत्तराधिकारी नहीं था। समय के साथ वीर्य की खाँसी बढ़ती जा रही थी, और कुछ दिनों पहले खाँसी के साथ रक्त भी आया था। पिछले छह महीनों से वो शव्याग्रस्त था और उसकी स्थिति गम्भीर होती जा रही थी। सत्यवती पूर्वसूचनाओं को गम्भीरता से लेने लगी थीं और समझ गई थीं कि वीर्य की मृत्यु भी अपने पिता की तरह ही होने वाली थी।

भीष्म दिन-रात वीर्य के पास ही बैठे रहते। सत्यवती ने उन्हें इतना हताश और दुखी कभी नहीं देखा था। ऐसा लगता था जैसे वे यम को वीर्य को उनसे छीनने की चुनौती दे रहे हों। कई बार वो भीष्म को प्रार्थना करते देखतीं। अम्बा की मृत्यु का उन पर गहरा प्रभाव पड़ा था।

“क्या प्रार्थना करने से वीर्य बच जाएगा?” सत्यवती ने रूखेपन से, पर सहानुभूति के साथ पूछा। “सबसे सर्वश्रेष्ठ वैद्य वीर्य का उपचार कर रहे हैं, हम हर-सम्भव प्रयास कर रहे हैं।” उन्होंने धीरे से कहा।

भीष्म चौंककर मुड़े। तनाव और अनिद्रा के कारण उनकी आँखें थकी हुई थीं। “आप यहाँ मन्दिर में क्या कर रही हैं? आप तो भगवान पर विश्वास नहीं करतीं। आपको तो केवल अपने ऊपर विश्वास है।” वे व्यंग्यपूर्वक बोले।

उनके रूखेपन से सत्यवती को बहुत ठेस लगी।

“ईश्वर, नियति, भाग्य,” वो सिर हिलाती हुई बोलीं। “ये सब मात्र सांत्वना के लिए उपयोग किए जाने वाले शब्द हैं, मनुष्य की निर्बलता को दर्शाने वाले शब्द। नियति पर विजय पायी जा सकती है। हमें पहले अपने निर्णयों और अपने जीवन पर नियंत्रण रखना होगा। भाग्य के नाम पर अपनी गलतियों, परिस्थितियों, और अपने दुख के लिए

दूसरों को उत्तरदायी मानना पलायनवाद है। “सब कुछ हमारी जिम्मेदारी है।” सत्यवती ने जोर देते हुए कहा। “तुम्हें स्वयं अपना ईश्वर बनना होगा, अपने रास्ते स्वयं चुनने होंगे और अपनी नियति स्वयं बनानी होगी। यदि हम इनके हिसाब से चलने लगे तो हमारे विकल्पों का क्या होगा? हमारे कर्म ही हमारे जीवन को परिभाषित करते हैं।”

भीष्म ने दूर बहती झिलमिलाती नदी को निरुत्साही दृष्टि से देखा। वे अपनी माँ के बारे में सोच रहे हैं। ये इनके खेद प्रकट करने का तरीका है। क्या गंगा हमें देख रही है? हमारे पापों का हिसाब रख रही है? सत्यवती विचार कर रही थी। गंगा तो पवित्र और पावन मानी जाती है, उसके जल में डुबकी लगाने से मनुष्य के पाप धुल जाते हैं और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

भीष्म की आँखें अभी भी क्षितिज में दीप्तिमय नदी पर लगी हुई थीं। “आप अपने आत्मविश्वास में अहंकारी...” भीष्म धीरे से बोले।

“और तुम भाग्यवादी हो, भीष्म!”

“अपना ईश्वर स्वयं बनो?” भीष्म ने सत्यवती के शब्द दोहराए। “क्या आप अपने पुत्र को बचा सकती हैं?” उन्होंने पूछा।

“मैंने तो उसे तभी खो दिया था जब उसने मदिरा पीना और महिलाओं के साथ सम्बन्ध आरम्भ किए,” सत्यवती ने धीमी आवाज़ में, क्लांत सांसों के साथ कहा।

“इसमें किसका दोष है?” भीष्म ने क्रोधपूर्वक पूछा।

“तुम उसकी अधोगति के लिए मुझे फिर से दोष दे रहे हो?” वो विचारपूर्वक बोली।

भीष्म ने कोई उत्तर नहीं दिया, पर उनके मौन में तिरस्कार स्पष्ट था।

“क्या तुम मुझे मेरे शब्द वापस लेने के लिए विवश कर रहे हो?” सत्यवती ने शान्त स्वर में कहा। “जब मैं कहती हूँ कि हम अपनी नियति के लिए जिम्मेदार हैं, कि हर चीज़ का कोई कारण होता है, और हमेशा हम ही उन्हें बनाते हैं; कहीं न कहीं तुम अपने तरीके से मुझ पर आक्षेप कर रहे हो... कि मेरे निर्णय ही सभी घटनाओं के लिए उत्तरदायी हैं।”

“केवल आपके निर्णय नहीं...” वे आह भरते हुए बोले।

“हम दोनों वही कर रहे हैं जो सदैव करते आए हैं, राज्य की सुरक्षा। वीर्य जानता था कि हम राज्य की समस्याओं को सँभालने के योग्य हैं और हमारी प्रजा ने भी कभी हमारे काम पर असन्तोष प्रकट नहीं किया।” सत्यवती ने कहा। “सात वर्ष बीत गए हैं, वीर्य ने अब तक राजमुकुट को गम्भीरता से नहीं लिया है। वो अपव्यता के मार्ग पर चला गया और उसके असंयम का गम्भीर परिणाम हुआ है।”

“उसे राजगद्दी और पत्नियाँ समय से पहले मिल गई,” भीष्म ने कहा। “कहीं ये उत्तराधिकारी पाने की आपकी शीघ्रता तो नहीं थी?”

भीष्म उसकी अन्तरतम भय को व्यक्त कर रहे थे। सात अधीर वर्षों के पश्चात भी उनका पुत्र निस्सन्तान मरने वाला था, राजगद्दी बिना उत्तराधिकारी के छोड़कर जाने वाला था।

भीष्म की आवाज़ की स्पष्ट पीड़ा से उनके विचार भंग हो गए। “वीर्य मर रहा है! मैं उसे जाते हुए नहीं देख सकता!” वे सिर हिलाते हुए निराशापूर्वक बोले। “क्यों?” वे चिल्लाये। “पहले चित्रांगद, और अब ये...”

“ये अपने पिता के अस्वस्थ वंशाणु लेकर आया है,” वो भावशून्यता से बोलीं।

भीष्म उन्हें देखते रह गए। इस बार वो बिलकुल अलग थीं, वैसी नहीं जैसी चित्रांगद की मृत्यु के समय थीं। इस समय वो प्रेत-समान थीं, भावहीन और यंत्रवत, मानो उनकी नसों में बर्फ बह रहा हो।

राजमहल में अचानक एक भयंकर चीख गूँज उठी। दोनों को उसकी आवाज़ दीवारों को चीरती हुई सुनाई दी। सत्यवती का हृदय बैठ गया। वीर्य की मृत्यु हो गई थी। वो जानती थीं। वो विवर्ण भीष्म को मन्दिर की सीढ़ियों से नीचे शीघ्रता से उतरते देखती रहीं। वो वहीं स्थिर, भगवान की मूर्ति को एकटक देखती खड़ी रहीं। मूर्ति सोने की थी, रत्नजड़ित, और भव्य, पर कठोर और ठंडी। क्या यही भीष्म के ईश्वर हैं? उनका चेहरा मुरझा गया, आँखों में तैरते आँसू उन्हें चुभ रहे थे। वो पीड़ा की धुँध में मुड़ीं और मूर्ति की ओर दोषारोपण भरी दृष्टि से देखा। भीष्म की प्रार्थना सफल नहीं हुई। उनका दूसरा पुत्र भी, मर गया था।

वो विश्व को, और न ही भीष्म को अपनी मनोस्थिति प्रकट कर सकती थी। पर वो जानती थीं कि भीष्म भी उन्हीं की तरह टूट गया होगा, उनका हृदय भी अन्दर ही अन्दर रो रहा होगा। अन्त्येष्टि में आए अन्तिम अतिथियों का ध्यान रखते हुए उन्हें ऐसा लग रहा था जैसे सभी आमंत्रित राजा भूखे गिर्द्धों के समान थे जो सांस रोककर हस्तिनापुर के पतन की प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्हें शान्तनु की अन्त्येष्टि और उग्रायुध की याद आ गई।

अपनी स्वाभाविक सतर्कता के कारण उन्हें लगा कि कुछ ठीक नहीं है, और उनके गुप्तचर ने उनकी आशंका की पुष्टि कर दी; उनके कुछ अतिथि मिलकर षड्यंत्र रच रहे थे। उन्हें ये समाचार भीष्म को देना चाहिए। वो कुछ देर तक उसी कक्ष में बैठी शोक प्रकट करने आए अतिथियों के जुलूस को देखती रहीं। बिलखती अम्बालिका अपने पैरों पर खड़ी भी नहीं हो पा रही थी और अम्बिका तनावपूर्वक उसे सँभाले खड़ी थी। वीर्य

तो चला गया था, पर अपने पीछे खालीपन, राजनीतिक गतिरोध और बिना उत्तराधिकारी के रिक्त सिंहासन छोड़ गया था।

समय शोक करने का नहीं, परिस्थिति को सँभालने और उसे ठीक करने का था। सत्यवती वही कर रही थीं, जो एक रानी को करना चाहिए। वो अन्दर से टूट चुकी थीं, पर वो हस्तिनापुर को टुकड़ों में बँटने नहीं देने वाली थीं। ऐसा राज्य जिसका कोई उत्तराधिकारी नहीं, पतवारहीन नाव के समान था, नदी में भटकता हुआ...

उसे पुत्र, युवराज, राजा और राज्याधिकारी के बिना शासन को सँभालना था। भीष्म तो टूटे बाण जैसे हो गए थे, निराशा में दंडवत। सत्यवती ने भावशून्यता से अपनी बहुओं को देखा, वो अपने दुख में डूबी, उन्हें सांत्वना देने में अक्षम थीं। वो घंटे गिन रही थीं, इस आशा में कि क्या दोनों विधवाओं में से एक की कोख में हस्तिनापुर का उत्तराधिकारी पल रहा होगा, पर उन्हें आज सुबह ही पता चला कि अम्बिका भी, अपनी बहन की तरह ही रजस्वला हो गई थी। अब कोई आशा नहीं थी—कोई सन्तान नहीं होगी, कोई उत्तराधिकारी नहीं होगा।

क्या इस वंश की समाप्ति हो जाएगी, वीर्य की जलती चिता के साथ इसका अन्त हो जाएगा? सत्यवती ने हताश होकर अपनी आँखें मूँद लीं, उसकी आँखों से आँसू बहने का नाम नहीं ले रहे थे। वो अपने-आपको निराशा में डूबने नहीं देंगी; प्रार्थनाओं का भी कोई लाभ नहीं था। उनका ईश्वर तो कब का मर चुका था, अब उन्हें केवल स्वयं पर विश्वास रह गया था। नहीं! उन्होंने भीषण प्रण किया। मैं हार नहीं मानूँगी, मैं परास्त नहीं होऊँगी। मुझे ही कुछ-न-कुछ करना होगा।

उन्हें उनका उत्तर मिल गया था, और वो लम्बे क़दमों के साथ उनकी तरफ बढ़ रहा था—भीष्म। उन्हें भीष्म को एक वचन निभाने के लिए दूसरे को तोड़ने के लिए मनाना ही होगा।

“क्या आपने भोजन किया?” उनके सूखे और क्लांत चेहरे को देखते ही भीष्म ने पूछा। वे धीरे से उनकी तरफ आए और उनके दोनों हाथ पकड़ लिए। उनके कांपते हाथों को देखकर वे चकित रह गए।

उन्होंने ना मैं सिर हिलाया, और भीष्म का हाथ थामे धीरे से बोली, “तुमने ठीक ही कहा था—मुझे काशी की राजकुमारियों का अपहरण करने के लिए तुम पर जोर नहीं डालना चाहिए था, देव। सब कुछ व्यर्थ हो गया और परिस्थिति और भी बिगड़ गई। राजकुमारियाँ विधवा हो गईं, अम्बा की मृत्यु हो गई...” वो बोलती हुई थोड़ा रुकीं। “बहुत लोगों की मृत्यु हो गई। पहले शान्तनु, फिर चित्रांगद की हत्या हुई और अब वीर्य। मैंने एक-एक करके सबको खो दिया,” वो कांपती आवाज़ में बोलीं। “पर मैं अभी भी जीवित हूँ, है न? अपने निर्णय स्वयं लेती हुई... वे गलत ही क्यों न हों?” उन्होंने व्यंग्यपूर्वक कहा। “मैं कठोर से कठोर सच्चाई का सामना कर सकती हूँ, परन्तु मेरे युवा

पुत्रों की मृत्यु—पहले चित्रांगद, और अब वीर्य? इसका क्या अर्थ है?” वो धीमी आवाज़ में बोलीं। “उन्हें मेरे पापों की सजा मिली। ये तो मेरे लिए दंड है। जानते हो क्यों?” सत्यवती ने भीष्म की आँखों में सीधे देखते हुए कहा, “क्योंकि मैंने वो चुराया जो मेरा नहीं था,” वो हर शब्द पर बल देते हुए बोलीं। “मैंने तुम्हारा राजसिंहासन चुरा लिया, देव, पुत्र के रूप में तुम्हारे अधिकार छीन लिए, देव। इसीलिए मैंने मेरे दोनों पुत्र खो दिए, वो सब कुछ खो दिया जो मैंने तुमसे छीना।”

भीष्म अधीर हो गए। “आप व्यर्थ ही अपने-आपको दोष दे रही हैं।”

भीष्म जानते थे कि वो शोक में थी, अन्दर से टूट चुकी थीं, पर साहसपूर्वक सामान्य दिखना चाहती थीं। पिछले कुछ दिनों से भीष्म उन्हें अक्सर अपनी कुर्सी पर सिर झुकाए बैठा देखते। अपने कक्ष की एकांतता में भी वो रोती नहीं थीं। पर इस समय उनके कंधे कांप रहे थे; वो असहाय और परास्त थीं।

“दूसरों की समाधियों पर राजमहल नहीं बनाए जा सकते, कभी नहीं! मैंने वो सब तुमसे छीन लिया, जो इस समय मुझसे छिन गया है!” वो भीष्म की कलाई थामे बड़बड़ाई।

“नहीं!” भीष्म ने डाँटते हुए कहा। “आप शक्तिशाली और साहसी हैं—इस तरह अपने आपको आत्मदया में ढूबने न दें।”

“ये आत्मबोध है,” वो धीरे से बोलीं। “मुझे सत्य का सामना करना ही पड़ेगा, और तुम्हें भी, देव। ये राज्य हमेशा से तुम्हारा था; राजमुकुट भी। ये मेरा कभी था ही नहीं। ये तुम्हारा है, देव। तुम ईश्वर और नियति की बात करते हो, और दोनों तुमसे यही कह रहे हैं—तुम राजसिंहासन के लिए बने थे, मेरे पुत्र कदापि नहीं। इसीलिए उनकी मृत्यु हो गई। ये सिंहासन उनका था ही नहीं, हमेशा तुम्हारा था। इसे स्वीकार कर लो।”

“ये आप क्या कह रही हैं?” भीष्म क्रोधपूर्वक, हाथ झटकते हुए बोले। “अपना राजसिंहासन वापस ले लो, विवाह कर लो और सन्तान को जन्म दो!” वो झट से विनतीपूर्वक बोलीं।

भीष्म ने उन्हें विचित्र भाव से देखा। “ये सब क्या है? कोई चाल है क्या? क्या आप मुझे प्यादा समझती हैं, जिससे खेला जाए?” वे दांत भींचते हुए बोले। “मुझे ना तो राजसिंहासन चाहिए, और ना मैं विवाह करूँगा!”

“तुम्हारी उस दुर्भाग्यपूर्ण प्रतिज्ञा के कारण? तुमने वो प्रण किसके लिए लिया था, देव? तुम्हारे पिता के लिए? वो मर चुके हैं! मेरे पिता के कहने पर? वो भी मर चुके हैं! मेरे पुत्रों के लिए? वो दोनों भी मर चुके हैं, देव। सबकी मृत्यु हो गई है! तुम्हारी प्रतिज्ञा का उद्देश्य और प्रयोजन समाप्त हो गया है; मेरा भी कोई वारिस नहीं है जो तुम्हारी सन्तान से राजसिंहासन के लिए लड़ेंगे। बस तुम्हारी खोखली प्रतिज्ञा ही शेष रह गई है,

और वो रिक्त सिंहासन, जो तुम्हारा था, देव। कृपया उसे स्वीकार कर लो; उस अशुभ प्रतिज्ञा को वापस ले लो!”

“नहीं! मैं ऐसा नहीं कर सकता! मैं ऐसा कुछ नहीं करूँगा! अम्बा मर गई!” उनके श्वेत चेहरे पर उनकी आँखें चमक रहीं थीं। “वो उसके कारण मर गई, अन्तिम सांस तक अपने प्रतिशोध की अग्नि में जलकर, मुझे कोसती हुई...” उनकी आवाज़ टूट गई और उन्होंने अपना मुँह मोड़ लिया।

ये तो अम्बा के लिए शोक कर रहा है! सत्यवती के अन्दर भय की लहर-सी दौड़ गई, जैसे उनका जीवन हमेशा के लिए बदलने वाला था। क्या उनके परिवार, राजमहल और हस्तिनापुर पर अम्बा का श्राप सच हो रहा था? नहीं!

वो सीधी खड़ी हुई और भीष्म को सीधे देखते हुए कहा, “क्या तुम्हारी प्रतिज्ञा हस्तिनापुर के भविष्य से अधिक महत्वपूर्ण है? क्या वो तुम्हारा धर्म, तुम्हारा दायित्व नहीं?”

भीष्म के अन्दर क्रोध की ज्वाला धधक उठी। उन्हें सत्यवती की मनोस्थिति और स्वर में बदलाव नज़र आया। वो अब शोकसन्तप्त रानी और दो मृत राजकुमारों की माँ नहीं थीं।

वो वापस हस्तिनापुर की रानी थीं।

“मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं तोड़ूँगा!” वे आवेशपूर्वक, तनावग्रस्त आँखों के साथ चिल्लाए। “मैं विवाह नहीं करूँगा, आप जानती हैं।”

“अज्ञात लोगों से नहीं, देव, बल्कि अम्बा और अम्बालिका से!” वो बिना रुके बोलती गई। “उनके जेठ होते हुए, तुम्हें उन पर नियोग का अधिकार है। अपनी प्रतिज्ञा भंग करके अपने भाई की पत्नियों से विवाह कर लो!”

उनकी बात सुनकर भीष्म के चेहरे से रंग उड़ गया। “वो मेरी पुत्रियों जैसी हैं! वीर्य मेरे लिए पुत्र समान था!” वो भयाक्रांत और घृणा भरी आँखों के साथ चिल्लाए। “आप तुच्छ हैं! चित्रांगद की मृत्यु के बाद से ही आपकी मनोस्थिति ठीक नहीं है, अब वीर्य की मृत्यु ने तो आपको पागल कर दिया है!”

“नहीं, मैं पागल नहीं हूँ। मैं व्यावहारिक बात कर रही हूँ,” सत्यवती तीखेपन से बोलीं। “स्त्री और पुरुष दुख को अलग-अलग तरीके से भोगते और सँभालते हैं। स्त्री दुख के कारण बिखर सकती है। वो अपनी भावनाओं को पूरी तरह व्यक्त करती हैं। और फिर सामान्य जीवन में ढूब जाती हैं। और मैं भी वही कर रही हूँ। मैं वीर्य के शोक में बैठी नहीं रह सकती; मुझे तो हस्तिनापुर की अधिक चिन्ता है...” वो गहरी सांस लेती हुई बोलीं। “कुछ पुरुषों को बहुत गहरी भावनाओं को सँभालने में कठिनाई होती है, विशेषकर दुख को। उनका मस्तिष्क बिगड़ जाता है, क्योंकि उन्हें अपने हृदय की भावनाओं को व्यक्त करने का अवसर ही नहीं मिलता...”

भीष्म अचानक खड़े हुए और बाहर जाने के लिए मुड़े।

“अपनी भावनाओं से मत भागो, भीष्म। तुम अब तक निष्ठा और दायित्व के नाम पर यही करते आए हो!” वो बोलीं। “जब भी तुम्हें भावनाएँ हुईं—मेरे लिए क्रोध और धृणा, अपने माता-पिता के लिए क्षोभ और विश्वासघात, अम्बा के लिए तुम्हारा अपराधबोध...”

“चुप हो जाइए!” भीष्म मुट्ठी कसते हुए, दांत भींचते हुए चेतावनीपूर्वक चिल्लाए। वे अन्दर ही अन्दर किसी अनभिज्ञ भावना से भरे जा रहे थे।

वे अचानक उठकर खिड़की के पास जाकर, आँखें मूँदकर खड़े हो गए, मानो अपनी पीड़ा से दूर जाना चाहते हों। उनके सामने अभी भी अम्बा की छवि स्पष्ट दिख रही थी। उनकी ओर आशा, प्रेम, उत्साह और स्पष्ट धृणा के साथ देखती हुई। उसके काले, धने बाल उसके कंधे के पीछे से गिरते हुए उसके सुन्दर हृदयाकार चेहरे को और आकर्षक बना रहे थे। उसका चेहरा कभी विनयपूर्ण होता, तो कभी आहत, तो किसी क्षण क्रोध से भरा। कभी उनके कंधे पर सिर रखकर बिलख-बिलखकर रो रही होती। उसकी सिसकियाँ उनके हृदय को चीर रही थीं। वो मर चुकी थी, फिर भी उन्हें अभी भी उसकी हल्की हँसी, उन्हें कोसते समय उसकी आवाज़ की धृणा, बार-बार अस्वीकार किए जाने पर उसकी आँखों की पीड़ा, उसकी आँखों से टपकते आँसू अनुभव हो रहे थे।

उनका हृदय तेजी से धड़क रहा था। क्या मैं उसे कभी भूल पाऊँगा? क्या मुझे तिल-तिल मारती मेरी ग्लानि से मुक्त हो पाऊँगा? क्या ग्लानि थी या विशुद्ध प्रेम, जिसे मैं स्वयं को अनुभव नहीं करने देता?

भीष्म जानते थे कि यदि उन्होंने अम्बा से कभी भी प्रेम किया होता तो वो निश्चित ही उसे पाने की आशा नहीं रखते। अम्बा द्वारा हस्तिनापुर के राजमहल में बिताया गया एक-एक क्षण उनकी स्मृति में अंकित हो गया था। सवेरे-सवेरे शस्त्र अभ्यास करते हुए, उन्हें लगता की अम्बा अपने कक्ष से देख रही है और उनका रोम-रोम प्रत्याशा से खिल उठता। वो रोमांचित हृदय के साथ उसकी आवाज़ और उसकी आहट सुनने के लिए बेचैन हो जाते। अम्बा को अपनी निरुत्साही आँखों से प्रेम व्यक्त करते देखना, उसे अपने से दूर रखना, उससे संघर्ष करना, उसके साथ संघर्ष करना, उसका उनकी छाती से लगकर रोना, उसकी पायल की खन-खन सुनना, उसकी खिलखिलाती हँसी, उसके स्पर्श की अनुभूति, उन्हें देखते ही उसके चेहरे पर खिलने वाली खुशी—काश वो समझ पाती की वो उनके लिए क्या मायने रखती थी।

उनकी पीड़ा उतनी ही उत्कृष्ट हो गई, जब उन्हें ज्ञात हुआ की वो भी उनसे उतना ही प्रेम करती थी। इस आभास से ही भीष्म अपराध-बोध से भर गए। जब भी अम्बा उन्हें आशापूर्वक, विनतीपूर्वक, सूखे आँसुओं के साथ देखती, वे टूट जाते। वो भी उसके

साथ दुखी हो जाते। उन्हें बहुत अरसे पहले ही पता चल गया था कि, उनके जैसे ध्वस्त मनुष्य के लिए आशा और खुशी हमेशा के लिए वर्जित थी। इस समय भी, जब भी वो उनके स्वप्न में आती, उन्हें हाथ जोड़े, विनती करती, अग्नि में कूदते समय चिल्लाती दिखती और उसकी चीख उनके सुन्न मन में रात भर गूँजती रहती। उन्होंने हज़ार बार आशा की थी कि वे उसे बचा सकते। उसे याद करते हुए आज भी वे ऐसी कल्पना करते। सत्यवती के कठोर शब्दों ने उन्हें अपने जीवन के अंधकार और दाह की याद दिला दी।

“तुम्हें हर बार इन भावनाओं की अनुभूति हुई, पर तुमने उन्हें नकार दिया।” सत्यवती ने कहा था। “तुमने एक ही बार अपनी भावनाओं को व्यक्त किया; जब मेरे पुत्रों की मृत्यु हुई, तुम बिलख-बिलखकर बच्चे की तरह रोए थे। **तुम्हें** भी पीड़ा अनुभव करना और आँसू बहाना आता है, है ना? फिर भी तुम अपनी प्रतिज्ञा का उपयोग ढाल की तरह करते हो और अपने-आपको किसी भी आक्रमण से सुरक्षित कर लेते हो! पर अब मैं ऐसा नहीं होने दूँगी। उसे फ़ेंक दो!”

“आप पागल हो गई हैं!” भीष्म, गहरी सांसें लेते हुए, अपने बिखरे विचारों को समेटने की चेष्टा करते हुए चिल्लाए। “उत्तराधिकारी पाने की लालसा में आपने तीन राजकुमारियों का और अपने पुत्र का जीवन नष्ट कर दिया; अब और कितना गिर सकती हैं आप?”

सत्यवती को उनके शब्द चुभ रहे थे। “यदि तुम हस्तिनापुर के लिए उत्तराधिकारी पाने की मेरी दासवत प्रतिबद्धता में दोष निकाल सकते हो देव, तो तुम, जो बलिदान और मूल्यों के जीते-जागते चिह्न हो, तुमने हस्तिनापुर का अधिक नुकसान किया है! सब कुछ तुम्हारी प्रतिज्ञा के लिए तुम्हारी प्रतिबद्धता के कारण हुआ है! कब तक तुम इसके लिए लोगों को, राज्य को और अपने-आपको बर्बाद करते रहोगे?” वो चिल्लाई। “तुमने मेरे कारण प्रण किया था; और अब मैं तुमसे उसे वापस लेने की विनती कर रही हूँ।”

उनका चीखना-चिल्लाना व्यर्थ ही था। अटलता और हठ को भीष्म ने अपना ढाल बना लिया था। वो जिद्दी लड़की भी उन्हें नहीं तोड़ पायी थी। अम्बा, जो बुद्धिमान, सुन्दर, तीक्ष्ण, और बावली थी—चिल्ला-चिल्लाकर भीष्म से वही सब कुछ माँग-माँगकर हार गई जो इस समय सत्यवती माँग रहीं थीं। पर भीष्म अडिग रहे, वो भी छह वर्षों तक। जिसमें अम्बा असफल रही थी, उसमें सत्यवती की सफलता की आशा भी बहुत कम ही थी।

भीष्म हृदय में धधकती ज्वाला लिए सत्यवती के शब्दों द्वारा उत्पन्न विचारों के तीव्र प्रवाह को रोकने का प्रयत्न कर रहे थे। सत्यवती का सुझाव चौंकाने वाला था; विवेक और अन्तरात्मा के विरुद्ध। उन्हें सत्यवती से ऐसी आशा नहीं थी। चकित और

भावशून्य होकर भीष्म कुछ समझ नहीं पा रहे थे। उस क्षण में भीष्म इस दुविधा में थे कि उन्हें अपने सामने खड़ी स्त्री के लिए घृणा अधिक थी या श्रद्धा। अपने दुख की परवाह ना करते हुए, हस्तिनापुर को लेकर अपनी चिन्ता और प्रेम के लिए, उसे उत्तराधिकारी देने के लिए उन्होंने ये विवेकहीन सुझाव दिया था। किसी भी प्रभावपूर्ण रानी के लिए ऐसे समय में भावहीन होना आवश्यक होता है, जब प्रजा और राज्य असुरक्षित हो। उन्होंने अपना संयम और धैर्य आज तक कई बार दर्शाया था, परन्तु आज उन्होंने सारी सीमाएँ लांघ दी थीं। यदि वो हार मानने वाली नहीं थी, तो भीष्म भी पीछे हटने वाले नहीं थे। उन्होंने आँखें मूँदकर मन में दृढ़ संकल्प करते हुए विचार किया कि उनके एक निर्णय के कारण वे कितना कुछ खो बैठे थे।

“मैंने प्रतिज्ञा, आपके लिए नहीं, पिताजी के लिए की थी। **और** वचन अपने लिए होते हैं, औरों के लिए नहीं।” वे थके स्वर में बोले।

“तुम्हारे पास अपनी खोखली प्रतिज्ञा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं बचा है! सब चले गए हैं!” सत्यवती क्रोधित होते हुए बोलीं। “तुम्हारी सत्यनिष्ठा और नैतिकता इस काल के मापदंड हैं। फिर भी तुम संकट और त्रासदी के समय मौन खड़े हो। तुम न्यायपूर्ण होने पर गर्व करते हो, पर चुप रहना न्यायपूर्ण नहीं होता, देव, ये टाल-मटोल करना है; तुम सत्य से मुँह मोड़ रहे हो। तुमने **आज** तक ऐसा कोई निर्णय नहीं लिया जो तुम्हारी उच्च मानकों को बनाए रखने में बाधा बनें। तुमने वो मनहूस प्रतिज्ञा अपने पिता के लिए अपराधबोध को शान्त करने के लिए ली थी और आज उसे ढाल बनाकर अपनी रक्षा कर रहे हो। उस प्रतिज्ञा के लिए तुम्हारी अविवेकी प्रतिबद्धता तुम्हारा लक्ष्य बनकर रह गई है; और तुम्हें खाए जा रही है!”

उन पर उछाला गया हरेक शब्द सत्य था और उन्हें भेद रहा था। भीष्म की भूरी आँखों में क्रोध की ज्वाला धीरे-धीरे भड़कने लगी। उन्होंने धीमे स्वर में कठोरता से कहा, “**और** वो मुझसे किसने करवाया? आपने; आपके लिए मेरे पिता के विक्षिप्त प्रेम ने, और पिताजी के लिए मेरे प्रेम ने। आपने उस समय मेरा उपयोग किया और अब आप मुझे आपको अमूल्य उत्तराधिकारी देने के लिए कह रही हैं! मैं आपका शस्त्र नहीं हूँ जिसे युद्ध में प्रयोग किया जाए और शान्ति के समय फ़ैंक दिया जाए!”

वो हताश होकर हाथ उठाती हुई बोलीं, “मुझे दोष मत दो। तुम्हारा एक स्वाभाविक, भावनात्मक वचन, जो पिता के लिए तुम्हारे प्रेम के कारण निकला था, हस्तिनापुर के सर्वनाश का निमित्त बनेगा। क्या अधिक महत्वपूर्ण है—आत्मारोपित नीति या राज्य का भविष्य?” वो चिल्लाई।

भीष्म सत्यवती को स्पष्ट अवहेलना के साथ देखते हुए बोले, “मैं आपसे पूछता हूँ, क्या मेरा प्रण मेरे लिए किसी के जीवन से अधिक मूल्यवान था? जो मैंने अम्बा के साथ किया, क्या मैं उसे कभी भूल सकता हूँ?” उनकी आवाज़ असामान्य रूप से भावहीन

थी, पर साथ-साथ कूर भी। वो सत्यवती को घृणापूर्वक देखते हुए बोले, “मैं कैसे भूल जाऊँ कि उसी प्रतिज्ञा के लिए मैं अपने गुरु से लड़ पड़ा? आप कितनी सरलता से मुझसे वो माँगती हैं, जो मैं आपको नहीं दे सकता, इतना सब कुछ खोने के बाद...” वे कठोर आवाज़ में बोले। “आप ये अपेक्षा करती हैं कि मैं केवल इसलिए प्रतिज्ञा तोड़ दूँ क्योंकि आपके लिए उचित है? आप मुझसे नहीं, उस रिक्त सिंहासन से विनती कर रही हैं!”

भीष्म अत्यन्त निष्ठुर स्वर में बोले, “आप मुझसे इतना कुछ क्यों माँगती हैं— अपने अपराधबोध को कम करने के लिए, या अपनी महत्वाकांक्षा को बढ़ावा देने के लिए?”

सत्यवती ने भीष्म को कभी इतना कूर नहीं देखा था, पर आज वो उन्हें अपने भीतर के राक्षसों का सामना करने पर विवश कर रही थीं, उसी तरह जैसे वो अपने आपसे जूझ रही थीं। ये उन दोनों के लिए निर्णयात्मक दिन था, दंड और न्याय का क्षण।

“मेरी महत्वाकांक्षा मर चुकी है, देव; मेरी आशाएँ चूर-चूर हो गई हैं! हमारा परिवार विलोपन के कगार पर खड़ा है, और हमारा राज्य खतरे में है,” वो निराशापूर्वक बोलीं। “हम उसे नहीं त्याग सकते। तुम्हें नहीं लगता की हम बड़ी मुसीबत में हैं?” उन्होंने विनतीपूर्वक पूछा।

भीष्म की भावशून्य आवाज़ उन्हें चुभ रही थी। “आपने मुझसे क्या-क्या नहीं करवाया! मैंने तो घोर पाप किए हैं!” वे आक्रोशपूर्वक बोले। “अपने अल्पायु, अस्वस्थ, मद्यसारी भाई के लिए मैंने तीन राजकुमारियों को उनकी इच्छा के विपरीत उनके स्वयंवर से अपहृत किया। ब्रह्मचारी होते हुए मुझे स्वयंवर भवन में प्रवेश ही नहीं करना चाहिए था! यदि उनके पास विकल्प होता तो अम्बिका और अम्बालिका को श्रेष्ठ वर मिल सकते थे। उन्हें यहाँ लाकर मैंने उनसे वो अवसर भी छीन लिया। मैंने अम्बा की आशाएँ भंग कर दीं, उसका हृदय तोड़ दिया और उसे मृत्यु की ओर धकेल दिया...” वे पीड़ित आँखों के साथ, गहरी सांस लेते हुए बोले, “मैंने आपके लिए सारे क्षत्रिय धर्म तोड़ दिए, वो निरर्थक अपहरण करके हमारे परिवार को कलंकित कर दिया। और आपका दुस्साहस, कि आप मुझसे एक और जघन्य अपराध करवाना चाहती हैं— अपने भाई की विधवाओं से विवाह करने का!” वे आवेशपूर्वक बोले। “अपनी महत्वाकांक्षा के लिए...”

“नहीं!” सत्यवती का चेहरा विवर्ण हो गया। “मेरे लिए नहीं, देव; हस्तिनापुर के लिए!”

“अर्थात्, राजसिंहासन के लिए, ओह मेरी माते, जिसके लिए आपने अपनी नीतियों, अपनी आत्मा और अपने पुत्रों का बलिदान कर दिया!”

“तो मैं क्या करूँ? तुम्हारी तरह अपने दायित्व से मुँह मोड़ लूँ? तुम्हें लगता है मुझे ये सब करना अच्छा लगता है?”

भीष्म गहरी सांस छोड़ते हुए बोले, “मैं तो हर बार केवल चुपचाप खड़ा देखता रहा और समर्पण कर दिया क्योंकि मेरी प्रतिज्ञा मुझे राजसिंहासन की आज्ञा का पालन करने, राजमुकुट की आज्ञा का पालन करने और आपकी बात मानने के लिए बाध्य करती है!”

“फिर हस्तिनापुर के लिए करो ना!” वो विनती करती हुई बोलीं। हस्तिनापुर को इस समय तुम्हारी आवश्यकता है।

भीष्म ने ना में सिर हिलाया।

“तुमने वो प्रतिज्ञा की थी, देव। तुमने वो शब्द कहे और तुम्हीं उन्हें वापस ले सकते हो, क्योंकि अब कोई नहीं, और कुछ नहीं बचा है।” वो अचानक परास्त होकर, उनके हठ से चकित और हताश होकर विनतीपूर्वक बोलीं। “क्या इसके बजाय तुम्हारे लिए मुझे दोषी ठहराना अधिक सरल होगा? उससे तुम्हें और भी उत्कृष्टता का अनुभव होगा?” वो उन्हें कक्ष में अधीर होकर चहलकदमी करते देखती हुई बोलीं।

“आपने मुझे दानव बना दिया है; जिससे सभी डरते और घृणा करते हैं, जिससे मुझे स्वयं सबसे अधिक घृणा है।”

“नहीं, वो प्रतिज्ञा ही तुम्हारी इस परिस्थिति का कारण है! इसीलिए मैं तुमसे निवेदन करती हूँ कि उसे त्याग दो। वो घातक है, तुम्हें, हमें और हस्तिनापुर का विनाश कर देगी।”

भीष्म चलकर उनके इतने पास आए कि सत्यवती को चेहरा उठाकर उनकी ओर देखना पड़ा। “मुझे हस्तिनापुर का नाम लेकर मत बहकाइए! अब अन्तिम बार सुन लीजिए और समझ लीजिए, मैं अब कभी ना ही इस बात को दोहराऊँगा और ना ही आप मुझसे पूछेंगी।” भीष्म दांत भीचते हुए बोले। “चाहे गंगा सूख जाए, सूर्योदय बन्द हो जाए, मेघ बरसना बन्द कर दें, मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं तोड़ूँगा। मैंने इसके लिए अपना सर्वस्व खो दिया है, और अब मेरे पास इसके अतिरिक्त कुछ भी शेष नहीं है। यही मेरा सत्य, मेरी वास्तविकता है, और मैं इसका त्याग कदापि नहीं करूँगा।” कहते हुए वे अचानक मुड़े और उनके कक्ष से तीव्रता से बाहर चले गए।

सत्यवती स्तब्ध खड़ी रह गई। भीष्म के कठोर शब्द अभी भी उनकी कानों में गूँज रहे थे। उनका आवेग आकस्मिक और अपूर्व था। उनके पीछे छोड़ी गई शान्ति व्याकुल और व्यग्र थी। अब वो क्या करेंगी?

## विधवाएँ

“ अब हम क्या करें? ”

सत्यवती ने ये प्रश्न भीष्म से अगले दिन दोहराया—वो प्रश्न जिसका उनके पास कोई उत्तर नहीं था, और जिसका उत्तर भीष्म देना नहीं चाहते थे। कक्ष से भागकर, भीष्म परिस्थिति से भाग नहीं सकते थे। अगले दिन, वे पूरे दिन सत्यवती से नहीं मिले, उनके आदेशों और विनतियों को अनसुना करते रहे। लगभग शाम के समय सत्यवती ने उन्हें बुला भेजा और आश्वर्यपूर्वक वे उसी कक्ष में पधारे जहाँ उनके बीच विवाद हुआ था।

पिछले दिन की तुलना में सत्यवती की मनोस्थिति आज बदली-सी थी। उनके मुरझाए, क्लांत चेहरे पर आँसू नहीं थे और उनके भाव भी अलग थे। क्या भीष्म की दृष्टि में बदलाव आ गया था या उनका सम्बन्ध अब बदल गया था? या कदाचित असीम पीड़ा के चिह्न उनके चेहरे पर सदा के लिए पड़ गए थे; वो अभी भी पहले जितनी ही सुरुचिपूर्ण वस्त्र पहने हुई थीं, पर भीष्म को थोड़ी सिकुड़ी-सी लग रही थीं। वो घबराई और उतावली दिख रही थीं।

सत्यवती ने भीष्म को उन्हें ध्यानपूर्वक देखते हुए देखा। भीष्म भी थोड़े थके लग रहे थे; एक दूसरे के लिए चिन्ता के बावजूद सत्यवती को अपने कक्ष का वातावरण शत्रुतापूर्ण और प्रतिकूल लग रहा था।

“देव, हम क्या करें?” वो भावहीन स्वर में बोलीं। “वीर्य के बाद, हस्तिनापुर का राजा कौन होगा?”

“हम किसी योग्य उत्तराधिकारी को दत्तक ले सकते हैं, ऐसा पहले भी हुआ है।” उन्होंने भी स्थिर आवाज़ में कहा।

“हाँ, मैं जानती हूँ, पर किसे?”

“बहलिक के पुत्र सोमदत्त को, जो श्रेष्ठ राजा सिद्ध होगा।” भीष्म ने कहा।

सत्यवती त्योरी चढ़ाती हुई बोलीं, “वो एक अत्यन्त कुशल सेनाध्यक्ष है, पर मथुरा की राजकुमारी देवकी को लेकर राजकुमार सिनी के साथ हुई उसकी भिड़ंत से राजनीतिक समीकरण बहुत बदल गए हैं। जैसा तुम्हें जात होगा, सिनी अपने सम्बन्धी, सुरसेन के राजा वसुदेव की ओर से लड़ रहा था और वो देवकी को उसके स्वयंवर से

उठा ले गया। देवकी को भी वसुदेव से प्रेम है; परन्तु सोमदत्त जो उसके विवाहार्थियों में से एक था, उसने सिनी को चुनौती दी। अन्ततः सोमदत्त पराजित हो गया।” ये कहानी अम्बा के स्वयंवर जैसी ही थी।

स्त्रियाँ राजनीतिक जयचिह्न होती थीं, ये उन्होंने सिर हिलाते हुए स्वीकार किया। सत्यवती दृढ़तापूर्वक आगे बोलती गई। “सुना है कि सिनी सोमदत्त को बालों से खींचते हुए लाया और उसे पैरों तले रौंद दिया। उसके गले पर तलवार रखकर उसका सार्वजनिक रूप से अपमान किया। स्वाभाविक रूप से सोमदत्त प्रतिशोध चाहता है और इन दो राजपरिवारों के बीच की शत्रुता ने नए राजनीतिक गतिरोध पैदा कर दिए हैं। यदि हम उसे राजा घोषित करेंगे तो हमारे और अनेक शत्रु बन जाएँगे और उसके लिए निरर्थक युद्ध लड़ते रहेंगे।”

“वो हमारे निकटतम सम्बन्धी हैं और प्रकल्पित उत्तराधिकारी भी। पर जैसे ताऊजी ने मेरे पिताजी के लिए अपना अधिकार त्याग दिया, वो निश्चित ही सोमदत्त को हस्तिनापुर की राजगद्दी स्वीकार नहीं करने देंगे,” भीष्म बेपरवाही के साथ कंधे उचकाते हुए बोले। “हमें किसी और को चुनना होगा।”

“ऐसा कोई है भी नहीं,” वो हताश होकर बोलीं। “वर्तमान परिस्थिति बहुत ही संवेदनशील और अनिश्चित है। सबकी दृष्टि हस्तिनापुर पर है; हर राजा अधिग्रहण करने की ताक में है। पर, जब तक तुम हो, कोई भी ऐसी अभिलाषा रखने का साहस नहीं करेगा। देव, तुम ही हमारी एकमात्र आशा हो...” उनकी आवाज़ विनती में बदल गई। “कृपया, राज्य सँभाल लो, देव।”

“मैं तो सँभाल ही रहा हूँ ना?” उन्होंने कहा। “राज्याधिकारी के रूप में मैं ही तो देखरेख कर रहा हूँ। हम दोनों कर रहे हैं। और अन्तिम सांस तक करते रहेंगे...” भीष्म ने दृढ़तापूर्वक कहा।

“किन्तु, हमारे बाद?” उन्होंने शीघ्रता से पूछा और भीष्म के उत्तर की सांस रोककर प्रतीक्षा करती रहीं।

उनके मौन को देखकर, उन्होंने अपनी आवाज़ कठोर करते हुए घोषणा की, “यदि तुममें अपनी प्रतिज्ञा तोड़ने का साहस नहीं है, तो मेरे पास भी नियोग के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं है, जिसके लिए मैं वीर्य की विधवाओं के लिए किसी और को ढूँढ़ निकालूँगी।”

“नियोग!” भीष्म खिजाते हुए बोले। “ये ऐसा अधिकार है जो पति का पत्नी पर होता है, जहाँ वो अपनी पत्नी से दूसरे पुरुष से पुत्र प्राप्ति की विनती करता है। आप ऐसा कुछ नहीं कर सकतीं; आप उनकी सास हैं।” वे गम्भीरता से बोले।

सत्यवती मुँह ऐंठती हुई बोलीं, “मैं ऐसा कर सकती हूँ; मैं रानी हूँ। राजमुकुट के लिए उन्हें मेरी आज्ञा माननी पड़ेगी। वो दोनों भी रानियाँ हैं, और राजसिंहासन के लिए

उत्तराधिकारी को जन्म देना उनका राजकीय कर्तव्य है।”

भीष्म लम्बी सांस छोड़ते हुए, और मुट्ठियाँ कसते हुए बोले, “अब उन दोनों बेचारी लड़कियों पर और क्या-क्या थोपने वाली हैं?” वे फुफकारते हुए बोले। “आप निष्ठुर और निर्मम हैं : बिना दया, संवेदना और अन्तरात्मा के!”

सत्यवती सिर उठाकर भीष्म की ओर देखती हुई बोली, “मुझ पर दोष लगाना सरल है, है ना, भीष्म? तुमने उत्तरदायित्व अपने ऊपर क्यों नहीं लिया?” उन्होंने चुनौतीपूर्वक कहा। “इसीलिए मैंने राजसिंहासन अपनाकर उनसे विवाह करने के लिए कहा। तुम्हीं उनकी सहायता कर सकते हो,” सत्यवती ने उपहास करते हुए कहा।

भीष्म उनकी बातें सुनकर अधीर हो गए। एक यही थीं जो उनके सभी रहस्यपूर्ण और अन्तर्रतम विचारों तक पहुँच सकती थीं।

“मैं तो स्वयं की सहायता करने में असमर्थ हूँ,” वे कड़वाहट के साथ बोले। “काश मैं उनकी सहायता कर सकता! आपने हमेशा की तरह मुझे तो फँसा लिया है, पर उन्हें छोड़ दीजिए। मैं आपसे विनती करता हूँ, इन्हें नियोग के लिए विवश न करें। हमने पहले उन्हें उनके स्वयंवर से अपहृत किया; अब आप उत्तराधिकारी के लिए उन्हें किसी अज्ञात व्यक्ति के साथ... ये कूर है!” वे क्रोधित होकर चिल्लाए।

“ये उनका कर्तव्य है!” वे भड़कती हुई बोलीं। “रानियाँ होते हुए ये उनका नैतिक और पारिवारिक दायित्व है। नियोग तो हमेशा से आमोद के लिए नहीं, बल्कि सन्तान-प्राप्ति के लिए था।”

भीष्म अपने बालों में उँगलियाँ फेरते हुए सत्यवती को क्रोध और पराभूत भाव के साथ देखते हुए बोले, “आप मुझे और क्या-क्या देखने पर विवश करेंगी?”

आहत होकर वो खिड़की से बाहर देखने लगीं; भीष्म के शब्दों ने उन्हें भेद दिया। भीष्म की बातें सुनकर उन्हें शान्तनु के आरोपों की याद आ गई जो उन्होंने अपने अन्तिम क्षणों में उन पर लगाए थे। पिता और पुत्र, दोनों ने उनके निर्णयों के लिए सत्यवती को उत्तरदायी ठहराया था और इस बात को भुला दिया था कि शुरुआत उन्होंने ही की थी।

किसी कारणवश, उनके भूत की सारी छवियाँ और धुँधली स्मृतियाँ मिल-जुलकर एक ही स्पष्ट और अतितीव्र विचार में परिवर्तित हो गई थी—कि भीष्म और उनके लिए सब कुछ अपरिवर्तनीय तरह से समाप्त हो चुका था। उन्होंने अपनी सीमा लांघ दी थी। बाहर, ठंडी और स्याही आकाश में कोई भविष्यवाणी छिपी थी। उन्हें ऐसा लगने लगा जैसे वो दोनों बहुत ही लम्बे समय से साथ थे; और सदियों से कष्ट भोग रहे थे, सदियों से भीष्म उनके साथ थे; किन्तु अब नहीं।

“मैंने ये प्रथा शुरू नहीं की, देव,” सत्यवती शान्तिपूर्वक बोली। “ये तो मान्यताप्राप्त प्रथा है। क्या ये प्रचलित नहीं, और राजपरिवारों में गुप्त रूप से इसका

चलन नहीं है?”

“नियोग का वास्तविक कारण, राजपरिवारों और राजसी व्यवस्था के लिए आपकी स्वाभाविक धृणा नहीं, राजनीतिक भी है।” भीष्म ने कहा। “जब ऋषि परशुराम ने अपना घातक प्रतिशोध लिया तो उन्होंने अपने पिता के हत्यारे, हैहय के राजा कार्तविर्याजुन को ही नहीं, बल्कि समस्त राजसी योद्धाओं और राजाओं को मार डाला। कहा जाता है कि उन्होंने उनकी इक्कीस पीढ़ियों का सर्वनाश कर दिया। उस समय, अनेक राजवंशों में राजा और उत्तराधिकारी नहीं रहे और विधवा रानियाँ विद्वानों और ज्ञानियों के पास गईं। तब से रानियों की ऋषि-मुनियों द्वारा सन्तान प्राप्ति करने की परम्परा बन गई, और अब तक चली आ रही है... विशेषकर आपके जैसी रानियों के माध्यम से, जो अपने वंश को बनाए रखने के लिए...” भीष्म ने आगे कहा।

सत्यवती हल्के से मुस्कुराई, और भीष्म के उपहास से निर्भीक रहीं। “मैं इसे अलग दृष्टिकोण से देखती हूँ। मुझे तो लगता है कि उन राजसी स्त्रियों ने परशुराम के प्रयोजन को बहुत ही सुन्दर तरीके से पराजित कर दिया। ऋषियों और ब्राह्मणों के पास जाकर उन्होंने उनके सन्तानों को जन्म दिया, नए वंश का आरम्भ किया। नियोग के माध्यम से मैं भी अपनी बहुओं को वही शक्ति दे रही हूँ। इसमें पुरुषों का कोई महत्व नहीं, देव, स्त्रियाँ ही सन्तान को जन्म देकर, अपने परिवार के वंश, कुल, जाति को आगे बढ़ाकर, एक नया जीवन और नई आशा प्रदान करती हैं। यद्यपि पुरुष पितृसत्ता के नाम पर इसका श्रेय ले लेते हैं।”

भीष्म सत्यवती को ध्यानपूर्वक देखते हुए बोले, “आप भी राजकुमार पाने की लालसा में ये अविवेकी योजना बना रही हैं।”

“हाँ, क्योंकि रानी सदैव राजा की पत्नी होती है; शासक सदैव राजा होता है,” वो दुखपूर्वक बोलीं। “जिस तरह राजकुमार जन्म से ही उत्तराधिकारी होता है, राजकुमारी का जन्म कभी रानी बनने के लिए नहीं होता। मुझे उत्तराधिकारी चाहिए, देव, लड़का हो या लड़की। यदि नियत हो तो हस्तिनापुर पर कोई स्त्री शासन करेगी। पर, परिवार का वारिस तो होना ही चाहिए।”

“बहुत सारे भले राजा और मित्र-देश हैं...” भीष्म ने कहना आरम्भ किया।

“नहीं!” सत्यवती आवेगपूर्वक बोलीं। “यदि ऐसे किसी मनुष्य का चयन किया गया तो वो बलपूर्वक कुरु राजदरबार में स्थान प्राप्त कर सकते हैं, और हमारा राजनीतिक सन्तुलन बिगड़ सकता है। वो अपने-आपको शक्तिशाली बनाकर कुरुओं को दुर्बल बना सकते हैं।”

भीष्म हताश होकर आह भरते हुए बोले, “हालांकि मैं स्वयं इसका अनुमोदन नहीं करता, मेरे पास आपके लिए एक सुझाव है, और आपको बताना मेरा कर्तव्य भी।” भीष्म उठते हुए, गम्भीर स्वर में बोले। “मैं कृपाचार्य को सूचित करता हूँ और उनसे

पूछता हूँ कि क्या वे इस महान कार्य के लिए किसी ऋषि को जानते हैं। क्या आपकी दृष्टि में कोई योग्य ऋषि है?”

सत्यवती को निर्णय लेने में एक क्षण भी नहीं लगा—उनके मन में एक ही नाम था।

बिना किसी विलम्ब के सत्यवती ने भीष्म को ऋषि पराशर और उनके पुत्र के विषय में बताया।

“कृष्ण द्वैपायन आपके पुत्र हैं?” भीष्म ने अपने बलशाली हाथों को मेज पर रखकर, आगे झुकते हुए सत्यवती को घूरते हुए पूछा। वो आश्वर्यचकित थे कि यद्यपि सत्यवती ने विवाह के पूर्व इस अज्ञात पुत्र का उल्लेख किया था, वो पुत्र यही विख्यात ऋषि थे; ये सुनकर भीष्म स्तब्ध रह गए थे।

पहली बार, भीष्म अपने अविश्वास को नहीं छिपा पाए। वे सामने खड़ी स्त्री को देखते रह गए; वो सचमुच एक पहेली थी। वो अपनी अन्तरतम रहस्य स्पष्ट कर रही थी, अपने जन्म से भी गूढ़ रहस्य? उन्होंने अभी-अभी जो अपने विषय में बताया, उनके लिए बहुत ही कठिन रहा होगा—वैसे ही जैसे उन्होंने सबके सामने अम्बा को अपने बारे में बहुत कुछ बताया था, आत्मविश्वास और गरिमा के साथ, जो केवल वही कर सकतीं थी। सत्यवती शान्त बैठी रहीं, थोड़ी अधीर, किन्तु खेदहीन और निस्संकोच। उनके लिए ये सारी बातें वास्तविकता थी।

भीष्म उन्हें समझते थे और उनका विश्वास भी करते थे—उनके श्वेत पड़ते चेहरे और गोद पर रखे ढीले हाथों को देखकर ही वे समझ गए थे। एक ही क्षण में पूरा सत्य उनके सामने क्रूर स्पष्टता के साथ उभर आया—उनका त्यक्त पुत्र; शक्ति के बल पर प्रतिष्ठा की खोज; सब कुछ खो जाने का भय; उनका दृढ़ संकल्प और आत्मविश्वास, जो मूलतः आत्म-रक्षा से पनपता था। उत्तराधिकारी के लिए उनकी तत्परता महत्वाकांक्षा के लिए नहीं थी; वो उससे भी परे जा चुकीं थीं।

“तुम क्या कहना चाहते हो?” सत्यवती ने उनके विचार भंग करते हुए दृढ़ स्वर में कहा। “अब वो वेद व्यास के नाम से जाने जाते हैं, जो चार वेदों के संकलनकर्ता हैं, और जिन्होंने चार कुमारों, नारद मुनि और स्वयं भगवान ब्रह्मा से शिक्षा प्राप्त की है।”

भीष्म को उनकी आवाज में किंचित गर्व की झलक दिखी। वो उनका इकलौता जीवित पुत्र था, और सत्यवती को उसकी माता होने पर बहुत गर्व था।

भीष्म ने सिर झुकाते हुए आदरपूर्वक कहा, “हाँ, वे महान विद्वान हैं। चारों वेदों का संकलन अपने-आप में अद्भुत कार्य है, और इसके कारण सामान्य लोगों को वेदों का दिव्य ज्ञान पाना सरल हो गया है।”

“व्यास का अर्थ होता है, विभेद करना, खंडित करना, या वर्णन करना,” सत्यवती अपने होंठों पर उँगली फेरती हुई विचारपूर्वक बोलीं। “उसने मेरे द्वारा रखा गया नाम

त्याग दिया है।”

“जिस तरह आपने उन्हें त्याग दिया,” भीष्म ने स्मरण कराते हुए कहा। “आपको उनसे कोई अपेक्षा नहीं करनी चाहिए; आपने उन्हें जन्म के अतिरिक्त कुछ भी नहीं दिया।”

कुछ क्षणों तक दोनों शान्त रहे। सत्यवती ने अभिमानी भाव के साथ भीष्म को देखा और स्पष्टता से बोलीं, “तुम मुझसे क्रोधित हो न? इसलिए कि तुम्हारे पिता मेरे सबसे पहले प्रेमी नहीं थे?”

वो भीष्म के उत्तर के लिए अधीरता से प्रतीक्षा करती रहीं, मानो उनकी असम्मति कोई मायने रखती हो।

“आपके किसी भी कार्य से मैं अचम्भित नहीं होता,” वे लापरवाही से बोले।

“तुम कहना चाहते हो कि तुम्हें मेरे अतीत से धृणा है, तो तुम सही हो।” सत्यवती अत्यन्त द्रवित होकर बोलीं। “तुम पुरुषों के ऐसे विशेष वर्ग का हिस्सा हो जिनका आंकलन साधारण मापदंडों से किया जाए। तुम्हारी नैतिक अपेक्षाएँ अत्यन्त जटिल हैं और मैं जानती हूँ कि तुम अनेक चीज़ों को सरलता से क्षमा नहीं कर सकते,” वे व्यंग्यपूर्वक बोलीं। “मैं तुम्हें अच्छी तरह समझती हूँ, और यदि मैं उसके विपरीत बात कहती हूँ तो इसका अर्थ ये नहीं कि मैं तुमसे भिन्न सोच रखती हूँ। हम दोनों एक ही भाषा में बोलते हैं, जो हस्तिनापुर के लिए हमारी निष्ठा है,” वो गर्वपूर्वक बोलीं। “मुझे मेरे अतीत से, पराशर या मेरे पुत्र से कोई उपेक्षा नहीं है। पर, कभी कोई विशेष प्रेम भी नहीं था। ये एक विचित्र अनुभूति है,” वो खिड़की के पास जाकर नदी की ओर देखती हुई बोलीं। “प्रेम हमारे मस्तिष्क और अन्तरात्मा को अस्त-व्यस्त कर देता है। जीवन का अर्थ संघर्ष में है, लड़ने में है। उसे रोंदने और कुचलने में है। यही हम दोनों के बीच की समानता है; और यही हमें एक-दूसरे से जोड़े रखती है, देव। हमारा जीवन, हमारा सिंहासन, और हमारी युद्धभूमि हस्तिनापुर है।”

“परन्तु इससे हमें दूसरों के जीवन पर शासन करने का अधिकार नहीं मिल जाता,” वे संक्षेप में बोले।

“दुर्भाग्यवश, मिलता है, और जैसा तुम समझते हो, मैं इसके लिए खुश नहीं हूँ,” सत्यवती कड़वेपन के साथ बोली।

उनकी दुखी आँखों और चेहरे को देखकर भीष्म समझ गए कि सत्यवती निराश थीं, और आगे कोई भी बात करना निरर्थक होता, फिर भी वे बोलते गए। “यद्यपि आप एक बार जो उस ऋषि के साथ भुगत चुकी हैं, वही उन दो लाचार लड़कियों पर थोपना चाहती हैं। आप ऐसा कैसे कर सकती हैं? क्या आपकी अन्तरात्मा आपको नहीं कचोटती?”

“अन्तरात्मा को कई बार दायित्व के बोध के सामने झुकना पड़ता है, वो कितनी अरुचिकर ही क्यों न हो,” वो रूखेपन से हँसती हुई बोलीं। “मैंने तब किया था, और अभी भी करूँगी। तुम मुझे और कोई विकल्प दे सकते हो, देव? जैसा मैंने पहले भी कहा था, यदि बात न्यायोचित और दृढ़ता की है, तो मैं दृढ़ रहना ही पसन्द करूँगी,” सत्यवती धीरे से बोलीं। “दृढ़ रहने का अर्थ है कि मनुष्य को निर्णय करना पड़ता है, वो सही हो या गलत। मैं वो गलत निर्णय लेने के लिए तैयार हूँ, क्योंकि सही निर्णय का तो विकल्प ही नहीं है, है न? तुम तो न्याय को ही चुनोगे, धार्मिकता की आड़ में सुरक्षित, जबकि मैं अपने-आपको निंदा और आलोचना के लिए खुला छोड़ देती हूँ।” वो भीष्म के निर्मम चेहरे को देखती हुई उपेक्षापूर्वक आगे बोलीं, “जब वेद व्यास आए तो मैं चाहूँगी कि तुम उससे मिलो।”

भीष्म ने भी यंत्रवत ढंग से सिर हिलाया। “हाँ, अवश्य, किन्तु मैं दोबारा कहता हूँ, मैं आपसे सहमत नहीं हूँ, और कभी नहीं होऊँगा। कृपया उन लड़कियों को तैयार कर दीजिए। उन्हें बता दीजिए कि उनके साथ क्या होने वाला है। दोनों अभी बहुत छोटी हैं...” उनकी आवाज़ थकी आह में बदल गई।

सत्यवती ने कटुतापूर्वक कहा, “हमेशा की तरह, मैं ही ये कुत्सित कार्य करूँगी ओह महान भीष्म, मैं आपकी निष्कलंक छवि पर कोई आँच नहीं आने दूँगी।”

राजमहल के दूसरे भाग में जाते हुए सत्यवती के मन में भीष्म की बातें गूँज रही थीं। ये कार्य करना उनका दायित्व था; धृणास्पद या विवेकपूर्ण, ये तो समय ही बताएगा। सबसे अच्छी बात ये थी कि उनका पुत्र, वेद उनकी बहुओं के साथ नियोग करने वाला था, कोई भ्रमणकारी ऋषि या अनैतिक राजा नहीं। ये निर्णय उन्होंने सावधानी या विवेक के कारण नहीं लिया था। उनका रक्त हस्तिनापुर के राजसिंहासन पर विराजमान होगा। बिलकुल चित्रांगद और वीर्य की सन्तान की तरह। तीनों उसी के पुत्र थे।

दोनों युवा रानियाँ अभी भी शोक सन्तप्त थीं, और जब वे उनके कक्ष में प्रविष्ट हुईं, दोनों रो रही थीं। सत्यवती अपनी दोनों बहुओं को अच्छी तरह जानती थीं। जन्म से ही दोनों सिरचढ़ी थीं। स्वयंवर के समय भी दोनों बहुत ही उत्सुक और आतुर थीं, पर साथ ही चतुर भी। वे भली-भाँति जानतीं थीं कि जो अनगिनत राजकुमार उनके आसपास मंडरा रहे थे, उनकी दृष्टि काशी राज्य और उसके ऐश्वर्य पर थी, जो स्वयंवर जीतने पर उनका हो जाता। सत्यवती ने उनकी योजनाओं पर पानी फेर दिया, और भीष्म द्वारा उनका अपहरण करवाकर वीर्य की बांहों में डाल दिया था। सब कुछ होते हुए भी दोनों बहनों ने वीर्य के साथ आमोद और उल्लास का जीवन व्यतीत किया था।

वो वीर्य की रानियाँ ही नहीं, उसकी प्रेमिकाएँ और अविविक्त और अनियंत्रित भोग-विलास में उसकी सहचरियाँ थीं। अब वीर्य नहीं था, दोनों शोकाकुल थीं, और एक दूसरे के अतिरिक्त उनका कोई नहीं था।

उनके पुत्र के अतिमादक प्रेम ने उन्हें बिगाड़ दिया था, और उसके बिना वे सूर्य की उष्णता में मुरझाती पुष्प के समान हो गई थीं। वीर्य की मृत्यु के तुरन्त बाद ही सत्यवती समझ गई थीं कि वही सूर्य थी, और दोनों बहनें उन्हें ही अपने दुर्भाग्य और दुख का कारण मानती थीं।

सत्यवती ने उन्हें समझाने का बहुत प्रयास किया, पर उनके हर कार्य और योजना में सत्यवती की तीव्र रुचि से वे और भी क्रोधित हो जातीं। अपनी पीड़ा से मुक्ति पाने के लिए सत्यवती के सुझाव को वे उपेक्षापूर्वक टाल देतीं। उनकी इच्छा हो न हो, सत्यवती अपने तरीके से बहुओं का भला चाहती थीं और उन पर सब कुछ न्योछावर करके वो उन्हें अपने लाड़-प्यार से बिगाड़ रही थीं। बहुओं के लिए सत्यवती हस्तक्षेप करने वाली क्षोभक बन गई थीं। वो जानती थीं कि दोनों उनके पीठ-पीछे उनकी निंदा करती थीं और बदले में उन्हें कुछ नहीं देती थीं।

पर, अब उन्हें कुछ तो करना ही होगा, सत्यवती ने दृढ़ निश्चय किया। हस्तिनापुर के लिए कुछ करने का समय आ गया था।

उनकी दासी परिश्रमी को कक्ष से बाहर जाने का आदेश देकर सत्यवती अपनी बहुओं की ओर बढ़ीं। उन्हें देखते ही अम्बालिका झट से उठ खड़ी हुई, परन्तु अम्बिका निरुत्साही ढंग से बहुत कष्ट करके उठकर बैठी।

“मुझे तुम दोनों से महत्वपूर्ण विषय के बारे में चर्चा करनी है,” सत्यवती अपनी बड़ी बहु की ओर इशारा करती हुई बोलीं। फिर उन्होंने संक्षेप में अपनी मंशा उन्हें समझाई। दोनों लड़कियाँ भयभीत होकर उन्हें देखती रह गईं।

“नहीं!” अम्बालिका विवरण चेहरे के साथ धीरे से बोली।

“कदापि नहीं!” अम्बिका आवेगपूर्वक चिल्लाई। आप हमें इस प्रकार किसी अज्ञात पुरुष को कैसे सौंप सकती हैं?”

“वो कोई अज्ञात नहीं, तुम्हारा जेठ है,” सत्यवती ने संक्षेप में कहा।

अम्बिका दंग रह गई। “किन्तु..” वो नासमझी से अपनी छोटी बहन को देखती हुई बोली। अम्बालिका भी उतनी ही स्तब्ध थी।

“हम वेश्याएँ नहीं हैं, जिन्हें एक रात के लिए किसी पुरुष के पास भेजा जाए,” अम्बिका क्रोधपूर्वक अड़ी रही।

“तुम दोनों रानियाँ हो, राज्य के लिए उत्तराधिकारी को जन्म देना तुम्हारे कर्तव्यों में से एक है।” सत्यवती अम्बिका के विरोध को रोकती हुई बोलीं। “तुम सन्तान को

जन्म दोगी, मेरे पुत्र से नहीं तो, किसी और से ही सही,” उन्होंने दृढ़ और कठोर आवाज़ में कहा।

अम्बिका ने क्रोधपूर्वक गहरी सांस ली। “क्या आपको कभी भय, दुख या संवेदना का अनुभव होता भी है, माँ? इतने दिनों में मैंने आपको अपने पुत्र के लिए शोक प्रकट करते या एक आँसू बहाते नहीं देखा है...” कहते हुए उसकी आवाज़ टूटने लगी। “आपको केवल हस्तिनापुर और उत्तराधिकारी की चिन्ता है?” वो कटु आँसू बहाती हुई व्यंग्यपूर्वक बोली। “आपने अम्बा का जीवन नष्ट कर दिया, अब हमारी बारी है। आपको ऐसा करने का अधिकार किसने दिया?” वो आवेशपूर्वक बोली।

सत्यवती अम्बिका को कठोरता से देखती हुई बोली, “तुम कहती हो कि तुम जन्म से ही राजकुमारी हो, तो अब तक तुम्हें राजसी नियमों का ज्ञान होना चाहिए, है न? तुम रानी हो, विधवा रानी, और तुम अपनी राजकीय उत्तरदायित्व अच्छी तरह जानती हो।” फिर सत्यवती ने मधुर स्वर में विनतीपूर्वक कहा, “बस, एक बार, एक रात के लिए, आज रात... इस परिवार और हस्तिनापुर का भविष्य तुम दोनों के हाथों में है।”

“दोनों?” अम्बालिका भरी आवाज़ में फुसफुसाई।

“अनुकूल तो वही होगा,” सत्यवती बोली। “हमें कम से कम दो राजकुमारों की आवश्यकता है।”

अम्बालिका ने अपने-आपको सँभालते हुए अम्बिका को देखकर धीरे से सिर हिलाया। अम्बिका ने चकित होकर गहरी सांस ली। वो कुछ क्षणों तक स्तब्ध, अपनी छोटी बहन को देखती खड़ी रही। अम्बालिका का चेहरा उसके वस्त्रों की तरह ही श्वेत हो गया था।

उनकी इच्छा हो न हो, उन्हें मानना ही होगा।

“फिर युवराज कौन होगा?” अम्बिका ने अस्वाभाविक स्वर में धीरे से पूछा।

“तुम्हारा; बड़ी रानी का ज्येष्ठ पुत्र,” सत्यवती उसे आश्वस्त करती हुई, मुस्कुराती हुई बोली।

अम्बिका को विचित्र हर्ष की अनुभूति हुई। अब अन्ततः वो विजयी होगी। उसने अपनी छोटी बहन को ईर्ष्यापूर्ण द्वेष के साथ देखा। वीर्य ने सदैव मृदुभाषी, आकर्षक और कामुक अम्बालिका को अधिक चाहा था। अब मेरे इठलाने का समय है। अम्बिका ने आशा और आनन्द के साथ विचार किया। उसकी दृष्टि अचानक मेज पर रखे सोने के कलश पर पड़ी।

“ये क्या है?” उसने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

“घी,” सत्यवती बोली। “नियोग के लिए शरीर पर घी का लेप लगाना होता है जिससे सहभागियों के मन में कोई लालसा या इच्छा जागृत न हो; और केवल गर्भधारण की प्रक्रिया साध्य हो जाए।”

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

अम्बिका भय से कांप गई और उसकी आँखों में आँसू आ गए।

सत्यवती सौम्य और आश्वासनपूर्ण स्वर में आगे बोलीं, “इस क्रिया को मात्र कर्तव्य के रूप में देखा जाता है। और ऐसा करते समय, निर्धारित पुरुष और स्त्री के मन में केवल कर्तव्य ही होगा, वासना या लालसा नहीं। पुरुष ये कृत्य स्त्री की सहायता के दायित्व से करता है, और स्त्री उसे अपने पति और परिवार के लिए सन्तानप्राप्ति के लिए स्वीकार करती है। इसे हस्तिनापुर के रिक्त राजसिंहासन के लिए अपनी राज्यनिष्ठा और कर्तव्य समझो।”

“ये तो अत्यन्त निष्ठुर है!” अम्बिका बड़बड़ाई। परन्तु, उसकी आँखों में एक विचित्र चमक थी। उसने अपनी मुट्ठी कसते हुए निश्चय किया कि वो हस्तिनापुर को युवराज देने के लिए कुछ भी करने के लिए तैयार थी। उसका पुत्र, उसकी पहली सन्तान, उत्तराधिकारी होगा...

Novels English

## अन्य पुत्र

“कोई युवा ऋषि आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं, राजमाता,” विभा ने घोषणा की। “क्या मैं उन्हें अन्दर भेज दूँ।” सत्यवती ने हाँ में सिर हिलाया।

वो वैसे ही थे, जैसा उन्होंने सोचा था—साँवले, दुबले-पतले, युवक; उनके बाल जटाजूट थे और उनका चेहरा खुरदुरी दाढ़ी और लम्बी मूँछ से ढका हुआ था। मेरा पुत्र, ये शब्द उनके कंठ में ही अटक गए। वो मध्यम ऊँचाई के चौड़े से व्यक्ति थे, उनके जबड़े दृढ़ थे और उनकी नाक सीधी और पतली थी। उनकी भूरी आँखों में देखते ही, उन्हें उनका असली व्यक्तित्व दिख गया। वो सज्जन थे और उनकी आँखों में ज्ञान की दीपि चमक रही थी। अपने वचन के अनुसार पराशर ने उन्हें महान और ख्यातिप्राप्त ऋषि बना दिया था, जबकि सत्यवती ने स्वयं उसे एक क्षणिक घटना समझकर भुला दिया था और आगे बढ़ गई थीं।

वो उन्हें निशब्द होकर देखती रहीं, उनकी छवि को अपने मस्तिष्क में उतारती रहीं। वो उनका कभी हुआ ही नहीं था, और आज पहली बार उनके लिए अपनेपन का बोध हुआ। आखिर, व्यास उनका पुत्र था।

वो धीरे से हँसे, अपने पिता की वही सुहावनी हँसी। सत्यवती का हृदय कलाबाजियाँ मारने लगा।

“आपने मुझे इस तरह बुलाया है तो अवश्य कोई अतिमहत्वपूर्ण बात होगी; मातृत्व तो अचानक नहीं उमड़ा होगा,” वो मुस्कुराए। “मेरे पिता ने आपको वचन दिया था, माँ। जब भी आप मुझे याद करेंगी, मैं उपस्थित हो जाऊँगा।”

व्यास की सौम्य आवाज़ में उन्हें उपहास की झलक सुनाई दी। सत्यवती ने अपने-आपको चिन्तित होने का अवसर नहीं दिया, किन्तु उन्हें सब कुछ बताने लगीं—अपने बारे में, हस्तिनापुर, और राजसिंहासन के लिए वो उनसे जो चाहती थीं। वे विवरण होकर, गम्भीरतापूर्वक बैठे रहे। वे बिना पलकें झपकाए उनकी बात ध्यान से सुन रहे थे। उनके हावभाव स्थिर थे, भावशून्य दृष्टि को देखकर सत्यवती को पराशर और उनके साथ बीते अत्यन्त अन्तरंग, रूखे अनुभवों की याद आ गई।

जब सत्यवती ने अपनी बात पूरी की, व्यास ने गम्भीरतापूर्वक उन्हें देखा, बिना किसी निराकरण या आलोचना के।

“आप जानती हैं, आप क्या करने जा रही हैं?” आखिकार उन्होंने धीमे स्वर में कहा। “ऐसे निर्णय शुभ सिद्ध नहीं होते। जैसा भीष्म ने कहा, किसी बच्चे को गोद ले लीजिए।”

“किसके बच्चे को? क्या भरोसा कि उससे निष्ठाएँ विभाजित नहीं होंगी?” सत्यवती कंधे उचकाती हुई बोली।

“आप अपने-आपको किसी प्रकार आश्वस्त नहीं कर सकतीं। स्वयं भगवान भी अपना भविष्य नियंत्रित नहीं कर सकते!” व्यास मुस्कुराते हुए बोले। “आप मुझसे जो सन्तान चाहती हैं, वो कुरुवंश के नहीं होंगे,” वे चेतावनीपूर्वक बोले।

“संसार उन्हें कुरु ही मानेगा, क्योंकि उनकी माताओं ने कुरुवंश में विवाह किया। इस तरह जन्मे बच्चे अपनी माताओं और उनके पतियों की सन्तान ही कहलाएँगे, नियोग के लिए निर्धारित व्यक्ति के नहीं। मैं निश्चित रूप से कह सकती हूँ कि भविष्य में तुम स्वयं इन बच्चों से कोई पैतृक सम्बन्ध या बंधन नहीं चाहोगे।”

“नहीं, मैं नहीं चाहूँगा; आप ही की तरह। पर मेरे पिता ने किया।” वे तीक्ष्णता से बोले।

सत्यवती ने हिचकिचाते हुए पूछा, “तुम्हारे पिता कैसे हैं?”

“कुछ समय पूर्व ही उनका निधन हो गया,” व्यास विचारपूर्वक बोले। “वे अपने शिष्यों के साथ वन से होकर जा रहे थे, जब उन पर भेड़ियों के झुँड ने आक्रमण कर दिया। वृद्धावस्था और लंगड़ेपन के कारण वे बच नहीं पाए।” व्यास की उँगलियाँ मुट्ठियों में बंध गई थीं। “कहते हैं कि जब किसी ऋषि की मृत्यु होती है, प्रकृति के साथ उनका विलय हो जाता है। मेरे पिताजी भी इस संसार को छोड़कर चले गए और उन्हीं भेड़ियों के झुँड में जा मिले।”

सत्यवती का गला भर आया। उन्होंने हिचकिचाते हुए अपने पुत्र के साथ सम्बन्ध बनाने के प्रयास में हल्के से उसके हाथ पर हाथ रखा। जब सत्यवती उनके हाथ थामे, संवेदनशील और शोकाकुल होकर बैठी थीं, व्यास को आभास हुआ कि वे अपरिचित नहीं थीं। दोनों रक्त से जुड़े थे, और दोनों जीवन में त्यक्त किए गए थे।

“क्या वो रानियाँ मेरे बारे में जानती हैं?” उन्होंने अटपटी शान्ति को भंग करते हुए पूछा। “वे राजकुमारियाँ हैं, जिनका विवाह युवा और सुन्दर राजा से हुआ था। वे इस परिस्थिति में कैसी प्रतिक्रिया देंगी?” वे झुककर अपने छाल के वस्त्रों और जटाजूट-धारी वेश-भूषा को देखते हुए बोले। “मैं तो आपके लिए अपनी तपस्या भंग करके सीधे जंगल से आया हूँ। मैं मैला और अस्त-व्यस्त हूँ और किसी भी राजसी व्यक्ति के समक्ष जाने के योग्य नहीं हूँ। रानियाँ मुझे देखकर घृणित हो जाएँगी... हमें थोड़ी प्रतीक्षा करनी चाहिए।”

“नहीं, जितनी शीघ्रता से सम्भव हो, नियोग आज रात को ही करना होगा,” वे उनकी बात काटती हुई बोलीं।

व्यास उनकी मंशा समझ गए। वो अतिशीघ्र उत्तराधिकारी पाना चाहती थीं, जिससे वे विचित्रवीर्य के पुत्र कहलाएँ।

“मैं समझता था कि आपको समाज से कोई भय नहीं है,” व्यास धीरे से बोले। “पर, समाज के लिए आपने मुझे त्याग दिया था...”

“नहीं। तुम्हारे पिता तुम्हें अपने पास रखना चाहते थे; मेरी इच्छा का कोई महत्व नहीं था,” उन्होंने शान्तिपूर्वक हस्तक्षेप करते हुए कहा।

व्यास सिर हिलाते हुए बोले, “आप मेरे लिए क्यों नहीं लड़ीं? मेरे पिता मुझे चाहते थे, किन्तु आप नहीं,” वे आरोप लगाते हुए बोले।

“हाँ,” सत्यवती ने स्वीकार किया। “मैं नहीं चाहती थी, और क्यों चाहती? मैं स्वयं बच्ची थी, परिस्थिति को समझने में असमर्थ! क्या स्त्री मातृत्व को अस्वीकार नहीं कर सकती?”

वो थोड़ा रुक गई। विडम्बना ये थी कि वो अपनी बहुओं को मातृत्व के लिए विवश कर रही थीं।

वो कठोर स्वर में आगे बोलीं, “हाँ, मैं स्वीकार करती हूँ कि तुमने मुझमें वो अपेक्षित ममता नहीं जगाई जो मुझसे अपेक्षित थी। इसीलिए तुम्हें तुम्हारे पिता को सौंप देना मेरे लिए सरल था। तुम ठीक कहते हो, वो तुमसे अधिक स्नेह करते थे और श्रेष्ठ पिता थे। वो पुत्र पाना चाहते थे और संयोगवश वो मेरे माध्यम से सम्भव हुआ; मैं अस्वीकार करने या स्वीकार करने की स्थिति में नहीं थी,” वो टूटते स्वर में बोलीं। “क्या मुझे तुम्हें समझाना होगा कि तुम्हारा जन्म किसी प्रख्यात ऋषि के प्रस्ताव को स्वीकारने के कारण हुआ?”

व्यास उनकी बात सुनकर थोड़े झोंप गए।

सत्यवती गम्भीर स्वर में आगे बोलीं, “मैंने विकट परिस्थिति का लाभ उठाया; क्या ऐसा करना लोभ है? क्या मैं इससे षड्यंत्रकारी बन गई?” उन्होंने धीरे से सिर हिलाते हुए कहा, “प्रायः लड़कियों को वो सब सहना होता है जो उन पर थोपा जाता है; वो चाहे वर हो, विवाह हो या मातृत्व।”

“मैं अपनी बात कर रहा था,” वे एक दुखी मुस्कुराहट के साथ बोले। “आप आज तक मुझे नहीं चाहती थीं। फिर भी आप अपने विस्मृत पुत्र का उपयोग अपनी राजनीतिक योजना के लिए करने से भी नहीं कतरातीं। माँ, मैं आपके लिए कौन हूँ?”

उनके सौम्य आवाज़ से वो पिघल गई।

“मैं तुम्हारे कारण लज्जित नहीं हूँ। कदापि नहीं!” वो आक्रोशपूर्वक बोलीं। “यदि तुम मुझ पर ये आक्षेप लगाना चाहते हो, तो मैं अपने कर्मों से भी लज्जित नहीं हूँ।

पराशर और तुम मेरे जीवन में उपहारस्वरूप आए; मैं धन्य थी। मैंने संसार के सामने तुम्हें स्वीकृत कर लिया है, पुत्र। तुम्हारा स्वागत इस राजमहल में भी उसी मर्यादा के साथ हुआ है। तुम ऋषि व्यास हो, और मुझे तुम्हारी माता होने पर गर्व है। मैं तुम्हें सादर प्रणाम करती हूँ, पुत्र। पर, इस समय मैं तुम्हारा उपयोग व्यक्तिगत कार्य के लिए नहीं, अपितु किसी राजनीतिक कार्य के लिए करना चाहती हूँ।” वो टेढ़ी मुस्कुराहट के साथ बोलीं।

“अरे हाँ, आप तो राजमाता हैं,” वे सिर हिलाते हुए बोले। “जिनका प्रभुत्व सब पर चलता है!”

“परन्तु, मैं तुम्हें आदेश नहीं दे रही हूँ, विनती कर रही हूँ।” सत्यवती सहजता से बोलीं। “मेरे पास और कोई और विकल्प नहीं है।”

“इस संसार के तौर-तरीके भी भ्रामक हैं, ऐसे रास्तों पर ले जाते हैं जिनसे हमें दूर रहना चाहिए,” वे रहस्यमयी ढंग से बोलते हुए उठे। “मैं तैयार हूँ। क्या रानियाँ तैयार हैं?”

सत्यवती ने हाँ में सिर हिलाया। “मेरी सेविका, विभा तुम्हें उनके कक्ष तक ले जाएगी।”

वो उन्हें कक्ष से बाहर जाते देखती रहीं। फिर वो छत पर गई, जहाँ संध्या की शीतल हवा बह रही थी। नीचे भीष्म अपने प्यारे फूलों के बीच टहल रहे थे। इतनी दूर से देखते हुए भी सत्यवती को उनकी व्यग्रता और उनके झुके कंधों की कुँठा स्पष्ट दिख रही थी। उन्हें देखकर सत्यवती को अत्यन्त अपनेपन का अनुभव हुआ और उन्होंने बहुत कठिनाई से उनसे दृष्टि हटाकर गंगा की ओर देखा। क्षितिज में एक भी नाव नहीं दिख रही थी। नदी के तट पर, नीली धूंध में पहाड़ियाँ, उद्यान, ऊँचे मीनार और घर दिख रहे थे और सूर्य का प्रकाश उन पर चमक रहा था। फिर भी उन्हें सब कुछ पराया लग रहा था, किसी अबोध्य उलझन की तरह...



सत्यवती लगभग दौड़ती हुई अम्बिका के कक्ष में गई; चिन्ता से उनके कदम डगमगा रहे थे। आवाजें सुनकर वो अचानक रुक गई। दोनों बहनें उनकी उपस्थिति से बेसुध होकर बातें कर रही थीं।

“हम अपने अतिरिक्त किसको मूर्ख बना रहे हैं? हम इतने वर्ष अपने पति के साथ रहे और कोई सन्तान नहीं हुई; हम दोनों को! क्या किसी को कोई शंका हुई?”

“वीर्य तो अस्वस्थ थे, अम्बिका,” उसकी बहन ने दुर्बलतापूर्वक कहा, किन्तु सत्यवती उसकी आवाज़ की हिचकिचाहट भाँप गई।

“वो पुरुषत्वहीन थे!” अम्बिका क्रोधपूर्वक रोई। “मृत या जीवित, हमें इस यातना को सहना ही पड़ता और नियोग द्वारा सन्तान को जन्म देना ही पड़ता!” वो कड़वेपन से हँसती हुई बोली।

“परन्तु, इतने वर्षों की प्रतीक्षा के बाद हमें सन्तान-प्राप्ति तो होगी,” अम्बालिका आशापूर्वक बोली।

“क्या सन्तान के लिए तुम ये अपमान सहने के लिए तैयार हो?” उसकी बहन ने प्रश्न किया।

“मैं नहीं जानती,” अम्बालिका क्षीण स्वर में बोली। “पर मैं बच्चा चाहती हूँ—मैंने वर्षों प्रतीक्षा की है! क्या तुम नहीं चाहती? वैसे भी हमारे लिए रखा ही क्या है?”

सत्यवती उसी क्षण उनके कक्ष में प्रविष्ट हुई। दोनों लड़कियों ने अपराधपूर्वक उन्हें देखा।

उनके चेहरे को देखते ही दोनों तेजी से बोलने लगीं।

“मैं उस व्यक्ति को सहन नहीं कर पायी! मैंने अपनी आँखें जोर से बन्द कर ली!” अम्बिका ने कांपते हुए कहा।

सत्यवती ने असावधानी से पसीना पोंछा। उन्हें विचित्र-सी घबराहट हो रही थी, भय का आभास हो रहा था। क्या गर्भधारण ठीक से हुआ होगा? ये प्रश्न उनके मन में सबसे पहले उठा।

“मुझे ठीक से बताओ, क्या हुआ,” उन्होंने आदेश दिया।

अम्बिका का गोरा चेहरा लाल हो गया, लज्जा से कम और क्रोध से अधिक। “नहीं! मैं नहीं बताऊँगी! मुझे कुछ तो गोपनीयता प्रदान कीजिए!” वो क्रोधपूर्वक बोली। “मैं बस इतना कहूँगी कि अत्यन्त भयावह अनुभव था, और आपने जिस व्यक्ति को भेजा था, वो घिनौना राक्षस था! मैं तो उसे देख भी नहीं पा रही थी!”

बहन की बातें सुनकर आम्बालिका कांप गई। “आज रात मेरी बारी है,” वो बड़बड़ाई और उसका चेहरा विवर्ण हो गया।

सत्यवती चिन्तित होकर उँगलियों से अपने होंठ सहलाती धीरज रखने का प्रयास करती खड़ी रही। वो अन्दर ही अन्दर क्रोध और भय से भरी जा रही थी। इस मूर्ख लड़की ने सब कुछ बिगाड़ दिया था।

भयभीत अम्बालिका के कंधे पर हाथ रखती हुई सत्यवती हल्के से मुस्कुराई।

“किसी भी परिस्थिति में तुम आँखें बन्द नहीं करोगी,” सत्यवती चेतावनीपूर्वक बोलीं। “अम्बिका, तुमने जो किया, वो व्यास ने मुझे बताया,” वो बड़ी बहन की ओर मुड़कर सिर हिलाती हुई बोलीं। “व्यास कहते हैं, लक्षण शुभ नहीं हैं...”

“शुभ कैसे होंगे, जब मुझे ये सब करने के लिए विवश किया गया हो!” अम्बिका आक्रोशपूर्वक चिल्लाई। “और वे वो नहीं थे जिनकी मुझे अपेक्षा थी...” कहते हुए वो

अचानक रुक गई।

सत्यवती असमंजस में पड़ गई। उन्होंने अम्बिका को अपने निचले होंठ दबाते देखा; वो लड़की जो सदैव स्पष्टवक्ता थी, आज असामान्य रूप से शान्त थी। अम्बिका कुछ देर मौनपूर्वक सत्यवती को देखती रही और अचानक बोल पड़ी, “ये वो नहीं थे जिनका स्वागत करने लिए मुझसे कहा गया था।” उसने तीखेपन से आरोप लगाया।

सत्यवती और भी भ्रमित हो गई।

अम्बालिका ने आकुल होकर कहा, “माँ, आपने हमें बताया था कि हमारे जेठ आने वाले हैं, और हमें लगा कि वो...” वो लज्जित होकर रुक गई, उसका चेहरा गुलाबी हो गया।

अचानक सत्यवती को सब कुछ स्पष्ट हो गया। दोनों अपने कक्ष में भीष्म के आने की अपेक्षा कर रही थीं।

उनके उपहासपूर्ण विचार पर सत्यवती को हँसी आ गई, किन्तु दोनों लड़कियों के घबराए हुए चेहरे और परिस्थिति की गम्भीरता को देखते हुए सत्यवती ने केवल निराशापूर्वक सिर हिलाया।

अम्बिका की आँखें निराशा और क्रोध से दमक रही थीं। उसकी सास ने चतुरतापूर्वक उसे ये विश्वास दिलाया था कि उसका सुन्दर जेठ उस रात उसके कक्ष में आने वाला था। वो उत्तेजित थी, थोड़ी घबराई हुई थी और उसने स्नान के बाद अपनी सेविका को आदेश दिया था कि उसे अच्छी तरह तैयार करे। निश्चित समय पर वो अपने कक्ष में उनकी प्रतीक्षा में बैठी थी; अपनी भावी सन्तान के पिता की, उत्तराधिकारी की। पर, उनके स्थान पर, उसके धुँधले कक्ष में एक काला, मलिन, जटाजूट वाला, भस्म से लिप्त, दीप्तिमान आँखों वाला राक्षस खड़ा था। वो उस स्मृति से ही सिहर गई। अनिच्छुक और भयाक्रान्त होकर, जैसे ही उनका अभद्र शरीर उसके निकट आया, स्तब्ध अम्बिका ने अपनी आँखें बन्द कर ली थीं।

“आपने मेरे पास किसे भेजा था?” अम्बिका ने कांपते हुए पूछा।

“उनका नाम व्यास है। वो ऋषि हैं,” सत्यवती ने दृढ़तापूर्वक कहा। “और वो तुम्हारे जेठ हैं।”

दोनों लड़कियाँ चौंक गईं, और उन्हें स्पष्ट अविश्वास से देखती रह गईं।

“राजा शान्तनु से विवाह के पूर्व मैंने उसे जन्म दिया था,” सत्यवती ने स्थिर स्वर में कहा। “मैं भी, किसी समय उसी परिस्थिति में थी, जिसमें आज तुम हो, पर मुझे लगता है मैंने उसे तुम्हारी तुलना में अधिक परिपक्वता से निभाया!!” वो क्रोधित होती हुई बोलीं। “तुम राजकुमारी हो और रानी की अपेक्षाएँ जानती हो, फिर भी, क्या तुम थोड़ी और समझौतापरक नहीं हो सकती थी?” सत्यवती तीखे स्वर में अम्बिका को घूरती हुई बोलीं।

अम्बिका सत्यवती की आवाज़ में छिपे फटकार को समझ गई। वो थोड़ा सँभलती हुई, चिढ़कर बोली, “ऐसा इसलिए, क्योंकि, जैसा आपने कहा, हम सिरचढ़ी, बिगड़ी राजकुमारियाँ हैं। यदि हम कठोर होतीं, मछुआरिनें होतीं, तो कदाचित और अच्छी तरह सँभाल लेतीं।”

अम्बिका की धृष्टा देखकर सत्यवती ने क्रोधपूर्वक कहा, “तुम तो कोमल हुई-मुई बन रही हो! जबकि, पिछले सात वर्षों तक तुमने मेरे पुत्र के साथ राजसी, अनियंत्रित रासलीला की!”

अम्बिका का शरीर तन गया, वो झपटते हुई, क्रोध से दमकते चेहरे के साथ उठी।

“चुप हो जाइए!” हाँफती हुई अम्बालिका ने हस्तक्षेप किया। भय से जड़वत होकर अम्बालिका ने सत्यवती से कहा, “माँ, मुझसे नहीं होगा...!”

सत्यवती उग्रतापूर्वक अम्बालिका की ओर मुड़ती हुई बोलीं, “अब स्थिति को और बिगड़ना मत! तुम दोनों को एक काम दिया गया; मैं और कुछ सुनना नहीं चाहती। इस बार सब कुछ ठीक से होना चाहिए... तुम्हारी बिगड़ी हुई, स्वार्थी बहन की तरह नहीं!”

अम्बालिका के मुरझाते चेहरे को देखते हुए सत्यवती ने अपने-आपको रोक लिया। वो जानती थी कि उनका व्यवहार अत्यन्त कठोर था, पर व्यास के चेतावनीपूर्ण शब्दों ने उन्हें चिन्तित और अधीर कर दिया था।

“आपकी बहू ने मुझे देखते ही आँखें बन्द कर लीं, माते,” व्यास ने बहुत बार पूछने के पश्चात कहा था। “वो छोटी है, राजकुमारी है और अत्यन्त सुरक्षित तरीके से पली-बढ़ीं हैं...” सत्यवती ने अम्बिका का पक्ष लेते हुए कहा था।

व्यास ने गम्भीरतापूर्वक सिर हिलाते हुए कहा था, “हाँ, और वैसे भी मैं सर्वाधिक रूपवान व्यक्तियों में से नहीं हूँ,” वे रूखेपन से मुस्कुराए थे। “विशेषकर, मेरी वर्तमान स्थिति में।”

सत्यवती ने शीघ्रता से उन पर दृष्टि दौड़ाई। उनके बाल जटाजूट थे, धूप में तपकर उनकी त्वचा काली और रूखी हो गई थी, उनके कठोर हाथ घटेदार थे, और उनके पैर और नाखून मैले थे।

“रात को अम्बालिका के पास जाने से पहले स्नान करके जाना।” उन्होंने सुझाव देते हुए कहा।

“केवल स्नान से कुछ नहीं होगा, माते; मैं तो जंगली जानवर से भी बदतर स्थिति में हूँ। मैंने जैसा कहा था, वो राजकुमारी तो मुझे देखते ही घृणा से भर गई... इतनी अशुभ शुरुआत से आप कोई भी अपेक्षा कैसे रख सकती हैं? मैंने तो आपसे पहले ही कहा था कि प्रतीक्षा करते तो अच्छा होता और इस क्रिया... को थोड़ा टालते तो...”

उनकी चेतावनी सत्यवती के कानों में गूँज रही थी और अम्बिका की आँखों के आतंक से सत्यवती की अक्ल ठिकाने लग गई। उन्हें अम्बालिका को आश्वस्त करना ही

होगा; यदि साहसी अम्बिका घृणित हो गई तो उसकी कायर बहन तो व्यास को देखते ही मूर्छित हो जाएगी।

सत्यवती ने बलपूर्वक हल्के से मुस्कुराते हुए अम्बालिका के हाथों को थपथपाते हुए कहा, “मुझे क्षमा कर देना, मैं चिन्तित थी। व्यास भी अपने पिता के समान ही असाधारण व्यक्ति है। वो महान ऋषि है और उनके साथ रहना प्रतिष्ठा का विषय है। इस अवसर को व्यर्थ मत होने दो, पुत्री; यदि तुम इस क्रिया को सफलतापूर्वक होने दोगी तो तुम्हारा पुत्र अद्वितीय होगा।”

अम्बालिका प्रश्नपूर्वक सत्यवती से, हल्के से मुस्कुराती हुई बोली, “जैसा आपका पुत्र है?”

“हाँ,” सत्यवती ने उत्तर में कहा। “तुम्हारा पुत्र भी उन्हीं के समान महान होगा। कृपया, एक रात के लिए धीरज रखो—उनके साथ और मेरे लिए।”

अम्बिका के अन्दर ईर्ष्या की लहर-सी दौड़ गई और वो अपने होने वाली सन्तान के बारे में विचार करने लगी। मेरा पुत्र युवराज होगा, अम्बालिका का नहीं, वो उस कुरुप मनुष्य को जितना भी प्रभावित कर ले। जो उत्तराधिकारी मेरी सास चाहती हैं, मैं वो हस्तिनापुर को देकर रहूँगी।

“यदि पुत्री हुई तो?” अम्बिका ने दुर्भावनापूर्वक प्रश्न किया।

“तो वो भी उत्तराधिकारी होगी,” सत्यवती ने शान्त स्वर में कहा। “पहले वो, फिर उसका पति, और उसके बाद उसकी सन्तान हस्तिनापुर पर राज करेंगे।”

“आप कुछ भी कह लें, वो मनुष्य भयंकर है,” अम्बिका मुँह बनाती हुई बोली। वो जानती थी कि उसकी बातों से अम्बालिका और भयभीत हो जाएगी। “उनसे दुर्गंध आती है, वे रूखे, भद्दे, मैले और उग्र हैं, मैं तो उनके आँखों की उन्मत्त गाढ़ता सह नहीं पायी, और...”

सत्यवती ने अम्बालिका की आँखों में फैलते आतंक को देख लिया।

उन्होंने रुक्ष स्वर में कहा, “अम्बिका, उसे और मत डराओ। इस समय एक रानी जैसी शान्त, सशक्त हृदय और मस्तिष्क की आवश्यकता है, किसी बिगड़ी राजकुमारी का स्वार्थ नहीं।” वो अम्बालिका के कांपते हाथों को थामते हुए बोलीं, “सुनो, पुत्री, मैं जानती हूँ, ये कठिन कार्य है, किन्तु इसे और कठिन मत बनाओ। इसे अलग दृष्टिकोण से देखो; उत्तरदायित्व के रूप में नहीं, दबाव या शिकार के रूप में नहीं, बल्कि विजय के रूप में—तुम सन्तान को जन्म दे पाओगी। वीर्य के बजाय, व्यास के पास जाकर भी तुम्हीं अपने पुत्र की माँ होगी, अपने वंश की निर्माता, इस परिवार के लिए नई आशा की किरण। इसे शक्ति के रूप में देखो, सन्तानप्राप्ति के लिए विकल्प के रूप में। इसमें पुरुष का कोई महत्व नहीं है, पुत्री, तुम महत्वपूर्ण हो, स्त्री, जिसके पास नए जीवन की सृष्टि की शक्ति है। क्या तुम्हें सन्तान पाने की इच्छा नहीं है?”

अम्बालिका ने उत्कंठा से सिर हिलाया, उसके म्लान गालों पर आँसू धीरे-धीरे सूखने लगे थे। सत्यवती पूरे दिन अम्बालिका के पास ही रही, जिससे अम्बिका को उसे डराने या प्रभावित करने का अवसर न मिले। जब व्यास ने आकर अम्बालिका के द्वार को खटखटाया, तभी सत्यवती वहाँ से निकलीं।

जाते हुए उन्होंने अम्बालिका को दोबारा सचेत किया, “अपनी आँखें बन्द मत करना।”

एक और लम्बी रात सामने थी। सत्यवती ने अपने कक्ष का द्वार बन्द किया और सोने चली गई। अपनी शय्या पर मुट्ठी बौंधे बैठी रहीं। वो अम्बालिका के कक्ष के द्वार से आने वाली मन्द आवाजों को सुनती रहीं। अन्ततः, जब आवाजें नियंत्रण से बाहर हो गईं, वो हिचकिचाती हुई उठ खड़ी हुईं। उन्होंने जो आरम्भ किया था, उसे अब रोकने का कोई मार्ग नहीं था। उन्हें अम्बालिका की दबी हुई चीख सुनाई दी : उसने ठीक ही किया था। वो उस गर्म रात में अकेली बैठी सन्नाटे की आवाज़ को अनुभव करती, भावशून्य आँखों से खिड़की से बाहर चंद्र के प्रकाश में झिलमिलाती नदी को देखती बैठी रहीं। उनकी प्रतीक्षा उन्हें अन्तहीन प्रतीत हो रही थी, और अन्ततः उन्हें व्यास के कक्ष से बाहर जाने की आवाज़ आयी। वो भागकर उससे मिलना चाहती थीं, किन्तु उन्हें सूर्योदय तक प्रतीक्षा करनी ही पड़ेगी।

“कैसा रहा?” उन्होंने अधीर होकर सूर्य की पहली किरण के साथ ही अपनी छोटी बहू से पूछा।

“मैंने अपनी आँखें बन्द नहीं किए,” अम्बालिका ने धीरे से कहा।

सत्यवती ने चैन की सांस ली। उनकी बातों का उस लड़की पर प्रभाव हुआ था और उसने विवेकपूर्वक कार्य किया था। वो खुशी से मुस्कुराई; अब सब कुछ ठीक होने वाला था। बस नौ महीनों की प्रतीक्षा थी...

## नई आशा

शरद ऋतु की उष्ण सुबह थी। विभा ने सत्यवती को अंगवस्त्र देते हुए उन्हें समाचार दिया कि अम्बिका की प्रसव-पीड़ा आरम्भ हो गई थी। सत्यवती के हृदय की धड़कनें तीव्र हो गई और अचानक ही उनका हृदय बैठ गया। हस्तिनापुर को युवराज प्राप्त होने का समय आ गया था। वो अपनी खुशी को नियंत्रित नहीं कर पा रही थीं। वो शीघ्रता से तैयार हुई और अपेक्षापूर्वक अम्बिका के कक्ष की ओर भागीं।

उस भारी पर्दों वाले कक्ष में एक वैद्य, एक धात्री और अम्बिका की सुन्दर और सक्षम सेविका, परिश्रमी थे। कक्ष में कपूर और जड़ी-बूटियों की सुगंध फैली हुई थी। उन्होंने चौखट पर पैर रखें ही थे कि सत्यवती को पीड़ित कराह की आवाज़ आयी।

परिश्रमी ने बताया, “रानी अम्बालिका भी प्रसव वेदना में हैं।”

“तुम उसे सँभालो; मैं अम्बिका को देखती हूँ।”

नवजात शिशु के रोने की आवाज़ ने उनके मानसिक उथल-पुथल को भंग कर दिया। शिशु आ गया था! उत्तराधिकारी का जन्म हो गया था। बच्चे का क्रंदन अपने साथ नई आशा और बीते दिनों की स्मृतियाँ ले आया; देव की प्रतिज्ञा, शान्तनु के साथ उनका विवाह, चित्रांगद और वीर्य का जन्म, चित्रांगद की मृत्यु के दिन की वर्षा, भीष्म को कोसती अम्बा की ऊँखों की ज्वाला, वीर्य के मृत शरीर पर रोते भीष्म...।

सत्यवती ने पलकें झपकाई। वो सारी पुरानी बातें समाप्त हो गई थीं। नई शुरुआत हुई थी। वो अम्बिका को देखने इस तरह भागीं जैसे वो ही बच्चे की पिता हों। अम्बिका पसीने से लत, थकी और सुस्त पड़ी थी। उसके चेहरे पर बालोचित विवशता छाई थी—उसकी सामान्य उदासीनता नहीं। उसने कदाचित सत्यवती को आते नहीं देखा था। वो दाई के हाथ में पड़े बच्चे को एकटक देख रही थी और उसे अपने गोद में लेने की प्रतीक्षा कर रही थी।

दाई के चेहरा श्वेत पड़ गया था और उसे देखते ही सत्यवती समझ गई कि कुछ अशुभ हुआ है।

जब शिशु को अम्बिका के हाथ में दिया गया तो उसका चेहरा दुख से भर गया। वो घृणापूर्वक छत की ओर ताकती रही। “अत्यन्त भयंकर है!” वो फुसफुसाई। “ये तो नेत्रहीन हैं!”

सत्यवती सुन्न हो गई; वो भौचककी रह गई। उनकी स्तम्भित आँखें अम्बिका से हटकर दाई की ओर गई; उनकी आँखें आँसुओं से धुँधली हो रही थीं। उनका हृदय जोरों से धड़क रहा था और उन्होंने अपने घुटनों पर गिरकर बच्चे को लेने के लिए हाथ बढ़ाया।

बालक सुन्दर था और बहुत बड़ा था, उसकी नाक लम्बी थी और ठोड़ी तीक्ष्ण। उसकी आँखें खुलीं थीं; और वो अपनी श्वेत, अपारदर्शी आँखों से उन्हें घूर रहा था। उनकी सांस कंठ में ही अटक गई और सिसकी में बदल गई। नहीं!

“ये आपका युवराज है, माँ!” अम्बिका धीमे स्वर में बोली। “नेत्रहीन वारिस, अंधा राजा!” वो तकिये में चेहरा छिपाकर फूट-फूटकर रोने लगी। सत्यवती के लिए उस एक वाक्य में घोर सत्य समावेशित था। हस्तिनापुर का उत्तराधिकारी नेत्रहीन था!”

सत्यवती लड़खड़ाती हुई अपने कक्ष में पहुँची और ज़मीन पर ढेर हो गई। आँखों के सामने उनके सारे सपने चूर-चूर हो गए थे। उन्हें लग रहा था जैसे वो नियति और भविष्य पर बिना किसी नियंत्रण के अकेली नाव में बैठकर गोते खा रही हो। क्या भाग्य उन पर हँस रहा था? वैसे भी उन दोनों के बीच कभी बंधुत्व का भाव तो था ही नहीं। वो या तो नियति से भागती रहीं या उसे भगाती रहीं। वो नियति के लिए एक धागे से लटकती वाग्जाल से अधिक कुछ भी नहीं थी, जिसे सरलता से झटक दिया जा सके या जो हवा में उड़कर बिखर जाए। सत्यवती राजमहल के पास से बहती नदी को एकटक देखती खड़ी रही। क्या गंगा उसका उपहास कर रही होगी; उसने गंगा के पुत्र से जो कुछ छीना, उसने जो कुछ खोया, जो कुछ वो हार गई, बार-बार... उसके लिए। नदी के ऊपर सूर्यास्त हो गया था, और सब कुछ कालेपन के साथे में डूब गया था, ऊपर आकाश में तारे टिमटिमा रहे थे, किन्तु सत्यवती के लिए सब कुछ विरक्त, अबोध्य उलझन था जिसे वो सुलझाने में अक्षम थी।

अगले दिन सुबह जब भीष्म उनसे मिलने आए तो उन्हें एक कुर्सी पर बैठी, हाथों में चेहरा छिपाए, बैठा पाया। उनके बाल बिखरे हुए थे। वो असीम वेदना की मूर्ति थीं; उनकी दशा देखकर भीष्म को उनके लिए जो थोड़ा वैर-भाव था, वो भी लुप्त हो गया; वे अत्यन्त पीड़ित थे। सत्यवती को देखकर उन्हें ध्यान आया कि इतने वर्षों से और अभी भी, वे इस स्त्री के जीवन में एक विचित्र सहजीवी का पात्र निभा रहे थे; और उन्हें बदलना उनके बस के बाहर था। अब उन्हें स्पष्ट हो गया था कि वे केवल सत्यवती और हस्तिनापुर के लिए जीवित रहना चाहते थे। उनके बीच मतभेद और वाद-विवाद के बाद, उन्होंने सत्यवती को देखा भी नहीं था। वो उन्हें टाल रही थीं और उसका कारण भीष्म अच्छी तरह जानते थे। जब भी वो अत्यधिक पीड़ित होतीं, वो भीष्म से दूर हो जातीं। और भीष्म ने उन्हें आहत किया था, उन्हें दुख पहुँचाया था। विडम्बना ये थी कि सत्यवती भीष्म से जितना अधिक दूर होतीं, जितनी कठोर होतीं, वो उनके उतनी ही

निकट होतीं; उनके सम्बन्ध उतने ही गहरे और कष्टप्रद हो जाते। उनके निश्चिन्त भाव, उनका भावनारहित व्यवहार; उनकी निष्ठुरता, जिसे वे अपनी ढाल की तरह उपयोग करती थीं, अपनी अरक्षितता छिपाने के लिए... इन सबके बावजूद।

भीष्म थोड़ी देर वहीं खड़े रहे और उन्हें ये समाचार दिए बिना ही चले गए कि अम्बालिका ने भी पुत्र को जन्म दिया था—श्वेत और पांडु, गर्भधारण के समय उसकी माँ के भयभीत चेहरे की तरह।

जब सत्यवती को गम्भीर विभा से उनके दूसरे पौत्र और उसके असामान्य विवर्णता के बारे में पता चला, तो उन्होंने थके स्वर में कहा, “मुझे व्यास की फिर से आवश्यकता है। भीष्म से कहो, उन्हें बुला भेजें।” जब व्यास आए, तो उनकी माता अत्यन्त शोकाकुल और पहले से अधिक हठी थीं।

“दोनों राजकुमार युवराज बनने के योग्य नहीं हैं। एक नेत्रहीन है और दूसरा वर्णकहीन! व्यास, ये तुमने मुझे क्या दिया है?” वे दुखपूर्वक बोलीं।

“रानियाँ तैयार नहीं थीं और समय ठीक नहीं था,” व्यास गम्भीरता से बोले। “मैंने तो आपको सचेत किया था कि निग्रह का परिणाम सदैव प्रतिकूल होता है।”

सत्यवती क्रोध से भरकर चिल्लाई, “ये दोनों लड़कियाँ भी कितनी मूर्ख हैं!”

अचानक उन्हें एक विचार आया, “व्यास, नियोग के लिए नियुक्त पुरुष को जीवन में अधिक से अधिक तीन अवसर प्राप्त होते हैं न?”

व्यास ने हाँ में सिर हिलाया, वे अपनी माँ की मंशा समझ गए थे। “ऐसा इसलिए कि कोई इसका दुरुपयोग न करे, माते। अब तो आप वंशज के लिए लोभी हो रही हैं।” वे धीरे से चेतावनीपूर्वक बोले।

“लोभी नहीं, केवल सावधान,” सत्यवती दर्शपूर्वक बोलीं। “तीसरा बच्चा बिलकुल स्वस्थ होना चाहिए। भीष्म और मैंने मिलकर जिस महान राज्य का विस्तार किया, उसके लिए तीन राजकुमार।”

“वो तो हमेशा से भीष्म का था, माते, और अभी भी है,” व्यास मुस्कुराते हुए बोले। “यदि ऐसा न होता तो आपको ऐसे अनुचित कर्म नहीं करने पड़ते।”

अब तो सत्यवती फटकार या न्याय्यता से कहीं परे जा चुकी थीं।

“मैं चाहती हूँ कि तुम अपने तीसरे अवसर का भी प्रयोग करो,” वो विनतीपूर्वक स्पष्टता से बोलीं।

“और यदि मैंने अस्वीकार कर दिया तो?”

“तुम अपनी माँ की विनती अस्वीकार नहीं कर सकते,” उन्होंने तर्क किया।

“आपने मुझे अस्वीकार किया था, माँ,” व्यास कठोर स्वर में बोले।

“तुम्हारे अस्तित्व को नहीं! वो बोल पड़ीं। “मुझे तुम्हारी आवश्यकता है, पुत्र!”

व्यास आह भरते हुए बोले, “मुझे जन्म देने के लिए, आपके लिए ये अन्तिम कृपा कर रहा हूँ, उससे अधिक कुछ नहीं! मैं कल ही यहाँ से चला जाऊँगा।” सत्यवती ने किसी तरह अपने पुत्र को तो मना लिया था, किन्तु वो जानती थीं कि अम्बिका को मनाना अत्यन्त कठिन होने वाला था।

“दोबारा?” अम्बिका भयपूर्वक चिल्लाई। “परन्तु क्यों? आपको तो दो युवराज मिल गए हैं, माँ।” अम्बिका एक महीने के धृतराष्ट्र को सत्यवती के हाथों में देते हुए बोली। अपनी दादी के परिचित और दृढ़ हाथों में आते ही शिशु ने रोना बन्द कर दिया और मुस्कुराने लगा। सत्यवती ने उसे दयनीय किन्तु स्नेही भाव से देखा और उसके घुँघराले बाल सहलाए।

“ये नेत्रहीन हैं, पुत्री, और उसके कारण राजा बनने के योग्य नहीं।”

“नहीं! अम्बिका आवेगपूर्वक चिल्लाई। कदापि नहीं! पांडु एक दिन छोटा हो सकता है, परन्तु मेरा पुत्र ज्येष्ठ है और मैं बड़ी रानी हूँ! धृतराष्ट्र ही राजा बनेगा!” उसने शपथ लेते हुए कहा।

अम्बिका ने तो उसे अभी से राजा घोषित कर दिया था, सत्यवती को अन्दर ही अन्दर घबराहट-सी होने लगी थी। अम्बिका के शब्द और भाव, उसकी महत्वाकांक्षा भी वैसी ही थी जैसे सत्यवती की अपने पुत्रों के जन्म के समय थी... उन्हें अतिशीघ्र अम्बिका की बढ़ती सनक को तोड़ना होगा, नहीं तो बहुत देर हो जाएगी।

“हाँ, तुम बड़ी रानी हो और इसीलिए मैं अम्बालिका के पास नहीं, बल्कि तुम्हारे पास आयी,” सत्यवती चतुराई से बोलीं। “तुमने पहली बार अपनी आँखें बन्द कर ली, कदाचित इस बार तुम्हें स्वस्थ पुत्र हो?”

अम्बिका थोड़ी हिचकिचाई।

“या मैं अम्बालिका के पास जाऊँ? वो कदाचित मान जाएगी और दो पुत्रों की माँ बन जाएगी, और अंधे राजकुमार के स्थान पर, उन दोनों में से एक अवश्य राजा बनेगा,” वो क्रूरतापूर्वक अम्बिका के हृदय में छूरी चलाती हुई बोलीं। उन्हें हस्तिनापुर के लिए किसी भी कीमत पर स्वस्थ युवराज चाहिए था।

“मैं करूँगी!” अम्बिका धीरे से बोली। “ये कैसा विरोधाभास है... युवराजों की ये लड़ाई—वीर्यवान ब्रह्मचारी है, नपुंसक को राजा बनाया गया, विधवाओं को राजमाता के अपरिचित-पुत्र के माध्यम से राजकुमारों को जन्म देने के लिए बाध्य किया जा रहा है!”

सत्यवती के चेहरे से विजय की हल्की-सी मुस्कान मिट गई। वे दंग रहकर देखती रह गई : अम्बिका के प्रछन्न भाव से कहे गए शब्दों ने उनके वंश की कहानी जोर से कह दी थी।

~

जैसे ही उन्होंने उस स्त्री को स्पर्श किया, वे जान गए कि वो अम्बिका नहीं थी। कक्ष में अंधेरा था, और वहाँ चतुराई से केवल एक दीपक जलाया गया था। कक्ष तो वही था, किन्तु स्त्री वो नहीं थी। उसका चेहरा घूँघट से छिपा हुआ था, परन्तु वो उनसे ये सत्य नहीं छिपा पायी कि वो अम्बिका नहीं थी...

उसने उन्हें अपनी ओर खींचा, जैसा पहले दोनों स्त्रियों ने नहीं किया था। वो उन्हें व्यग्रतापूर्वक चूमने लगी जिससे वे उत्तेजित हो गए, ऐसी अग्नि उनके अन्दर भड़क उठी जिसमें वे डूबते चले गए। वो उन्हें हर्षोन्माद के ऐसे संसार में ले गई जिसके अस्तित्व का उन्हें पता भी नहीं था और वे समर्पण की भारी चीख के साथ उसके वक्ष पर ढेर हो गए। मधुर सुख में निशेषित होकर, उन्होंने उस लालसा की छाया को उठते देखा, और एक क्षण में वो अंधेरे में विलीन हो गई। वो थी कौन?

व्यास उसे भूल नहीं पाए, उसके साथ बिताया गया एक-एक क्षण... जब वो सत्यवती से मिले तो उनसे दृष्टि नहीं मिला पाए। उन्होंने संक्षेप में कहा, “मैंने जिसके साथ रात बिताई, वो आपकी बहू नहीं थी।”

सत्यवती उनके शब्दों को सुनकर और उनकी पूर्वसूचना के विषय में सोचकर स्तब्ध रह गई।

“फिर वो कौन थी?” उन्होंने आश्र्य से पूछा। उत्तर में उन्हें केवल मौनपूर्वक हिलता सिर मिला।

“रुको! अवश्य कोई मिथ्याबोध हुआ है, व्यास। यदि अम्बिका नहीं तो मैं अम्बालिका को समझाती हूँ। कृपा करके उसके साथ रात बिताओ,” वो निवेदन करती हुई बोलीं। परन्तु व्यास गम्भीरता से खड़े रहे। “अम्बालिका को एक और अवसर दे दो!”

व्यास दृढ़तापूर्वक सिर हिलाते हुए बोले, “नहीं, ये नहीं हो सकता।”

“हस्तिनापुर को एक और अवसर दे दो, व्यास!” वे चिल्लाईं।

“माँ, मैं ऋषि हूँ, और मुझे यहाँ नहीं होना चाहिए,” वे अपने क्रोध पर नियंत्रण पाने की चेष्टा करते हुए बोले। “मैंने केवल आपके लिए ये सब करना स्वीकार किया। आपने जो चाहा, वो मैंने किया—तीन बार! शास्त्रों के अनुसार नियोग केवल तीन बार करने की अनुमति है। और वैसे भी, मैं शीघ्र ऋषि जबाली की पुत्री से विवाह करने वाला हूँ। मैं हमारे साथ और पिंजला के साथ ऐसा अन्याय नहीं कर सकता।” वे दृढ़ स्वर में बोले। “अब यहाँ मेरा कार्य पूरा हो गया है, माँ।” सत्यवती को उनकी बातें ठीक से सुनाई भी नहीं दे रही थीं। व्यास ने उनके चरण स्पर्श किए और वहाँ से चले गए। उन्हें जाते देख सत्यवती का हृदय बैठ गया। वो उन्हें खोखली और निराशा से भरी

आँखों से जाते देखती रहीं—कक्ष से, गलियारे से होते हुए. राजमहल से बाहर, हस्तिनापुर से दूर... सदा के लिए। वो उन्हें रोकना चाहती थीं, किन्तु शब्द उनके कंठ में ही अटककर रह गए। क्या वो उन्हें कभी दोबारा देख पाएँगी?

सत्यवती को पता ही नहीं चला कि वो वहाँ कितनी देर खड़ी रहीं। उन्हें अचानक ध्यान आया कि व्यास कई अनुत्तरित प्रश्न छोड़ गए थे; और उनका उत्तर केवल एक व्यक्ति के पास था—अम्बिका।

अम्बिका की भयपूर्ण अवज्ञा, उसके कसे हुए होंठ और दमकती आँखों को देखते ही सत्यवती समझ गई कि उसने झूठ बोला था।

“मैं दोबारा ऐसा नहीं कर सकती थी,” अम्बिका स्पष्टता से बोली। सत्यवती कुछ बोलतीं, उससे पहले ही अम्बिका ने कहा, “मैं आपके हाथों का प्यादा नहीं बनना चाहती हूँ माँ, एक बार और अवश्य नहीं! मेरा एक पुत्र है; मैंने आपको आपका युवराज दे दिया है!”

सत्यवती उसे असहाय क्रोध के साथ देखती हुई बोलीं, “वो बेचारा नेत्रहीन है, तुम्हारे कारण! वो हस्तिनापुर का राजा कैसे बन सकता है? वो सेना का नेतृत्व कैसे करेगा? मेरा अगला विकल्प पांडु है...”

“नहीं!” अम्बिका बरसती हुई बोली। “पांडु नहीं! वो राजा नहीं बन सकता। यदि मेरा पुत्र नेत्रहीन होने के कारण राजा नहीं बन सकता, तो पांडु भी राजसिंहासन पर नहीं बैठ सकता क्योंकि वो...”

“क्यों?” सत्यवती क्रोधपूर्वक उसे चुनौती देती हुई चिल्लाई। “क्योंकि वो विवर्ण है? वर्णकहीन राजा नेत्रहीन राजा से कहीं अधिक श्रेष्ठ है, मूर्ख! मैंने तुम्हें दूसरा अवसर दिया और तुमने उसे खो दिया!”

“आपको स्वस्थ वारिस देने का?” अम्बिका चीखती हुई बोली। “भगवान ही जानता है कि मुझे उस शब्द से कितनी घृणा है—युवराज। कितनी विचित्र बात है न माँ, कि सात वर्षों तक आपका पुत्र हमें युवराज नहीं दे पाया, परन्तु, आपके अन्य पुत्र के साथ एक रात ने आपकी सारी इच्छाएँ पूरी कर दीं।”

सत्यवती का चेहरा श्वेत पड़ गया। वो समझ गई थीं कि अम्बिका यही कहना चाहती थी कि वीर्य नपुंसक था, और उससे उन्हें कभी उत्तराधिकारी की प्राप्ति नहीं होती। दम्भपूर्ण घृणा के साथ अम्बिका ने कहा, “मुझे दूसरे पुत्र की आवश्यकता नहीं है माँ। मेरे पास धृतराष्ट्र है और वही यथोचित उत्तराधिकारी है। और कोई नहीं!”

“समय आने पर देखा जाएगा,” सत्यवती ने कहा। “भीष्म और मैं तो अगले राजा के राज्याभिषेक के लिए उपस्थित होंगे ही; इस समय, झूठी कायर, मुझे तुम ये बताओ कि तुमने अपनी अंधी महत्वाकांक्षा के लिए किसकी बलि चढ़ाई? तुमने किसको व्यास के पास भेजा?”

“मेरी दासी, अम्बिका ने कंधे उचकाते हुए कहा। “परिश्रमी। मुझे लगा वही उनके लिए उपयुक्त होगी। आखिरकार, ऋषि भी तो उसकी तरह अकुलीन ही हैं, है न?”

सत्यवती आश्वर्यचकित थीं और उन्होंने अम्बिका के उपहास को सुना ही नहीं।

“तुम समझ भी रही हो कि तुमने किया क्या है, मूर्ख? वो आतंकित होकर चिल्लाई। “अम्बिका, तुम्हारे पुत्र के विपरीत, तुम्हारी दासी का पुत्र सबसे स्वस्थ और श्रेष्ठ होगा!”

नौ महीने बाद, उनकी बातें सत्य सिद्ध हुईं। वो श्रेष्ठ शिशु था, प्रसन्न और मुस्कुराता हुआ, बिना किसी अपूर्णता या त्रुटि के। सत्यवती ने उसे गोद में लिया और जान गई कि यही उनका सबसे प्रिय पौत्र होगा। इसलिए नहीं कि वो सुन्दर और स्वस्थ था, बल्कि इसलिए कि वो नियति का अभागा पुत्र था। उसमें सारी विशेषताएँ होंगी, फिर भी वो राजा बनने योग्य नहीं होगा। योग्यता के स्थान पर, दासी-पुत्र होते हुए उसे अपने जन्म का बोझ जीवन भर उठाना पड़ेगा। उन्हीं की तरह! किन्तु सत्यवती संघर्ष करके ऊपर चढ़ गई थीं। क्या ये ऐसा करेगा? कर पाएगा?

सत्यवती ने परिश्रमी से कहा, “मैं तुम्हारा आभार किन शब्दों में प्रकट करूँ।” वो निर्बलतापूर्वक मुस्कुराई, “मैं मेरी बहू के कृत्य के लिए खेद प्रकट करती हूँ।” सत्यवती ने आग्रहपूर्वक क्षमायाचना करते हुए कहा।

“कृपया मुझसे क्षमायाचन न करें रानी माँ; आप पहले भी ऐसा कर चुकी हैं,” परिश्रमी लज्जित होती हुई बोली। “जैसे ही आपको पता चला, आपने मुझसे पूछा कि मैं ये बच्चा चाहती हूँ या नहीं। आपने मुझे निर्णय करने का अवसर दिया रानी माँ, और मैं उसके लिए आपकी सदा आभारी रहूँगी। मैं बच्चे को जन्म देना चाहती थी, और आप मान गई। इतने महीनों से आपने मेरी देखभाल की है, मुझे नई प्रतिष्ठा, घर और धन दिया है। मैं तो अब दासी नहीं रही,” वो आँखों में आँसू भरकर, कृतज्ञता से बोली। “मुझसे जैसा कहा गया, मैंने वही किया, किन्तु आपने जो किया, वो आपका राजकीय दायित्व नहीं था। आपने सब कुछ करुणा के लिए किया, और मैं सदैव आपकी आभारी रहूँगी।”

“नहीं, मैं तुम्हारी आभारी रहूँगी। तुमने मुझे इतना सुन्दर पौत्र दिया है!” सत्यवती परिश्रमी का हाथ थामती हुई मुस्कुराती हुई बोलीं।

ये करुणा नहीं; सहानुभूति है, सत्यवती ने विचार किया... ऐसी निकटता जो वो अपनी बहुओं से अधिक इस लड़की के लिए अनुभव कर रही थीं। व्यास के जन्म के समय वो भी ऐसी ही दुविधा में थीं कि उन्हें बच्चा चाहिए था या नहीं। सत्यवती वही यंत्रणा इस बेचारी लड़की पर नहीं थोपना चाहती थीं, जिसे उसका दायित्व या निर्णय न होने के बावजूद, किसी अपरिचित व्यक्ति के साथ सम्बन्ध बनाने पर विवश किया गया था। परिश्रमी तो दासी थी जो केवल आदेशों का पालन कर सकती थी; सत्यवती ने उसे

राजसी प्रभुत्व के बंधन से स्वतंत्र कर दिया था। परिश्रमी, आखिर व्यास के पुत्र की माँ थी।

“तुम्हारा नाम होगा, विदुर,” सत्यवती धीरे से बच्चे की, अपने पिता जैसी ही प्रज्ञ, स्नेही आँखों को देखती हुई बोलीं।

उन्हें अपने पीछे कोई आहट सुनाई दी, और वो बिना देखे ही समझ गई कि कौन आया होगा।

“मुझे मेरे युवराज मिल ही गए, देव,” वो कठिनाई से शब्दों को धीरे से बोलीं। “तीन... जबकि व्यास ने कहा था कि एक ही पर्याप्त होगा, एक से अधिक होंगे तो प्रतिद्वंद्विता हो सकती है... मेरे तो दो थे, और दोनों की मृत्यु हो गई। इसीलिए मैं कोई खतरा मोल नहीं लेना चाहती थी। व्यास भी मेरे आदेश को सुनकर आश्वर्यचकित था और उसने पहले मेरी आज्ञा का पालन करने से इनकार भी किया; उसने कहा कि अपने वंश को चलाने के लिए ऐसे उपाय का प्रयोग करना उचित नहीं है। मैंने उससे तर्क किया कि राजकार्य में बड़ों के अनुचित आदेशों का पालन करना आवश्यक है। ऐसी आज्ञाकारिता में कोई दोष नहीं होता। किन्तु, मैं दोषी हूँ, देव! मैंने भावनाओं का उपयोग अपने ही पुत्र के विरुद्ध किया।”

“मेरा भी दोष है; मुझे पहले ही इसे रोक देना चाहिए था,” भीष्म ने कठोरतापूर्वक कहा। “मैंने भी व्यास से विनती की थी...”

सत्यवती ने चकित होकर भीष्म को देखा।

वे निराशापूर्वक आह भरते हुए बोले, “मैं समझ गया था कि हमारे पास और कोई विकल्प नहीं था और मैंने व्यास से भी यही कहा। तब जाकर वे उस ‘घृणास्पद कार्य’ के लिए राजी हुए।”

सत्यवती के हाथ मुट्ठी में बंध गए। “व्यास ने कहा था अम्बिका और अम्बालिका को एक वर्ष तक मितव्यिता और संयम का जीवन व्यतीत करना होगा, जिससे वे अपनी पिछले सात वर्षों के विलासितापूर्ण जीवन से शुद्ध हो जाएँ। उनका अर्थ लड़कियों को नहीं, मुझे शुद्ध करने से था, जिससे मैं विवेकपूर्वक विचार कर सकूँ। अब मुझे समझ में आ रहा है कि वो मेरे निर्णय को टालना चाहता था।” वो निराशापूर्वक सिर हिलाती हुई बोलीं। “परन्तु, मैंने उसकी बात नहीं मानी; मुझे उत्तराधिकारी पाने की जल्दी थी और मैं प्रतीक्षा करने के लिए तैयार नहीं थी। मैंने व्यास को अतिशीघ्र कार्य निबटाने के लिए विवश किया। अब उसका परिणाम देखो! मेरे पास तीन राजकुमार हैं, किन्तु एक भी राजसिंहासन के लिए योग्य नहीं। ये, मेरा विदुर भी नहीं। इसे देखो, देव, ये कितना परिपूर्ण और स्वस्थ है।” वे बच्चे को अन्य दो राजकुमारों के पास पालने में लिटाती हुई दयनीयता से बोलीं।

“किन्तु, ये कभी राजा नहीं बन सकता,” भीष्म दुखपूर्वक बोले।

“क्यों?” वो चीखीं। “जब मैं उसे अन्य दो राजकुमारों के साथ रखती हूँ, वो उनके जैसा ही लगता है : व्यास का पुत्र। तुम्हारी देखरेख में तीनों राजकुमार शिक्षित होकर बड़े होंगे। फिर अन्य दोनों से श्रेष्ठ होते हुए भी इस राजकुमार को वंचित क्यों किया जाए? केवल इसीलिए कि ये दासी का पुत्र है? क्या उसे जीवनभर इस कलंक के साथ जीना होगा?”

“हाँ! ये हमारी गलतियों और छल का अनुस्मारक है।”

“परन्तु ये हमारी गलतियों के लिए दुख क्यों भोगे?” वो विरोध करती हुई बोलीं।

“जिस तरह व्यास ने स्पष्ट रूप से शंका व्यक्त की थी कि ऐसे वंशज किसी के लिए सुख का स्रोत कैसे बन सकते हैं!”

“अवश्य हैं। हम जितने भी हतोत्साहित क्यों न हों, देव, दोनों माताएँ अत्यन्त प्रसन्न हैं। दोनों के पास अपना पुत्र है जिससे वे अत्यन्त स्नेह करती हैं। दोनों स्वच्छंद प्रसन्नता में झूम रही हैं।” भीष्म को सत्यवती की आवाज़ में थोड़ा बदलाव का अनुभव हुआ। “क्या बात है?” उन्होंने झट से पूछा।

“अम्बिका के हृदय में अनियंत्रित महत्वाकांक्षा पनप रही है,” वो भीष्म की दुखी आँखों में देखती हुई बोलीं। “वो तो अभी से धृतराष्ट्र के राजा बनने के सपने देख रही है, वो ज्येष्ठ राजकुमार है, इसीलिए... किन्तु, ऐसा कैसे सम्भव है? मैंने तो उसे बच्चे के कान में ये बात कहते देखा है। इस तरह तो वो शिशु के मन को विषाक्त कर देगी।” सत्यवती अधीरता से चिल्लाई।

“राजमुकुट की चमक-धमक उसके बोझ से कहीं अधिक शक्तिशाली है,” वे धीरे से बोले। “परन्तु, जब तक हम दोनों यहाँ हैं, हम राजसिंहासन की देखभाल करते रहेंगे।”

“क्या हमने सचमुच राजसिंहासन को सँभाला या अपने-आपको?” सत्यवती ने उत्कंठा से पूछा, मानो वो अपने आपसे बात कर रही हों। “क्या हममें ये योग्यता है कि हम इस राजकुमार की रक्षा करें और उसे राजकीय अधिकार दिलाएँ?”

“हम इस विचार का तो खंडन नहीं कर सकते, किन्तु हम भी नियमों में बंधे हैं,” भीष्म हिचकिचाए। “विडम्बना ये है कि ये नियम भी हमारे द्वारा ही बनाए गए हैं, और ये अक्सर अन्यायपूर्ण, असुविधाजनक और पक्षपातपूर्ण होते हैं... दूसरों का जीवन कष्टप्रद कर देते हैं, और किसी को कोई लाभ नहीं मिलता!” वे हताश होकर हाथ झटकते हुए बोले। “मैंने अपनी प्रतिज्ञा को अपना सिद्धांत बनाया और उसे मेरे जीवन पर शासन करने दिया। जिस शक्ति के साथ मैंने उस प्रतिज्ञा का संरक्षण किया—मुझे सन्देह है कि मुझमें एक नई व्यवस्था, नया प्रारम्भ, और नया मार्ग दर्शने की शक्ति और क्षमता भी है या नहीं। हाँ, मैं कायर हूँ।” वे गम्भीरतापूर्वक बोले। “परन्तु मुझे आशा है कि मुझमें इस लड़के के लिए लड़ने की शक्ति अवश्य होगी।”

“मैं भी!” सत्यवती उग्रतापूर्वक बोलीं। “ये अन्य दो राजकुमारों के साथ कुरु राजकुमार के रूप में बड़ा होगा। तुम इसे राजा बनने योग्य बनाओगे! तुम्हें करना ही होगा। देव, तुम अपने पूर्वजों के बारे में कहते थे न, कि वे समाज के रीति-रिवाजों से कभी बंधे नहीं थे, और केवल योग्य व्यक्ति राजा बनता था। मैं कहती हूँ कि यही राजकुमार तीनों में से सर्वश्रेष्ठ होगा।”

सत्यवती ने भीष्म की आँखों में पराजय का भाव देख लिया।

“जो मैंने अपने लिए किया, देव; तो इस बच्चे के लिए क्यों नहीं कर सकती?” वो विनतीपूर्वक बोलीं। “किसी को कोई शंका है? मैं विरोध का नहीं, बदलाव का समर्थन कर रही हूँ। एक अच्छा राजा नियम बनाता है, किन्तु महान् राजा वो होता है जो उन्हें तोड़ना जानता है। तुमने सदैव यही किया है; मैं निश्चित रूप से जानती हूँ कि तुम विदुर के लिए भी वही करोगे, और उसे तीसरा कुरु राजकुमार होने की प्रतिष्ठा दिलवाओगे।”

वो सोते हुए बच्चे की ओर देखती हुई बोलीं, “मैं वचन देती हूँ, मैं ऐसा करके रहूँगी। परन्तु उसके लिए मुझे तुम्हारी सहायता की आवश्यकता होगी, देव। हमें मूल कारण के जड़ तक जाना होगा, सभी कारणों के मूल कारण तक। मैं और लोगों जैसी नहीं बनना चाहती—सब आत्मसन्तुष्ट और निष्क्रिय हो गए हैं—हमें बदलाव से डर लगता है, हम सुधार नहीं चाहते। हम केवल युद्ध, विजय, कीर्ति और ऐश्वर्य की बातें करते हैं। हम उत्तरदायी क्यों नहीं हैं? हम युद्धभूमि पर लड़ते हैं, किन्तु हमारी प्रगति की लड़ाई का क्या? हम बदलाव से इतने भयभीत क्यों हैं? राजा भी नायक होता है, मुकुट पहनने वाले सिर से कहीं अधिक; उसमें बदलाव लाने की शक्ति होती है। फिर भी वो ऐसा क्यों नहीं करता? हम नए नियम क्यों नहीं बना सकते, ऐसे नियम जो हमें बाँधने के बजाय हमें स्वतंत्र करें? यदि मैं, एक मछुआरिन, रानी बन सकती थी, मैं एक दासी-पुत्र को उसका अधिकार दिलाकर रहूँगी। क्या हम दोनों मिलकर ऐसा नहीं कर सकते?”

भीष्म थोड़ा हिचकिचाए, और उनकी त्योरियाँ चढ़ गईं। “क्या हम अपने अहंकारी सामर्थ्य से ऐसा कर सकते हैं? आपको लगा कि आप अपना भविष्य स्वयं बनाएँगी, किन्तु आखिरकार आप उसी मार्ग पर आ गई जिसे आप इतने वर्षों से टालना चाहती थीं। यही विडम्बना है; यही नियति है। इस बच्चे को और उन दोनों बच्चों को जन्म लेना ही था...” वे गहरी सांस लेते हुए बोले। “हम एक सम्पूर्ण पीढ़ी के भाग्य को प्रभावित करने के लिए बहुत ही तुच्छ और महत्वहीन हैं,” वे बड़बड़ाए। “हमें लगा हम ऐसा करने में सक्षम हैं, हमने प्रयास किया और विफल रहे। हमें और व्यापक एवं सार्वजनिक भलाई और बेहतर भविष्य की कामना करनी चाहिए। हमारे मुँह से निकली एक भी कामना नियति की इच्छा शक्ति के बिना पूर्ण नहीं होती—कुछ भी अकस्मात् या संयोग से नहीं होता। हर घटना का कारण होता है और वो अवश्यम्भावी होता है।”

“वो सब तो ठीक है; तुम भाग्यवादी हो और तुम्हारा दृष्टिकोण विनम्र है। मैं वैसी नहीं हूँ,” वो व्यथित होती हुई बोलीं। “मुझे लगता है कि आने वाली पीढ़ियों का भविष्य स्पष्ट होगा, और हमारा अनुभव उनके लिए उपयोगी सिद्ध होगा।” सत्यवती ने भीष्म को सन्देहात्मक रूप से देखा। “हमारी गलतियों का क्या, देव? वो भी तो आगे ले जाए जाएँगे, है न? मुझे भाग्य की चिन्ता नहीं क्योंकि मैं उस पर विश्वास ही नहीं करती। मुझे तो केवल इस बात की चिन्ता है कि हमारी गलतियाँ उनके जीवन में उत्पात न मचा दें।” उन्होंने चिन्तापूर्वक कहा। “हर कोई मृत्यु के परे जीना चाहता है, अगली पीढ़ी तक जीवित रहना चाहता है। हमें जीवन जीने का एक ही अवसर मिलता है और मैं निडरतापूर्वक जीना चाहती थी, पूरी चेतना, सुन्दरता और सत्यनिष्ठा के साथ—कम से कम अपने लिए। अक्सर हमें इच्छा होती है कि हम कोई महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँ, महान कार्य करें; हम इतिहास रचना चाहते हैं, जिससे भावी पीढ़ियाँ हमें तुच्छ समझकर, विफल समझकर, हमारा निराकरण न कर दें। मेरी इच्छा है कि मुझे मेरी गलतियों के लिए नहीं, बल्कि मेरे प्रयासों के लिए स्मरण किया जाए। मैं मान भी लूँ कि जो हो रहा है वो अवश्यम्भावी है और किसी उद्देश्य के लिए घट रहा है, पर मैं इस दिव्य अपरिहार्यता का क्या करूँ?” उन्होंने अपने सुडौल कंधे उचकाते हुए कहा। “मुझे केवल अपने ऊपर आधिपत्य है, औरों पर नहीं।”

भीष्म खोखली मुस्कुराहट के साथ बोले, “आप जानती हैं, आपमें अपरिहार्य क्या है—आप बुरे को भी उतनी ही शिष्टता से स्वीकार करती हैं, जितना अच्छे को, और आगे बढ़ जाती हैं। आप कभी पराजय स्वीकार नहीं करतीं; आपकी हिम्मत न हारने की भावना आपको समर्पण नहीं करने देती। किन्तु, फिर हम ऐसी बातों की चिन्ता क्यों करें जिनसे हम बच नहीं सकते? हमें अच्छे और बुरे पर इतना तो नियंत्रण है। कूर क्या है? अन्यायपूर्ण क्या है?” भीष्म थके हुए लग रहे थे। “सही क्या है? कौन-सी गलती सही है और कौन-सा उचित निर्णय गलत है? इन प्रश्नों का कोई स्पष्ट उत्तर नहीं है, मात्र प्रश्न हैं जो हमें अपने आपसे पूछने चाहिए। न्याय-परायणता बहुत ही गूढ़ और सूक्ष्म कला है।” उन्होंने आह भरी। “यदि आप हमारे परिवार के इतिहास को ध्यान से देखें, राजा भरत से लेकर आज तक, हम किस तरह अचेतन तरीके से अनुभव और पक्षपात करते हैं। हमारे पक्षपात के पीछे का तर्क हमें सही लगता होगा, परन्तु क्या वो उचित है? भेद और असमानता देखना बन्द कीजिए, आप सत्य को देख पाएँगी।”

“हमारा सत्य क्या है, देव?” उनकी आवाज़ धीमी होती गई। “कि मैंने तुम्हारी कीमत पर अपने जीवन में बदलाव लाने का प्रयास किया? फिर भी तुमने सब कुछ भूलकर निष्ठापूर्वक हमारी सेवा की, बिना किसी विद्वेष या खेद के। देव, तुम ही प्रज्ञमनिन्, सबसे ज्ञानी, सबसे निस्वार्थ और राष्ट्र के सबसे श्रद्धेय पुरुष हो, और आने वाली सदियों तक रहोगे। कदाचित, तुम्हारा विवेक तुम्हारा कठिन जीवन और

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

परिस्थितियों का परिणाम है। क्या ये तुम्हारी दयालुता है या तुम्हारा निस्वार्थ भाव है जो मुझे वो बनाता है जो मैं हूँ?”

“आप मुझ पर जो गौरव और कीर्ति थोप रही हैं, मैं उसके योग्य नहीं,” वे दांत भींचते हुए बोले। “अपने जीवन-ध्येय के लिए मैंने बहुत गम्भीर अन्याय किए हैं। मैं महान नहीं हूँ। मैंने गलतियाँ की हैं, और उनके परिणामस्वरूप लोगों की मृत्यु हुई है,” उनकी आवाज़ रुक्ष फुसफुसाहट में बदल गई, उनकी आँखें आकस्मिक पीड़ा से धूँधली हो गईं। “और कुछ लोग उनके कारण जिएँगे...”

सत्यवती की आँखें भयपूर्वक उठीं और उनसे मिलीं।

उन्हें अचानक एक हर्षपूर्ण खिलखिलाहट सुनाई दी, मानो सहमति की आवाज़ हो। दोनों ने मुड़कर गहरे लाल और सुनहरे, राजसी दुशालों में लिपटे तीनों बच्चों को देखा। तीनों बच्चे उन्हें ध्यानपूर्वक, एकटक देख रहे थे, मानो उन्हें पता चल गया था कि उनके भविष्य का निर्णय लिया जा रहा था।

Novels English ~

## परिशिष्ट

गंगा के शीतल जल में सत्यवती को अपना प्रतिबिम्ब धुँधला-सा दिख रहा था, किन्तु वो अपना जीवन स्पष्ट रूप से देख सकती थीं...

धृतराष्ट्र और पांडु के पुत्र एक दूसरे का सर्वनाश कर देंगे। **विनाश होगा!** पतन के बीज बोए जा चुके हैं; फसल भयंकर होगी। क्या आप अपने पौत्रों को नष्ट होते देखना चाहेंगी... हस्तिनापुर के युवराजों की?

पांडु के आकस्मिक मृत्यु पर संवेदना व्यक्त करते हुए कहे गए व्यास के ये शब्द उन्हें ठंडी हवाओं से अधिक चुभ रहे थे। क्या उन्होंने ही उस पतन और युद्ध के बीज बोए थे? उन्हें तीनों राजकुमारों का जन्म स्मरण हुआ। “धृणास्पद,” व्यास ने कहा था। सब कुछ व्यर्थ हो गया था। अम्बिका का पुत्र, धृतराष्ट्र नेत्रहीन और कपटी था; अम्बालिका का पुत्र पांडु, कान्तिहीन और नपुंसक था, जिसकी मृत्यु विडम्बना से वासना के कारण हुई। और दासी के पुत्र विदुर को प्रधानमंत्री बनाया गया था—अपने भाइयों, राजाओं का सलाहकार, किन्तु वो स्वयं कभी राजा नहीं बन सकता था।

जब सत्यवती ने भीष्म से अपने पौत्रों की विशेषताएँ पूछी थीं, तो भीष्म ने धृतराष्ट्र के बल को, पांडु की कुशाग्रता और विदुर की बुद्धि को स्वीकार किया था। जब युवराज के चयन का समय आया, तब विदुर ने विपुलता से अपनी बुद्धि और ज्ञान का परिचय दिया था। विदुर के विवेकी, किन्तु विवादास्पद प्रस्ताव से अम्बिका और धृतराष्ट्र अत्यन्त दुखी थे; उसने कहा था कि स्वीकृत ज्येष्ठाधिकार और सबसे बड़ा होने के बावजूद, नेत्रहीन होने के कारण धृतराष्ट्र राजा बनने योग्य नहीं था। उसने राजपद के लिए पांडु के चुनाव का समर्थन किया था, जिससे सत्यवती और भीष्म अन्दर ही अन्दर बहुत प्रसन्न थे। धृतराष्ट्र ने अनिच्छापूर्वक इस निर्णय को स्वीकार किया था, परन्तु उसने विदुर को इसके लिए कभी क्षमा नहीं किया था।

पांडु के पद-त्याग और किसी ऋषि की हत्या के लिए पश्चाताप के रूप में वनवास जाने के बाद, नेत्रहीन धृतराष्ट्र के पदारोहण के पश्चात, भीष्म द्वारा प्रशिक्षित विदुर ने राज्य की बागड़ोर कुशलतापूर्वक सँभाली और नए उत्तराधिकारी की नियुक्ति तक उसका परिचालन किया। यदि व्यास के शब्द सत्य हुए तो इसका अन्त भीषण युद्ध से होने वाला था।

काश, पांडु राजसिंहासन का त्याग न करता... सत्यवती उत्कंठा से विचार करती रहीं। उन्हें और भी दृढ़ रहना चाहिए था... अचानक उसकी मृत्यु हो गई, उसी वासना के फलस्वरूप जिसने शान्तनु और वीर्य की जान ली। उसकी विधवा, कुन्ती अपने पाँच पांडव-पुत्रों, जिन्हें उसने और पांडु की दूसरी पत्नी माद्री ने नियोग के माध्यम से जन्म दिया था; के साथ वापस आ गई थी।

परन्तु उनका परिवार नपुंसक नहीं था, सत्यवती ने अपने-आपसे उग्रतापूर्वक कहा। पांडु के पाँच पुत्र थे—पांडव। धृतराष्ट्र की एक पुत्री और सौ पुत्र थे—कौरव—जो कुरुवंश के उत्तराधिकारी थे। अब सत्यवती एक सौ छह नवासों की परदादी थीं। आगे चलकर कुरु सम्पूर्ण राष्ट्र पर राज करेंगे; उनका परिवार और राज्य अजेय और शक्तिशाली होगा और समृद्ध होगा, नष्ट नहीं...

किन्तु व्यास ने तो कुछ और ही भविष्यवाणी की थी। धरती के सुनहरे दिन समाप्त हो गए हैं। अपने वंश की आत्महत्या का साक्षी मत बनिए।

पूरा राजमहल परिवार के सदस्यों और खिलखिलाहट से भरा था। सत्यवती बच्चों की चहक से भरे आंगन और गलियारे देखती, उन्हें बाग में खेलते देखती—उसी बाग में जहाँ भीष्म ने उनके पुत्रों को धनुर्विद्या सिखाई थी, जहाँ धृतराष्ट्र, पांडु और विदुर प्रवीण लक्ष्यभेदी बने थे। बच्चों की किलकारी ने उनके हृदय को आशा और आनन्द से भर दिया था। यही वो साहसी योद्धा थे जो उनके राज्य का भार सँभालने वाले थे। सब एक साथ थे और हमेशा सुख और शान्ति के साथ रहेंगे; वो विजयी होंगे, विवाह करेंगे, उनके बच्चे होंगे जो भविष्य में राजा बनेंगे।

नहीं। वे राजसिंहासन के लिए आपस में लड़-मरेंगे! इस भीषण रक्तपात का साक्षी बनने से पहले चली जाइए! पांडु की मृत्यु को बहाना बनाकर वन के लिए निकल जाइए, माते!

व्यास के अमंगलसूचक शब्दों ने उन्हें उस समय भयभीत कर दिया था, किन्तु समय के साथ भय दुख में कहीं खो गया था। पहली बार, उन्होंने व्यास की बात मानी और हस्तिनापुर छोड़ने का निश्चय किया। वो अब और आँसू नहीं बहा सकती, उनका हृदय इतना टूट गया था कि अब अन्तिम टुकड़ा भी उनसे छीना जा रहा था। वो हमेशा समझती थीं कि वो अजेय हैं। उनके पास बल, धन, और वंशज थे, किन्तु उत्तराधिकारी की लालसा और प्रतिष्ठा के लिए भूखे उनके जीवन में उन्होंने अपने पति, दो पुत्रों और एक पौत्र को मरते देखा था। उन्हें लगता था कि उन्होंने अधिकार और शक्ति का प्रयोग उपलब्धि और कार्य-सिद्धि के लिए किया था, किन्तु आज वो कहाँ थीं? ऐसे चौराहे पर जहाँ उनके परिवार का विनाश किसी हत्याकांड से होने वाला था? क्या उनका वन में चले जाना ऐसे भयानक अन्त से भागने का मार्ग था? परन्तु, उन्हें भीष्म को कारण तो बताना ही होगा, उन्हें भी ऐसे भविष्य से अवगत कराना ही होगा, जिसे वे नियति कहते

हैं। वो सत्यवती के अचल सहभागी रहे थे। केवल वही जानते थे कि उनकी शक्ति और महत्वाकांक्षा के पीछे अनिश्चितता और भय छिपे थे जिन्होंने उन्हें कठोर और निर्मम स्त्री बना दिया था, जिसे संसार ने देखा। केवल भीष्म ही उनकी कमजोरियों, दुर्बलताओं और आत्म-सुरक्षा के प्रयासों को समझते थे। वो उनके बिना कैसे जाएँगी?

अम्बिका और अम्बालिका भी आश्वर्यजनक रूप से उनके साथ जाने के लिए मान गई थीं। अपने दोनों पत्नियों के साथ पांडु के वन में चले जाने के समय से ही अम्बालिका बदल गई थी और पांडु की अनपेक्षित मृत्यु से वो पूरी तरह टूट गई थी। उसे देखकर सत्यवती को अपनी याद आ जाती जब चित्रांगद की वर्षों पहले मृत्यु हुई थी।

कदाचित अम्बिका भी सहजता से व्यास द्वारा की गई भयंकर भविष्यवाणी का आरम्भ देख पा रही थी। धृतराष्ट्र ने उसे कभी क्षमा नहीं किया था, अपनी नेत्रहीनता के लिए उसे उत्तरदायी माना था, और समय के साथ उसका रोष घृणा में बदल गया था। धृतराष्ट्र और उसके बच्चे अम्बिका से घृणा करते थे और सबने उससे मुँह फेर लिया था। अपने परिवार से त्यक्त अम्बिका अब मुक्ति चाहती थी।

क्या ये स्वीकार्य था या पलायन, सत्यवती अपने निर्णय पर विचार करती रहीं। क्या सत्यवती की भी इस राजमहल में प्रासंगिकता समाप्त हो गई थी? सत्यवती और भीष्म अभी भी राजमहल और राज्य चला रहे थे। अब समय आ गया था; हस्तिनापुर की नई पीढ़ी की रानियों की बारी आ गई थी—माद्री की मृत्यु हो गई थी, कुन्ती विधवा राजमाता बन गई थी। सुलभा, अभिशप्त विदुर की मेधावी पत्नी कभी रानी नहीं बनेगी। धृतराष्ट्र की रानी गांधारी ने नेत्रहीन मनुष्य से विवाह करने के क्रोध और दुख को अपने ऊपर ले लिया था और अपनी आँखों पर पट्टी बाँध ली थी। उसने अंधे राजा की अंधी पत्नी बनकर संसार, राज्य और अपने सौ अदूरदर्शी पुत्रों से आँखें मूँद ली थी।

सत्यवती को कुन्ती और पांडवों के आते ही परिवार का तनाव समझ में आ गया। सबसे ज्येष्ठ कौरव, दुर्योधन ने अपने भाइयों का स्वागत नहीं किया और अपनी अप्रसन्नता स्पष्ट रूप से प्रकट कर दी। धृतराष्ट्र ने अपने ज्येष्ठ पुत्र को सिर चढ़ा लिया था। धृतराष्ट्र हर तरह से नेत्रहीन था : अपने पुत्र की कमियों को अस्वीकार करता, अपने साले शकुनि की कपटपूर्ण बातों में आ जाता। वैसे ही जैसे अम्बिका ने युवा धृतराष्ट्र को बचपन से विश्वास दिलाया था कि वही न्यायिक उत्तराधिकारी था, पांडु नहीं।

वहाँ भी सत्यवती और भीष्म से गलती हुई थी—चिढ़े हुए धृतराष्ट्र को शान्त करने की, क्योंकि उन्हें लगा था कि उसे अन्यायपूर्ण ढंग से वंचित किया गया था और दोनों ने उसके साथ अति-उदारतापूर्ण व्यवहार किया था और उसके अनबिलासित महत्वाकांक्षा को दुर्योधन को भी दूषित करने का अवसर दिया था। जब निर्बल, निर्बल नहीं रहते, उन्हें शक्तिशाली बनाने में सहायता करना, बल और विशेषाधिकार की उनकी लालसा

को बढ़ावा देता है। ये जानना बहुत आवश्यक होता है कि लकीर कहाँ खींचनी है, जो सत्यवती नहीं जानती थीं।

सत्यवती युवा पांडवों के साथ कुन्ती को हस्तिनापुर वापस ले तो आयी थीं, किन्तु वो उस युवा विधवा को अपने पुत्रों के अधिकार के लिए लड़ने में अकेला छोड़ देने वाली थीं। अब वो उनकी लड़ाइयाँ लड़ने में अक्षम थीं। वो बहुत थक गई थीं, टूट चुकी थीं।

ठंडी हवा में वो थोड़ी कांप गई, और ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे हस्तिनापुर पर बड़ा तूफान आने वाला था जो उनके राज्य, परिवार, और उनकी प्रजा को बहाकर ले जाएगा। उन्हें उत्तराधिकारी चाहिए थे—और अब उनके पास सौ से अधिक उत्तराधिकारी थे जो राजसिंहासन का नाश करने के लिए नियत थे। क्या उन्होंने ऐसा भविष्य स्वयं रचा था? वो इसका दायित्व भीष्म पर भी नहीं लाद सकती थीं, भले ही उन्होंने दृढ़तापूर्वक उनके साथ वन में आने से मना कर दिया था।

“आप कैसे जा सकती हैं, जब आपको भविष्य के बारे में स्पष्ट रूप से बताया गया है?” भीष्म ने दावा किया। “व्यास जिस युद्ध की बात कर रहे थे, वो महान कुरु राजा भरत के वंशजों के बीच नहीं, बल्कि आपके रक्त के बीच होने वाला है; वे आपके वंशज हैं! कुरुवंश तो मेरे, चित्रांगद और वीर्य के साथ समाप्त हो गया। आपने जिस नए कुल का आरम्भ किया, आप उसकी कुलमाता हैं! आप इस तरह उन्हें नहीं त्याग सकतीं।”

“मुझे करना ही होगा। मैं उन्हें एक दूसरे को मारते नहीं देख सकती, और व्यास ने भी यही कहा था...” वो दुखपूर्वक बोलीं।

भीष्म की आवाज़ कोड़े की तरह बरस रही थी। “आप जीवन पर अपने नियंत्रण पर गर्व करती हैं, अपना मार्ग तय करती हैं, तो अब कीजिए न! इस युद्ध को रोककर दिखाइए!”

“नहीं, मैं ऐसा नहीं कर सकती। हम दोनों ने इसकी शुरुआत की, देव!” वो चिल्लाई। “मैं हार गई! मात्र एक सप्ताह पूर्व मुझे लगा कि मैंने अपना संसार पा लिया, यद्यपि हमने पांडु को खो दिया, हमने पांडवों के रूप में उसे वापस पा लिया था। सभी हमारे भावी राजा थे। मुझे लगा मुझे मेरा पुरस्कार मिल गया, किन्तु सब कुछ माया है, भ्रान्ति है। सब कुछ नष्ट हो गया और इसका अन्त घोर सर्वनाश के साथ होगा! मेरे सारे सपने रक्त की नदियों में बह जाएँगे... हमारे परिवार के और इन्हीं बच्चों के रक्त में!” वो उस भयंकर सत्य की छवि से कांपती हुई थोड़ा रुकीं। “तुम्हारा रक्त भी, देव। तुम भी विदीर्ण, दयनीय और अकेले अपने प्रिय परिवार के लिए विवेकहीन युद्ध लड़ते रह जाओगे। देव, मेरे साथ चलो, मैं तुमसे प्रार्थना करती हूँ। हम हमारी ही सृष्टि का सर्वनाश न देखें,” वो टूटते हृदय के साथ विनतीपूर्वक बोलीं। किन्तु उन्हें भीष्म की आँखों में चिरपरिचित दृढ़ता की चमक दिख गई। उन्होंने भीष्म का हाथ थामकर

दोबारा विनती की। “नहीं तो इच्छामृत्यु लेकर गंगा के पास लौट जाओ। तुम्हारी माँ तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हैं।”

भीष्म उनसे थोड़े दूर हट गए। “आपकी हज़ार त्रुटियों के बावजूद मैं आप पर कायरता का आरोप तो नहीं लगा सकता,” वे खोखली मुस्कुराहट के साथ बोले। “परन्तु, अब आप उस दिन से पहले ही युद्धभूमि छोड़कर...”

“नहीं देव, वो दिन तो कब का बीत गया। हमने इस युद्ध की शुरुआत की, पर मैं उसे देखने के लिए यहाँ नहीं रहूँगी। नहीं देव, मुझसे ये मत माँगना।”

“मुझे आपकी यहाँ पर आवश्यकता है!” वे भारी आवाज़ में बोले। “हस्तिनापुर को, आपके परिवार को, आपके अनाथ पांडवों को, और कुन्ती को आपकी आवश्यकता है!” वे धूँधली आँखों के साथ टूटती आवाज़ में बोले।

सत्यवती का हृदय बैठा जा रहा था, फिर भी उन्होंने सिर झुकाकर कहा, “ये तो महत्व है जो हम अपने-आपको देते हैं, हमारा अहंकार है। मेरे या तुम्हारे जाने के बाद, दिन वर्षों में बदल जाएँगे, कौरव और पांडव बड़े हो जाएँगे। उन्हें अकेला छोड़ दो। उन्हें तुम्हारी आवश्यकता नहीं, हमारी आवश्यकता नहीं। यदि तुम नियति पर विश्वास करते हो, तो जो होना होगा, होकर रहेगा, तुम रहो या न रहो। तो देव, अब जाने का समय आ गया है। शिष्टापूर्वक वनवास पर चल पड़ो। तुम भी वैसे ही आसक्त हो, जैसे मैं पहले थी। मैं जानती हूँ: मनुष्य अपनी धुन और हठ का दास बन जाता है, और एक दिन वही उसका सर्वनाश कर देता है। यहाँ हस्तिनापुर में मत रहो। तुम यहाँ क्यों रुकना चाहते हो?”

“मैं नहीं जा सकता; मैं नहीं जाऊँगा,” भीष्म दृढ़तापूर्वक होंठ कसते हुए बोले। “इन्हें मेरी आवश्यकता है। मुझे इनकी सेवा और हस्तिनापुर की रक्षा करने के लिए यहीं रहना होगा।”

“एक के जगह दूसरे को छुनकर? क्या तुममें ऐसा करने का साहस होगा? तुम अपने-आपको ये यंत्रणा क्यों देना चाहते हो? तुमने जितना दुख उठाया है, काफी नहीं है?” वो कांपती आवाज़ में बोलीं। “चलो देव, हमारे साथ चलो,” अपना म्लान चेहरा भीष्म की ओर उठाती हुई, स्नेहमयी आँखों के साथ बोलीं। “यहाँ से चलते हैं देव; अपनी प्रतिज्ञा को भूल जाओ, अपने आदर्शों को, अपने जीवन को भूल जाओ। अच्छा या बुरा, यहाँ हमारा कार्य समाप्त हो गया है।”

“आप सबसे बुरे समय में भाग रही हैं,” भीष्म क्रूरतापूर्वक बोले। “आप रानी हैं! जब आपका सिंहासन खतरे में हो, तो आप ऐसे नहीं भाग सकतीं।”

सत्यवती ने जोर से अपना सिर हिलाया; उनका गला भरा हुआ था और वो तर्क नहीं कर पा रही थीं। पीड़ित हृदय और असीम दुख के साथ, रक्त और प्रेम के आँसू बहाते हुए उन्होंने भीष्म का हाथ छोड़ दिया। उन्हें अब भीष्म को छोड़ना ही होगा, और

इस विचार से ही वो कांप गई, और उनकी आँखें भय से बन्द हो गईं। भीष्म बिलकुल अकेले रह जाएँगे, उनका अपना कोई नहीं होगा।

भीष्म उनके आँसू देख लें, उससे पहले वो मुड़ गईं, भीष्म का उत्पीड़ित चेहरा उन्हें जाने से रोक दे और वे भीष्म, राजसिंहासन और अभिशप्त हस्तिनापुर के लिए रुकने के लिए बाध्य हो जाएँ...।

“आप कायर हैं, आप भाग रही हैं!” वे टूटती आवाज़ में चिल्लाएं।

सत्यवती गहरी आह भरती हुई चलती रहीं; उनमें भीष्म के साथ तर्क करने की शक्ति नहीं थी।

अब वो वन में पहुँच गई थीं, अनगिनत वृक्षों और शान्ति से बहती गंगा के साथ... फिर से गंगा : सदा की तरह विस्तृत, शक्तिशाली; छोटी और काली यमुना से कहीं अधिक विख्यात, जो उन्हीं की तरह उपेक्षित और नकारी हुई थी : यमुना के तट पर पली मछुआरिन की तरह।

गंगा। उसके पुत्र के साथ जो उन्होंने किया, उसके लिए वो उन्हें कभी क्षमा कर पाएगी? जब भी हस्तिनापुर के राजमहल से क्षितिज पर गंगा की झलक देखतीं, वही उसकी अन्तरात्मा थी जो उन्हें कचोटती थी।

अब वो गंगा के किनारे खड़ी थीं, उसके शीतल जल की गड़गड़ाहट उनके कमर के आसपास सुनाई दे रही थी। उन्होंने अपने सुबह का प्रक्षालन समाप्त कर लिया था, और आश्रम में लौटने वाली थीं जहाँ अम्बा और अम्बालिका उनकी प्रतीक्षा कर रही थीं।

तभी उन्होंने वो दृश्य देखा। एक नारंगी बिंदु, जो उनके देखते-देखते बढ़ा होता गया। उन्हें चीखते-चिल्लाते जानवरों, अंधाधुँध उड़ते आतंकित पक्षियों की चीख सुनाई दी। वन में आग लग गई थी और अग्नि के भूखे अंगारे पत्तों और वृक्षों को ध्वस्त करते हुए उनकी ओर तीव्रता से बढ़ रहे थे।

उन्होंने अनिष्ट जल की ओर देखा, और उन्हें उसमें उमड़ती रक्त की नालियाँ बहती दिखीं—शान्तनु, उनके पुत्रों, हस्तिनापुर के उत्तराधिकारियों और अम्बा के रक्त की।

सत्यवती ने अपनी छाया नदी में देखी। पराशर का वरदान उनके पास अभी भी था। वो अभी भी युवा दिखती थीं, किन्तु वो इतनी बूढ़ी हो गई थीं कि उन्हें स्वयं पता नहीं था कि वे कितने वर्षों तक इस धरती पर जीवित रहीं। अब इस पृथ्वी को छोड़कर जाने का समय आ गया था। वो एक-एक कदम बढ़ाती हुई नदी की गहराई में चलती



**COLLECTION OF VARIOUS**  
→ HINDUISM SCRIPTURES  
→ HINDU COMICS  
→ AYURVEDA  
→ MAGZINES

**FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)**

Made with  
  
By  
**Avinash/Shashi**

[creator of  
**hinduism**  
**server!**]

<https://rb.gy/zxhwdo>

<https://t.me/indianmythologybooks>

गई, बिना डगमगाए, होंठों पर प्रार्थना लिए। “हे गंगा, मुझे पापमुक्त कर दो, मुझे मेरे कर्मों के लिए क्षमा कर दो। मेरे पापों को धोकर मुझे मुक्त कर दो...”

अब उन्हें अपने पैरों तले गीले कंकड़ अनुभव नहीं हो रहे थे, वो केवल गंगा की स्वच्छ, निर्मल जल की धारा को अनुभव कर रही थीं जो कोमलता से उनके चेहरे को और आखिरकार थककर समर्पण करती उनकी आँखों को घेरती हुई उन्हें अपने में समावेशित कर रही थी। आखिरकार गंगा ने उन्हें अपनी बाँहों में स्वीकार कर ही लिया था।

~

&

Novels English